श्री श्रीविद्या साधना

श्री श्रीबाला
त्रिपुर-सुन्दरी साधना

श्री श्रीललिता
त्रिपुर-सुन्दरी साधना

श्री श्रीषोडशी-आराधना

४००/-

'कौल-कल्पतरु'
चण्डी

'कौल-कल्पतरु'
चण्डी

‘कौल-कल्पतरु’ चण्डी की विशेष प्रस्तुति

श्री श्रीविद्या-साधना

(श्री श्रीविद्या-स्तव-मञ्जरी)   पुष्प-१

श्री श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-साधना

एवम्

श्री श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-साधना

✶

प्रेरणा-स्तम्भ

प्रातः-स्मरणीय ‘कुल-भूषण’ पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक

ऋतशील शर्मा

✶

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

प्रकाशक
पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

श्रद्धाञ्जलि!

जिनकी 'दिव्य कृपा' से
प्रस्तुत श्री श्रीविद्या-साधना का प्रकाशन हो रहा है

गुप्तावतार
'बाबाश्री'

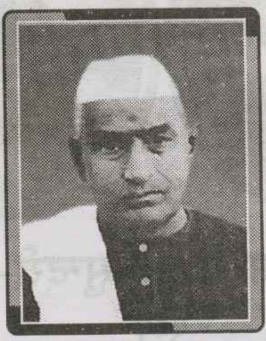

कौल-कल्पतरु
पं० देवीदत्त शुक्ल

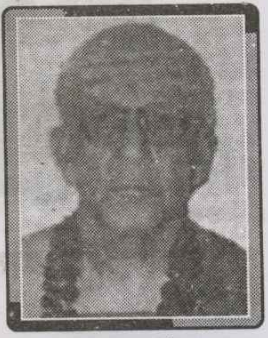

कुल-मार्तण्ड
पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति शास्त्री

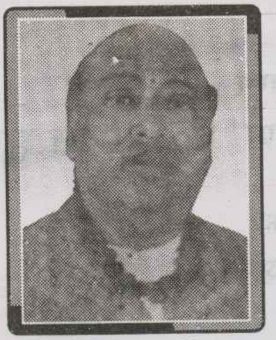

श्री धनशमशेर
जङ्गबहादुर राणा

कुल-भूषण
पं० रमादत्त शुक्ल

चतुर्थ संस्करण
शरत्-पूर्णिमा, सं० २०६९ वि०-२९ अक्टूबर, २०१२
सर्वाधिकार सुरक्षित
परा-वाणी प्रेस, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

प्राक्कथन

दश महा-विद्याओं में तीसरी महा-विद्या भगवती श्री षोडशी की ख्याति 'श्री श्रीविद्या' नाम से है। इन भगवती श्री श्रीविद्या के तीन मुख्य स्वरूप हैं– १. श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी, २. श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी और ३. श्रीषोडशी-महा-त्रिपुर-सुन्दरी। इन तीनों मुख्य स्वरूपों की उपासना अनादि-काल से होती आ रही है।

ब्रह्म का जीव से मिलन कैसे हो? जीव की ब्रह्म के साथ एक-रूपता कैसे स्थापित हो? इस हेतु हमारे यहाँ अनेक विद्याएँ उपलब्ध हैं। शक्ति-उपासना में इसी सन्दर्भ में दश महा-विद्याएँ भी आती हैं। उनमें श्री श्रीविद्या का तीसरा महत्त्व-पूर्ण स्थान है, जिसका सामान्य रूप से अर्थ है–'श्री प्राप्त करने की विद्या' और आध्यात्मिक-रूप से अर्थ है–'मोक्ष प्राप्त करने की अत्यन्त प्राचीन परम्परा'।

श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी की साधना-पद्धति विभिन्न हस्त-लिखित प्राचीन पाण्डु-लिपियों के आधार पर 'श्रीबाला-नित्यार्चन' के रूप में 'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल जी द्वारा सं० २००० (सन् १९४३) में प्रस्तुत की गई थी और उन्हीं की कृपा से 'श्रीबाला-स्तव-मञ्जरी' में भगवती श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी के स्तोत्रों का संग्रह भी प्रकाशित हुआ था।

श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी और श्रीषोडशी-महा-त्रिपुर-सुन्दरी की पूजा-पद्धति बहुत कुछ समान है, जिसे 'कुल-मार्तण्ड' पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति जी शास्त्री ने परिश्रम-पूर्वक श्री श्रीविद्या नित्यार्चन में प्रस्तुत करने की कृपा की थी, जिसमें कुछ स्तोत्रों का संग्रह भी था। उस संग्रह में केवल भगवती श्रीललिता के ही स्तोत्र थे। अतः 'कौल-कल्पतरु' शुक्ल जी ने उसे अपर्याप्त समझा। फलतः गुप्तावतार बाबाश्री की हस्त-लिखित डायरियों 'श्रीकल्पद्रुम' आदि के आधार पर भगवती श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी और श्रीषोडशी-महा-त्रिपुर-सुन्दरी–इन दोनों ही स्वरूपों के स्तोत्रों से युक्त संग्रह सं०२०१२ (सन् १९५५) में प्रकाशित किया गया। फिर उसका संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण सं० २०४३ (सन् १९८६) में प्रकाशित हुआ, जिसमें नेपाल के श्रीधनशमशेर जङ्गबहादुर राणा द्वारा प्राप्त 'वृहत्कर्पूर' आदि स्तोत्र भी सम्मिलित हुए।

अब उक्त संस्करण के प्रस्तुत तीसरे नवीन संस्करण को भगवती श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी, भगवती श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी एवं भगवती श्रीषोडशी-महा-त्रिपुर-सुन्दरी की साधनाओं के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। आशा है कि इससे श्री श्रीविद्या की साधना करने में जिज्ञासु बन्धुओं को विशेष सुविधा होगी। श्री श्रीविद्या के स्तोत्रों के शुद्ध पाठ और हिन्दी अनुवाद–'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल, पं० काशीप्रसाद शुक्ल एवं श्रीभैरवानन्दनाथ जी की कृपा से यहाँ प्रकाशित हुए हैं। अतः हम उन्हें हृदय से अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग

–ऋतशील शर्मा

अनुक्रम

०१. प्राक्कथन ३
०२. श्री श्रीविद्या-साधना (पहला सोपान) (श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-साधना) ५
०३. श्रीबाला-स्तोत्र-साधना ७
०४. श्रीबाला-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) ९
०५. श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-साधना १०
०६. श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) १२
०७. श्री श्रीविद्या-साधना (दूसरा सोपान) (श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-साधना) १३
०८. श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-साधना १४
०९. श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) १७
१०. श्रीसौभाग्य-कवच-स्तोत्र-साधना १९
११. श्रीसौभाग्य-कवच-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) २६
१२. श्रीललिता-हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्र-साधना ३१
१३. श्रीललिता-हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) ३५
१४. श्रीमत्-ललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-साधना ३९
१५. श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) ५५

आध्यात्मिक पुस्तक-माला 'चण्डी'

विशेष जानकारी हेतु सम्पर्क करें–

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

श्री चण्डी-धाम, प्रयाग-०६ मो. : ०९४५०२२२७६७

श्री श्रीविद्या-साधना

पहला सोपान

श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-साधना

शुद्ध एवं शोध-पूर्ण-'वाक्'-तत्त्व, 'मन'-तत्त्व तथा पञ्च-ज्ञानेन्द्रियों एवं पञ्च-कर्मेन्द्रियों द्वारा 'आत्म'-तत्त्व, 'विद्या'-तत्त्व और 'शिव'-तत्त्व को जानने के लिए 'श्रीबाला-त्रिपुरा-साधना' अथवा 'श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-साधना' का सूत्र-पात हुआ है।

साधकों को सबसे पहले 'श्रीबाला-त्रिपुरा' अथवा 'श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी' का 'चिन्तन-मनन-आराधन' तीन वीज-मन्त्रों-'ऐं-क्लीं-सौः' द्वारा करना चाहिए।

श्री श्रीविद्या-साधना

३६ तत्त्व-मय साधक की साधना

शिव-तत्त्व
१. शुद्ध-विद्या
२. ईश्वर
३. सदाशिव
४. शक्ति
५. शिव

पहला सोपान

विद्या-तत्त्व
१. माया
२. कला
३. अविद्या
४. राग
५. काल
६. नियति
७. पुरुष

श्रीबाला-त्रिपुरा
अर्थात्
श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी
साधना

आत्म-तत्त्व
१. प्रकृति
२. अहङ्कार
३. बुद्धि
४. मन
५-९. पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ
१०-१४. पाँच कर्मेन्द्रियाँ
१५-१९. पाँच तन्मात्राएँ
२०-२४. पाँच स्थूल तत्त्व

'ऐं'
'क्लीं'
'सौः'

॥ श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्री बाला-स्तोत्र-साधना

।। पूर्व-पीठिका—श्रीभैरव उवाच।।

अधुना देवि! बालायाः, स्तोत्रं वक्ष्यामि पार्वति!।
पञ्चमाङ्गं रहस्यं मे, श्रुत्वा गोप्यं प्रयत्नतः।।

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्री दक्षिणामूर्तिः ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी देवता, ऐं बीजं, सौः शक्तिः, क्लीं कीलकं, श्रीबाला-प्रीतये पाठे विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

ॐ श्री दक्षिणामूर्ति-ऋषये नमः—शिरसि। ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः—मुखे। ॐ श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः—हृदि। ॐ ऐं-बीजाय नमः—नाभौ। ॐ सौः-शक्तये नमः—गुह्ये। ॐ क्लीं-कीलकाय नमः—पादयोः। ॐ श्रीबाला-प्रीतये पाठे विनियोगाय नमः—सर्वाङ्गे।

।। कर-न्यास ।।

ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सौः मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ऐं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ सौः कर-तल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

।। अङ्ग-न्यास ।।

ॐ ऐं हृदयाय नमः। ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा। ॐ सौः शिखायै वषट्। ॐ ऐं कवचाय हुम्। ॐ क्लीं नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ सौः अस्त्राय फट्।

।। ध्यान।।

अरुण-किरण-जालै रञ्जिताशावकाशा।
विधृत-जप-वटीका पुस्तकाभीति-हस्ता।
इतर-कर-वराढ्या फुल्ल-कह्लार-संस्था।
निवसतु हृदि बाला नित्य-कल्याण-रूपा।।

।। मानस-पूजन ।।

ॐ लं पृथिवी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः।
ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः।
ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः।
ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। मूल श्रीबाला-स्तोत्रम् ।।

वाणीं जपेद् यस्त्रिपुरे! भवान्या, बीजं निशीथे जड-भाव-लीनः।
भवेत् स गीर्वाण-गुरोर्गरीयान्, गिरीश-पत्नि! प्रभुतादि[1] तस्य।। १।।
कामेश्वरि! त्र्यक्षरी काम-राजं, जपेद् दिनान्ते[2] तव मन्त्र-राजम्।
रम्भाऽपि जृम्भारि-सभां विहाय, भूमौ भजेत् तं कुल-दीक्षितं च।। २।।
तार्तीयकं बीजमिदं जपेद् यस्त्रैलोक्य-मातस्त्रिपुरे! पुरस्तात्।
विधाय लीलां भुवने तथान्ते, निरामयं ब्रह्म-पदं प्रयाति।। ३।।
धरा - सद्म - त्रिवृत्ताष्ट - पत्र - षट् - कोण - नागरे!।
विन्दु-पीठेऽर्चयेद् बालां, योऽसौ प्रान्ते शिवो भवेत्।। ४।।

।। फल-श्रुति ।।

इति मन्त्र-मयं स्तवं पठेद् यस्त्रिपुराया निशि वा निशावसाने।
स भवेद् भुवि सार्वभौम-मौलिस्त्रिदिवे शक्र-समान-शौर्य-लक्ष्मीः।। १।।
इतीदं देवि! बालाया, स्तोत्रं मन्त्र-मयं परम्।
अदातव्यमभक्तेभ्यो, गोपनीयं स्व-योनि-वत्।। २।।

॥श्रीरुद्रयामले तन्त्रे भैरव-भैरवी-संवादे श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-स्तोत्रम्॥

★★★

।। पाठ-भेद ।।

१- प्रभुतादि-प्रभयार्दि।
२- दिनान्ते-रतान्ते।

॥ श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीबाला-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

विनियोग, ऋष्यादि-न्यास, कर-न्यास और **अङ्ग-न्यास** कर **ध्यान** करे। यथा-

भगवती **श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी** के शरीर की आभा **अरुणोदय-काल के सूर्य-बिम्ब** की जैसी **रक्त-वर्ण** की है। उस आभा की किरणों से सभी दिशाएँ एवं अन्तरिक्ष लाल रङ्ग से रँगे हुए हैं। चार कर-कमलों में **जप-माला, पुस्तक, अभय** और **वर-मुद्राएँ** हैं। **पूर्ण खिले हुए रक्त-कमल** के पुष्प पर विराजमाना हैं। ऐसी **श्रीबाला** जगत् का नित्य कल्याण करनेवाली हैं। वे मेरे हृदय में निवास करें।

उक्त प्रकार से **ध्यान** करने के बाद **'मानस-पूजन'** कर **कवच का पाठ** करे। यथा-

।। कवच-पाठ ।।

हे त्रिपुरे! जो आप **भगवती** के वाणी-बीज **'ऐं'** का जप **महा-रात्रि** में भाव-निमग्न होकर करता है, वह **देव-गुरु वृहस्पति** से भी बढ़कर विद्वान् होता है और **हे शम्भु-पत्नि!** सभी प्रकार का स्वामित्व उसे मिल जाता है।।१।।

हे कामेश्वरि! जो आपके तीन अक्षरवाले काम-राज **'क्लीं'** का जप दिन के समाप्त हो जाने पर **(सन्ध्या-काल)** में करता है, उस कुल-मार्ग में दीक्षित साधक को वरण करने के लिए **जृम्भासुर** के विनाशक **देवराज इन्द्र** की भी सभा को त्याग कर **रम्भा** जैसी अप्सरा पृथ्वी पर चली आती है।।२।।

हे त्रैलोक्य-माता त्रिपुरे! जो तार्तीय-बीज **'सौः'** का जप करता है, वह विश्व में अपने चरित से लोगों को चमत्कृत कर अन्त में **आनन्द-मय ब्रह्म-पद** को प्राप्त करता है।।३।।

भू-पुर, त्रि-वृत्त, अष्ट-दल-पद्म, षट्-कोणात्मक नगरवाली हे जगदम्बिके! जो विन्दु-पीठ पर आप **'बाला'** का अर्चन करता है, वह **शिव-स्वरूप** हो जाता है।। ४।।

।। फल-श्रुति ।।

भगवती **श्रीबाला-त्रिपुरा** के उक्त **मन्त्र-मय स्तव** का जो **दिन के अन्त** में या **निशा-काल** में पाठ करता है, वह पृथ्वी पर सार्व-भौम महा-पुरुषों का नेता बनता है और स्वर्ग में इन्द्र के समान **शौर्य-लक्ष्मी** से युक्त होता है।।१।।

हे देवि! भगवती श्रीबाला का यह **मन्त्र-मय स्तोत्र** अति श्रेष्ठ है। **भक्ति-हीन** व्यक्तियों को इसे नहीं बताना चाहिए और अत्यन्त गुप्त बनाए रखना चाहिए।।२।।

★★★

॥ श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्री बाला-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-साधना

।। पूर्व-पीठिका–श्रीभैरवी उवाच ।।

देव-देव! महा-देव!, भक्तानां प्रीति-वर्द्धन!
सूचितं यत् त्वया देव्याः, कवचं कथयस्व मे।। १।।

।। श्री भैरव उवाच।।

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि, कवचं देव-दुर्लभम्।
अप्रकाश्यं परं गुह्यं, साधकाभीष्ट-सिद्धिदम्।। २।।

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-कवचस्य श्री दक्षिणामूर्तिः ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी देवता, ऐं बीजं, सौः शक्तिः, क्लीं कीलकं, चतुर्वर्ग-साधने पाठे विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

ॐ श्री दक्षिणामूर्ति-ऋषये नमः–शिरसि, ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः–मुखे, ॐ श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः–हृदि, ॐ ऐं - बीजाय नमः–नाभौ, ॐ सौः-शक्तये नमः–गुह्ये, ॐ क्लीं-कीलकाय नमः–पादयोः, ॐ चतुर्वर्ग - साधने पाठे विनियोगाय नमः–सर्वाङ्गेषु।

।। कर-न्यास ।।

ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सौः मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ऐं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ सौः कर-तल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

।। अङ्ग-न्यास ।।

ॐ ऐं हृदयाय नमः। ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा। ॐ सौः शिखायै वषट्। ॐ ऐं कवचाय हुम्। ॐ क्लीं नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ सौः अस्त्राय फट्।

।। ध्यान।।

मुक्ता-शेखर - कुण्डलाङ्गद - मणि - ग्रैवेय - हारोर्मिका,
विद्योतद्-वलयादि-कङ्कण-कटि - सूत्रां स्फुरन्-नूपुराम्।
माणिक्योदर - बन्ध - कम्बु - कबरीमिन्दोः कलां बिभ्रतीम्,
पाशं चांकुश-पुस्तकाक्ष-वलयं दक्षोर्ध्व - बाह्वादितः।।

।। मानस-पूजन ।।

ॐ लं पृथिवी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीबाला - त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीबाला-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। मूल कवच-पाठ ।।

'ऐं' वाग्भवं पातु शीर्षं, 'क्लीं' कामस्तु तथा हृदि।
'सौः' शक्ति-बीजं च पातु, नाभौ गुह्ये च पादयोः।।१।।
'ऐं क्लीं सौः' वदने पातु, बाला मां सर्व-सिद्धये।
'हसकलह्रीं' सौः पातु, भैरवी कण्ठ - देशतः।।२।।
सुन्दरी नाभि - देशेऽव्याच्छीर्षिका सकला सदा।
भ्रू - नासयोरन्तराले, महा - त्रिपुर - सुन्दरी।।३।।
ललाटे सुभगा पातु, भगा मां कण्ठ-देशतः।
भगा देवी तु हृदये, उदरे भग - सर्पिणी।।४।।
भग-माला नाभि - देशे, लिङ्गे पातु मनोभवा।
गुह्ये पातु महा - देवी, राज - राजेश्वरी शिवा।।५।।
चैतन्य - रूपिणी पातु, पादयोर्जगदम्बिका।
नारायणी सर्व - गात्रे, सर्व - कार्ये शुभङ्करी।।६।।
ब्रह्माणी पातु मां पूर्वे, दक्षिणे वैष्णवी तथा।
पश्चिमे पातु वाराही, उत्तरे तु महेश्वरी।।७।।
आग्नेय्यां पातु कौमारी, महा - लक्ष्मीश्च नैर्ऋते।
वायव्यां पातु चामुण्डा, इन्द्राणी पातु चेशके।।८।।
जले पातु महा - माया, पृथिव्यां सर्व - मङ्गला।
आकाशे पातु वरदा, सर्वतो भुवनेश्वरी।।९ ।।

।। फल-श्रुति ।।

इदं तु कवचं नाम, देवानामपि दुर्लभम्। पठेत् प्रातः समुत्थाय, शुचिः प्रयत - मानसः।।१।।
नाधयो व्याधयस्तस्य, न भयं च क्वचिद् भवेत्। न च मारी-भयं तस्य, पातकानां भयं तथा।।२।।
न दारिद्र्य-वशं गच्छेत्, तिष्ठेन्मृत्यु-वशे न च। गच्छेच्छिव - पुरे देवि!, सत्यं सत्यं वदाम्यहम्।।३।।
इदं कवचमज्ञात्वा, श्रीविद्यां यो जपेच्छिवे! स नाप्नोति फलं तस्य, प्राप्नुयाच्छस्त्र-घातनम्।।४।।

॥ श्रीरुद्रयामले तन्त्रे भैरवी-भैरव-संवादे श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी कवचम् ॥

॥ श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

विनियोग, ऋष्यादि-न्यास, कर-न्यास और **अङ्ग-न्यास** कर **ध्यान** करे। यथा-

भगवती श्रीबाला मोतियों से जड़े हुए **चमकीले कुण्डल, अङ्गद, हार, वलय, कङ्गन, करधनी** आदि आभूषण और पैरों में **गुञ्जायमान नूपुर** धारण किए हैं। केश-पाश पर **चन्द्रमा** की कला शोभा पा रही है। दाएँ ऊर्ध्व हाथ से चार कर-कमलों में क्रमशः **पाश, अंकुश, पुस्तक** और **अक्ष-माला** लिए हैं।

उक्त प्रकार से **ध्यान** करने के बाद **'मानस-पूजन'** कर **कवच का पाठ** करे। यथा-

।। कवच-पाठ ।।

वाग्भव-बीज **'ऐं'** सिर की, काम-बीज **'क्लीं'** हृदय की और शक्ति-बीज **'सौः'** नाभि की, गुह्य तथा पैरों की रक्षा करें ।।१।। **'ऐं क्लीं सौः' बाला** मुख-मण्डल में सर्व-सिद्धियों के लिए मेरी रक्षा करें। **'हसकलह्रीं सौः' भैरवी** कण्ठ-देश में रक्षा करें ।।२।। **'सुन्दरी'** नाभि देश में, **'सकला'** शीर्ष भाग में और भौंहों तथा नाक के मध्य भाग में **'महा-त्रिपुर-सुन्दरी'** सदा रक्षा करें ।।३।। ललाट में **'सुभगा'**, कण्ठ देश में **'भगा'**, हृदय में **'भगवती देवी'** और उदर में **'भग-सर्पिणी'** मेरी रक्षा करें ।।४।। नाभि-देश में **'भग-माला'** और लिङ्ग (योनि) में **'मनोभवा'** मेरी रक्षा करें। गुह्य में **'महा-देवी राज-राजेश्वरी शिवा'** रक्षा करें ।।५ ।।

दोनों पैरों में **'चैतन्य-रूपिणी जगदम्बिका'**, सारे शरीर में **'नारायणी'** और सभी कार्यों में **'शुभङ्करी'** रक्षा करें ।।६।। **'ब्रह्माणी'** पूर्व दिशा में और **'वैष्णवी'** दक्षिण दिशा में मेरी रक्षा करें। **'वाराही'** पश्चिम दिशा में और **'महेश्वरी'** उत्तर दिशा में रक्षा करें ।।७।। **'कौमारी'** आग्नेय कोण में और **'महा-लक्ष्मी'** नैऋत कोण में रक्षा करें। **'चामुण्डा'** वायव्य कोण में और **'इन्द्राणी'** ईशान कोण में रक्षा करें ।।८।। **'महा-माया'** जल में और **'सर्व-मङ्गला'** पृथ्वी पर रक्षा करें। **'वरदा'** आकाश में और **'भुवनेश्वरी'** सभी ओर रक्षा करें ।।९।।

।। फल-श्रुति ।।

उक्त **'कवच'** देताओं के लिए भी दुर्लभ है। **प्रातः-काल** उठकर पवित्र हो एकाग्र-मन से इसका **पाठ** करना चाहिए ।।१।। **पाठ** करनेवाले को **आधि-व्याधियाँ** नहीं होतीं, न कहीं किसी प्रकार का **भय** होता है। उसे न **महा-मारी** का डर रहता है, न पापों का ।।२।। वह **दरिद्रता** के वश में कभी नहीं होता और न **मृत्यु** के वशीभूत होता है। **शिव** के स्थान को ही वह प्राप्त होता है, यह मैं सर्वथा सत्य कहता हूँ ।।३।। उक्त **'कवच'** को जाने बिना जो **'श्रीविद्या'** के मन्त्र का जप करता है, उसे उस जप का फल नहीं मिलता, उलटे वह किसी शस्त्र की चोट का भागी बन जाता है ।।४।।

★★★

श्री श्रीविद्या-साधना

दूसरा सोपान
श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-साधना

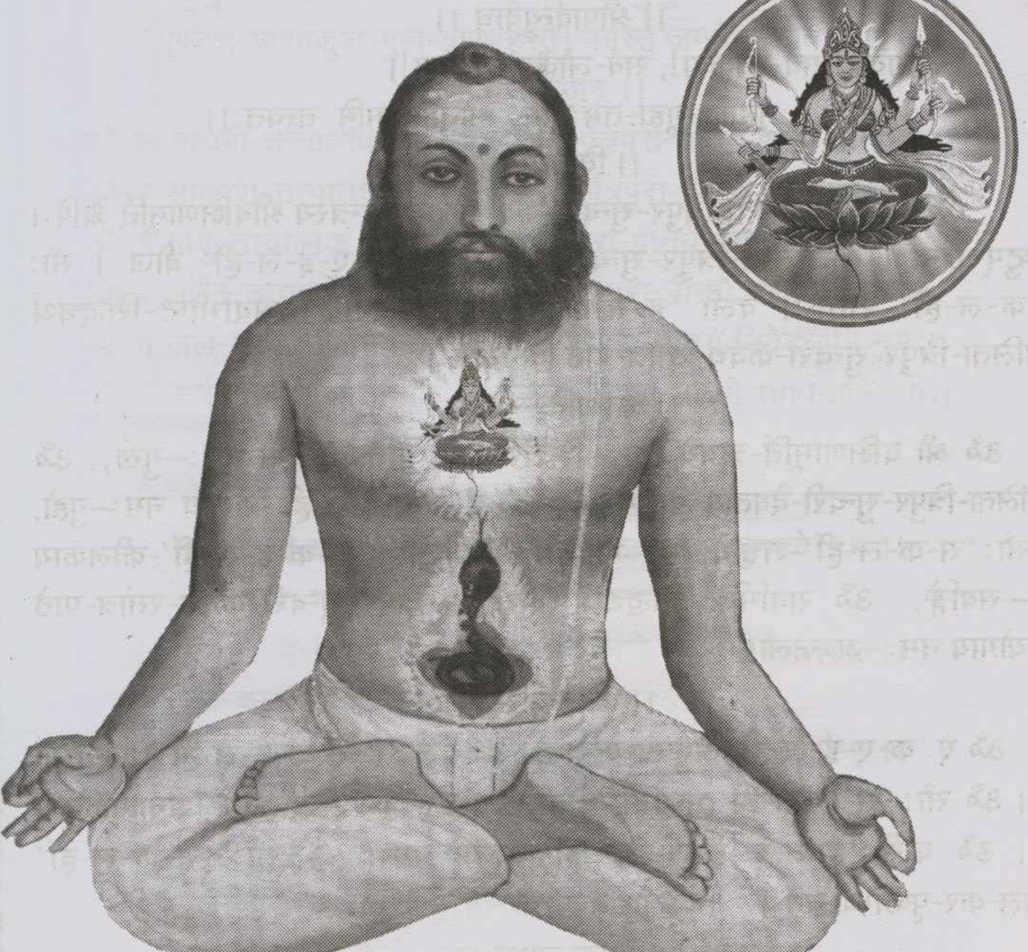

१. अन्न-मय, २. प्राण-मय, ३. मनो-मय, ४. विज्ञान-मय एवं ५. आनन्द-मय-पञ्च-कोशों द्वारा व्याप्त प्रकाश-पुञ्ज से देदीप्यमान साक्षात् ब्रह्म-स्वरूपिणी-शक्ति को जानने के लिए श्रीललिता-त्रिपुरा-साधना अर्थात् श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-साधना का सूत्र-पात हुआ है।

साधकों को इस हेतु 'वाक् - काम-शक्ति' के तीन बीजों के साथ इनके 'तीनों कूटों' का भी 'चिन्तन-मनन-आराधन' करना चाहिए।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-साधना

।। पूर्व-पीठिका – श्रीईश्वर उवाच ।।

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि, कवचं सुन्दरी - प्रियम्।
रहस्याति-रहस्यं च, मन्त्र - रूपमिदं प्रिये! ।।

।। श्रीपार्वत्युवाच ।।

भगवन्! सर्व-लोकेश!, सर्व-लोकैक-वन्दित!।
गुह्याद्-गुह्य-तमं तत्त्वं, श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः।।

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीदक्षिणामूर्ति ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी देवता। ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' वीजं । सौः 'स-क-ल-ह्रीं' शक्तिः। क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कीलकं। सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थं श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-स्तोत्र-पाठे विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

ॐ श्री दक्षिणामूर्ति-ऋषये नमः–शिरसि, ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः–मुखे, ॐ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः–हृदि, ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं'-बीजाय नमः–गुह्ये, ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं'-शक्तये नमः–पादयोः, ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं'-कीलकाय नमः–सर्वाङ्गे, ॐ सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थं श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-स्तोत्र-पाठे विनियोगाय नमः–अञ्जलौ।

।। कर-न्यास ।।

ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं' मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' अनामिकाभ्यां नमः। ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कनिष्ठाभ्यां नमः। ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं' करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

।। अङ्ग-न्यास ।।

ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' हृदयाय नमः। ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' शिरसे स्वाहा। ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं' शिखायै वषट्। ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' कवचाय हुम्। ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं' अस्त्राय फट्।

॥ ध्यान ॥

स - कुंकुम - विलेपनामलिक - चुम्बि - कस्तूरिकाम्,
स-मन्द-हसितेक्षणां स-शर-चाप-पाशांकुशाम्।
अशेष - जन - मोहिनीमरुण - माल्य - भूषाम्बराम्,
जपा-कुसुम- भासुरां जप-विधौ स्मरेदम्बिकाम्॥ १॥
चतुर्भुजे! चन्द्र-कलावतंसे!, कुचोन्नते! कुंकुम-राग-शोणे!।
पुण्ड्रेक्षु-पाशांकुश-पुष्प-वाण-हस्ते! नमस्ते जगदेक-मातः!॥२॥

॥ मानस-पूजन ॥

ॐ लं पृथिवी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः।
ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिता- त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः।
ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः।
ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

॥ मूल कवच-पाठ ॥

क-कारः पातु शीर्षं मे, ए-कारः पातु फालके।
ई-कारः पातु वक्त्रं मे, ल-कारः कूर्प-युग्मके॥ १ ॥
ह्रीं-कारः पातु हृदयं, वाग्भवश्च सदाऽवतु।
ह-कारः पातु जठरं, स-कारो नाभि-देशके॥ २ ॥
क-कारः पार्श्व-भागे च, ह-कारः पातु पृष्ठके।
ल-कारश्च नितम्बे मे, ह्रीं-कारः पातु मूलके॥ ३ ॥
काम-राजः सदा पातु, जठरादि-प्रदेशके।
स-कारः पातु कट्यां मे, क-कारः पातु लिङ्गके॥ ४ ॥
ल-कारो जानुनी पातु, ह्रीं-कारो जंघ-युग्मके।
शक्ति-बीजं सदा पातु, मूल-विद्या सदाऽवतु॥ ५ ॥
त्रिपुरा मां सदा पातु, त्रिपुरेशी च सर्वदा।
त्रिपुरा सुन्दरी पातु, वसु-पत्रस्य देवता॥ ६ ॥
त्रिपुरा - वासिनी पातु, त्रिपुरा-श्रीः सदाऽवतु।
त्रिपुरा मालिनी पातु, त्रिपुरा सिद्धिदाऽवतु॥ ७ ॥

त्रिपुरा तथा पातु, पातु त्रिपुरा - भैरवी।
अणिमाद्यास्तथा पान्तु, ब्राह्मयाद्याः पान्तु मां सदा।। ८ ।।
नव-मुद्रास्तथा पान्तु, कामाकर्षणि-पूर्विकाः।
पान्तु मां षोडशारे तु, अनङ्ग-कुसुमादिकाः।। ९ ।।
पान्तु मामष्ट-पत्रेषु, सर्व-संक्षोभणादिकाः।
पान्तु चक्र-कोणेषु, सर्व-सिद्धि-प्रदायिकाः।। १०।।
पान्तु मां बाह्य-कोणेषु, मध्यादि-कोणके तथा।
सर्वज्ञाद्यास्तथा पान्तु, सर्वाभीष्ट-प्रपूरिकाः।। ११ ।।
वशिन्याद्यास्तथा पान्तु, वसु-पत्रस्य देवताः।
त्रिकोणस्यान्तरालेषु, पान्तु मामायुधानि च।। १२ ।।
कामेश्वर्यादिकाः पान्तु, त्रिकोणे कोण-संस्थिताः।
विन्दु-चक्रे तथा पातु, श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरी।। १३ ।।

।। फल-श्रुति ।।

इदं श्रीकवचं नित्यं, त्रि-सन्ध्यं यः पठेन्नरः।
सर्व-सिद्धिमवाप्नोति, सर्वाभीष्ट-फल-प्रदम्।। १ ।।

।। श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी कवचम् ।।

भगवती श्रीत्रिपुर-सुन्दरी

हे सूक्ष्म स्वरूपवाली भगवती श्रीत्रिपुर-सुन्दरी!
तीनों लोकों के सौन्दर्य-रूपी महा-समुद्र के मन्थन से उत्पन्न
अमृत के समान उज्ज्वल,
सहस्रों प्रातः-कालीन सूर्य तथा
ताजे खिले हुए जपा-पुष्पों के समान लाल रक्तवाली,
तीनों लोकों में प्रकाश-मय,
परा-पश्यन्ती-मध्यमा-वैखरी वाणीवाली,
तुम्हारी मूर्ति-मेरे हृदय में स्फुरित हो अर्थात्
मेरे मन में विराजे।

–महर्षि दुर्वासा

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार ॥

श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-कवच-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

श्रीपार्वती ने कहा–हे **भगवन्**! आप **सब लोकों** के **ईश्वर** हैं, **सब लोकों** द्वारा **वन्दित** हैं। मैं तत्त्व-ज्ञान देनेवाले **गुप्त-से-गुप्त ज्ञान** को सुनना चाहती हूँ।

श्रीईश्वर ने कहा–**हे देवि**! **भगवती त्रिपुर**-सुन्दरी को प्रसन्न करनेवाला **'कवच'** बताऊँगा, जो **मन्त्र-रूप** है और **रहस्यों का भी रहस्य** है।

विनियोग–इस **श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी** के **कवच-स्तोत्र**-रूपी मन्त्र के ऋषि **श्रीदक्षिणामूर्ति**, छन्द **अनुष्टुप्**, देवता **श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी**, बीज ऐं **'कएईलह्रीं'**, शक्ति **सौः 'सकलह्रीं'**, कीलक **क्लीं 'हसकहलह्रीं'** हैं और इसका विनियोग **सर्वाभीष्ट-सिद्धि** के लिए किया जाता है।

विनियोग के बाद **ऋष्यादि**-न्यास कर **मूल-मन्त्र** से **षडङ्ग-न्यास** करना चाहिए। तब **ध्यान** करना चाहिए। यथा–

जप करते समय **केसर-युक्त उबटनवाली**, जिनके मस्तक पर **कस्तूरी** लगी हुई है, **मन्द-हास्य-युक्त नेत्रोंवाली, धनुष, बाण, पाश** और **अंकुश** से युक्त, **सम्पूर्ण जनों को मोहित करनेवाली, लाल रङ्ग की पुष्प-माला** एवं **रक्त-वस्त्र धारण करनेवाली, जपा-पुष्प के समान आभावाली माता का स्मरण** करना चाहिए ।।१।।

हे चतुर्भुजे, हे चन्द्र-कला-रूपी-कर्णाभूषणवाली, उठे हुए स्तनोंवाली, केसर के रङ्ग के समान लाल रङ्गवाली, **इक्षु-धनुष, पाश, अंकुश** और **पुष्प-बाणों** को हाथों में रखनेवाली, **संसार का एक-मात्र पालन करनेवाली** आपको नमस्कार है ।।२।।

उक्त प्रकार से **ध्यान** करने के बाद **मानस-पूजन** कर **'कवच'** का पाठ करना चाहिए। यथा–

।। कवच-पाठ ।।

क-कार मेरे शिर की रक्षा करें, **ए-कार** सीमान्त-भाग की रक्षा करें। **ई-कार** मेरे मुख की रक्षा करें और **ल-कार** दोनों भौंहों की रक्षा करें ।। १ ।।

ह्रीं-कार हृदय की रक्षा करें और **वाग्भव** सदा रक्षा करें। **ह-कार** उदर की और **स-कार** नाभि की रक्षा करें ।। २ ।।

क-कार पार्श्व-भाग की तथा **ह-कार** पृष्ठ-भाग की रक्षा करें। **ल-कार** मेरे नितम्ब की तथा **ह्रीं-कार** मूल-स्थान की रक्षा करें ।। ३ ।।

काम-राज सदा उदरादि स्थानों की रक्षा करें। **स-कार** मेरे कटि-स्थान की रक्षा करें और **क-कार** लिङ्ग-स्थान की रक्षा करें ।। ४ ।।

ल-कार दोनों घुटनों की रक्षा करें और **ह्रीं-कार** जंघाओं की। **शक्ति-बीज** सदा रक्षा करें। **मूल-विद्या** सदा रक्षा करें ।। ५ ।।

त्रिपुरा और **त्रिपुरेशी** मेरी रक्षा करें। **अष्ट-दल की देवता** त्रिपुरा-सुन्दरी रक्षा करें ।।६।।

त्रिपुरा-वासिनी सदा रक्षा करें। **त्रिपुरा-श्री** सदा रक्षा करें। **त्रिपुरा-मालिनी** रक्षा करें। **त्रिपुरा-सिद्धिदा** रक्षा करें ।।७।।

त्रिपुराम्बा रक्षा करें और **त्रिपुर-भैरवी** रक्षा करें। **अणिमा** आदि रक्षा करें और **ब्राह्मी** आदि मेरी सदा रक्षा करें ।।८।।

उसी प्रकार **कामकर्षिणी** आदि **नव-मुद्राएँ** रक्षा करें। **अनङ्ग-कुसुमा** आदि **षोडशार** में मेरी रक्षा करें ।।९।।

सर्व-संक्षोभण आदि **अष्ट-दलों** में मेरी रक्षा करें, **सर्व-सिद्धि-प्रदायिका चक्र-कोणों** में मेरी रक्षा करें ।।१०।।

सम्पूर्ण मनोरथों को परिपूर्ण करनेवाली **सर्वज्ञा** आदि **बाह्य-कोणों** तथा **मध्यादि कोणों** में मेरी रक्षा करें ।।११।।

इसी प्रकार **अष्ट-दल की देवता वशिनी** आदि रक्षा करें और सभी **आयुध-त्रिकोण** के अन्तरालों में मेरी रक्षा करें ।।१२।।

कोणों में विराजमान कामेश्वरी-आदि त्रिकोण में रक्षा करें और इसी प्रकार **श्रीमत्- त्रिपुर-सुन्दरी बिन्दु-चक्र** में रक्षा करें ।।१३।।

।। फल-श्रुति ।।

समस्त मनो-वांछित फल को प्रदान करनेवाले उक्त **श्रीकवच** को जो व्यक्ति **तीनों सन्ध्याओं** में पढ़ता है, वह सारी सिद्धियों को प्राप्त करता है ।।१।।

त्रिपुरा

'त्रिपुरार्णव' के अनुसार **'त्रि'** का अर्थ है-**१ सुषुम्णा, २ पिङ्गला** और **३ इडा** नाड़ियों और **'पुर'** का अर्थ है-**१ मन, २ बुद्धि** और **३ चित्त**। अतः इनमें निवास करने से **'त्रिपुरा'** हैं।

'त्रिपुरा'-महा-शक्ति के लिए सभी बातें तीन-तीन हैं, अतः यह **'त्रिपुरा'** कहलाती हैं। **'मण्डल'**-त्रिकोण, **'भू-पुर'** भी तीन रेखाओंवाला, **'मन्त्र'** भी त्रि-अक्षर, त्रि-कूटवाला, **'रूप'** भी-१ ब्राह्मी, २ रौद्री और ३ वैष्णवी अथवा १ इच्छा-शक्ति, २ ज्ञान-शक्ति और ३ क्रिया-शक्ति, अथवा १ वामा, २ ज्येष्ठा और ३ रौद्री अथवा १ पश्यन्ती, २ मध्यमा और ३ वैखरी **तीन-तीन स्वरूपोंवाला** है।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीसौभाग्य-कवच-स्तोत्र-साधना

।। पूर्व-पीठिका—श्री पार्वत्युवाच ।।

कैलास-शिखरे रम्ये, सुखासीनं सुरार्चितम्।
गिरीशं गिरिजा स्तुत्वा, स्तोत्रैर्वेदान्त-पारगैः।।
प्रणम्य परया भक्त्या, तमपृच्छत् कृताञ्जलिः।
रहस्यं रक्षणं किं वा, सर्व-सम्पत्-करं वद ।।१।।

।। श्रीशिवोवाच ।।

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि, यस्मात् त्वं परिपृच्छसि।
यस्य श्रवण - मात्रेण, भव - भीतिर्न जायते।।
एतत् सौभाग्य-कवचं, रहस्याति-रहस्यकम्।
सौभाग्य-कवचं देवि!, शृणु सौभाग्य-दायकम्।।२।।

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्रीसौभाग्य-कवच-स्तोत्रस्य श्रीआनन्द-भैरवो ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीसौभाग्य-सुन्दरी देवता। ॐ क्लीं सौः बीजं। ह्रीं क्लीं शक्तिः। आं ह्रीं क्रों कीलकं। सर्व-सौभाग्य-सिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

शिरसि श्रीआनन्द-भैरवाय-ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्-छन्दसे नमः। हृदि श्रीसौभाग्य-सुन्दरी-देवतायै नमः। गुह्ये ॐ क्लीं सौः-बीजाय नमः। पादयोः ह्रीं क्लीं-शक्तये नमः। नाभौ आं ह्रीं क्रों कीलकाय नमः। सर्वाङ्गे सर्व-सौभाग्य-सिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगाय नमः।

।। कर-न्यास ।।

ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सौः मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ऐं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ सौः कर-तल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

।। अङ्ग-न्यास ।।

ॐ ऐं हृदयाय नमः। ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा। ॐ सौः शिखायै वषट्। ॐ ऐं कवचाय हुम्। ॐ क्लीं नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ सौः अस्त्राय फट्।

।। ध्यान ।।

ऐहिक-पर-फल-दात्रीमैशानीं मनसि भावये मुद्राम्।
ऐन्दव-कलावतंसामैश्वर्य-स्फुरण-परिणतिं जगताम्।।१।।
क्लीवत्व-दैत्य-हन्त्रीं क्लिन्न-मनस्कां महेश्वराश्लिष्टाम्।
क्लृप्त-जनेष्ट-कर्त्रीं कल्पित-लोक-प्रभां नमामि कलाम्।।२।।
सौभाग्य-दिव्यक-निधिं सौरभ-कच-वृन्द-विचलदलि-मालाम्।
सौशील्यशेष-तल्पां सौन्दर्य-विभा-मञ्जरीं कलये।।३।।
पाश-पाणि सृणि-पाणि भावये चाप-पाणि शर-पाणि दैवतम्।
यत्-प्रभा-पटल-पाटलं जगत् पद्म-राग-मणि-मण्डपायते।।४।।
हेमाद्रौ हेम-पीठ-स्थितामखिल-सुरैरीड्यमानां विराजत्।
पुष्पेष्विष्वास-पाशांकुश-कर-कमलां रक्त-वेषाति-रक्ताम्।। ५।।
दिक्षूद्यद्भिश्चतुर्भिर्मणि-मय-कलशैः पञ्च-शक्त्याश्रितैः स्व–
भ्रष्टैः क्लृप्ताभिषेकां भजत भगवतीं भूतिदामन्त्य-यामे।।६।।

।। मानस-पूजन ।।

ॐ लं पृथिवी-तत्त्वात्मक गन्धं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः।
ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिता- त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः।
ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः।
ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। मूल कवच-पाठ ।।

शिखाग्रं सततं पातु, मम त्रिपुर - सुन्दरी।
शिरः कामेश्वरी नित्या, तत्-पूर्वं भग-मालिनी।। १ ।।
नित्य-क्लिन्नाऽवताद्दक्षं, भेरुण्डा तस्य पश्चिमम्।
वह्नि-वासिन्यवेद् वामं, मुखं विद्येश्वरी तथा ।। २ ।।
शिव-दूती ललाटं मे, त्वरिता तस्य दक्षिणम्।
तद्-वाम - पार्श्वमवतात्, तथैव कुल - सुन्दरी।। ३।।
नित्या पातु भ्रुवोर्मध्यं, भ्रुवं नील - पताकिनी।
वाम-भ्रुवं तु विजया, नयनं सर्व - मङ्गला ।। ४ ।।

ज्वाला-मालिन्यक्षि वामं, चित्रा रक्षतु पक्ष्मणी।
दक्ष-श्रोत्रं महा-नित्या, वामं पातु महोद्यमा ।। ५ ।।
दक्षं वामं च वटुका, कपोलौ क्षेत्र - पालिका।
दक्ष - नासा - पुटं दुर्गा, तदन्यं तु भारती ।। ६ ।।
नासिकाग्रं सदा पातु, महा - लक्ष्मीर्निरन्तरम्।
अणिमा दक्ष - कटिं, महिमा च तदन्यकम्।। ७ ।।
दक्ष-गण्डं च गरिमा, लघिमा चोत्तरं तथा ।
ऊर्ध्वोष्ठकं प्राप्ति-सिद्धिः, प्राकाम्यमधरोष्ठकम् ।। ८ ।।
ईशित्वमूर्ध्व-दन्तांश्च, ह्यधो-दन्तान् वशित्वकम् ।
रस-सिद्धिश्च रसनां, मोक्ष-सिद्धिश्च तालुकम् ।। ९ ।।
तालु - मूल-द्वयं ब्राह्मी - माहेश्वर्यौ च रक्षताम् ।
कौमारी चिबुकं पातु, तदधः पातु वैष्णवी ।। १० ।।
कण्ठं रक्षतु वाराही, चैन्द्राणी रक्षतादधः ।
कृकाटिकां तु चामुण्डा, महा-लक्ष्मीस्तु सर्वतः ।। ११ ।।
सर्व-संक्षोभिणी-मुद्रा, स्कन्धं रक्षतु दक्षिणम् ।
तदन्यं द्राविणी-मुद्रा, पायादंस - द्वयं क्रमात् ।। १२ ।।
आकर्षणी वश्य-मुद्रा, चोन्मादिन्यथ दक्षिणम् ।
भुजं महांकुशा वामं, खेचरी दक्ष - कक्षकम् ।। १३ ।।
वाम-कक्षं बीज-मुद्रा, योनि-मुद्रा तु दक्षिणम् ।
लसत् त्रिखण्डिनी-मुद्रा, वाम - भागं प्रपालयेत् ।। १४ ।।
श्रीकामाकर्षिणी नित्या, रक्षताद् दक्ष - कूर्परम् ।
कूर्परं वाममवतात्, सा बुद्ध्याकर्षिणी तथा ।। १५ ।।
अहङ्काराकर्षिणी तु, प्रकाण्डं पातु दक्षिणम् ।
शब्दाकर्षिणिका वामं, स्पर्शाकर्षिणिकाऽवतु ।। १६ ।।
प्रकोष्ठं दक्षिणं पातु, रूपाकर्षिणिकेतरम् ।
रसाकर्षिणिका पातु, मणि-बन्धं च दक्षिणम् ।। १७ ।।
गन्धाकर्षिणिका वामं, चित्ताकर्षिणिकाऽवतु ।
करभं दक्षिणं धैर्याकर्षिणी पातु वामकम् ।। १८ ।।
स्मृत्याकर्षिण्यसौ वामं, नामाकर्षिणिकेतरम् ।
बीजाकर्षिणिका पायात्, सततं दक्षिणांगुलीः ।। १९ ।।

आत्माकर्षिणिका त्वन्या, अमृताकर्षिणी नखान् ।
शरीराकर्षिणी वाम - नखान् रक्षतु सर्वदा ।। २० ।।

अनङ्ग-कुसुमा शक्तिः, पातु दक्षिण - स्तनोपरि ।
अनङ्ग - मेखला चान्य - स्तनोर्ध्वमभि-रक्षतु ।। २१ ।।

अनङ्ग - मदना दक्ष - स्तनं तच्चूचुकं पुनः।
रक्षतादनिशं देवी, ह्यनङ्ग - मदनातुरा ।। २२ ।।

अनङ्ग-रेखा वामं तु, वक्षोजं तस्य चूचुकम् ।
अनङ्ग - वेगिनी क्रोडमनङ्गास्यांकुशाऽवतु ।। २३ ।।

अनङ्ग-मालिनी पायाद्, वक्षः-स्थलमहर्निशम् ।
सर्व-संक्षोभिणी शक्तिर्हृत् सर्व-द्राविणी परा।। २४ ।।

कुक्षिं सर्वाकर्षिणी तु, पातु पार्श्वं च दक्षिणम् ।
आह्लादिनी वाम-पार्श्वं, मध्यं सम्मोहिनी चिरम् ।। २५ ।।

सा सर्व-स्तम्भिनी पृष्ठं, नाभिं वै सर्व-जृम्भिणी ।
वशङ्करी वस्ति-देशं, सर्व - रञ्जिनी मे कटिम् ।। २६ ।।

सा तु सर्वोन्मादिनी मे, पायाज्जघन-मण्डलम् ।
सर्वार्थ-साधिनी शक्तिः, नितम्बं रक्षतान्मम ।। २७ ।।

दक्ष-स्फिचं सदा पातु, सर्व-सम्पत्ति-पूरिणी ।
सर्व-मन्त्र-मयी शक्तिः, पातु वाम-स्फिचं मम ।। २८ ।।

पायात् कुकुन्दर-द्वन्दं, सर्व-द्वन्द्व-क्षयङ्करी।
सर्व-सिद्धि-प्रदा देवी, पातु दक्षिण वंक्षणम् ।। २९ ।।

सर्व-सम्पत्-प्रदा देवी, पातु मे वाम-वंक्षणम् ।
सर्व-प्रियङ्करी देवी, गुह्यं रक्षतु मे सदा ।। ३० ।।

मेढ्रं रक्षतु मे देवी, सर्व-मङ्गल-कारिणी ।
सर्व-काम-प्रदा देवी, पातु मुष्कं तु दक्षिणम् ।। ३१ ।।

पायात् तदन्यमुष्कं तु, सर्व-दुःख-विमोचिनी ।
सर्व-मृत्यु-प्रशमनी, देवी पातु गुदं मम ।। ३२ ।।

पातु देवी गुह्य-मध्यं, सर्व-विघ्न-निवारिणी ।
सर्वाङ्ग-सुन्दरी देवी, रक्षताद् दक्ष-सक्थिकम् ।। ३३ ।।

वाम-सक्थि-तलं पायात्, सर्व-सौभाग्य-दायिनी ।
अष्ठीवं मम सर्वज्ञा, देवी रक्षतु दक्षिणम् ।। ३४ ।।
वामाष्ठीवं सर्व-शक्तिः, देवी पातु युगं मम।
सर्वैश्वर्य-प्रदा देवी, दक्ष-जानुं सदाऽवतु ।। ३५ ।।
सर्व-ज्ञान-मयी देवी, जानुमन्यं ममावतात् ।
अव्याद् देवी दक्ष-जंघां, सर्व-व्याधि-विनाशिनी ।। ३६ ।।
तदन्यां पातु देवी सा, सर्वाधार-स्वरूपिणी ।
सर्व-पाप-हरा देवी, गुल्फं रक्षतु दक्षिणम् ।। ३७ ।।
सर्वानन्द-मयी देवी, वाम-गुल्फं संदाऽवतु ।
पार्ष्णिं मे दक्षिणं पायात्, सर्व-रक्षा-स्वरूपिणी ।। ३८ ।।
अव्यात् सदा सदा पार्ष्णिं, सर्वेप्सित-फल-प्रदा ।
दक्षांघ्रि-पार्श्वं वशिनी, पूर्वं वाग्-देवता मम।। ३९ ।।
सर्वं कामेश्वरी चोर्ध्वमधो वाग् - देवता मम ।
मोदिनी प्रपदं पातु, विमला दक्षिणेतरे ।। ४० ।।
अंगुलीररुणा पातु, दक्ष-पाद-नखोज्ज्वला ।
तदन्या जयिनी पातु, सदा सर्वेश्वरी मम ।। ४१ ।।
दक्ष-वाम-पाद-तलं, कौलिनी देवता मम ।
कुर्वन्तु जृम्भणा बाणाः, त्रैलोक्याकर्षणं मम ।। ४२ ।।
मोहं संहरतादिक्षु-कोदण्डं भृङ्गमौविक्रम् ।
करोतु सततं पाशो, वशीकरणमद्भुतम् ।। ४३ ।।
विदध्यादंकुशं नित्यं, स्तम्भनं शत्रु-सङ्कटे ।
पीठं मे काम-रूपाख्यं, पातु कामान्तिकं मनः ।। ४४ ।।
पूर्णं पूर्ण-गिरेः पीठं, कान्तिं मे जनयेत् सदा ।
जालन्धरमन्य-जालन्धर-पीठं मे रक्षतु ।। ४५ ।।
सायुज्ये नियतां प्रज्ञां, श्री-पीठं श्री-करं मम ।
कामेश्वरी त्वात्म-तत्त्वं, रक्षेद् वज्रेश्वरी तथा ।। ४६ ।।
विद्या-तत्त्वं शैव-तत्त्वं, पायाछ्रीभग-मालिनी ।
कामं विद्यान्महा-शत्रूनमृतार्णव-मानसम् ।। ४७ ।।
क्रोधं क्रोधपहा हन्यान्मन्युं पैताम्बुजासनम् ।
लोभ चिदासनं हन्याद्, देव्यात्मामृत-रूप-भाक् ।। ४८ ।।

मोहं संहरताच्चक्रं, मदं मन्त्रासनं मम ।
मात्सर्यं नाशयेन्नित्यं, मम सान्ध्यासनं तथा ।। ४९ ।।
आधारं त्रिपुरा रक्षेत्, स्वाधिष्ठानं पुरेश्वरी ।
मणि-पूरं मणि-द्योता, पायात् त्रिपुर-सुन्दरी ।। ५० ।।
अव्यादनाहतं भव्या, नित्यं त्रिपुर-वासिनी ।
विशुद्धिं त्रिपुरा श्रीश्च, आज्ञां त्रिपुर-मालिनी ।। ५१ ।।
इडां मे त्रिपुर-सिद्धा, त्रिपुरा चापि पिङ्गलाम् ।
सुषुम्नां पातु मे नित्या, पायात् त्रिपुर-भैरवी ।। ५२ ।।
त्रैलोक्य-मोहनं चक्रं, रोम-कूपांश्च रक्षतु ।
सर्वाशा-पूरकं चक्रं, सप्त-धातूँश्च रक्षतु ।। ५३ ।।
सर्व-संक्षोभणं चक्रं, प्राणाद्यं वायु-पञ्चकम् ।
सौभाग्य-दायकं चक्रं, नागाद्यनिल-पञ्चकम् ।। ५४ ।।
सर्वार्थ-साधकं चक्रं, कारणानां चतुष्टयम् ।
सर्व-रक्षा-करं चक्रं, रक्षतान्मे गुण-त्रयम् ।। ५५ ।।
सर्व-रोग-हरं चक्रं, पायात् पुर्यष्टकं मम ।
सर्व-सिद्धि-प्रदं चक्रमव्यान्मे कोश-पञ्चकम् ।। ५६ ।।
सर्वानन्द-मयं चक्रं, यशः कीर्तिं च रक्षतु ।
सौन्दर्यं मन्मथः पायाद्, धृतिश्चापि रतिं मम ।। ५७ ।।
प्रीतिं मे पातु या प्रीतिः, रूपं पातु वसन्तकः ।
सङ्कल्पं कल्पकोद्यानं, महा-लक्ष्मी श्रियं मम ।। ५८ ।।
कान्तिं कपालिनी रक्षेत्, मन्दिरं मणि-मण्डपः ।
पुत्रान् शङ्ख-निधिः पायाद्, भार्यां पद्म-निधिस्तथा ।। ५९ ।।
मार्गे क्षेमङ्करी रक्षेत्, मातङ्गी मुकुटं तथा ।
योगिनी प्रकटाद्यास्ता, नव-द्वाराणि पान्तु मे ।। ६० ।।
भोजने मामन्न-पूर्णा, मातङ्गी क्रीडनेऽवतात् ।
वने रक्षतु मां दुर्गा, जाग्रती दुष्ट-निग्रहे ।। ६१ ।।
त्रिधाऽहङ्कार-नैष्ठुर्य-दोष-त्रयं मल-त्रयम् ।
डाकिन्यो योगिनी-मुख्याः, संहरन्तु ममानिशम् ।। ६२ ।।
इच्छा-शक्तिर्गुरोर्भक्तिं, पातु मे ज्ञानमात्मनि ।
ज्ञान-शक्तिः क्रिया-शक्तिः, वैराग्य-विषयेष्वपि ।। ६३ ।।

हृत्-पद्म-कर्णिका-मध्ये, ह्रीङ्कारी परि-रक्षतु ।
वैखरी श्रवणं पातु, मध्यमा मननं पुनः ।। ६४ ।।
योगं रक्षतु पश्यन्ती, साक्षात् ज्ञान-परा मम ।
ब्रह्माणी जागृतं पातु, शयानं वैष्णवी तथा ।। ६५ ।।
सुषुप्तौ चण्डिका पातु, तुर्या मे मोह-कारिणी ।
सदा मां भैरवी पातु, जगद्-भरण-पण्डिता ।। ६६ ।।
चरणाम्भोरुहानन्द - परामृत - रसेरिता ।
प्लाविनी कुण्डली पूर्णा, अन्तरान्तं सदाऽवतात् ।। ६७ ।।
अष्ट-दिक्षु महेन्द्राद्या, सायुधाः पान्तु सर्वदा ।
पायादूर्ध्वां दिशं ब्रह्मा, विष्णुश्चक्रायुधोप्यधः ।। ६८ ।।
अनावृत्तानि स्थानानि, कवचेन तु यानि मे।
तानि सर्वाणि रक्षन्तु, शिवाद्या गुरवः सदा ।। ६९ ।।

।। फल-श्रुति ।।

एतत् सौभाग्य-कवचं, शाङ्करं यस्तु पाठयेत्।
त्रि-सन्ध्यं यः पठेद् भक्त्या, शृणुयाद् वा समाहितः ।। १
तस्य शीघ्रेण सिध्यन्ति, सिद्धयस्त्वणिमादयः ।
गुटिका-पादुकाद्यष्ट-सिद्धयः सम्भवन्ति च ।। २
वश्यादीन्यष्ट - कर्माणि, योगश्चाष्टाङ्ग - संयुतः ।
ब्रह्मा - विष्णु - गिरीशेन्द्र - कन्दर्प - रतिभिः सह।। ३
विचरन्ते तदखिलान्, सिद्ध - गन्धर्व - सेविताः।
तस्य स्मरण-मात्रेण, ग्रह-भूत-पिशाचकाः ।। ४
कीट-वत् प्र-पलायन्ते, कूष्माण्डा भैरवादयः।
तस्यांघ्रि-तोय-पतनात्, प्रशाम्यति महा-रुजाः ।। ५
तत् - पाद - कमलासक्त - रजो - लेशाभि - मर्शनात् ।
वश्यं भवति शीघ्रेण, त्रैलाक्यं स-चराचरम् ।
आबाल-महिला-भूपाः, किमु माया-विमोहिताः ।। ६

।। श्रीवामकेश्वर-तन्त्रे नित्या-षोडशिकार्णवे श्रीसौभाग्य-कवचम् ।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीसौभाग्य-कवच-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

सुन्दर **कैलास पर्वत** पर सुख-पूर्वक बैठे हुए देवताओं से पूजित **श्रीगिरीश** (शङ्कर जी) की **वैदिक स्तोत्रों** से स्तुति करके **श्रीगिरिजा (पार्वती)** ने उन्हें परम भक्ति से प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहा–'**सब प्रकार की सम्पत्ति और रक्षा देनेवाला रहस्य कहिए।**' (१)

श्रीशिव जी ने कहा–**देवि**, तुमने जो पूछा है, उसे कहता हूँ। सुनो, जिसके सुनने मात्र से सांसारिक भय नहीं होते। यह **सौभाग्य-कवच-रहस्य का भी रहस्य** और **सौभाग्य का दाता** है। (२)

मूल-पाठ के अनुसार **विनियोग, ऋष्यादि-न्यास** तथा **षडङ्ग-न्यास** करके श्लोक १ से ६ तक **वर्णित ध्यान** करना चाहिए। फिर **कवच** का **पाठ** करना चाहिए। यथा–

।। कवच-पाठ ।।

मेरी शिखा की रक्षा सदा **त्रिपुर-सुन्दरी** करें। शिर की रक्षा **कामेश्वरी** नित्या करें। उसके पूर्व भाग (सिर के पूर्व भाग) की रक्षा **भग-मालिनी** करें ।। १ ।। **नित्य-क्लिन्ना** सिर के दक्षिण भाग की तथा **भेरुण्डा** सिर के पश्चिम की रक्षा करें। **वह्नि-वासिनी** सिर के वाम भाग की और **विद्येश्वरी** मुख की रक्षा करें ।। २ ।। **शिव-दूती** मेरे ललाट की, ललाट के दक्षिण भाग की **त्वरिता** और ललाट के वाम भाग की रक्षा **कुल-सुन्दरी** करें।। ३।। **नित्या** भ्रू-मध्य की और दाहिनी भौंह की रक्षा **नील-पताका** करें। बाँई भौंह की रक्षा **विजया** करें। दक्षिण नयन की रक्षा **सर्व-मङ्गला** करें ।। ४ ।। **ज्वाला-मालिनी** बाँई आँख की तथा पलकों की रक्षा **चित्रा** करें। दाहिने कान की रक्षा **महा-नित्या** और बाँएँ कान की रक्षा **महोद्यमा** करें ।। ५ ।।

दाहिने और बाँएँ कपोलों की रक्षा क्रमशः **बटुक** और **क्षेत्र-पाल** करें। दक्ष नासा-पुट की **दुर्गा** और बाँएँ नासा-पुट की रक्षा **भारती** करें ।। ६ ।। नासिका के अग्र-भाग की रक्षा सदा **महा-लक्ष्मी** करें। दाहिनी कमर की रक्षा **अणिमा सिद्धि** और बाँई कमर की रक्षा **महिमा सिद्धि** करें ।। ७ ।। दाहिने गण्ड-स्थल (कनपटी-सहित मुख का समस्त पार्श्व) की रक्षा **गरिमा सिद्धि** और बाँएँ गण्ड-स्थल की रक्षा **लघिमा सिद्धि** करें। ऊर्ध्वोष्ठ की रक्षा **प्राप्ति सिद्धि** और अधरोष्ठ की रक्षा **प्राकाम्य** सिद्धि करें ।। ८ ।। ऊपर के दाँतों की रक्षा **ईशित्व सिद्धि** और नीचे के दाँतों की रक्षा **वशित्व सिद्धि** करें। रसना (जीभ) की रक्षा **रस सिद्धि** और तालू की रक्षा **मोक्ष सिद्धि** करें ।। ९ ।। दोनों तालु-मूल की

रक्षा **ब्राह्मी** और **माहेश्वरी** करें। **कौमारी** चिबुक (ठोडी या ठुड्डी) की तथा उसके नीचे के भाग की रक्षा **वैष्णवी** करें।। १० ।।

कण्ठ की रक्षा **वाराही** और उसके निचले भाग की रक्षा **इन्द्राणी** करें। कृकाटिका (गर्दन के पिछले भाग) की रक्षा **चामुण्डा** और सब ओर से **महा-लक्ष्मी** रक्षा करें।। ११ ।। दाहिने स्कन्ध (कन्धे) की रक्षा **सर्व-संक्षोभिणी मुद्रा** और बाँएँ कन्धे की रक्षा **द्राविणी-मुद्रा** करें। अंस-द्वय (कन्धे की हड्डी) की रक्षा क्रमशः **आकर्षिणी-मुद्रा** और **वश्य-मुद्रा** करें। दाहिनी भुजा की रक्षा **उन्मादिनी-मुद्रा**, बाँई भुजा की रक्षा **महांकुशा-मुद्रा** और दाहिनी काँख की रक्षा **खेचरी-मुद्रा** करें।।१२-१३।। बाँई काँख की रक्षा **बीज-मुद्रा** करें। दाहिने भाग की रक्षा **योनि-मुद्रा** और बाँएँ भाग की रक्षा **त्रिखण्डा-मुद्रा** करें।। १४ ।। दक्ष कूर्पर (कुहनी) की रक्षा **श्रीकामाकर्षिणी** नित्या और बाँएँ कूर्पर की रक्षा **बुद्ध्याकर्षिणी** करें।।१५।।

दाहिने प्रकाण्ड (भुजा के ऊपरी भाग) की रक्षा **अहङ्काराकर्षिणी** और बाँएँ प्रकाण्ड की रक्षा **शब्दाकर्षिणी** करें व **स्पर्शाकर्षिणी** दाहिने प्रकोष्ठ (कुहनी से मणि-बन्ध के ऊपर के भाग) की रक्षा करें तथा बाँएँ प्रकोष्ठ की रक्षा **रूपाकर्षिणी** करें। दाहिने मणि-बन्ध की रक्षा **रसाकर्षिणी** करें।।१६-१७।। बाँएँ मणि-बन्ध की रक्षा **गन्धाकर्षिणी** करें। दाहिने और बाँएँ करभ (पञ्जे के पिछले भाग, कर-पृष्ठ) की रक्षा क्रमशः **चित्ताकर्षिणी** और **धैर्याकर्षिणी** करें।।१८।। **स्मृत्याकर्षिणी** और **नामाकर्षिणी** बाँएँ और दाहिने तरफ रक्षा करें। अँगुलियों की रक्षा **बीजाकर्षिणी** करें।।१९।। बाँई अँगुलियों की रक्षा **आत्माकर्षिणी**, दाहिने नाखूनों की रक्षा **अमृताकर्षिणी** तथा बाँएँ नाखूनों की रक्षा **शरीराकर्षिणी** करें।। २० ।।

दाहिने स्तन के ऊपरी भाग की रक्षा **अनङ्ग-कुसुमा शक्ति** तथा बाँएँ स्तन के ऊपरी भाग की रक्षा **अनङ्ग-मेखला** करें।। २१ ।। **अनङ्ग-मदना** दाहिने स्तन की रक्षा करें, उसके चूचक की रक्षा सदा **अनङ्ग-मदनातुरा** करें।। २२ ।। **अनङ्ग-रेखा** बाँएँ स्तन की रक्षा करें और उसके चूचक की रक्षा **अनङ्ग-वेगिनी** करें। क्रोड (वक्षः-स्थल, छाती और कन्धों के बीच का भाग) की रक्षा **अनङ्गांकुशा** करें।। २३ ।। वक्षः-स्थल की रक्षा सदा **अनङ्ग-मालिनी** करें। हृदय की रक्षा **सर्व-संक्षोभिणी** करें। **सर्व-विद्राविणी** कुक्षि (पेट) की रक्षा करें, उसके दाईं तरफ **सर्वाकर्षिणी**, बाँईं तरफ आह्लादिनी (**सर्वाह्लाद-करी**) और मध्य में **सम्मोहिनी (सर्व-सम्मोहिनी)** सदा रक्षा करें।। २४-२५।।

पीठ की रक्षा **सर्व-स्तम्भिनी** करें। नाभि की रक्षा **सर्व-जृम्भिणी** करें। वस्ति-देश (पेट का नाभि से नीचे का भाग, पेडू) की रक्षा **वशङ्करी (सर्व-वशङ्करी)** और कटि (कमर) की रक्षा **सर्व-रञ्जिनी** करें।।२६।। जघन-मण्डल की रक्षा **सर्वोन्मादिनी** करें।

सर्वार्थ-साधिनी शक्ति मेरे नितम्बों की रक्षा करें ।।२७।। दाहिने स्फिच (कूल्हे) की रक्षा **सर्व-सम्पत्ति-कारिणी** और बाँएँ स्फिच की रक्षा **सर्व-मन्त्र-मयी** शक्ति करें ।।२८।। दोनों ककुन्दरों (नितम्ब कूप) की रक्षा **सर्व-द्वन्द्व-क्षयङ्करी** करें । दाहिने वंक्षण की रक्षा **सर्व-सिद्धि-प्रदा देवी** करें ।।२९।। वाम वंक्षण की रक्षा **सर्व-सम्पत्-प्रदा देवी** करें । गुह्य-स्थान की रक्षा **सर्व-प्रियङ्करी** करें ।।३०।।

मेढ्र (लिङ्ग) की रक्षा **सर्व-मङ्गल-कारिणी** करें। दाहिने मुष्क (अण्ड-कोष) की रक्षा **सर्व-काम-प्रदा देवी** करें ।।३१।। दूसरे (वाम) मुष्क की रक्षा **सर्व-दुख-विमोचनी** करें। मेरी गुदा की रक्षा **सर्व-मृत्यु-प्रशमनी** करें ।।३२।। गुह्य के मध्य भाग की रक्षा **सर्व-विघ्न-निवारिणी** करें । दाहिनी सक्थि (जाँघ की हड्डी) की रक्षा **सर्वाङ्ग-सुन्दरी** करें ।। ३३।। बाँई सक्थि की रक्षा **सर्व-सौभाग्य-दायिनी** करें । दाहिने अष्ठीव की रक्षा **सर्वज्ञा देवी** करें ।।३४।। बाँएँ अष्ठीव की रक्षा **सर्व-शक्ति-देवी** करें । दक्ष-जानु (जाँघ) की रक्षा **सर्वैश्वर्य-प्रदा देवी** करें ।।३५।।

वाम जानु की रक्षा **सर्व-ज्ञान-मयी देवी** करें । दक्ष जङ्घा (पिण्डली) की रक्षा **सर्व-व्याधि-विनाशिनी** करें ।।३६।। दूसरी (वाम) जंघा की रक्षा **सर्वाधार-स्वरूपिणी** करें। दाहिने गुल्फ (टखने) की रक्षा **सर्व-पाप-हरा** करें ।।३७।। वाम गुल्फ की रक्षा सदा **सर्वानन्द-मयी देवी** करें। दाहिनी पार्ष्णि (एड़ी) की रक्षा **सर्व-रक्षा-स्वरूपिणी** करें ।।३८।। वाम पार्ष्णि की रक्षा **सर्वेप्सित-फल-प्रदा देवी** करें। दाहिने पैर के पञ्जे के पार्श्व की रक्षा **वशिनी** और बाँएँ की रक्षा **वाग्देवता** करें ।।३९।। सब तरफ **कामेश्वरी** तथा ऊपर-नीचे **वाग्-देवता** रक्षा करें । **मोदिनी** दाहिने प्रपद (पैर के अगले भाग) की और **विमला** बाँएँ प्रपद की रक्षा करें ।।४०।।

अँगुलियों की रक्षा **अरुणा** करें और दाहिने पैर के नाखूनों की रक्षा **उज्ज्वला** करें । दूसरे (बाँएँ पैर के नाखूनों) की रक्षा **जयिनी** करें । **सर्वेश्वरी** सदा मेरे दाहिने पाद-तल (तलुआ) की रक्षा करें । **कौलिनी** वाम पाद-तल की रक्षा करें । **जृम्भण बाण** मेरे प्रति त्रैलोक्य का आकर्षण करें ।।४१-४२।। बड़वानल के समान चञ्चल मोह का नाश **इक्षु-कोदण्ड** (इक्षु-चाप, गन्ने का बना धनुष) करें । **पाश** सदा अद्भुत वशीकरण करें ।।४३।। शत्रु-सङ्कट के समय **अंकुश** स्तम्भन करें । कामान्तिक मन (इच्छाओं या कामनाओं से भरपूर मन) की रक्षा **काम-रूप** नामक पीठ करें ।।४४।। **पूर्णगिरि-पीठ** पूर्ण (शरीरस्थ पूर्ण-गिरि पीठ) की रक्षा करते हुए कान्ति उत्पन्न करें । **जालन्धर पीठ** मेरे जालन्धर-पीठ की रक्षा करें ।।४५।।

प्रज्ञा मुझे सायुज्य दें, **श्रीपीठ** मुझे श्री (धन) दें। **कामेश्वरी**–आत्म-तत्व की रक्षा करें। **वज्रेश्वरी**– विद्या-तत्व की और **श्री भग-मालिनी**–शिव-तत्व की रक्षा करें। काम आदि महा-शत्रुओं से **अमृतार्णव** (सुधा-सागर) रक्षा करें ।।४६-४७।। क्रोध का **क्रोधापहा**, रोष का **पैताम्बुजासन**, लोभ का **चिदासन**, जो देवी के दिव्य-रूप के समान है, नाश करें ।।४८।। मोह का **नाश चक्र (श्रीचक्र)** करें। मदन (काम-वासना) का नाश **मन्त्रासन** करें। मेरे मात्सर्य का नाश **सान्ध्यासन** करें ।।४९।। आधार (मूलाधार) की रक्षा **त्रिपुरा** और स्वाधिष्ठान की रक्षा **पुरेश्वरी** करें। मणिपूर की रक्षा मणि-द्योता **त्रिपुर-सुन्दरी** करें ।।५०।।

अनाहत चक्र की रक्षा भव्य **त्रिपुर-वासिनी** करें। विशुद्धि-चक्र की रक्षा **त्रिपुरा-श्री** और आज्ञा-चक्र की रक्षा **त्रिपुरा-मालिनी** करें ।।५१।। इडा नाड़ी की रक्षा **त्रिपुर-सिद्धा** और पिङ्गला नाड़ी की रक्षा **त्रिपुरा** करें। सुषुम्ना की रक्षा **त्रिपुर-भैरवी** करें ।।५२।। रोम-कूपों की रक्षा **त्रैलोक्य-मोहन** चक्र करें। सप्त-धातुओं (१रस, २ रक्त, ३ मांस, ४ वसा, ५ अस्थि, ६ मज्जा तथा ७ वीर्य) की रक्षा **सर्वाशा-पूरक-चक्र** करें ।।५३।। प्राणादि (१ प्राण, २ अपान, ३ समान, ४ उदान तथा ५ व्यान) वायु-पञ्चक की रक्षा **सर्व-संक्षोभण-चक्र** करें। नाग आदि पाँच अनिलों (वायुओं-१ नाग, २ कूर्म, ३ कृकल, ४ देवदत्त और ५ धनञ्जय) की रक्षा **सर्व-सौभाग्य-दायक-चक्र** करें ।।५४।। कारण-चतुष्टय की रक्षा **सर्वार्थ-साधक-चक्र** करें। गुण-त्रय (१ सत्त्व, २ रज, ३ तम) की रक्षा **सर्व-रक्षा-कर-चक्र** करें ।।५५।।

पुर्यष्टक की रक्षा **सर्व-रोग-हर- चक्र** करें। कोष-पञ्चक (१ अन्न-मय कोष, २ प्राण-मय कोष, ३ मनो-मय कोष, ४ विज्ञान-मय कोष तथा ५ आनन्द-मय कोष) की रक्षा **सर्व-सिद्धि-प्रद-चक्र** करें ।।५६।। यश और कीर्ति की रक्षा **सर्वानन्द-मय- चक्र** करें। सौन्दर्य की रक्षा **मन्मथ** (काम-देव) करें। धृति (धैर्य) की रक्षा **रति** करें ।।५७।। **प्रीति** (प्रेम, सौहार्द्र, प्रसन्नता, आह्लाद) की रक्षा **प्रीति** करें। रूप की रक्षा **बसन्त** करें। सङ्कल्प की रक्षा **कल्पकोद्यान** और श्री (धन आदि) की रक्षा **महा-लक्ष्मी** करें ।।५८।। कान्ति (मनोहरता) की रक्षा **कपालिनी** करें, मन्दिर (घर) की रक्षा **मणि-मण्डप** करें। पुत्रों की रक्षा **शङ्ख-निधि** और भार्या (पत्नी) की रक्षा **पद्म-निधि** करें ।।५९।। मार्ग में **क्षेमङ्करी** रक्षा करें। मुकुट की रक्षा **मातङ्गी** करें। नव-द्वारों (१ मुख, २-३ नासा-पुट-द्वय, ४-५ नेत्र-द्वय, ६-७ कर्ण-द्वय, ८ लिङ्ग, ९ गुदा-ये नव-द्वार हैं) की रक्षा **प्रकटा** आदि योगिनियाँ करें ।।६०।।

भोजन-काल में **अन्न-पूर्णा,** खेलने के समय **मातङ्गी** रक्षा करें। दुष्टों के निग्रह के लिए सदा जागनेवाली **दुर्गा** वन में रक्षा करें ।।६१।। तीन प्रकार का अहङ्कार, निष्ठुरता, दोष-त्रय (१ कफ, २ वात, ३ पित्त), मल-त्रय (१ आणव, २ मायिक, ३ कायिक) का नाश

डाकिनी-योगिनी सदैव करें।।६२।। इच्छा-शक्ति और गुरु-भक्ति की रक्षा मेरा **ज्ञान** करे। ज्ञान-शक्ति, क्रिया-शक्ति, वैराग्य तथा विषयों की रक्षा हृदय-कमल की कर्णिका में निवास करनेवाली **ह्रीङ्कारी** करें। **वैखरी** श्रवण-शक्ति की रक्षा करें। मनन की रक्षा **मध्यमा** करें।।६३-६४।। योग की रक्षा **पश्यन्ती** और ज्ञान की रक्षा **परा-वाणी** करें। **ब्रह्माणी** सोते समय और **वैष्णवी** जागते समय रक्षा करें।।६५।।

सुषुप्ति (प्रगाढ़ निद्रा) में **चण्डिका** और तुर्यावस्था (चौथी अवस्था, जिसमें **आत्मा-ब्रह्म** से तदाकार हो जाती है) **मोह-कारिणी** रक्षा करें। सदैव जगद्धरण-पण्डिता **भैरवी** मेरी रक्षा करें।।६६।।परामृत से प्लावित चरण-कमलोंवाली **पूर्णा कुण्डली** अन्तरान्त की सदा रक्षा करें।।६७।। आठों दिशाओं (१ पूर्व, २ आग्नेय, ३ दक्षिण, ४ नैऋत्य, ५ पश्चिम, ६ वायव्य, ७ उत्तर और ८ ईशान) की रक्षा **महेन्द्र** आदि (१ इन्द्र, २ अग्नि, ३ यम, ४ निऋति, ५ वरुण, ६ वायु, ७ कुबेर या सोम और ८ ईशान) अपने-अपने **आयुधों** (१ वज्र, २ शक्ति, ३ दण्ड, ४ खड्ग, ५ पाश, ६ अंकुश, ७ गदा और ८ शूल) के साथ सदैव करें। ऊर्ध्व-दिशा में **ब्रह्मा** तथा **चक्र-धारी विष्णु** अध: दिशा की रक्षा करें।।६८।। जो स्थान **कवच** से अनावृत हैं, उनकी रक्षा **शिव** आदि गुरु-जन करें।।६९।।

।। फल-श्रुति ।।

श्रीशिव जी द्वारा कथित उक्त **सौभाग्य-कवच** जो भक्ति-पूर्वक तीनों सन्ध्याओं में पढ़ता, पढ़वाता या सुनता है, उसे शीघ्र ही **अणिमा** आदि **अष्ट-सिद्धियाँ** (१ अणिमा, २ लघिमा, ३ प्राप्ति, ४ प्राकाम्य, ५ महिमा, ६ ईशित्व, ७ वशित्व और ८ कामावसायिता) तथा **गुटिका, पादुका** आदि (१ गुटिका, २ पादुका, ३ रस-सिद्धि, ४ अन्तर्धान, ५ खड्ग, ६ खेचरी, ७ यक्षिणी और ८ वेताल-सिद्धि) **आठ सिद्धियाँ** प्राप्त हो जाती हैं।।१-२।।

वशीकरण आदि **आठ कर्मों** (१ वशीकरण, २ शान्ति, ३ आकर्षण, ४ मोहन, ५ स्तम्भन, ६ विद्वेषण, ७ उच्चाटन और ८ मारण) तथा **अष्टाङ्ग योग** (१ यम, २ नियम, ३ आसन, ४ प्राणायाम, ५ प्रत्याहार, ६ ध्यान, ७ धारणा और ८ समाधि) से युक्त होकर **ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, कामदेव** और **रति** के साथ सर्वत्र विचरता हुआ **सिद्धों** और **गन्धर्वों** से सेवित होता है। उसके स्मरण मात्र से **ग्रह, भूत, पिशाच कूष्माण्ड** तथा **भैरव** आदि कीड़े-मकोड़ों के समान भाग जाते हैं। उसके पैरों से स्पृष्ट जल से **महा-रोग** भी शान्त हो जाते हैं।।३-५।। उसके चरण-कमलों की धूल के स्पर्श मात्र से चराचर त्रैलोक्य शीघ्र ही वश में हो जाते हैं। बालक, महिलाएँ, राजा भी माया-पूर्वक उसके वशीभूत हो जाते हैं।। ६।।

★★★

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिता-हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्र-साधना

।। पूर्व-पीठिका—श्रीअगस्त्य उवाच ।।

हयग्रीव! दया-सिन्धो!, ललितायाः शुभं मम।
हृदयं च महोत्कृष्टं, कथयस्व महा-मुने!।। १।।

।। श्रीहयग्रीव उवाच ।।

श्रृणु त्वं शिष्य! वाक्यं मे, हृदयं कथयामि ते।
महा-देव्यास्तथा शक्तेः, प्रीति-सम्पाद-कारकम्।। २।।

बीजात्मकं महा - मन्त्र - रूपकं परमं निजम्।
कामेश्वर्याः स्वाङ्ग - भूतं, डामर्यादिभिरावृतम्।। ३।।

कामाकर्ष्यादि-संयुक्तं, पञ्च - काम - दुघान्वितम्।
नव-वल्लि-समायुक्तं, कादि-हादि- मतान्वितम् ।। ४।।

त्रिकूट - दर्शितं गुप्तं, हृदयोत्तममेव च ।
मूल-प्रकृति-व्यक्तादि-कला - शोधन-कारकम्।। ५।।

विमर्श - रूपकं चैव, विद्या - शक्ति - षडङ्गकम्।
षडध्व-मार्ग-पीठस्थं, सौर-शाक्तादि - संज्ञकम्।। ६।।

अभेद-भेद-नाशं च, सर्व-वाग्-वृत्ति - दायकम्।
तत्त्व-चक्र-मयं तत्त्व-विन्दु - नाद-कलान्वितम्।। ७।।

प्रभा-यन्त्र-समायुक्तं, मूल - चक्र - मयान्वितम्।
कण्ठ-शक्ति-मयोपेतं, भ्रामरी - शक्ति-रूपकम्।। ८।।

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्री ललिता-हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्रस्य श्रीआनन्द-भैरव ऋषिः। अमृत-विराट् छन्दः। श्रीललिता-वाग्देवता-प्रसाद-सिद्धये जपे विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

ॐ श्रीआनन्द-भैरव-ऋषये नमः—शिरसि। ॐ अमृत-विराट्-छन्दसे नमः—मुखे। ॐ श्रीललिता-वाग्देवता-प्रसाद-सिद्धये जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

।। कर-न्यास ।।

ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं' मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' अनामिकाभ्यां

नमः। ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कनिष्ठाभ्यां नमः। ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं' करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

।। अङ्ग-न्यास ।।

ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' हृदयाय नमः। ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' शिरसे स्वाहा। ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं' शिखायै वषट्। ॐ ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' कवचाय हुम्। ॐ क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ सौः 'स-क-ल-ह्रीं' अस्त्राय फट्।

।। ध्यान।।

द्रां द्रीं क्लीं बीज-रूपे, हसित - कह - कहे, ब्रह्म-देहान्तरङ्गे!
ब्लूं सः क्रों वर्ण-माले, सुर-गण-नमिते, तत्त्व-रूपे! हसखफ्रें ।।
ह्सां ह्सीं ह्सौं बीज-रूपे, परम-सुख-करे, वीर-मातः! स्वयम्भूः ।
ऐं सहखफ्रें बीज-तत्त्वे, कलित-कुल-कले! ते नमः शुद्ध-वीरे ।। १।।

।। मानस-पूजन ।।

ॐ लं पृथिवी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः।
ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिता- त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः।
ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः।
ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। मूल हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्र-पाठ ।।

हृदयाम्बुज - मध्यस्था, ब्रह्मात्मैक्य - प्रदायिनी ।
त्रिपुराम्बा त्रिकोणस्था, पातु मे हृदयं सदा ।। १ ।।
अवर्ण - मालिका शक्तिर्वर्णमाला - स्वरूपिणी ।
नित्याऽनित्या तत्त्वगा सा, निराकार - मयान्विता ।। २ ।।
शब्द - ब्रह्म - मयी शब्द - बोधाकार - स्वरूपिणी ।
सांविदी वादि - संसेव्या, सर्व - श्रुतिभिरीडिता ।। ३ ।।
महा - वाक्योपदेशानी, स्वर - नाडी - गुणान्विता ।
ह्रीं-कार-चक्र - मध्यस्था, ह्रीमुद्यान - विहारिणी ।। ४ ।।
ह्रीं मोक्ष-कारिणी ह्रीं ह्रीं, महा-ह्रीं-कार-धारिणी ।
काल-कण्ठी महा-देवी, कुरु-कुल्ला कुलेश्वरी ।। ५ ।।

ऐं ऐं प्रकाश - रूपेण, ऐं बीजान्तर - वासिनी ।
ईशस्था ईदृशी चेशी, ईं ईं बीज - करी तथा ।। ६ ।।
लक्ष्मी - नारायणान्तःस्था, लक्ष्यालक्ष्य-करी तथा ।
शिवस्था हेति - वर्णस्था, स - शक्तेर्वर्ण - रूपिणी ।। ७ ।।
कमलस्था कला-माला, ह्रां ह्रीं ह्रीं ह्रीं मुखी तथा ।
लावण्य - सुन्दरी पातु, लक्ष्य - कोणाग्रमन्विता ।। ८ ।।
लां लां लीं लीं सुरैः स्तुत्या, सां सीं सूं सैं सुरार्चिता ।
कां कीं कूं काकिनी सेव्या, लां लीं लूं काकिनी-स्तुता ।। ९ ।।
बिन्दु - चक्रेश्वरी पातु, द्वितीया - वर्ण - देवता ।
वसु - कोणेश्वरी देवी, द्वि - दशारेश्वरी च माम् ।। १० ।।
मन्वस्त्र - चक्र - मध्यस्था, नाग - पत्रेश्वरी सदा।
षोडशारेश्वरी नित्या, मण्डल - त्रय - देवता ।। ११ ।।
भू-पुर-त्रय-मध्यस्था, द्वादश - ग्रन्थि - भेदिनी ।
हसां हसीं सु - बीजस्था, हरिद्रादिभिरर्चिता ।। १२ ।।
अनन्त - कोटि - जन्मस्था, जन्माजन्मत्व - वर्जिता ।
अमृताम्भोधि - मध्यस्था, अमृतेशादि - सेविता ।। १३ ।।
मृतामृत - करी मूल - विराट् - शक्तिः परात्मिका ।
आत्मनं पातु मे नित्यं, तथा सर्वाङ्गमेव च ।। १४ ।।
अष्ट - दिक्षु कराली सा, ऊर्ध्वाधः-प्रान्तके तथा ।
गुरु-शक्ति - महा-विद्या, गुरु - मण्डल - गामिनी ।। १५ ।।
सर्व - चक्रेश्वरी सर्व - ब्रह्मादिभिः सु - वन्दिता ।
सत्त्व-शक्तिः रजः - शक्तिस्तमः-शक्तिः परात्मिका ।। १६ ।।
प्रपञ्चेशी सु - कालस्था, महा - वेदान्त - गर्भिता ।
कूटस्था कूट - मध्यस्था, कूटाकूट - विवर्जिता ।। १७ ।।
योगाङ्गी योग-मध्यस्था, अष्ट - योग - प्रदायिनी ।
नव - शक्तिः कृती माता, अष्ट - सिद्धि-स्वरूपिणी ।। १८ ।।
नव - वीरावली रम्या, मुक्ति - कन्या मुकुन्दगा ।
उपदेश - करी विद्या, महा - मुख्य - विराजिता ।। १९ ।।
मुख्याऽमुख्या महा-मुख्या, मूल - बीज - प्रवर्तिका ।
दिक्-पालकाः सदा पान्तु, श्री श्री-चक्राधि-देवताः ।। २० ।।

दिग् - योगिन्यष्टकं पातु, तथा भैरव चाष्टकम् ।
षडङ्ग - देवताः पान्तु, नित्या - षोडशिकास्तथा ।। २१।।
नाथ - शक्तिः सदा पातु, त्रिकोणान्तर - दीपिका ।
त्रि-सारा त्रय - कर्माणि, नाशिनी त्रयं दर्शति ।। २२।।
त्रि - काला शोषणी शोष - कारिणी शोषणेश्वरी ।
भुक्ति-मुक्ति-प्रदा बाला, भुवनाम्बा वल्गेश्वरी (बुधेश्वरी)।। २३।।
अतृप्तिस्तृप्ति - सन्तुष्टा, तृप्ता तृप्त - करी सदा ।
आम्नाय - शक्तयः पान्तु, आदि-शेष-सु-तल्पिनी ।। २४।।
राज्यत्वं देहि मे नित्यं, आदि-शम्भु-स्वरूपिणी ।
सर्व-रोग-हरा सर्व - कैवल्य - पद - दायिनी ।। २५।।

।। फल-श्रुति ।।

इदं तु हृदयं दिव्यं, ललिता - प्रीति - दायकम् ।
अनेन च समं नास्ति, स्तोत्रं प्रख्यात - वैभवम्।।१।।
शक्ति - रूपं शक्ति - गुप्तं, प्रकटाङ्गे प्रभुं शुभम् ।
मूल - विद्यात्मकं मूल - ब्रह्म - सम्भव - कारणम् ।।२।।
नादादि - शक्ति - संयुक्तमभूतमद्भुतं महत् ।
रोगहं पापहं विघ्न - नाशनं विघ्न - हारिणम्।।३।।
चिरायुष्य - प्रदं सर्व - मृत्यु - दारिद्र्य - नाशनम् ।
क्रोधहं मुक्तिदं मुक्ति - दायकं परं मे सुखम्।।४।।
रुद्रदं मृडपं विष्णुं, दण्डकं ब्रह्म - रूपकम् ।
विचित्रं च सुचित्रं च, सुन्दरं च सु -गोचरम्।।५।।
नाभक्ताय न दुष्टाय, नाविश्वस्ताय देशिकः ।
न दापयेत् परं विद्या - हृदयं मन्त्र - गर्भितम्।।६।।
स्तोत्राणामुत्तमं स्तोत्रं, मन्त्राणामुत्तमं मनुम् ।
बीजानामुत्तमं बीजं, शाक्तानामुत्तमं शिवम्।।७।।
पठेद् भक्त्या त्रि - कालेषु, अर्ध - रात्रे तथैव च ।
वाक्-सिद्धि-दायकं नित्यं, पर-विद्या-विमोहकम्।।८।।
स्व-विद्या-स्थापकं चान्यद्, यन्त्र-तन्त्रादि-भेदनम् ।
कृत्तिका - नक्षत्र-कूर्माख्ये, चक्रे स्थित्वा जपेन्मनुम्।।९।।

।। श्रीमहत्तर-योनि-विद्याया महा-तन्त्रे श्रीललिता-हृदय-स्तोत्रम् ।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीललिता-हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

श्रीअगस्त्य जी बोले-हे दया-सागर महा-मुनि **हयग्रीव जी**! मुझे ललिता का परम श्रेष्ठ **'हृदय'** बताइए।।१।।

श्रीहयग्रीव जी बोले-हे शिष्य! सुनो, मैं तुम्हें **'हृदय'** सुनाता हूँ, जो शक्ति को प्रसन्नता प्राप्त कराता है।।२।।

यह **बीजात्मक** और **महा-मन्त्र-रूप** स्वयं **कामेश्वरी** का अपना अङ्गभूत है तथा **डामरी** आदि से आवृत है ।।३।।

कालाकर्षी, पञ्च-काम-दुघा, नव-वल्ली, कादि-हादि-मत से युक्त है ।।४।।

त्रि-कूटों का दर्शक यह गुप्त **'हृदय'** श्रेष्ठ ही है और **मूल-प्रकृति, व्यक्तादि कलाओं का शोधक है** ।।५।।

यह **विमर्श-रूप, विद्या और शक्ति का षडङ्ग, षडध्व-मार्ग** और **पीठस्थ** तथा **सौर-शाक्तादि का सूचक है** ।।६।।

अभेद-भेद का नाशक, वाणी की सभी शक्तियों को देनेवाला, तत्त्व-चक्र-मय और **तत्त्व, बिन्दु, नाद, कला से समन्वित है** ।।७।।

प्रकाश-पूर्ण यन्त्र और **मूल-चक्र, कण्ठ-शक्ति से युक्त** यह **भ्रामरी शक्ति-स्वरूप** है ।।८।।

विनियोग-उक्त **श्रीललिता-हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्र** के ऋषि **श्रीआनन्द-भैरव**, छन्द **अमृत-विराट्** और विनियोग **श्रीललिता-वाग्-देवता की प्रसन्नता** की प्राप्ति है।

दोनों हाथों से **प्रणाम** करते हुए **कूट-त्रय की दुहरी आवृत्ति** द्वारा दोनों **षडङ्ग** (कर एवं अङ्ग) **न्यास** कर **ध्यान** करना चाहिए। यथा-

हे वीर-माता! आप **द्रां-द्रीं-क्लीं** बीज-स्वरूपा, **हसित-कह-कहा, ब्रह्म-देह की अन्तरङ्गा, ब्लूं-सः-क्रों** वर्ण-माला, **देव-गणों द्वारा वन्दिता, तत्त्व-स्वरूपा, ह्स्ख्फ्रें-ह्सां-ह्सीं-ह्सौं**-बीज-स्वरूपा, **परम-सुख-दायिनी, स्वयम्भू, स्ह्ख्फ्रें**-बीज-तत्त्वा, **कलित-कुल-कला** और **शुद्ध-वीरा** हैं। आपको नमस्कार है।

उक्त प्रकार **ध्यान** कर **मानस-पञ्चोपचारों** से पूजन कर, **नौ मुद्राएँ** दिखाकर तीन बार **मूल-मन्त्र** का जप कर **योनि-मुद्रा** से प्रणाम करना चाहिए और फिर **'हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्र'** का पाठ करना चाहिए। यथा-

।। हृदय-स्तोत्र-माला-मन्त्र ।।

हृदय-कमल के मध्य में विराजमाना, **ब्रह्म** से **आत्मा** का ऐक्य करानेवाली, **त्रिकोण**-स्थिता माता त्रिपुरा सदा मेरे हृदय की रक्षा करें ।।१।।

अवर्ण-माला, शक्ति-वर्ण-माला-स्वरूपा, नित्या और अनित्या, तत्त्व-व्यापिनी वे निराकार-**मय** हैं ।।२।।

शब्द-ब्रह्म-मयी, शब्द-ज्ञान-स्वरूपा, संविद्-रूपिणी, विद्वद्-सेविता वे सभी श्रुतियों द्वारा वर्णिता हैं ।।३।।

महा-वाक्यों का उपदेश करनेवाली, **स्वर-नाड़ी-गुण-स्वरूपा, ह्रीं**-कार-चक्र के मध्य में विराजनेवाली वे **ह्रीं-रूपी उद्यान** में विहार करती हैं ।।४।।

ह्रीं से मोक्ष-दायिनी **ह्रीं-ह्रीं महा-ह्रीं** को धारण करनेवाली, **काल** को कण्ठ में रखनेवाली **महादेवी** वे **कुलेश्वरी कुरु-कुल्ला** हैं ।।५।।

ऐं-ऐं प्रकाश-रूपिणी, ऐं-बीज के अन्तर में रहनेवाली, **ईशस्था,** ईदृशी और **ईशी ईं-ईं** बीज-कारिणी हैं ।।६।।

लक्ष्मी और **नारायण** के हृदय में रहनेवाली, **लक्ष्य** और **अलक्ष्य** का बोध करानेवाली, **शिवस्था ह**-वर्णस्था और **स**-शक्ति के वर्णवाली हैं ।।७।।

कमल पर विराजमाना, कला-मालावाली, ह्रां-ह्रीं-ह्रीं-ह्रीं-मुखी हैं। **लक्ष्य-कोणाग्र** से युक्ता **लावण्य-सुन्दरी** रक्षा करें ।।८।।

लां लां लीं लीं देवों से वन्दिता, **सां सीं सूं सैं** देवों से पूजिता, **कां कीं कूं** काकिनी और **लां लीं लूं लाकिनी** से वन्दिता हैं ।।९।।

द्वितीया वर्ण-देवता **विन्दु-चक्रेश्वरी, वसु-कोणेश्वरी** और **द्वि-दशारेश्वरी** देवी मेरी रक्षा करें।।१०।।

मन्वस्र-**चक्र** के मध्य में रहनेवाली, नाग-**दलों की ईश्वरी, षोडशार की ईश्वरी** नित्या और तीनों **मण्डल के देवता** सदा रक्षा करें ।।११।।

तीनों **भू-पुरों** के मध्य में रहनेवाली, **बारह ग्रन्थियों** का भेदन करनेवाली, हसां हसीं सुन्दर बीजों में अवस्थिता, हल्दी आदि द्वारा अर्चिता रक्षा करें ।।१२।।

अनन्त कोटि जन्मों में विराजिता, जन्मत्व और अजन्मत्व से विरहिता, अमृत-सागर के मध्य में रहनेवाली, अमृतेशादि से सेविता रक्षा करें ।।१३।।

मृत और अमृत करनेवाली, मूल विराट् शक्ति, परात्मिका मेरी आत्मा और सभी अङ्गों की सदा रक्षा करें ।।१४।।

आठों दिशाओं में वह कराली ऊर्ध्व तथा अधः प्रदेशों में, गुरु-मण्डल में पहुँचनेवाली गुरु-शक्ति महा-विद्या रक्षा करें ।।१५।।

ब्रह्मादि सभी के द्वारा सुचारु रूप से वन्दिता, सत्त्व-रज-तमः शक्ति-रूपा परात्मिका रक्षा करें ।।१६।।

प्रपञ्च की स्वामिनी, सुन्दर काल में विराजमाना, महा-वेदान्त में छिपी हुई, कूटस्था, कूट-मध्यस्था, कूट और अकूट से विरहिता रक्षा करें ।।१७।।

योगाङ्गी, योग-मध्यस्था, अष्ट-योगों का ज्ञान करानेवाली, नव-शक्ति-स्वरूपा, माता, अष्ट-सिद्धियों की रूपवाली रक्षा करें ।।१८।।

नव वीरों से सुशोभिता, मुक्ति-कन्या, मुकुन्द में लीन रहनेवाली, उपदेश-दायिनी विद्या, महान् प्रमुखों में विराजिता रक्षा करें ।।१९।।

मुख्या, अमुख्या और महा-मुख्या, मूल-बीज का प्रवर्तन करनेवाली, दिक्-पालिका, श्रीचक्र की अधि-देवता सदा रक्षा करें ।।२०।।

आठ दिग्-योगिनियाँ और आठ भैरव, षडङ्ग-देवता और सोलह नित्याएँ रक्षा करें ।।२१।।

त्रिकोणान्तर को दीप्त करनेवाली नाथ-शक्ति सदा रक्षा करें। तीनों की सार-रूपा, तीनों कर्मों का क्षय करनेवाली, तीनों को दिखानेवाली रक्षा करें ।।२२।।

तीनों काल व्याप्त रहनेवाली, शोषण की ईश्वरी, भुक्ति-मुक्ति-दायिनी, बाला, भुवनाम्बा और वल्गेश्वरी (बुधेश्वरी) रक्षा करें ।।२३।।

अतृप्ति, तृप्ति, सन्तुष्टा, तृप्ता, तृप्त करनेवाली, आम्नायों की शक्तियाँ, आदि-अन्त-रूपी सुन्दर बिछावनवाली सदा रक्षा करें ।।२४।।

आदि-शम्भु-स्वरूपा मुझे नित्य राज्यैश्वर्य प्रदान करें। सब रोगों को हरनेवाली, सभी मोक्ष-पदों को देनेवाली रक्षा करें ।।२५।।

।। फल-श्रुति ।।

उक्त दिव्य 'हृदय'-ललिता की प्रीति को दिलानेवाला है। इसके समान वैभव-दायक दूसरा स्तोत्र नहीं है।।१।।

शक्ति-स्वरूप, शक्ति को छिपाए हुए यह प्रकट में शुभ-दायक प्रभु-सदृश है। मूल ब्रह्म को प्रकट करने में कारण-भूत मूल-विद्या-स्वरूप है।।२।।

नादादि शक्तियों से युक्त यह बड़ा ही अद्भुत है। रोगों, पापों और विघ्नों का नाश करनेवाला है ।।३।।

दीर्घ आयु का देनेवाला, सभी प्रकार की मृत्यु और दरिद्रता का नष्ट करनेवाला है। क्रोध का नाशक, मुक्ति देनेवाला यह परम सुख-दायक है ।।४।।

रुद्र, विष्णु और ब्रह्मा के स्वरूपवाला यह विचित्र, सुचित्र, सुन्दर और सुदर्शन है ।।५।।

अभक्त, दुष्ट और अविश्वसनीय व्यक्ति को इस मन्त्रात्मक श्रेष्ठ विद्या-हृदय को न देना चाहिए।।६।।

स्तोत्रों में श्रेष्ठ स्तोत्र, मन्त्रों में श्रेष्ठ मन्त्र, बीजों में श्रेष्ठ बीज और शाक्तों में श्रेष्ठ शिव-स्वरूप यह है।।७।।

तीनों कालों में और अर्द्ध-रात्रि के समय भक्ति-पूर्वक इसका पाठ करे। यह वाक्-सिद्धि को देनेवाला और सदा शत्रु की विद्या को नष्ट करनेवाला है।।८।।

अपनी विद्या को प्रतिष्ठित करानेवाला और शत्रु के यन्त्र-तन्त्र का भेदन करनेवाला है। कृत्तिका नक्षत्र में कूर्म-चक्र पर बैठकर मन्त्र का जप करना चाहिए।।९।।

वाग्भव-बीज 'ऐं'

हे निखिल शब्दों की जननी-स्वरूपा माता!
अमृत के समान फैलनेवाले, तुम्हारे उस उत्कृष्ट 'वाग्भव-बीज'
'ऐं' को मैं प्रणाम करता हूँ,
'शब्द-पद-वाक्य' और 'चारों प्रमाणों' का जो जनक है,
४ 'वेद', ४ 'उप-वेद', २४ 'स्मृति', ६ 'शास्त्र', १८ 'पुराण',
संस्कृत आदि मनुष्यों में प्रचलित सभी भाषाओं तथा
नाना प्रकार के पशुओं की बोली को जो प्रकट करता है।

—महर्षि दुर्वासा

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीमत्-ललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-साधना

ॐ शुद्ध-स्फटिक-सङ्काशं, द्वि-नेत्रं करुणा-निधिम्।
वराभय-करं वन्दे, श्रीगुरुं शिव-रूपिणम् ।।१।।

भक्ताज्ञान-तमो-भानुं, मूर्ध्नि पङ्कज-संस्थितम्।
सदा-शिव-मयं नित्यं, श्रीगुरुं प्रणमाम्यऽहम् ।।२।।

श्रीविद्यां जगतां धात्रीं, सर्ग - स्थिति - लयेश्वरीम्।
नमामि ललितां नित्यं, महा-त्रिपुर-सुन्दरीम् ।।३।।

बिन्दु-त्रिकोण-संयुक्तं, वसु - कोण - समन्वितम्।
दश-कोण-द्वयोपेतं, भुवनार-समन्वितम् ।।४।।

दलाष्टक-समोपेतं, दल - षोडशकान्वितम्।
वृत्त-त्रयान्वितं भूमि-सदन-त्रय-भूषितम् ।।५।।

नमामि ललिता-चक्रं, भक्तानामेतदिष्टदम्।
अमृताम्भो-निधौ तत्र, रत्न-द्वीपं नमाम्यऽहम् ।।६।।

नाना-वृक्ष-महोद्यानं, वन्देऽहं कल्प-वाटिकाम्।
सन्तान-वाटिकां वन्दे, हरि-चन्दन-वाटिकाम्।।७।।

मन्दार-वाटिकां वन्दे, पारिजाताख्य-वाटिकाम्।
नमामि तव देवेशि!, कदम्ब-वन-नाटिकाम्।।८।।

पुष्प-राग-महा-रत्न-प्राकारं प्रणमाम्यऽहम्।
पद्म-रागाख्य-मणिभिः, प्राकारं सर्वदा भजे।।९।।

गोमेद - रत्न - प्राकारं, वज्र - प्राकारमाश्रये।
वैडूर्य-रत्न-प्राकारं, प्रणमामि तवेश्वरि।।१०।।

इन्द्र-नीलाख्य-रत्नानां, प्राकारं प्रणमाम्यऽहम्।
मुक्ता-रत्न-मयं चैव, प्राकारं सर्वदा भजे।।११।।

मरकताख्य-महा-रत्न-प्राकाराय नमस्तव।
विद्रुमाख्य-महा-रत्न-प्राकारं तु तवाश्रये।।१२।।

माणिक्य-मण्डपं वन्दे, सहस्त्र-स्तम्भ-मण्डपम्।
ललिते! तव देवेशि!, भजाम्यमृत-वापिकाम्।।१३।।

आनन्द-वापिकां वन्दे, भजे चैव विमर्शिकाम्।
भजे बाला-तपोद्गारं, चन्द्रिकोद्गारमाश्रये।।१४।।
महा-शृङ्गार-परिखां, महा-पद्माटवीं भजे।
चिन्ता-मणि-महा-रत्न-गृह-राजं नमाम्यऽहम्।।१५।।
पूर्वाम्नाय-मयं पूर्व-द्वारं देवि! भजामि ते।
दक्षिणाम्नाय-रूपं ते, दक्षिण-द्वारमाश्रये।।१६।।
नमामि ते परं द्वारं, पश्चिमाम्नाय-रूपकम्।
वन्देऽहमुत्तरं द्वारमुत्तराम्नाय-रूपकम्।।१७।।
ऊर्ध्वाम्नायमऽहं वन्दे, ऊर्ध्व-द्वारं कुलेश्वरि!
ललिते! तव देवेशि!, महा-सिंहासनं भजे।।१८।।
ब्रह्मात्मक-मञ्च-पादमेकं तव नमाम्यऽहम्।
एकं विष्णु-मयं मञ्च-पादं तव नमाम्यऽहम्।।।१९।।
एकं रुद्र-मयं मञ्च-पादं तव नमाम्यऽहम्।
मञ्च-पादं नमाम्येकं, तव देवीश्वरात्मकम्।।२० ।।
मञ्चैक-फलकं वन्दे, सदा-शिव-मयं शुभम्।
नमामि ते हंस-तूल-तलिमां परमेश्वरि!।।२१।।
भजामि ते हंस-तूल, महोपाधानमुत्तमम्।
कौसुम्भास्तरणं देवि!, तव नित्यं नमाम्यऽहम्।।२२।।
महा-वितानकं वन्दे, महा-जवनिकां भजे।
एवं पूजा-गृहं ध्यात्वा, श्रीचक्रस्य शिव-प्रिये!।।२३।।
मद्-दक्षिणे स्थापयामि, भागे पुष्पाक्षतादिकम्।
अभितस्ते महा-देवि!, दीपाँस्तान् दर्शयाम्यऽहं।।२४।।
मूलेन त्रिपुरा-चक्रं, तव सम्पूजयाम्यऽहम्।
त्रिभिः खण्डैस्तव त्र्यस्त्रं, पूजयामि शिव-प्रिये!।।२५।।
वाय्वग्नि - जल - संयुक्त - प्राणायामैरऽहं शिवे!
शोषणं दाहनं देवि!, करोम्याप्लावनं तथा।।२६।।
त्रि-वारं मूल - मन्त्रेण, प्राणायामं करोम्यऽहम्।
अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भूमि- संस्थिताः।।२७।।
ये भूता विघ्न - कर्तारस्ते, नश्यन्तु शिवाज्ञया।
करोम्यनेन मन्त्रेण, ताल-त्रयमऽहं शिवे!।।२८।।

नारायणोऽहं ब्रह्माऽहं, भैरवोऽहं शिवोऽस्म्यऽहम्।
देवोऽहं परमात्माऽहं, महा-त्रिपुर-सुन्दरि!।।२९।।

ध्यात्वैवं वज्र-कवचं, न्यासं तव करोम्यऽहम्।
कुमारी-बीज-संयुक्तं, महा-त्रिपुर-सुन्दरि!।।३०।।

मां रक्ष रक्षेति हृदि, करोम्यञ्जलिमीश्वरि!
नमो देव्यासनायेति, ते करोम्यासनं शिवे!।।३१।।

चक्रासनं नमस्यामि, सर्व-मन्त्रासनं भजे।
साध्य-सिद्धासनं वन्दे, मन्त्रैरेभिर्महेश्वरि!।।३२।।

करोम्यस्मिंश्चक्र - मन्त्र - देवतासनमुत्तमम्।
करोम्यथ षडङ्गाख्यं, मातृकाश्च करोम्यऽहम्।।३३।।

वशिन्याद्यष्टकं न्यासं, षोढा-न्यासं करोम्यऽहम्।
महा-षोढां ततः कुर्वे, नव-योन्याख्यमुत्तमम्।।३४।।

चक्र-न्यासं ततः कुर्वे, श्रीकण्ठ-न्यासमुत्तमम्।
केशवादि महा-न्यासं, काम-न्यासं करोम्यऽहम्।।३५।।

कला-न्यासं ततः कुर्वे, कुर्वे काम-कलाह्वयम्।
पीठ-न्यासं ततः कुर्वे, तत्त्व-न्यासं करोम्यऽहं।।३६।।

ततः करोमि स्थित्यादि-न्यासं तत् त्रिपुरेश्वरि!
ततः शुद्धोदकेनाहं, वाम-भागे महेश्वरि!।।३७।।

करोमि मण्डलं वृत्तं, चतुरस्त्रं शिव-प्रिये!
पुष्पैरभ्यर्च्य साधारं, शङ्खं संस्थापयाम्यऽहम्।।३८।।

अर्चयामि षडङ्गेन, जलमापूरयाम्यऽहम्।
ददामि चादिमं बिन्दु, कुर्वे मूलाभि-मन्त्रितम्।। ३९।।

तज्जलेन जगन्मातस्त्रिकोणं वृत्त - संयुतम्।
षट्-कोणं चतुरस्त्रं च, मण्डलं प्रकरोम्यऽहम्।। ४०।।

विद्यया पूजनं मध्ये, खण्डैस्त्र्यस्त्राभि-पूजनम्।
बीजावृत्या कोण-षट्कं, पूजयामि शिव-प्रिये!।।४१।।

तस्मिन् दश-कला-युक्तमग्नि-मण्डलमाश्रये।
धूमार्चिषं नमस्यामि, ऊष्मां च ज्वलिनीं भजे।।४२।।

ज्वालिनीं च नमस्यामि, वन्देऽहं विस्फुल्लिङ्गिनीम्।
सुश्रियं च सुरूपां च, कपिलां प्रणमाम्यऽहम्।।४३।।

नौमि हव्य-वहां नित्यं, भजे कव्य-वहां कलाम्।
यादिभिः सहिता वह्नेः, कला दश तथा भजे।।४४।।
सूर्यस्य मण्डलं तत्र, कला-द्वादशकात्मकम्।
अर्घ्य-पात्रे त्वऽहं वन्दे, तपिनीं तापिनीं भजे।।४५।।
धूम्रां मरीचिं वन्देऽहं, ज्वालिनीं च रुचिं भजे।
सुषुम्णां भोगदां वन्दे, भजे विश्वां च बोधिनीम्।।४६।।
धारिणीं च क्षमां वन्दे, सौरा एताः कला भजे।
सोमस्य मण्डलं तत्र, कलाः षोडशकात्मकाः।।४७।।
अर्घ्यामृतात्मकं वन्देऽमृतां मानदां स्तुवे।
पूषां तुष्टिं भजे पुष्टिं, रतिं धृतिमऽहं भजे ।।४८।।
शशिनीं चन्द्रिकां वन्दे, कान्तिं ज्योत्स्नां श्रियं भजे।
नौमि प्रीतिं चाङ्गदां च, पूर्णां पूर्णामृतां भजे।।४९।।
स्वरैः षोडशभिर्युक्ता, भजे सोमस्य वै कलाः।
त्रिकोण-लेखनं कुर्वे, अकथादि-सु-रेखकम्।।५०।।
हळक्ष-वर्ण-संयुक्तं, स्थितान्तर्हंस-भास्वरम्।
वाक्-काम-शक्ति-संयुक्तं, हंसेनाराधयाम्यऽहम्।।५१।।
वृत्ताद्-बहिः षडस्त्रे च, लेखनं प्रकरोम्यऽहम्।
पुरो-भागादि षट्-कोणं, षडंगेनार्चयाम्यऽहम्।।५२।।
श्रीविद्यायाः सप्त-वारं, करोम्यत्राभि-मन्त्रणम्।
समर्पयामि विश्वेशि!, तस्मिन् गन्धाक्षतादिकम्।।५३।।
ध्यायामि पूजा-द्रव्यं ते, सर्वं विद्या-मयं शुभम्।
चतुर्नवति सन्मन्त्रान्, स्पृष्ट्वा तत्-प्रजपाम्यऽहम्।।५४।।
वह्नेर्दश-कलाः सूर्य-कला-द्वादशकं भजे।
आश्रये षोडश-कलास्तत्र सोमस्य कामदाः।।५५।।
सृष्टिमृद्धिं स्मृतिं वन्दे, मेधां कान्तिं नमाम्यऽहम्।
लक्ष्मीं धृतिं स्थिरां वन्दे, स्थितिं सिद्धिं भजाम्यऽहं।।५६।।
एतां ब्रह्म-कलां वन्दे, जरां तां पालिनीं भजे।
शान्तिं नमामीश्वरीं च, रतिं वन्दे च कामिकाम्।।५७।।
वरदां ह्लादिनीं वन्दे, प्रीतिं दीर्घां भजाम्यऽहम्।
टादिभिः सहिता विष्णोः, कला दश तथा भजे।।५८।।

एता विष्णोः कला वन्दे, तीक्ष्णां रौद्रीं भयां तथा।
निद्रां तन्द्रां क्षुधां वन्दे, नमामि क्रोधिनीं क्रियां।।५९।।
उद्गारीं च भजे मृत्युमेता रुद्र-कला भजे।
पीतां श्वेतां भजे नित्यमरुणां च तथा भजे।।६०।।
भजेऽसितां तथाऽनन्तां, षादिभिः सहितास्तथा।
ईश्वरस्य कला ह्येता, वन्दे नित्यमभीष्टदाः।।६१।।
निवृत्तिं च प्रतिष्ठां च, विद्यां शान्तिं नमाम्यऽहम्।
इन्धिकां दीपिकां चैव, रेचिकां मोचिकां तथा।।६२।।
परां सूक्ष्मां नमस्यामि, नौमि सूक्ष्मामृतां कलाम्।
वन्दे ज्ञानां कलां चैव, तथा ज्ञानामृतां कलाम्।।६३।।
आप्यायिनीं व्यापिनीं च, व्योम-रूपां नमाम्यऽहम्।
कलाः सदा-शिवस्यैताः, षोडश प्रणमाम्यऽहम्।।६४।।
हंसाख्यं च महा-मन्त्रं, ज्योतिषं हंसमाश्रये।
प्रतत्-प्रथम-विश्वान्तं, मन्त्रं ज्योतिषमाश्रये।।६५।।
त्र्यम्बकं च नमस्यामि, तद्-विष्णोः प्रणमाम्यऽहम्।
विष्णुर्योनिं मूल-विद्यां, मन्त्रैरेभिरनुत्तमैः।।६६।।
अमृतं मन्त्रितं वन्दे, चतुर्नवतिभिस्तव।
अखण्डैक-रसानन्दकरेऽपर-सुधात्मनि!।।६७।।
स्वच्छन्द-स्फुरणामत्र, निधेह्यकुल-रूपिणि!
अकुलस्थामृताकारे, शुद्ध-ज्ञान-करे परे।।६८।।
अमृतत्त्वं निधेह्यस्मिन्, वस्तुनि क्लिन्न-रूपिणि!
तद्रूपिण्यै-करसत्वं, कृत्वा ह्येतत्-स्वरूपिणि!।६९।।
भूत्वा परामृताऽऽकारा, मयि चित्-स्फुरणं कुरु।
अमृतेशीं नमस्यामि, सर्वदामृत-वर्षिणीम्।।७०।।
वाग्वादिनीं नमस्यामि, श्रीविद्यां प्रणमाम्यऽहम्।
एभिर्मनूत्तमैर्वन्दे, मन्त्रितं परमामृतम्।।७१।।
ज्योतिर्मयमिदं कुर्वे, परमर्घ्यं महेश्वरि!।
तद्-विन्दुभिर्मे शिरसि, त्रिगुरून् पूजयाम्यऽहं।।७२।।
ब्रह्माऽहमस्मि तद्-विन्दुं, कुण्डलिन्या जुहोम्यऽहम्।
हृच्चक्रस्था महा-देवीं, महा-त्रिपुर-सुन्दरीम्।।७३।।

निरस्त-मोह-तिमिरां, साक्षात् संवित्-स्वरूपिणीम्।
नासा-पुटे पर-कलामथ निर्गमयाम्यऽहम्।।७४।।
समानयामि तां हस्ते, त्रिखण्ड-कुसुमाञ्जलौ।
जगन्मातर्महा-देवि!, महा-त्रिपुर-सुन्दरि!।।७५।।
सुधा-चैतन्य-मूर्तिं ते, कल्पयामि नमः शिवे!।
अनेन मनुना देवि!, यन्त्रे त्वां स्थापयाम्यऽहम्।।७६।।
महा-पद्म-वनान्तःस्थे, कारणानन्द-विग्रहे।
सर्व-भूत-हिते मातरेह्येहि परमेश्वरि!।।७७।।
देवेशि! भक्ति-सुलभे!, सर्वावरण - संयुते!
यावत् त्वां पूजयिष्यामि, तावत् त्वं सुस्थिरा भव।।७८।।
अनेन मन्त्र-युग्मेन, त्वामत्रावाहयाम्यऽहम् ।
कल्पयामि नमः पाद्यमर्घ्यं ते कल्पयाम्यऽहम्।।७९।।
सुगन्ध-तैलाभ्यङ्गं च, मज्ज-शाला-प्रवेशनम्।
कल्पयामि नमस्तस्मिन्, मणि-पीठोपवेशनम्।।८०।।
दिव्य-स्नानीयमीशानि!, गृहाणोद्वर्तनं शुभम्।
गृहाणोष्णोदक-स्नानं, कल्पयामि नमस्तव।।८१।।
हेम-कुम्भ-च्युतैस्तीर्थैः, कल्पयाम्यभिषेचनम्।
कल्पयामि नमस्तुभ्यं, धौतेन परि-मार्जनम्।।८२।।
बाल-भानु-प्रतीकाशं, दुकूल-परिधानकम्।
अरुणेन दुकूलेनोत्तरीयं कल्पयामि ते।।८३।।
प्रवेशनं कल्पयामि, तवालेपन - मण्डपम्।
नमस्ते कल्पयाम्यत्र, मणि-पीठोपवेशनम्।।८४।।
अष्ट-गन्धैः कल्पयामि, सर्वाङ्गेषु विलेपनम्।
कालागरु महा-धूपस्तव केश-भरस्य हि।।८५।।
मल्लिका-मालती-जाती-चम्पकादि-मनोरमैः।
रचिताः कुसुमैर्मालाः, कल्पयामि नमस्तव।।८६।।
प्रवेशनं कल्पयामि, नमो भूषण-मण्डपम्।
उप-वेशं रत्न-पीठे, तत्र ते कल्पयाम्यऽहम्।।८७।।
नव-माणिक्य-मुकुटं, तच्चन्द्र-शकलं ततः।
ततः सीमन्त-सिन्दूरं, ततस्तिलकमुत्तमम्।।८८।।

कालाञ्जनं कल्पयामि, पाली-युगलमुत्तमम्।
मणि-कुण्डल-युग्मं ते, नासाभरणमीश्वरि!।।८९।।
ते कल्पयामि त्रिपुरे!, ललिताऽधर-यावकम्।
अथाऽऽद्य-भूषणं कण्ठे, हेम-चिन्ताकमुत्तमम्।।९०।।
पदकं ते कल्पयामि, महा - पदकमुत्तमम्।
कल्पयामि नमो मुक्तावलिमेकावलिं च ते।।९१।।
छन्न - वीरं च केयूर - युगलानां चतुष्टयम्।
वलयावलिमीशानि!, ऊर्मिकावलिमीश्वरि!।।९२।।
काञ्ची-दाम-कटी-सूत्रं, सौभाग्याभरणं च ते।
त्रिपुरे पाद-कटकं, कल्पये रत्न-नूपुरम्।।९३।।
पादांगुलीयकं तुभ्यं, पाशमेक - करे तव।
अन्यस्मिन्नंकुशं देवि!, पुण्ड्रेक्षु-धनुषं परे।।९४।।
अपरे पुष्प-बाणाँश्च, श्रीमन्माणिक्य-पादुके।
नवावरण-देवीभिर्महा-चक्राधिरोहणम्।।९५।।
कामेश्वराङ्क - पर्यङ्क, उपवेशनमुत्तमम्।
सुधासवाख्यं चषकं, ततः आचमनीयकम्।।९६।।
कर्पूर-वीटिकां तुभ्यं, कल्पयामि नमः शिवे!
आनन्दोल्लास-वेलास-हासं ते कल्पयाम्यऽहं।।९७।।
मङ्गलारार्तिकं देवि!, छत्रं ते कल्पयाम्यऽहम्।
ततश्चामर-युग्मं ते, दर्पणं कल्पयाम्यऽहम्।।९८।।
ताल-वृन्तं कल्पयामि, गन्धं पुष्पं महेश्वरि!
धूपं दीपं च नैवेद्यं, कल्पयामि नमस्तव।।९९।।
अथाऽहं वैन्दवे चक्रे, सर्वानन्द-मयात्मिके!
रत्न-सिंहासने रम्ये, समासीनां शिव-प्रियां।।१००।।
उद्यद्भानु-सहस्राभां, जपा-पुष्प-सम-प्रभाम्।
नव-रत्न-प्रभा-दीप्त-मुकुटेन विराजिताम्।।१०१।।
चन्द्र-रेखा-समोपेतां, कस्तूरी-तिलकाञ्चिताम्।
काम-कोदण्ड-सौन्दर्य-निर्जित-भ्रू-लता-युगाम्।।१०२।।
अञ्जनाञ्चित-नेत्रां तां, पद्म-पत्र-निभेक्षणाम्।
मणि-कुण्डल-संयुक्त-कर्ण-द्वय-विराजिताम्।।१०३।।

मुक्ता-माणिक्य-खचित-नासिकाभरणान्विताम्।
मद-पाटल-संयुक्त-कपोल-युगलान्विताम्।।१०४।।
पक्व-बिम्ब-फलाभासाधर-द्वय-विराजिताम्।
शुद्ध-मुक्तावलि-प्रख्य-दन्त-पंक्ति-विराजिताम्।।१०५।।
ताम्बूल-पूरित-मुखीं, सुस्मितास्य-विराजिताम्।
आद्य-भूषण-संयुक्तां, हेम-चिन्ताक-संयुताम्।।१०६।।
पदकेन समोपेतां, महा - पदक - संयुताम्।
मुक्तावलि-समोपेतामेकावलि-विराजिताम्।।१०७।।
केयूराङ्गद - संयुक्त - चतुर्बाहु - विराजिताम्।
अष्ट-गन्ध-समोपेतां, श्रीचन्दन-विलेपनाम्।।१०८।।
हेम-कुम्भ-सम-प्रख्य-स्तन-द्वय-विराजिताम्।
रक्त-वस्त्र-परीधानां, रक्त-कञ्चुक-संयुताम्।।१०९।।
सूक्ष्म-रोमावली-युक्त-तनु-मध्य-विराजिताम्।
मुक्ता-माणिक्य-खचित-काञ्ची-युत-नितम्बिनीं।।११०।।
सदा-शिवाङ्कस्थ-पृथु-महा-जघन-मण्डलाम्।
कदली-स्तम्भ-सङ्काश-ऊरू-युग्म-विराजिताम्।।१११।।
कदली-कान्ति-सङ्काश-जंघा-युगल-शोभिताम्।
गूढ-गुल्फ-द्वयोपेतां, रक्त-पाद-युगान्विताम्।।११२।।
ब्रह्मा-विष्णु-महादेव-शिरो-मुकुट-जातया।
कान्त्या विराजित-पदां, भक्त-त्राण-परायणाम्।।११३।।
इक्षु-कार्मुक-पुष्पेषु, पाशांकुश-धरां पराम्।
संवित्-स्वरूपिणीं देवीं, ध्यायामि परमेश्वरीम्।।११४।।
प्रदर्शयाम्यथ शिवे!, नव - मुद्रा वर - प्रदाः।
त्वां तर्पयामि त्रिपुरे!, त्रिधा मूलेन पार्वति!।।११५।।
आग्नेय्यामीश-दिग्-भागे, नैऋत्यां मारुते तथा।
मध्ये दिक्षु षडङ्गानि, क्रमादभ्यर्चयाम्यऽहम्।।११६।।
आद्यां कामेश्वरीं वन्दे, नमामि भग-मालिनीम्।
नित्य-क्लिन्नां नमस्यामि, भेरुण्डां प्रणमाम्यऽहम्।।११७।।
वह्नि-वासां नमस्यामि, महा-वज्रेश्वरीं स्तुवे।
शिव-दूतीं नमस्यामि, त्वरितां कुल-सुन्दरीम्।।११८।।

नित्यां नील-पताकां च, विजयां सर्व-मङ्गलाम्।
ज्वाला-मालां च चित्रां च, महानित्यां च संस्तुवे।।११९।।

दिव्यौघेभ्यो नमस्यामि, परेश-परमेश्वरीम्।
मित्रेशमथ षष्ठीशमुड्डीशं प्रणमाम्यऽहम्।।१२०।।

चर्या-नाथं नमस्यामि, लोपा-मुद्रामऽहं भजे।
अगस्त्यं प्रणमस्यामि, सिद्धौघे काल-तापनम्।।१२१।।

धर्माचार्यं नमस्यामि, मुक्त-केशीश्वरं भजे।
भजे दीप-कला-नाथं, मानवौघे ततः परम्।।१२२।।

विष्णु-देवं नमस्यामि, प्रभा-करमऽहं भजे।
तेजो-देवं नमस्यामि, मनोजमथ संस्तुवे।।१२३।।

कल्याण-देवं कलये, रत्न-देवं भजाम्यऽहम्।
वासुदेवं नमस्यामि, श्रीरामानन्दमाश्रये।।१२४।।

परमेष्ठि - गुरुं वन्दे, परमं गुरुमाश्रये।
श्रीगुरुं प्रणमस्यामि, मूर्ध्नि ब्रह्म-बिले स्थितम्।।१२५।।

कं बिलेऽहं नमस्यामि, श्रीगुरोः पादुकां ततः।
अथ प्राथमिके देवि!, चतुरस्त्रे तवेश्वरि! ।।१२६।।

अणिमां लघिमां वन्दे, महिमां प्रणमाम्यऽहम्।
ईशित्व-सिद्धिं वन्देऽहं, वशित्वं च नमाम्यऽहं।।१२७।।

प्राकाम्य-सिद्धिं वन्देऽहं, भुक्तिमिच्छामऽहं भजे।
प्राप्ति-सिद्धिं सर्व-काम-प्रदा-सिद्धिमऽहं भजे।।१२८।।

मध्यमे चतुरस्त्रेऽहं, ब्राह्मीं माहेश्वरीं भजे।
कौमारीं वैष्णवीं वन्दे, वाराहीं प्रणमाम्यऽहम्।।१२९।।

माहेन्द्रीमपि चामुण्डां, महा-लक्ष्मीमऽहं भजे।
तृतीये चतुरस्त्रेऽहं, सर्व-संक्षोभिणीं भजे।।१३०।।

सर्व-विद्राविणीं मुद्रां, सर्वाकर्षिणिकां भजे।
मुद्रां वशङ्करीं वन्दे, सर्वोन्मादिनिकां भजे।।१३१।।

भजे महांकुशां मुद्रां, खेचरीं प्रणमाम्यऽहम्।
बीज-मुद्रां योनि-मुद्रां, भजे सर्व-त्रिखण्डिनीम्।।१३२।।

त्रैलोक्य-मोहनं चक्रं, नमामि ललिते! तव।
नमामि योगिनीं तत्र, प्रकटाख्यामभीष्टदाम्।।१३३।।

सुधार्णवासनं वन्दे, तत्र ते परमेश्वरि!।
चक्रेश्वरीं तत्र वन्दे, त्रिपुरां परमेश्वरीम्।।१३४।।
सर्व-संक्षोभिणीं मुद्रां, ततोऽहं कलये शिवे!।
अथाऽहं षोडश-दले, कामाकर्षणिकां भजे।।१३५।।
बुद्ध्याकर्षणिकां वन्देऽहङ्काराकर्षणीं भजे।
शब्दाकर्षणिकां वन्दे, स्पर्शाकर्षणिकां भजे।।१३६।।
रूपाकर्षणिकां वन्दे, रसाकर्षणिकां भजे।
गन्धाकर्षणिकां वन्दे, चित्ताकर्षणिकां भजे।।१३७।।
धैर्याकर्षणिकां वन्दे, स्मृत्याकर्षणिकां भजे।
नामाकर्षणिकां वन्दे, बीजाकर्षणिकां भजे।।१३८।।
आत्माकर्षणिकां वन्दे, ह्यमृताकर्षणीं भजे।
शरीराकर्षणीं वन्दे, नित्यां श्रीपरमेश्वरीम्।।१३९।।
सर्वाशा - पूरकं चक्रं, कलयेऽहं तवेश्वरि!
गुप्ताख्यां योगिनीं वन्दे, तत्राऽहं गुप्त-पूजिताम् ।।१४०।।
पीताम्बुजासनं तत्र, नमामि ललिते! तव।
त्रिपुरेशीं महा-देवीं, भजामीष्टार्थ-सिद्धिदाम्।।१४१।।
सर्वं-विद्राविणीं मुद्रां, तत्राऽहं तां विचिन्तये।
शिवे! तवाष्ट-पत्रेऽहमनङ्ग-कुसुमां भजे।।१४२।।
अनङ्ग-मेखलां वन्दे, ह्यनङ्ग-मदनां भजे।
ततोऽहं प्रणमस्यामि, ह्यनङ्ग-मदनातुराम्।।१४३।।
अनङ्ग-रेखां कलये, भजे तेऽनङ्ग-वेगिनीम्।
भजेऽनङ्गांकुशां देवि!, तव चानङ्ग-मालिनीम्।।१४४।।
सर्व-संक्षोभणं चक्रं, तत्राऽहं कलये सदा।
वन्दे गुप्त-तराख्यां तां, योगिनीं सर्व-कामदाम्।।१४५।।
तत्राऽहं प्रणमस्यामि, देव्यात्मासनमुत्तमम्।
नमामि जगदीशानीमऽहं, त्रिपुर-सुन्दरीम्।।१४६।।
सर्वाकर्षणिकां मुद्रां, तत्राऽहं कलयामि ते।
भुवनारे तव शिवे!, सर्व-संक्षोभिणीं भजे।।१४७।।
सर्व-विद्राविणीं वन्देऽहं, सर्वाकर्षिणिकां भजे।
सकलाह्लादिनीं वन्दे, सर्व-सम्मोहिनीं भजे।।१४८।।

सकल स्तम्भिनीं वन्दे, कलये सर्व-जृम्भिनीम्।
वशङ्करीं नमस्यामि, सर्व-रञ्जनिकां भजे।।१४९।।
सकलोन्मादिनीं वन्दे, भजे सर्वार्थ-साधिनीम्।
सम्पत्ति-पूरिणीं वन्दे, सर्व-मन्त्र-मयीं भजे।।१५०।।
भजाम्यऽहं ततः शक्तिं, सर्व-द्वन्द्व-क्षयङ्करीम्।
तत्राऽहं कलये चक्रं, सर्व-सौभाग्य-दायकम्।।१५१।।
नमामि जगतां धात्रीं, सम्प्रदायाख्य-योगिनीम्।
शिवे! तव नमस्यामि, श्रीचक्रासनमुत्तमम्।।१५२।।
नमामि जगदीशानीमऽहं त्रिपुर-वासिनीम्।
कलयेऽहं तव शिवे!, मुद्रां सर्व-वशङ्करीम्।।१५३।।
बहिर्दशारे ते देवि!, सर्व-सिद्धि-प्रदां भजे।
सर्व-सम्पत्-प्रदां वन्दे, भजे सर्व-प्रियङ्करीम्।।१५४।।
नमाम्यऽहं ततो देवीं, सर्व-मङ्गल-कारिणीम्।
सर्व-काम-प्रदां वन्दे, सर्व-दुःख-विमोचिनीम्।।१५५।।
सर्व-मृत्यु-प्रशमनीं, सर्व-विघ्न-निवारिणीम्।
सर्वाङ्ग-सुन्दरीं देवीं, सर्व-सौभाग्य-दायिनीम्।।१५६।।
सर्वार्थ-साधकं चक्रं, तथाऽहं कलये सदा।
कलयामि ततो देवीं, कुलोत्तीर्णाख्य-योगिनीम्।।१५७।।
सर्व - मन्त्रासनं वन्दे, त्रिपुरा-श्रियमाश्रये।
कलयामि ततो मुद्रां, सर्वोन्मादन-कारिणीम्।।१५८।।
अन्तर्दशारे ते देवि!, सर्वज्ञां प्रणमाम्यऽहम्।
सर्व-शक्तिं नमस्यामि, सर्वैश्वर्य-प्रदां भजे।।१५९।।
सर्व-ज्ञान-मयीं वन्दे, सर्व-व्याधि-विनाशिनीम्।
सर्वाधार-स्वरूपां च, सर्व-पाप-हरां भजे।।१६०।।
सर्वानन्द-मयीं वन्दे, सर्व-रक्षा-स्वरूपिणीम्।
प्रणमामि महा-देवीं, सर्वेप्सित-प्रदां भजे।।१६१।।
सर्व-रक्षा-करं चक्रं, तत्राऽहं कलये सदा।
निगर्भ-योगिनीं वन्दे, तत्राऽहं परमेश्वरीम्।।१६२।।
साध्य-सिंहासनं वन्दे, भजे त्रिपुर-मालिनीम्।
कलयामि ततो देवि!, मुद्रां सर्व-महांकुशाम्।।१६३।।

अष्टारे वशिनीं वन्दे, भजे कामेश्वरीं सदा।
मोदिनीं विमलां वन्दे, ह्यरुणां जयिनीं भजे।।१६४।।
सर्वेश्वरीं नमस्यामि, कौलिनीं प्रणमाम्यऽहम्।
सर्व-रोग-हरं चक्रं, तवाऽहं देवि! चिन्तये।।१६५।।
रहस्य-योगिनीं देवीं, सदाऽहं कलयामि ते।
नमामि त्रिपुरा-सिद्धां, भजे मुद्रां च खेचरीम्।। १६६।।
महा-त्रिकोणस्य बाह्ये, चतुर्दिक्षु महेश्वरि!।
नमामि जृम्भणान् बाणान्, चापं सम्मोहनं भजे।।१६७।।
पाशं वशङ्करं वन्दे, भजे स्तम्भनमंकुशम्।
त्रिकोणेऽहं जगद्धात्रीं, महा-कामेश्वरीं भजे।।१६८।।
महा-वज्रेश्वरीं वन्दे, महा-श्री-मालिनीं भजे।
महा-श्री-सुन्दरीं वन्दे, सर्व-काम-फल-प्रदाम्।।१६९।।
सर्व-सिद्धि-प्रदं चक्रं, तव देवि! नमाम्यऽहम्।
नमाम्यति-रहस्याख्यां, योगिनीं तत्र कामदाम्।।१७०।।
त्रिपुराम्बां नमस्यामि, बीज-मुद्रां नमाम्यऽहम्।
मूल-मन्त्रेण ललिते!, त्वां बिन्दौ पूजयाम्यऽहम्।।१७१।।
सर्वानन्द-मयं चक्रं, नमामि ललिते! तव।
परापर-रहस्याख्यां, योगिनीं कलये सदा।।१७२।।
महा-चक्रेश्वरीं वन्दे, योनि-मुद्रामऽहं भजे।
धूपादिकं सर्व-मयि!, ते कल्पयाम्यऽहम्।।१७३।।
त्वत्-प्रीतये महा-मुद्रां, दर्शयामि ततः शिवे!
त्रिधा त्वां मूल-मन्त्रेण, तर्पयामि ततः शिवे!।।१७४।।
शाल्यन्नं मधु - संयुक्तं, पायसापूप - संयुतम्।
घृत-सूप-समायुक्तं, सर्व-भक्ष्य-समन्वितम्।।१७५।।
स-सितं क्षीर-संयुक्तं, बहु-शाक-समन्वितम्।
निक्षिप्य काञ्चने पात्रे, नैवेद्यं कल्पयामि ते।।१७६।।
सङ्कल्प्य बिन्दुना वक्त्रं, कुचौ बिन्दु-द्वयेन च।
योनिं तु स-परार्धेन, कृत्वा श्रीत्रिपुरे! तव।।१७७।।
एतत् काम-कला-रूपं, भक्तानां सर्व-कामदम्।
सर्व-सम्पत्-प्रदं वन्दे, नमस्ते त्रिपुरेश्वरि!।।१७८।।

वाम-भागे त्रिकोणं च, वृत्तं च चतुरस्त्रकम्।
कृत्वा गन्धाक्षताद्यैश्च, ह्यर्चयामि महेश्वरि!।।१७९।।
वाग्भवाद्यं नमस्यामि, तत्र व्यापक-मण्डलम्।
जल-युक्तार्द्रान्त्र-युक्तं, मकार-त्रय-भाजनम्।। १८०।।
तत्र विन्यस्य दास्यामि, भूतेभ्यो बलिमुत्तमम्।
नमस्ते देव-देवेशि!, नमस्त्रैलोक्य-वन्दिते!।।१८१।।
नमः पर-शिवाङ्कस्थे, नमस्त्रिपुर-सुन्दरि!।
प्रदक्षिणां नमस्कारं, मनसाऽहं करोमि ते।।१८२।।
ततः सकल-मन्त्राणां, सम्राज्ञीं परमेश्वरीम्।
प्र-जपामि महा-विद्यां, त्वत्-प्रीत्यार्थमऽहं सदा।
तव विद्यां प्रजप्त्वाऽथ, स्तौमि त्वां परमेश्वरीम्।।१८३।।
महा-देवि! महेशानि!, सदा-शिव महा-प्रिये।
महा-नित्ये! महा-सिद्धे!, त्वामऽहं शरणं व्रजे।।१८४।।
जय त्वं त्रिपुरे! देवि!, ललिते! जगदीश्वरि।
सदा-शिव-प्रिय-करि!, पाहि मां करुणा-करि।।१८५।।
जगन्मातर्जगद्-रूपे!, जगदीश्वर-वल्लभे!।
जगन्मये! जगस्तुल्ये!, गौरि! त्वाम्ऽहमाश्रये।।१८६।।
अनाद्ये! सर्व-लोकानामाद्ये! भक्तेष्ट-दायिनि!।
गिरि-राजस्य तनये!, नमस्ते त्रिपुरेश्वरि!।।१८७।।
जयादि-देव-देवेशि!, ब्रह्म-मातर्नमोऽस्तु ते।
विष्णु-मातरनाद्यन्ते, हर-मातः सुरेश्वरि!।।१८८।।
ब्रह्मादि-सुर-संस्तुत्ये, लोक-त्रय-वशङ्करि!।
सर्व-सम्पत्-प्रदे! नित्ये!, त्वामऽहं कलये सदा।।१८९।।
नित्यानन्दे! निराधारे!, चिद-रूपिणि! शिव-प्रिये!।
अणिमादि-गुणाधारे!, त्वां सदा कलयाम्यऽहम्।।१९०।।
ब्राह्म्यादि-मातृ-संस्तुत्ये!, सर्वावरण-संयुते।
ज्योतिर्मये! महा-रूपे!, पाहि मां त्रिपुरे! सदा।।१९१।।
लक्ष्मी-वाण्यादि-सम्पूज्ये!, ब्रह्म-विष्णु-शिव-स्तुते!।
भजामि तव पादाब्जं! सर्व-काम-फल-प्रदम्।।१९२।।

सर्व-शक्ति-समोपेतं!, सर्वाभीष्ट-फल-प्रदे!।
नमामि तव पादाब्जं, देवि! त्रिपुर-सुन्दरि!।।१९३।।

त्वत्-प्रियार्थं ततः कांश्चिच्छक्तिं सम्पूजयाम्यऽहम्।
म-पञ्चकेन तां शक्तिं, तर्पयामि महेश्वरि!।।१९४।।

तयोपेतं हविः-शेषं, चिदग्नौ प्रजुहोम्यऽहम्।
त्वत्-प्रियार्थं महा-देवि!, ममाभीष्टार्थ-सिद्धये।।१९५।।

बद्ध्वा तां खेचरीं मुद्रां, क्षमस्वोद्वासयाम्यऽहम्।
तिष्ठ मे हृदये नित्यं, त्रिपुरे! परमेश्वरि!।।१९६।।

जगदम्बे! महा-राज्ञि!, महा-शक्ति! शिव-प्रिये!
हृच्चक्रे तिष्ठ सततं, महा-त्रिपुर-सुन्दरि!।।१९७।।

सर्व-लोकैक-सम्पूज्ये!, सकलावरणैर्युते!।
हृच्चक्रे तिष्ठ मे नित्यं, महा-त्रिपुर-सुन्दरि!।।१९८।।

।। फल श्रुति ।।

एतत् त्रिपुर-सुन्दर्या, हृदयं सर्व-कामदम्।
महा-रहस्यं परमं, दुर्लभं दैवतैरपि।।१।।
साक्षात् सदा-शिवेनोक्तं, गुह्याद्-गुह्यमनुत्तमम्।।२।।

यः पठेन्नित्यमेकाग्रः, शृणुयाद् वा समाहितः।
नित्य-पूजा-फलं देव्याः, स लभेन्नात्र संशयः।।३।।

पापैः स मुच्यते सद्यः, काय-वाक्-चित्त - सम्भवैः।
सर्व - जन्म - समुद्भूतैर्ज्ञान - कृतैरपि।।४।।

सर्व-क्रतुषु यत् पुण्यं, सर्व-तीर्थेषु यत् फलम्।
तत्-पुण्यं लभते नित्यं, मानवो नात्र संशयः।।५।।

अचलां लभते लक्ष्मीं, त्रैलोक्ये चापि दुर्लभाम्।
साक्षाद् विष्णु-समो मर्त्यो, शीघ्रमेव भवेत् सदा।।६।।

अष्टैश्वर्यमवाप्नोति, स शीघ्रं मानवोत्तमः।
गुटिका-पादुका-सिद्ध्याद्यष्टकं शीघ्रमश्नुते।।७।।

शङ्खाद्या निधयो वाऽपि, तं नित्यं पर्युपासते।
वश्यादीन्यष्ट-कर्माणि, शीघ्रं सिद्ध्यन्ति सर्वदा।।८।।

भू-लोकस्थाः सर्व-नार्यः, पातालस्थाः सदाङ्गनाः।
सर्व-लोक-स्थिताः सर्वा, याश्चान्या रूप-गर्विताः।।९।।

रमन्ते तेन सततं, शीघ्रं वश्या न संशयः।
राजाद्याः सकला मर्त्याः, हर-हर्यादयः सुराः।।१०।।
अनन्ताद्या महा-नागाः, सिद्ध-योगेश्वरादयः।
ऋषयो मुनयो यक्षास्तं, नित्यं पर्युपासते।।११।।
महतीं कीर्तिमाप्नोति, शिव-विष्णु-सम-प्रभाम्।
परमं योगमासाद्य, खेचरो जायते सदा।।१२।।
अप-मृत्यु-विनिर्मुक्तः, काल-मृत्यु-विवर्जितः।
परमायुष्यमाप्नोति, हर-हर्यादि-दुर्लभम्।।१३।।
अश्रुतानि च शास्त्राणि, व्याचष्टे विधि-वत् सदा।
मूढोऽपि सर्व-विद्या-वान्, दक्षिणामूर्ति-वद्भवेत् ।।१४।।
ग्रह-भूत-पिशाचाद्या, यक्ष-गन्धर्व-राक्षसाः।
एतस्य स्मरणादेव, विनश्यन्ति हि सर्वदा।।१५।।
तद्-गात्रं प्राप्य सकलं, विषं सद्यो विनश्यति।
सहस्र-काम-सङ्काशः, कान्त्या यः सर्वदा भवेत्।।१६।।
तस्मादेतत् पठेत् स्तोत्रं, त्रिपुरा-हृदयं शुभम्।
जपेद् यः सर्वदा साक्षाद्, भवेद् देवी-स्वरूपकः।।१७।।
साङ्गं त्रिपुर-सुन्दर्या, नित्य-पूजा-फलं लभेत्।
विमुक्तो रोग-संघातैरारोग्यं महदश्नुते।।१८।।
प्राप्नोति महदैश्वर्यं, सर्व-विद्या-निधिर्भवेत्।
तत्कर-स्पर्श-मात्रेण, नरो ब्राह्मणतां लभेत्।।१९।।
मुच्यते सकलैर्विघ्नैः, स नित्यं मानवोत्तमः।
स भुंक्ते सकलान् भोगान्, दुर्लभांश्च दिने दिने।।२०।।
लभते पुत्र-पौत्रांश्च, महा-लक्ष्मी-समन्वितान्।
परमायुष्य-संयुक्तान्, साक्षाच्छिव-समान् गुणैः।।२१।।
सृष्टि-पालन-संहार-कर्तेवायं सदा भवेत्।
यस्ते कृपा-वान् भवति, स त्रिमूर्तिर्न संशयः।।२२।।
तत्-समीप-स्थितः शीघ्रं, सदा जाति-स्मरो-भवेत्।
तस्य गेहे सदा काम-धेनुः कल्प-तरुस्तथा।।२३।।
चिन्ता-मणिश्च सततं, तिष्ठत्येव न संशयः।
महा-जयमवाप्नोति, सदा सर्वत्र मानवः।।२४।।

वज्र-काय-समो भूत्वा, चरत्येव जगत्यम्।
महा-सुखी भवेन्नित्यं, परमात्मा भवेत् सदा।।२५।।
मुच्यते सकलेभ्योऽपि, बन्धनैः शृङ्खलादिभिः।
तं पूजयन्ति सततं, हरि-रुद्रादयोऽपि च।।२६।।
शुभमेव भवेन्नित्यं, सदापद्भिर्विमुच्यते।
देव-गन्धर्व-रक्षाद्यैर्ब्रह्माद्यैरपि दुर्लभान्।।२७।।
प्राप्नोति सकलान् कामान्, शीघ्रमेव न संशयः।
दिव्य-भोग-युतो दिव्य-कन्याभिः सह संयुतः।।२८।।
विमानं स समास्थाय, दिव्याभरण-भूषितः।
दिव्य-चन्दन-लिप्ताङ्गः, सदा विंशति-वार्षिकः।।२९।।
स भुङ्क्ते सकलान् भोगान्, देव-लोके नरः सदा।
तस्मादेतत् पठेत् स्तोत्रं, त्रिपुरा-हृदयं शुभम्।
जपेद्यः सततं भक्त्या, भवेत् साक्षात् सदा शिवः।।३०।।

॥ श्री रुद्र-यामले ईश्वर-पार्वती-संवादे श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्रम् ॥

★★★

काम-बीज 'क्लीं'

हे निखिल इच्छा-ज्ञान-क्रिया-शक्ति की जननी-स्वरूपा माता!
प्रातः-कालीन **बाल सूर्य** के समान रक्त-वर्ण तेजो-युक्त,
इच्छा-शक्ति, ज्ञान-शक्ति और **क्रिया-शक्ति** के आदि कारण,
उस **काम-बीज 'क्लीं'** को मैं प्रणाम करता हूँ,
जो अपने विस्तृत फैलाव से **अनन्त शक्तियों के ज्ञान** को
प्रत्यक्ष रूप से प्रकट करता है।

शक्ति-बीज 'सौः'

हे निखिल शब्द-अर्थ-सृष्टि की जननी-स्वरूपा माता!
सृष्टि की सभी वस्तुओं को उत्पन्न कर, **पाँच ज्ञानेन्द्रियों** और **पाँच कर्मेन्द्रियों** को उनके
शब्द तथा वचन आदि कार्यों से संयुक्त कर, **परम उत्कृष्ट शब्द-अर्थ-सृष्टि**
उत्पन्न करनेवाली आपकी **परा-शक्ति-स्वरूपा 'सौः'** को मैं प्रणाम करता हूँ।
—महर्षि दुर्वासा

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

।। श्रीगुरु-वन्दना ।।

उज्ज्वल स्फटिक के समान आभावाले **शिव-स्वरूप श्रीगुरु-देव** की मैं वन्दना करता हूँ, जो **द्वि-नेत्र** हैं और अपने हाथों में **वर** और **अभय मुद्रा** धारण किए हुए हैं ।।१।।

मूर्धा (शिर) में **सहस्रार पद्म** में विराजमान **सदा-शिव-मय श्रीगुरु**-देव भक्तों के अज्ञान के अन्धकार को नष्ट करने में **सूर्य** के समान हैं, उन्हें मैं **नित्य प्रणाम** करता हूँ ।।२।।

।। जगज्जननी श्रीविद्या की वन्दना ।।

जगज्जननी श्रीविद्या-सृष्टि, स्थिति, संहार की ईश्वरी हैं, उन **महा-त्रिपुर-सुन्दरी ललिता** को मैं **नित्य प्रणाम** करता हूँ ।।३।।

।। श्रीललिता-चक्र की वन्दना ।।

विन्दु, त्रिकोण, अष्ट-कोण, दो दश-कोणों और **चतुर्दश-कोणों** से युक्त **अष्ट-दल, षोडश-दलों, वृत्त-त्रय** और **तीन भू-गृहों** से शोभित **श्रीललिता**-चक्र को **नमन** करता हूँ, जो भक्तों को अभीष्ट देता है ।।४-५।।

।। जगज्जननी के गृह-राज की वन्दना ।।

अमृत-सागर में स्थित **रत्न-द्वीप** को **नमन** करता हूँ। विविध वृक्षोंवाले **विशाल वन** की मैं **वन्दना** करता हूँ; **कल्प-वाटिका, सन्तान-वाटिका** और **हरि-चन्दन-वाटिका** की **वन्दना** करता हूँ ।।६-७।।

मन्दार-वाटिका, पारिजात-वाटिका की **वन्दना** करता हूँ । हे **देवेशि!** तुम्हारी **कदम्ब-वन-वाटिका** को **नमन** करता हूँ ।।८।।

महा-रत्न पुष्प-राग के प्राकार को मैं **प्रणाम** करता हूँ, **पद्म-राग-मणियों** से बने प्राकार का मैं सदा **भजन** करता हूँ ।।९।।

गोमेद-रत्न और **वज्र** से बने प्राकार का मैं **सहारा** लेता हूँ । हे **ईश्वरि**, तुम्हारे **वैडूर्य-रत्न** के प्राकार को मैं **प्रणाम** करता हूँ ।।१०।।

इन्द्र-नील रत्नों के प्राकार को मैं **प्रणाम** करता हूँ और **मुक्ता-रत्नों** से परिपूर्ण प्राकार का मैं सदा **भजन** करता हूँ।।११।।

महा-रत्न मरकत से बने तुम्हारे प्राकार को **नमन** है । **महा-रत्न विद्रुम** से बने तुम्हारे प्राकार का मैं **सहारा** लेता हूँ ।।१२।।

सहस्र खम्भोंवाले माणिक्य-मण्डप की मैं वन्दना करता हूँ। हे देवेशी ललिते! तुम्हारी अमृत-बावली का मैं भजन करता हूँ।।१३।।

विमर्श-ज्ञान देनेवाली आनन्द-बावली की मैं वन्दना करता हूँ। बाल-सूर्य की किरणों का मैं भजन करता हूँ, चन्द्रिका की किरणों का मैं सहारा लेता हूँ।।१४।।

विशाल शृङ्गार-परिखा और पद्मों के विशाल वन का मैं भजन करता हूँ। महा-रत्न चिन्ता-मणि से बने गृह-राज को मैं नमन करता हूँ।।१५।।

हे देवि! पूर्वाम्नाय से युक्त तुम्हारे पूर्व-द्वार का मैं भजन करता हूँ, तुम्हारा दक्षिण द्वार-दक्षिणाम्नाय-स्वरूप है, उसका मैं सहारा लेता हूँ।।१६।।

पश्चिमाम्नाय-रूपी तुम्हारे परम द्वार को मैं नमन करता हूँ। उत्तराम्नाय-रूपी उत्तर-द्वार की मैं वन्दना करता हूँ।।१७।।

हे कुलेश्वरि! ऊर्ध्व-द्वार में ऊर्ध्वाम्नाय की मैं वन्दना करता हूँ। हे देवेशी ललिते! तुम्हारे विशाल सिंहासन का मैं भजन करता हूँ।।१८।।

तुम्हारे मञ्च के एक ब्रह्मात्मक पाए को मैं नमन करता हूँ, तुम्हारे मञ्च के एक विष्णु-मय पाए को मैं नमन करता हूँ।।१९।।

तुम्हारे मञ्च के एक रुद्र-मय पाए को मैं नमन करता हूँ, तुम्हारे मञ्च के एक ईश्वरात्मक पाए को मैं नमन करता हूँ।। २०।।

मञ्च के सदा-शिव-मय एक शुभ फलक की मैं वन्दना करता हूँ। हे परमेश्वरि! तुम्हारे हंसात्मक गद्दे को मैं नमन करता हूँ।।२१।।

तुम्हारे हंसात्मक विशाल ओढ़न का मैं भजन करता हूँ। हे देवि! तुम्हारे कौसुम्भ बिछौने को मैं नित्य नमन करता हूँ। विशाल चँदोवे और पर्दे का मैं भजन करता हूँ।।२२।।

।। भगवती श्रीललिता की विस्तृत मानस-पूजा ।।

हे शिव-प्रिये! इस प्रकार श्रीचक्र के पूजा-गृह का ध्यान कर अपनी दाईं ओर पुष्प, अक्षत आदि को रखता हूँ। हे महा-देवि! तुम्हारे दोनों ओर दीपक हैं, उन्हें मैं दिखाता हूँ।।२३-२४।।

मूल-मन्त्र से मैं तुम्हारे त्रिपुरा-चक्र का पूजन करता हूँ, हे शिव-प्रिये! तीन खण्डों (ऐं, क्लीं, सौः) से तुम्हारे त्रिकोण की पूजा करता हूँ।।२५।।

हे शिवे ! वायु, अग्नि, जल-वीजों (यं, रं, वं) से युक्त प्राणायामों द्वारा मैं शोषण, दाहन और आप्लावन करता हूँ तथा मूल-मन्त्र से मैं तीन बार प्राणायाम करता हूँ ।।२६।।

'अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भूमि-संस्थिता:। ये भूता विघ्न-कर्तारस्ते, नश्यन्तु शिवाज्ञया'-इस मन्त्र से हे शिवे ! मैं तीन बार ताली बजाता हूँ ।।२७-२८।।

हे महा-त्रिपुर-सुन्दरि! 'नारायणोऽहं, ब्रह्मोऽहं, भैरवोऽहं, शिवोऽस्म्यहं, देवोऽहं, परमात्माऽहं '। इस प्रकार ध्यान कर मैं कुमारी-बीज (अं) से युक्त तुम्हारे वज्र-कवच-न्यास को करता हूँ ।। २९-३०।।

हे ईश्वरि! 'मां रक्ष रक्ष'-इस मन्त्र से हृदय पर हाथ जोड़ता हूँ। हे शिवे! 'नमो देव्यासनाय'-इस मन्त्र से तुम्हें आसन देता हूँ ।। ३१।।

हे महेश्वरि! 'चक्रासनं नमस्यामि, सर्व-मन्त्रासनं भजे, साध्य-सिद्धासनं वन्दे'- इन मन्त्रों से मैं चक्र, मन्त्र और देवताओं के लिए उत्तम आसन देता हूँ। अब मैं षडङ्ग और मातृका-न्यास करता हूँ ।।३२-३३।।

वशिन्याद्यष्टक-न्यास, षोढा-न्यास मैं करता हूँ, तब महा-षोढा और नव-योनि-न्यास करता हूँ ।। ३४।।

फिर चक्र-न्यास और उत्तम श्रीकण्ठ-न्यास करता हूँ। केशवादि महा-न्यास और काम-न्यास मैं करता हूँ ।। ३५।।

तब कला-न्यास और काम-कला-न्यास करता हूँ, पीठ-न्यास और तत्त्व-न्यास मैं करता हूँ ।। ३६।।

हे त्रिपुरेश्वरि! स्थित्यादि-न्यास करता हूँ। हे महेश्वरि! तब मैं शुद्ध जल से बाँई ओर त्रिकोण, वृत्त, चतुरस्र का मण्डल बनाता हूँ। हे शिव-प्रिये! पुष्पों से पूजा कर उस पर आधार-सहित-शङ्ख मैं स्थापित करता हूँ ।। ३७-३८।।

षडङ्ग (ह्रां, ह्रीं, ह्रूं, ह्रैं, ह्रौं, ह्रः) से पूजन कर मैं शङ्ख में जल भरता हूँ और जल को मूल-मन्त्र से अभिमन्त्रित करता हूँ ।। ३९।।

हे जगन्मातः! उस जल से मैं त्रिकोण-वृत्त से युक्त षट्-कोण, चतुरस्र का मण्डल बनाता हूँ ।।४०।।

हे शिव-प्रिये ! त्रिकोण के मध्य में मूल-मन्त्र से और त्रिकोणों में मूल-मन्त्र के तीन खण्डों (ऐं, क्लीं, सौः) से पूजन कर बीजों की आवृत्ति (ऐं, क्लीं, सौः, ऐं, क्लीं, सौः) द्वारा छः कोणों की पूजा करता हूँ ।।४१।।

फिर वहाँ दश-कलाओं से युक्त अग्नि-मण्डल का आश्रय लेता हूँ। १. धूम्रार्चि, २ ऊष्मा, ३ ज्वलिनी, ४ ज्वालिनी, ५ विस्फुलिङ्गिनी, ६ सुश्री, ७ सुरूपा, ८ कपिला, ९ हव्य-वहा और १० कव्य-वहा-इन दश कलाओं का यादि-सहित नमन करता हूँ। यथा-१ यं धूम्रार्चिषे नमः, २ रं ऊष्मायै नमः, ३ लं ज्वलिन्यै नमः, ४ वं ज्वालिन्यै नमः, ५ शं विस्फुलिङ्गिन्यै नमः, ६ षं सुश्रियै नमः, ७ सं सुरूपायै नमः, ८ हं कपिलायै नमः, ९ ळं हव्य-वहायै नमः और १० क्षं कव्य-वहायै नमः ।।४२-४४।।

वहीं द्वादश कलाओं से युक्त सूर्य-मण्डल है। वहाँ अर्घ्य-पात्र से मैं १ तपिनी, २ तापिनी, ३ धूम्रा, ४ मरीचि, ५ ज्वालिनी, ६ रुचि, ७ सुषुम्णा, ८ भोगदा, ९ विश्वा, १० बोधिनी, ११ धारिणी और १२ क्षमा-सूर्य की इन बारह कलाओं को नमन करता हूँ। यथा-१ कं भं तपिन्यै नमः, २ खं बं तापिन्यै नमः, ३ गं फं धूम्रायै नमः, ४ घं पं मरीच्यै नमः, ५ ङं नं ज्वालिन्यै, ६ चं धं रुच्यै, ७ छं दं सुषुम्णायै नमः, ८ जं थं भोगदायै नमः, ९ झं तं विश्वायै नमः, १० ञं णं बोधिन्यै नमः, ११ टं ढं धारिण्यै नमः और १२ ठं डं क्षमायै नमः ।।४५-४७।।

वहीं षोडश-कलाओं से युक्त सोम-मण्डल है। वहाँ अर्घ्य-पात्र से मैं १ अमृता, २ मानदा, ३ पूषा, ४ तुष्टि, ५ पुष्टि, ६ रति, ७ धृति, ८ शशिनी, ९ चन्द्रिका, १० कान्ति, ११ ज्योत्स्ना, १२ श्री, १३ प्रीति, १४ अङ्गदा, १५ पूर्णा और १६ पूर्णामृता-चन्द्र की सोलह कलाओं को सोलह स्वरों से युक्त भजता हूँ। यथा-१ अं अमृतायै नमः, २ आं मानदायै नमः, ३ इं पूषायै नमः, ४ ईं तुष्ट्यै नमः, ५ उं पुष्ट्यै नमः, ६ ऊं रत्यै नमः, ७ ऋं धृत्यै, ८ ॠं शशिन्यै नमः, ९ ऌं चन्द्रिकायै नमः, १० ॡं कान्त्यै नमः, ११ एं ज्योत्स्नायै नमः, १२ ऐं श्रियै नमः, १३ ओं प्रीत्यै नमः, १४ औं अङ्गदायै नमः, १५ अं पूर्णायै नमः और १६ अः पूर्णामृतायै नमः।।४८-४९।।

तदनन्तर मैं अकथादि सुन्दर रेखाओंवाले त्रिकोण को लिखता हूँ। 'ह-ल-क्ष' वर्णों से युक्त और 'हंसः' से उज्ज्वल उस त्रिकोण की मैं वाक् (ऐं), काम (क्लीं) और शक्ति (ह्रीं) से युक्त 'हंसः' द्वारा आराधना करता हूँ ।।५०-५१।।

पुनः वृत्त के बाहर षट्-कोण में मैं लिखता हूँ, षट्-कोण के अग्र-भागों में मैं षडङ्गों (ह्रां, ह्रीं, ह्रूं, ह्रैं, ह्रौं, ह्रः) से पूजन करता हूँ ।। ५२।।

मूल-मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रित करता हूँ। हे देवि! उसमें गन्ध-अक्षत आदि समर्पित करता हूँ ।।५३।।

तुम्हारे सभी पूजा-द्रव्यों को मैं विद्या-मय और शुभ ध्यान करता हूँ, उन्हें स्पर्श कर १४ मन्त्रों का जप करता हूँ ।।५४।।

अग्नि की दस, सूर्य की बारह और चन्द्र की सोलह काम-प्रद कलाओं का वहाँ सहारा लेता हूँ।।५५।।

१ सृष्टि, २ ऋद्धि, ३ स्मृति की वन्दना करता हूँ, ४ मेधा, ५ कान्ति को नमन करता हूँ, ६ लक्ष्मी, ७ धृति, ८ स्थिरा की मैं वन्दना करता हूँ, ९ स्थिति, १० सिद्धि का भजन करता हूँ, ।। ५६।।

ब्रह्मा की उक्त दस कलाओं की मैं वन्दना करता हूँ, १ जरा, २ पालिनी का मैं भजन करता हूँ, ३ शान्ति, ४ ईश्वरी, ५ रति और ६ कामिका की वन्दना करता हूँ।। ५७।।

७ वरदा, ८ ह्लादिनी की वन्दना करता हूँ, ९ प्रीति, १० दीर्घा का मैं भजन करता हूँ और हादि के सहित विष्णु की उक्त दस कलाओं का मैं भजन करता हूँ ।। ५८।।

१ तीक्ष्णा, २ रौद्री, ३ भया, ४ निद्रा, ५ तन्द्रा, ६ क्षुधा, ७ क्रोधिनी, ८ क्रिया की वन्दना करता हूँ । ९ उद्गारी और १० मृत्यु-रुद्र की इन दस कलाओं का मैं भजन करता हूँ, पीली, श्वेत और लाल कलाओं का मैं नित्य भजन करता हूँ ।।५९-६०।।

असिता और अनन्ता का षादि के सहित मैं भजन करता हूँ, ईश्वर की इन अभीष्ट-दायिनी कलाओं की नित्य वन्दना करता हूँ ।।६१।।

१ निवृत्ति, २ प्रतिष्ठा, ३ विद्या, ४ शान्ति, ५ इन्धिका, ६ दीपिका, ७ रेचिका और ८ मोचिका को नमन करता हूँ ।।६२।।

९ परा, १० सूक्ष्मा, ११ सूक्ष्मामृता, १२ ज्ञाना व १३ ज्ञानामृता कला की मैं वन्दना करता हूँ। १४ आप्यायनी, १५ व्यापिनी, १६ व्योम-रूपा को नमन करता हूँ, सदा-शिव की इन सोलह कलाओं को मैं प्रणाम करता हूँ ।।६३-६४।।

ॐ हंस शुचिषत् वसुरन्तरिक्ष सद्धोता वेदीषदतिथिर्दुरोणसत्। नृषद्वर सद्-ऋत सद्-व्योम सदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं वृहत्। नामक 'हंसः' महा-मन्त्र का, ज्योति-पूर्ण 'हंस' का मैं सहारा लेता हूँ ।।६५।।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि-वर्द्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्-मन्त्र से मैं नमन करता हूँ।

ॐ तद्-विष्णोः परमं पदं, सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततम्-मन्त्र से मैं प्रणाम करता हूँ।

ॐ विष्णुर्योनिं कल्पयतु, त्वष्टा रूपाणि पिंशतु।
आ सिञ्चतु प्रजा-पतिर्धाता गर्भं दधातु वै।।

गर्भं देहि सिनीवालि! गर्भं देहि सरस्वति!

गर्भं धेह्यश्विनौ देवावाधत्तां पुष्कर-स्रजा।।

उक्त मन्त्र और मूल-मन्त्र-इन श्रेष्ठ मन्त्रों से और ९४ मन्त्रों से अभिमन्त्रित तुम्हारे अमृत की मैं वन्दना करता हूँ-

अखण्डैक - रसानन्द - करे पर - सुधात्मनि!।

स्वच्छन्द - स्फुरणामत्र, निधेह्यकुल-रूपिणि!।।

अकुलस्थामृताकारे, सिद्धि - ज्ञान-करे! परे!।

अमृत्वं निधेह्यस्मिन्, वस्तुनि क्लिन्न-रूपिणि!।।

तद्-रूपिण्यैक-रस्यत्वं, कृत्वा ह्येतत्-स्वरूपिणि!।

भूत्वा परामृताऽऽकारा, मयि चित्-स्फुरणं कुरु।।

अमृतेशीं नमस्यामि, सर्वदामृत-वर्षिणीम्।

वाग्वादिनीं नमस्यामि, श्रीविद्यां प्रणमाम्यऽहं।।

उक्त उत्तम मन्त्रों से अभिमन्त्रित **परामृत** की मैं **वन्दना** करता हूँ।।६६-७२।।

हे महेश्वरि! ज्योतिर्मय **अर्घ्य** देता हूँ, उसके बिन्दुओं से अपने शिर पर **तीन गुरुओं की पूजा** मैं करता हूँ।।७३।।

'ब्रह्माऽह्मस्मि' कहकर उसके बिन्दु का मैं **कुण्डलिनी** में **हवन** करता हूँ। **हृदय-चक्र** पर विराजमाना महादेवी **महा-त्रिपुरा-सुन्दरी** को, जो **मोह-रूपी अन्धकार** को नष्ट करती हैं और **साक्षात् संवित्-स्वरूपिणी** हैं, उनकी **पर-कला** को नासा-पुट के द्वारा अपने हाथ की **पुष्पाञ्जलि-मुद्रा** में लाकर-**'जगन्मातर्महा-देवि!, महा-त्रिपुर-सुन्दरि! सुधा-चैतन्य-मूर्तिं ते, कल्पयामि नमः शिवे!'** इस मन्त्र से हे देवि! यन्त्र पर मैं तुम्हें प्रतिष्ठित करता हूँ।।७४-७६।।

महा-पद्म-वनान्तःस्थे!, कारणानन्द-विग्रहे!।

सर्व - भूत - हिते! मातरेह्येहि परमेश्वरि!।।१।।

देवेशि! भक्ति-सुलभे!, सर्वावरण-संयुते!।

यावत् त्वां पूजयिष्यामि, तावत् त्वं सु-स्थिरा भव।।२।।

उक्त दोनों मन्त्रों से तुम्हारा **आवाहन** करता हूँ। ।।७७-७८।।

'कल्पयामि नमः पाद्यं', 'अर्घ्यं ते कल्पयाम्यऽहं', 'सुगन्ध-तैलाभ्यङ्गं च मज्ज-शाला-प्रवेशनं कल्पयामि नमः' से क्रमशः पाद्य, अर्घ्य, सुगन्धित तैल देकर

स्नानागार में तुम्हारे प्रवेश की कल्पना कर 'नमः मणिः-पीठोपवेशनं' से मणि-जटित पीठ पर तुम्हारे विराजने की भावना करता हूँ ।।७९-८०।।

'हे ईशानि! दिव्य स्नानीय और शुभ उपटन ग्रहण करो । गरम जल ग्रहण करो'-तुम्हारे स्नान की भावना करता हूँ ।। ८१।।

स्वर्ण-घट से गिरनेवाले तीर्थ-जल से अभिषेक की भावना करता हूँ। तौलिए से पोंछने की कल्पना करता हूँ, तुम्हें नमस्कार है ।।८२।।

बाल सूर्य के समान लाल रेशमी वस्त्र पहनने के लिए और अरुण वस्त्र से तुम्हारे दुपट्टे की भावना करता हूँ ।।८३।।

आलेपन-मण्डप में तुम्हारे प्रवेश की कल्पना करता हूँ, मणि-पीठ पर बैठने की भावना करता हूँ ।।८४।।

सारे शरीर में अष्ट-गन्धों से लेपन की कल्पना करता हूँ, काले अगरु की महान् धूप तुम्हारे केश-जाल के लिए है ।।८५।।

मल्लिका, मालती, जाति, चम्पक आदि मनोहर पुष्पों से सुन्दर मालाओं की भावना करता हूँ, तुम्हें नमस्कार है ।।८६।।

भूषण-मण्डप में मैं तुम्हारे प्रवेश की कल्पना करता हूँ, वहाँ रत्न-पीठ पर मैं तुम्हारे बैठने की भावना करता हूँ ।।८७।।

नवीन माणिक्य का मुकुट, तब चन्द्र-कला, माँग के सिन्दूर, तब उत्तम तिलक, दोनों नेत्रों की कोरों में कालाञ्जन, मणियों के दो कुण्डल और हे ईश्वरि! नाक के आभूषण, अधरोष्ठ की लालिमा और हे त्रिपुरे! तुम्हारे कण्ठ हेतु स्वर्ण व चिन्तामणि-जटित आभूषण की मैं कल्पना करता हूँ ।।८८-९०।।

तुम्हारे पदक के लिए महा-पदक की कल्पना करता हूँ, मुक्तावलि और एकावलि की भावना करता हूँ, तुम्हें नमन है ।।९१।।

छन्न-वीर, दो केयूरों और चार वलयों, ऊर्मिकावलि की भावना, हे ईश्वरि! करता हूँ ।।९२।।

हे त्रिपुरे! तुम्हारी स्वर्ण-करधनी, मङ्गल-सूत्र, पाद-कटक और रत्न-नूपुर की कल्पना मैं करता हूँ ।।९३।।

पैरों की अँगुलियों के लिए आभूषण, तुम्हारे एक हाथ में पाश, दूसरे में अंकुश और हे देवि! अन्य हाथ में इक्षु-धनुष, दूसरे में पुष्प-बाणों तथा पैरों में माणिक्य-पादुका

की भावना करता हूँ । नौ आवरणों की देवियों के साथ महा-चक्र में तुम्हारे आरोहण, कामेश्वराङ्क में पर्यङ्क पर उपवेशन, सुधासव-चषक से आचमन और कर्पूर-ताम्बूल की कल्पना मैं करता हूँ, हे शिवे! तुम्हें नमन है। तुम्हारे आनन्दोल्लास, विलास, हास्य की कल्पना मैं करता हूँ ।।९४-९७।।

हे देवि! मङ्गल-मयी आरती कर मैं तुम्हारे लिए छत्र, दो चँवरों और दर्पण की भावना करता हूँ ।।९८।।

हे महेश्वरि! ताल-वृन्त की कल्पना करता हूँ । तुम्हें गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य देने की भावना करता हूँ, तुम्हें नमन है ।।९९।।

अब वैन्दव-चक्र में हे सर्वानन्द-मयात्मिके! रत्न-सिंहासन पर विराज-माना तुम शिव-प्रिया का मैं ध्यान करता हूँ ।।१००।।

सहस्रों उदय-कालीन सूर्यों की आभावाली, जपा-पुष्प के समान प्रभावाली, नए रत्नों की चमक से उज्ज्वल मुकुट से सुशोभिता, चन्द्र-कला से विभूषिता, कस्तूरी के तिलक से शोभिता, कामदेव के धनुष की सुन्दरता को हरानेवाली दौ भौहोंवाली, अञ्जन लगी आँखों वाली, कमल की पंखुड़ियों के समान सुन्दर नेत्रोंवाली, मणियों के कुण्डलों से युक्त दो कानोंवाली, मुक्ता-माणिक्य-जटित आभूषण से युक्त नाकवाली, केसर की शोभा से युक्त दो कपोलोंवाली, पके हुए बिम्बा-फल की आभा के समान दो अधरों से सुशोभिता, उज्ज्वल मोतियों की माला जैसे दन्त की पंक्तियों से विभूषिता, ताम्बूल-पूर्ण मुखवाली, सुन्दर मुस्कान-युक्त मुख से सुशोभिता, स्वर्ण-चिन्ताक से युक्त आद्य-भूषण-सहिता, पदक और महा-पदक से युक्ता, मुक्तावलि सहित एकावलि से सुशोभिता, केयूर, अङ्गद से युक्त चार भुजाओंवाली, अष्ट-गन्ध से युक्त श्रीचन्दन से लिप्त शरीरवाली, स्वर्ण-कलश के समान दो स्तनों से सुशोभिता, रक्त-वस्त्र-धारिणी, रक्त-कञ्चुकी-सहिता, महीन रोमों से युक्त कटि से सुशोभिता, मुक्ता-माणिक्य से जटित करधनी से युक्त नितम्बवाली, सदा-शिवं की गोद में विराजमाना, अति स्थूल जघन (कूल्हे) वाली, केले के खम्भों के समान दो ऊरुओं से सुशोभिता, केले के जैसी कान्तिवाली दो जाँघों से विभूषिता, दो गूढ़ गुल्फों (टखनों) और लाल-लाल दो चरणों से युक्ता, ब्रह्मा, विष्णु, महा-देव के शिरस्थ मुकुटों से निकलनेवाली ज्योति से सुशोभित चरणोंवाली, भक्तों की रक्षा में तत्परा, ईख के धनुष, पुष्पों के वाण, पाश और अंकुश धारण करनेवाली परमा, संवित्-स्वरूपा देवी परमेश्वरी का मैं ध्यान करता हूँ ।।१०१-११४।।

अब हे शिवे! वर-दायिनी नौ मुद्राएँ दिखाता हूँ। हे त्रिपुरे! मूल-मन्त्र से तीन बार तुम्हें तर्पण कराता हूँ ।।११५।।

१ आग्नेय, २ ईशान, ३ नैऋत, ४ वायव्य, ५ मध्य और चारों दिशाओं में क्रमशः षडङ्गों की पूजा मैं करता हूँ ।।११६।।

सोलह नित्याओं-१ आद्या कामेश्वरी की वन्दना करता हूँ, २ भग-मालिनी व ३. नित्य-क्लिन्ना और ४ भेरुण्डा को नमन करता हूँ ।।११७।।

५ वह्नि-वासा, ६ महा-वज्रेश्वरी की स्तुति करता हूँ, ७ शिव-दूती, ८ त्वरिता, ९ कुल-सुन्दरी को नमन करता हूँ ।।११८।।

१० नित्या, ११ नील-पताका, १२ विजया, १३ सर्व-मङ्गला, १४ ज्वाला-मालिनी, १५ चित्रा और १६ महा-नित्या श्रीललिता की मैं स्तुति करता हूँ ।।११९।।

दिव्यौघों को नमन करता हूँ-परेश, परमेश्वरी, मित्रेश, षष्ठीश और उड्डीश को प्रणाम करता हूँ ।।१२०।।

चर्या-नाथ को नमन करता हूँ, लोपामुद्रा को मैं भजता हूँ, अगस्त्य को प्रणाम करता हूँ। सिद्धौघ में काल-तापन को, धर्माचार्य को नमन करता हूँ, मुक्त-केशीश्वर, दीप-कला-नाथ को भजता हूँ, तब मानवौघ में , विष्णु-देव को नमन करता हूँ, प्रभा-कर को मैं भजता हूँ, तेजो-देव और मनोज की स्तुति करता हूँ ।।१२१-१२३।।

कल्याण-देव, रत्न-देव को मैं भजता हूँ, वासुदेव को नमन करता हूँ, श्री रामानन्द का सहारा लेता हूँ ।।१२४।।

परमेष्ठि-गुरु की वन्दना करता हूँ, परापर-गुरु और परम-गुरु का सहारा लेता हूँ, मूर्धा में ब्रह्म-रन्ध्र में स्थित श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ। कं (ब्रह्म) बिल (रन्ध्र) में श्रीगुरु-पादुका को मैं नमन करता हूँ।।१२५।।

तब हे देवि! तुम्हारे 'प्रथम चतुरस्र' में १ अणिमा, २ लघिमा, ३ महिमा, ४ ईशित्व, ५ वशित्व-सिद्धियों को मैं नमन करता हूँ ।।१२६-१२७।।

६ प्राकाम्य, ७ भुक्ति, ८ इच्छा, ९ प्राप्ति और १० सर्व-काम-प्रदा सिद्धियों को मैं भजता हूँ ।।१२८।।

'मध्यम चतुरस्र' में १ ब्राह्मी, २ माहेश्वरी, ३ कौमारी, ४ वैष्णवी, ५ वाराही को मैं प्रणाम करता हूँ ।।१२९।।

६ माहेन्द्री, ७ चामुण्डा, ८ महा-लक्ष्मी को भजता हूँ । 'तृतीय चतुरस्र' में मैं १ सर्व-संक्षोभिणी को भजता हूँ ।।१३०।।

श्रीललिता-चक्र

श्री-यन्त्र

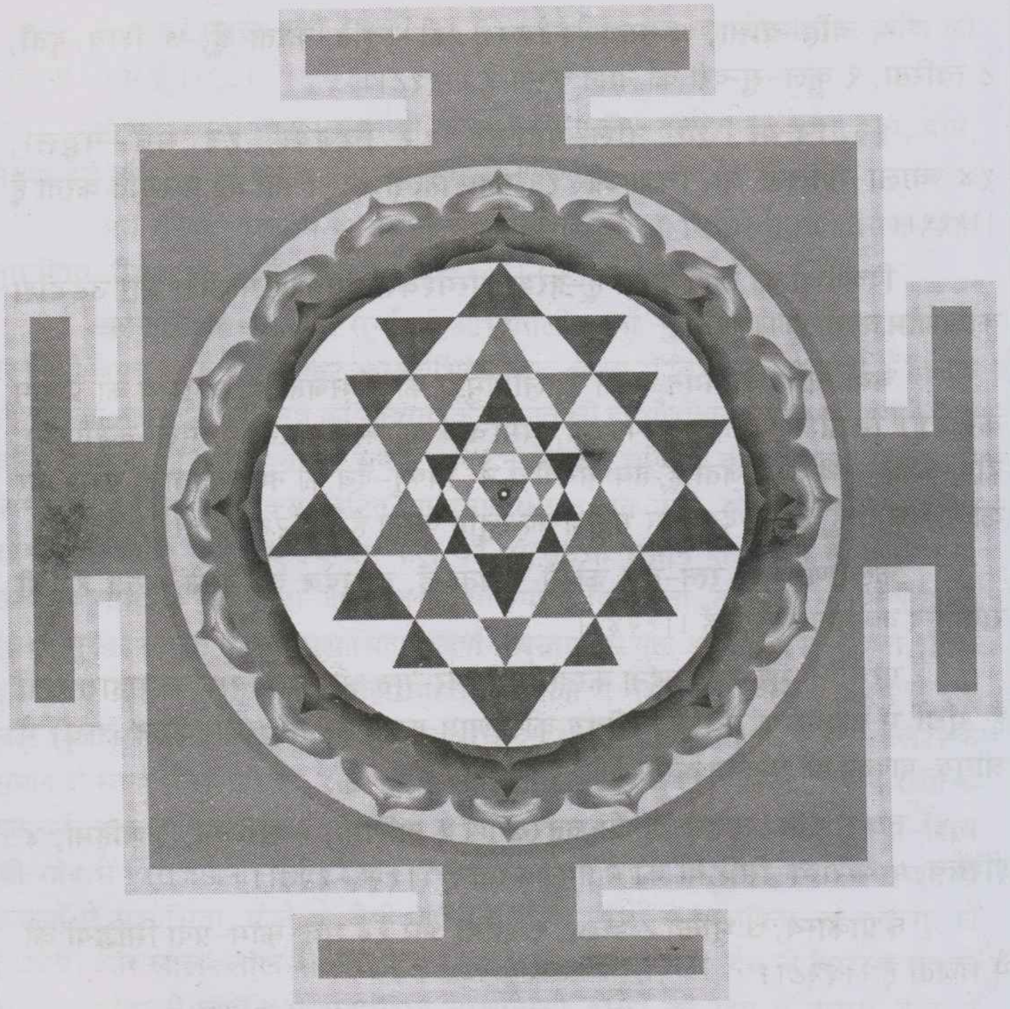

॥ श्रीललिता-चक्र की वन्दना ॥

विन्दु, त्रिकोण, अष्ट-कोण, दो दश-कोणों और चतुर्दश-कोणों से युक्त
अष्ट-दल, षोडश-दलों, वृत्त-त्रय और तीन भू-गृहों से शोभित
श्रीललिता-चक्र को नमन।

श्रीललिता-चक्र (श्री-यन्त्र) के आवरण

○ वैन्दव-चक्र (श्वेत-विन्दु)

● सर्वानन्द-मय-चक्र (रक्त-विन्दु)

▼ सर्व-सिद्धि-प्रद-चक्र

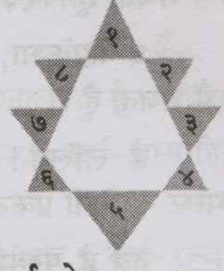

सर्व-रोग-हर-चक्र
(अष्ट-कोण)

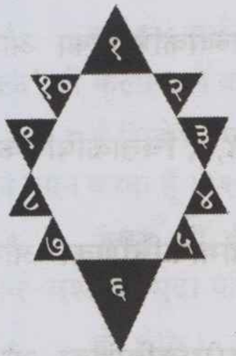

सर्व-रक्षा-कर-चक्र
(अन्तर्दशार)

सर्वार्थ-साधक-चक्र
(बहिर्दशार)

सर्व-सौभाग्य-दायक-चक्र
(चतुर्दशार)

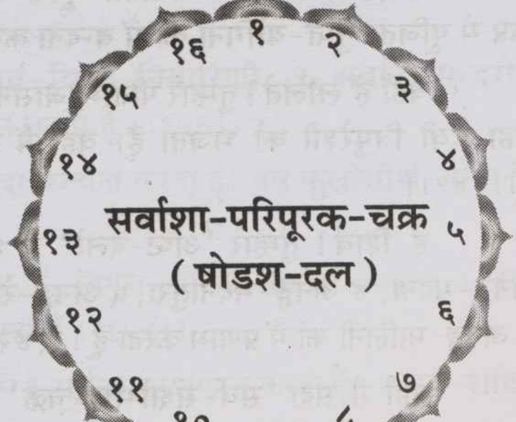

२ सर्व-विद्राविणी, ३ सर्वाकर्षिणिका, ४ सर्व-वशङ्करी और ५ सर्वोन्मादिनिका को मैं भजता हूँ ।।१३१।।

६ महांकुशा, ७ सर्व-खेचरी, ८ सर्व-वीज, ९ सर्व-योनि, १० सर्व-त्रिखण्डिनी को मैं भजता हूँ ।।१३२।।

हे ललिते! तुम्हारे 'त्रैलोक्य-मोहन-चक्र' को मैं नमन करता हूँ। उसमें अभीष्ट-दायिनी प्रकट-योगिनी को नमन करता हूँ ।।१३३।।

तब हे परमेश्वरि! वहाँ तुम्हारे सुधार्णवासन की मैं वन्दना करता हूँ । वहाँ चक्रेश्वरी त्रिपुरा परमेश्वरी की मैं वन्दना करता हूँ ।।१३४।।

अब हे शिवे! सर्व-संक्षोभिणी मुद्रा बनाता हूँ । अब मैं 'षोडश-दल' में १ कामाकर्षिणिका को भजता हूँ ।।१३५।।

२ बुद्ध्याकर्षिणिका, ३ अहङ्काराकर्षिणिका, ४ शब्दाकर्षिणिका और ५ स्पर्शाकर्षिणिका की वन्दना करता हूँ ।।१३६।।

६ रूपाकर्षिणिका, ७ रसाकर्षिणिका, ८ गन्धाकर्षिणिका, ९ चित्ताकर्षिणिका को भजता हूँ ।।१३७।।

१० धैर्याकर्षिणिका, ११ स्मृत्याकर्षिणिका, १२ नामाकर्षिणिका और १३ वीजाकर्षिणिका की मैं वन्दना करता हूँ ।।१३८।।

१४ आत्माकर्षिणिका, १५ अमृताकर्षिणिका, १६ शरीराकर्षिणिका और परमेश्वरी नित्या की वन्दना करता हूँ ।।१३९।।

हे ईश्वरि! तुम्हारे 'सर्वाशा-पूरक-चक्र' की मैं कल्पना करता हूँ । वहाँ गुप्त रूप से पूजिता गुप्त-योगिनी की मैं वन्दना करता हूँ ।।१४०।।

वहाँ हे ललिते! तुम्हारे पीताम्बुजासन को नमन करता हूँ और अभीष्ट-सिद्धिदा महा-देवी त्रिपुरेशी को भजता हूँ। वहाँ मैं सर्व-विद्राविणी मुद्रा का चिन्तन करता हूँ।।१४१।।

हे शिवे! तुम्हारे "अष्ट-दलों" में १ अनङ्ग-कुसुमा, २ अनङ्ग-मेखला, ३ अनङ्ग-मदना, ४ अनङ्ग-मदनातुरा, ५ अनङ्ग-रेखा, ६ अनङ्ग-वेगिनी, ७ अनङ्गांकुशा और ८ अनङ्ग-मालिनी को मैं प्रणाम करता हूँ ।।१४२-४४।।

वहाँ मैं सदा 'सर्व-संक्षोभण-चक्र' की कल्पना करता हूँ और सर्व-कामदा गुप्त-तरा योगिनी की वन्दना करता हूँ।।१४५।।

वहाँ मैं देवी के उत्तम आत्मासन को प्रणाम करता हूँ और जगत् की ईशानी त्रिपुर-सुन्दरी को नमन करता हूँ। वहाँ तुम्हारी सर्वाकर्षिणिका मुद्रा की कल्पना मैं करता हूँ।।१४६।।

हे शिवे! तुम्हारे 'चतुर्दशार' में १ सर्व-संक्षोभिणी की मैं वन्दना करता हूँ।।१४७।।

२ सर्व-विद्राविणी, ३ सर्वाकर्षिणी, ४ सकलाह्लादिनी और ५ सर्व-सम्मोहिनी को मैं भजता हूँ।।१४८।।

६ सकल-स्तम्भिनी, ७ सर्व-जृम्भिनी, ८ सर्व-वशङ्करी और ९ सर्व-रञ्जनी को मैं भजता हूँ।।१४९।।

१० सकलोन्मादिनी, ११ सर्वार्थ-साधिनी, १२ सर्व-सम्पत्ति-पूरणी और १३ सर्व-मन्त्र-मयी को मैं भजता हूँ।।१५०।।

तब १४ सर्व-द्वन्द्व-क्षयङ्करी शक्ति को मैं भजता हूँ। वहाँ 'सर्व-सौभाग्य-दायक-चक्र' की कल्पना मैं करता हूँ।।१५१।।

हे शिवे! जगद्धात्री सम्प्रदाय-योगिनी को नमन करता हूँ। तुम्हारे उत्तम श्रीचक्रासन को नमन करता हूँ।।१५२।।

जगत् की ईशानी त्रिपुर-वासिनी को मैं नमन करता हूँ। हे शिवे! तुम्हारी सर्व-वशङ्करी मुद्रा की कल्पना मैं करता हूँ।।१५३।।

हे देवि! तुम्हारे 'बहिर्दशार' में १ सर्व-सिद्धि-प्रदा को भजता हूँ, २ सर्व-सम्पत्-प्रदा और ३ सर्व-प्रियङ्करी की मैं वन्दना करता हूँ।।१५४।।

तब ४ सर्व-मङ्गल-कारिणी, ५ सर्व-काम-प्रदा, ६ सर्व-दुःख-विमोचिनी देवी की मैं वन्दना करता हूँ।।१५५।।

७ सर्व-मृत्यु-प्रशमनी, ८ सर्व-विघ्न-निवारिणी, ९ सर्वाङ्ग-सुन्दरी, १० सर्व-सौभाग्य- दायिनी देवी को नमन करता हूँ।।१५६।।

मैं 'सर्वार्थ-साधक-चक्र' की सदा कल्पना करता हूँ। तब कुलोत्तीर्ण-योगिनी देवी की कल्पना करता हूँ।।१५७।।

सर्व-मन्त्रासन की वन्दना करता हूँ, त्रिपुरा-श्री का सहारा लेता हूँ। तब सर्वोन्मादन-कारिणी मुद्रा की कल्पना करता हूँ।।१५८।।

हे देवि! तुम्हारे 'अन्तर्दशार' में मैं १ सर्वज्ञा को प्रणाम करता हूँ। २ सर्व-शक्ति को नमन करता हूँ, ३ सर्वैश्वर्य-प्रदा को भजता हूँ।।१५९।।

४ सर्व-ज्ञान-मयी, ५ सर्व-व्याधि-विनाशिनी, ६ सर्वाधार-स्वरूपा और ७ सर्व-पाप-हरा को भजता हूँ ।।१६०।।

८ सर्वानन्द-मयी, ९ सर्व-रक्षा-स्वरूपिणी की वन्दना मैं करता हूँ। १० सर्वेप्सित-फल-प्रदा को मैं भजता हूँ ।।१६१।।

वहाँ मैं सदा 'सर्व-रक्षा-कर-चक्र' की कल्पना करता हूँ। उसमें मैं परमेश्वरी निगर्भ-योगिनी की वन्दना करता हूँ ।।१६२।।

साध्य-सिंहासन की वन्दना करता हूँ, त्रिपुरा-मालिनी को भजता हूँ। तब हे देवि! सर्व-महांकुशा मुद्रा की कल्पना करता हूँ ।।१६३।।

'अष्टार' में मैं १ वशिनी की वन्दना करता हूँ, २ कामेश्वरी को सदा भजता हूँ। ३ मोदिनी, ४ विमला, ५ अरुणा, ६ जयिनी को भजता हूँ ।।१६४।।

७ सर्वेश्वरी, ८ कौलिनी को प्रणाम करता हूँ। हे देवि! मैं तुम्हारे सर्व-रोग-हर चक्र का चिन्तन करता हूँ ।।१६५।।

मैं सदा तुम्हारी रहस्य-योगिनी देवी की कल्पना करता हूँ। त्रिपुरा-सिद्धा को नमन करता हूँ और खेचरी-मुद्रा को भजता हूँ ।।१६६।।

हे महेश्वरि! महा-त्रिकोण के बाहर चारों दिशाओं में जृम्भण बाणों और सम्मोहन धनुष को नमन करता हूँ ।।१६७।।

वशङ्कर पाश की वन्दना करता हूँ, स्तम्भक अंकुश को भजता हूँ। त्रिकोण में मैं जगद्धात्री महा-कामेश्वरी को भजता हूँ ।।१६८।।

महा-वज्रेश्वरी, महा-श्रीभग-मालिनी, सर्व-काम-फल-प्रदा महा-श्रीसुन्दरी की वन्दना करता हूँ ।।१६९।।

हे देवि! मैं तुम्हारे 'सर्व-सिद्धि-प्रद-चक्र' को नमन करता हूँ। उसमें काम-दायिनी अति-रहस्य-योगिनी को नमन करता हूँ ।।१७०।।

त्रिपुराम्बा को नमन करता हूँ, बीज-मुद्रा को नमन करता हूँ। हे ललिते! मूल-मन्त्र से बिन्दु में तुम्हारी पूजा करता हूँ ।।१७१।।

हे ललिते! तुम्हारे 'सर्वानन्द-मय-चक्र' को नमन करता हूँ। सदा परापर-रहस्य-योगिनी की कल्पना करता हूँ ।।१७२।।

महा-चक्रेश्वरी की वन्दना करता हूँ, मैं योनि-मुद्रा को भजता हूँ। मैं धूप-दीपादि सभी की तुम्हारे लिए कल्पना करता हूँ ।।१७३।।

हे शिवे! तुम्हारी प्रसन्नता के लिए महा-मुद्रा दिखाता हूँ। हे शिवे! मूल-मन्त्र से तीन बार तुम्हारा तर्पण करता हूँ।।१७४।।

मधु-युक्त पायस (खीर), पुआ, शाल्यन्न, घृत, सूपादि सभी खाद्य पदार्थों सहित चीनी, दूध-युक्त, अनेक प्रकार के शाक स्वर्ण-पात्र में रखकर तुम्हारे नैवेद्य की कल्पना करता हूँ।।१७५-१७६।।

हे त्रिपुरे! बिन्दु से तुम्हारे मुख की, विसर्ग से दोनों कुचों की और सपरार्द्ध से योनि की कल्पना करता हूँ।।१७७।।

काम-कला का यह रूप भक्तों के लिए सर्व-काम-प्रद और सर्व-सम्पत्-दायक है। हे त्रिपुरेश्वरि! तुम्हें नमन है।।१७८।।

अपने बाँएँ भाग में हे महेश्वरि! त्रिकोण, वृत्त और चतुरस्र बनाकर गन्धाक्षत आदि द्वारा पूजन करता हूँ।।१७९।।

वहाँ व्यापक मण्डल पर जल-युक्त आर्द्र अन्न-सहित मकार-त्रय का पात्र रखकर भूतों को उत्तम बलि देता हूँ। हे त्रैलोक्य-वन्दिते! देव-देवेशि! तुम्हें नमन करता हूँ।।१८०-१८१।।

पर-शिव के अङ्क में विराजमाना हे त्रिपुर-सुन्दरि! तुम्हें नमस्कार है। मैं मन से तुम्हारी प्रदक्षिणा करता हूँ।।१८२।।

तब समस्त मन्त्रों की साम्राज्ञी परमेश्वरी की महा-विद्या का जप तुम्हारी प्रसन्नता के लिए मैं सदा करता हूँ। तुम्हारी विद्या का जप कर अब मैं तुम परमेश्वरी की स्तुति करता हूँ।।१८३।।

हे महा-देवि, हे महेशानि, हे सदा-शिव की अति प्रिये, हे सदा-शिव की प्रिय करनेवाली, हे महा-नित्ये, हे महा-सिद्धे! मैं तुम्हारी शरण लेता हूँ।।१८४।।

हे देवि, त्रिपुरे! हे जगदीश्वरि ललिते! तुम्हारी जय हो। हे सदा-शिव का प्रिय करनेवाली, हे दया-मयि! मेरी रक्षा करो।।१८५।।

हे जगदम्ब, हे जगत्-स्वरूपे, हे जगदीश्वर-प्रिये, हे जगद-व्यापिनि, हे विश्वात्मिके पार्वति! मैं तुम्हार आश्रय लेता हूँ।।१८६।।

हे आदि रहिते! हे लोकों की आद्ये! हे भक्तों को अभीष्ट देनेवाली हिमालय की पुत्री, हे त्रिपुरेश्वरि! हे आदि-महा-देवेशि, हे ब्रह्म-मातः, हे विष्णु-मातः, हे आदि-अन्त-रहिते, हे शिव-मातः, हे देवेश्वरि! तुम्हें नमस्कार है।।१८७-१८८।।

हे ब्रह्मादि-देवों द्वारा वन्दिते, हे तीनों लोकों की स्वामिनि, हे सर्वेश्वर्य-दायिनी नित्ये! मैं सदैव तुम्हारा ध्यान करता हूँ ।।१८९।।

हे नित्य आनन्द-मयि, हे आधार-रहिते, हे चिद्-रूपे, हे शिव-प्रिये, हे अणिमादि सिद्धियों की आधार-भूते! मैं सदैव तुम्हारी भावना करता हूँ ।।१९०।।

हे ब्राह्मी आदि माताओं द्वारा वन्दिते, हे समस्त आवरण-देवताओं से सु-शोभिते, हे ज्योति-स्वरूपे, हे अति-सुन्दरि त्रिपुरे! मेरी सदा रक्षा करो।।१९१।।

हे लक्ष्मी, सरस्वती आदि द्वारा पूजनीये, हे ब्रह्मा, शिव द्वारा वन्दिते! मैं समस्त कामनाओं के फल-दायक तुम्हारे चरण-कमलों को नमन करता हूँ ।।१९२।।

हे सभी वाञ्छित फलों को देनेवाली, हे देवि, त्रिपुर-सुन्दरि! सभी शक्तियों से युक्त तुम्हारे चरण-कमलों को नमन करता हूँ ।।१९३।।

तब तुम्हारी प्रसन्नता के लिए किसी शक्ति की पूजा मैं करता हूँ। हे महेश्वरि! पाँच मकारों से उस शक्ति को तृप्त करता हूँ ।।१९४।।

तुम्हारी प्रसन्नता और अपने अभीष्ट की सिद्धि के लिए हे महा-देवि! उसके सहित मैं चिदात्मक अग्नि में शेष हवि का हवन करता हूँ ।।१९५।।

खेचरी मुद्रा बाँधकर मैं 'क्षमस्व' कहकर विसर्जन करता हूँ। हे परमेश्वरि त्रिपुरे! मेरे हृदय में सदा निवास करो ।।१९६।।

हे जगदम्बे, हे साम्राज्ञि, हे महा-शक्ति, हे शिव प्रिये, हे महा-त्रिपुर-सुन्दरि! निरन्तर हृदय-चक्र में विराजमान रहो ।।१९७।।

हे समस्त आवरण-देवताओं से सु-शोभिते, महा-त्रिपुर-सुन्दरि! मेरे हृदय-चक्र में सदा निवास करो ।।१९८।।

।। फल-श्रुति ।।

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी का उक्त 'हृदय'-सभी कामनाओं को देनेवाला, देवताओं के लिए भी अति दुर्लभ बड़ा रहस्य-मय है ।।१।।

साक्षात् सदा-शिव द्वारा कथित यह गुप्त से भी गुप्त और श्रेष्ठ है ।।२।।

जो इसे नित्य एकाग्र होकर ध्यान से सुनता है, उसे देवी की नित्य-पूजा का फल मिलता है, इसमें सन्देह नहीं ।।३।।

शरीर, वाणी, चित्त से होनेवाले और सभी जन्मों के जानकर भी किए गए पापों से वह छूट जाता है ।।४।।

सभी **यज्ञों** और **तीर्थों** में जो पुण्य मिलता है, वह मनुष्य नित्य प्राप्त करता है, इसमें सन्देह नहीं ।।५।।

तीनों लोकों में दुर्लभ **लक्ष्मी** को भी पाकर मनुष्य शीघ्र ही **विष्णु** के समान हो जाता है ।।६।।

आठों ऐश्वर्यों और **गुटिका, पादुका** आदि **आठों सिद्धियों** को वह श्रेष्ठ मनुष्य शीघ्र प्राप्त करता है ।।७।।

शङ्ख आदि **निधियाँ** भी उसकी नित्य सेवा करती हैं और **वश्य** आदि **अष्ट-कर्म** उसे शीघ्र सिद्ध हो जाते हैं ।।८।।

पृथ्वी-लोक, पाताल और अन्य सभी लोकों में स्थित सभी रूपवती स्त्रियाँ और राजा आदि सभी मनुष्य तथा **शिव, विष्णु** आदि देवता शीघ्र ही उसके वशीभूत होकर उसकी सेवा करते हैं ।।९-१०।।

अनन्त आदि विशाल सर्प, **सिद्ध योगेश्वर** आदि, **ऋषि, मुनि** और **यक्ष** उसकी नित्य सेवा करते हैं ।।११।।

शिव और **विष्णु** के समान **महान् यश** को प्राप्त करता है और **श्रेष्ठ योग** को पाकर सदा आकाश में गमन करता है ।।१२।।

अकाल मृत्यु और **सामयिक मृत्यु** से छूटकर **शिव** और **विष्णु** आदि को दुर्लभ **परम आयु** को प्राप्त करता है ।।१३।।

न सुने गए शास्त्रों को भी विधि-सहित जानकर मूर्ख भी **सभी विद्याओं से युक्त** होकर **दक्षिणामूर्ति शिव** के समान हो जाता है ।।१४।।

इसके स्मरण मात्र से **भूत, पिशाच** आदि **यक्ष, गन्धर्व** और **राक्षस** सदा विनष्ट होते हैं ।।१५।।

उसके शरीर में पहुँचकर भी सारे **विष** तुरन्त नष्ट हो जाते हैं और अपनी कान्ति से वह सदैव **सहस्र-कामदेवों** के समान सुन्दर बना रहता है ।।१६।।

अत: उक्त कल्याणकारी **'त्रिपुर-हृदय-स्तोत्र'** को जो सदा पढ़ता है, वह **साक्षात् देवी** जैसा हो जाता है ।।१७।।

अङ्गों-सहित त्रिपुर-सुन्दरी की नित्य-पूजा का फल उसे मिलता है, सभी रोगों से छूट कर वह **सुन्दर स्वास्थ्य** को प्राप्त करता है ।।१८।।

अत्यन्त **वैभव** को वह पाता है और सभी **विद्याओं** से युक्त होता है। उसके हाथ के छूने भर से मनुष्य में **ब्राह्मणत्व** आ जाता है।।१९।।

सभी **विघ्नों** से छूटकर वह श्रेष्ठ मनुष्य प्रति-दिन समस्त **दुर्लभ भोगों का सुख** भोगता है।।२०।।

महा-लक्ष्मी से युक्त, परम आयुवाले और **साक्षात्-शिव के समान-गुण-वान् पुत्र-पौत्रों** को वह प्राप्त करता है।।२१।।

जो तुम्हारी **कृपा** पाता है, वह **सृष्टि-पालन-संहार-कर्ता त्रि-मूर्ति** के समान होता है, इसमें सन्देह नहीं।।२२।।

उसके पास रहनेवाला सदा **काम-देव** के समान सुन्दर होता है, उसके घर में **कामधेनु** और **कल्पतरु सदा रहते हैं**।।२३।।

चिन्ता-मणि उसके पास रहती है, इसमें सन्देह नहीं और वह मनुष्य सदा सभी स्थानों में **विजयी** होता है।।२४।।

वज्र के समान शक्ति-शाली शरीरवाला होकर इस संसार में वह घूमता-फिरता है, नित्य अत्यन्त **सुखी** रहता है और **परमात्मा-स्वरूप** होता है।।२५।।

वह सभी **बन्धनों से मुक्त** हो जाता है और **विष्णु, शिव** आदि भी उसकी पूजा करते हैं।।२६।।

नित्य उसका **शुभ** होता है, विपत्तियों से वह सदा **मुक्त** रहता है और **देव, गन्धर्व, राक्षस, ब्रह्मा** आदि के लिए भी दुर्लभ **सभी कामनाओं** को वह तुरन्त ही प्राप्त करता है, इसमें सन्देह नहीं। **दिव्य भोगों** और **दिव्य कन्याओं** से युक्त होकर और **विमान** पर बैठकर **दिव्य आभूषणों** से विभूषित एवं **दिव्य चन्दन** से लिप्त शरीर-वाला होकर सदा बीस वर्ष के युवा के समान, वह मनुष्य सभी भोगों का भोग **देव-लोक** में करता है। अतः उक्त शुभ **'त्रिपुरा-हृदय-स्तोत्र'** का पाठ करना चाहिए। जो इसका निरन्तर **जप** करता है, वह **साक्षात् सदा-शिव** होता है।।२७-३०।।

★★★

'कौल-कल्पतरु' चण्डी की विशेष प्रस्तुति

श्री श्रीविद्या-साधना

(श्री श्रीविद्या-स्तव-मञ्जरी) पुष्प-२

श्रीललिता-आराधना

प्रेरणा-स्तम्भ

प्रातः-स्मरणीय 'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक

ऋतशील शर्मा

*

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

प्रकाशक
पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

श्रद्धाञ्जलि!

जिनकी 'दिव्य कृपा' से
प्रस्तुत श्री श्रीललिता-आराधना का प्रकाशन हो रहा है

गुप्तावतार
बाबाश्री

कौल-कल्पतरु
पं० देवीदत्त शुक्ल

राष्ट्र-गुरु
स्वामी जी महाराज

कुल-मार्तण्ड
पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति शास्त्री

कुल-भूषण
पं० रमादत्त शुक्ल

चतुर्थ संस्करण
शरत्-पूर्णिमा, सं० २०६९ वि०-२९ अक्टूबर, २०१२
सर्वाधिकार सुरक्षित
परा-वाणी प्रेस, अलोपी-देवी मार्ग. प्रयाग-राज (उ०प्र०)

प्राक्कथन

श्रीं राजेश्वरि! ह्रीं ललिताम्बिका । 'क ए ई ल ह्रीं' जगदम्बिका ।। श्रीं ०
'ह स क ह ल ह्रीं' कूट 'स क ल' च 'ह्रीं' त्वं । विश्व-जननि! मन-यन्त्रिका ।। श्रीं ०
पाप विकृति कलमष हरि जन निज । पालन पावन मन्त्रिका ।। श्रीं ०
विद्या पार परात्पर सुन्दरि! 'मोती' तारणि तन्त्रिका ।। श्रीं ०

–गुप्तावतार बाबाश्री

भगवती ललिता की आराधना को सम्पूर्ण भारत में एक महत्त्व-पूर्ण स्थान प्राप्त है। **जगद्-गुरु श्री शङ्कराचार्य** के **चारों मठों** में इन्हीं का यजन-पूजन होता है। इसके अतिरिक्त **कश्मीर** से लेकर **कन्या-कुमारी** तक लगभग पूरे **भारत** में इन्हीं या इनके उप-भेदों की आराधना का व्यापक प्रचार है।

भगवती ललिता की आराधना बहुत विस्तार के साथ सम्पन्न होती है। इस सम्बन्ध में विशाल साहित्य भी है, जिसका विद्वान् लोग ही अध्ययन एवं प्रयोग कर पाते हैं। **परशुराम तन्त्र, तत्त्व-चिन्तामणि, तन्त्रराज तन्त्र, श्रीविद्यार्णव तन्त्र, त्रिपुरार्णव तन्त्र, परमानन्द तन्त्र** आदि ग्रन्थ **भगवती ललिता** की आराधना के लिए उपयोगी ग्रन्थ हैं। ये ग्रन्थ आज भी उपलब्ध हैं, किन्तु इनका अध्ययन कर इनके आधार पर **भगवती ललिता** की आराधना करना सबके बस की बात नहीं है। फलतः **भगवती ललिता** की आराधना के लिए प्रसिद्ध स्तोत्र, जैसे– **श्रीललिता त्रि-शती, श्रीललिता-सहस्र-नाम** आदि ही साधकों के काम आते हैं। वे उसके आधार पर उनकी आराधना करते हैं।

गुप्तावतार बाबा श्री, 'राष्ट्र-गुरु' स्वामी जी, 'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल जी, 'कुल-मार्तण्ड' पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति जी शास्त्री आदि जैसी महान् विभूतियों की कृपा से **भगवती ललिता** के अन्य अनेक उपयोगी स्तोत्र, जैसे– **प्रातः-स्तोत्र, कवच, हृदय, अष्टोत्तर-शत-नाम** आदि साधकों के लिए आज सुलभ हैं। **'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल जी** की कृपा से इनमें से कई स्तोत्रों का **हिन्दी रूपान्तर** भी हुआ है।

अतएव प्रस्तुत **श्रीललिता-आराधना (श्री श्रीविद्या-साधना, पुष्प ३)** में उक्त स्तोत्रों को सुलभ **हिन्दी रूपान्तर** के साथ विधि-सहित प्रकाशित करने का प्रयास किया गया है। साथ ही, पहली बार **भगवती ललिता** के तीन प्रकार के अष्टोत्तर-शत-नामों– **(१) सौभाग्य-प्रद-अष्टोत्तर-शत-नाम, (२) दिव्य-अष्टोत्तर-शत-नाम और (३) लकारादि-शत-नाम** के द्वारा **'नाम-जप', 'पूजन-तर्पण'** एवं **'होम'** को भी प्रस्तुत किया जा रहा है। आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि इसके द्वारा सभी लोग **भगवती ललिता** की आराधना विविध प्रकार से कर सकेंगे और अपना तथा **विश्व का कल्याण** करेंगे।

–ऋतशील शर्मा

अनुक्रम

०१. प्राक्कथन ७५
०२. श्री श्रीविद्या-साधना (श्रीललिता-आराधना) ७७
०३. श्रीललिता प्रातः-स्तोत्र-पञ्चकम् ७८
०४. श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-साधना ७९
०५. श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) ८१
०६. श्रीललिता-सौभाग्य-प्रद-अष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्र-साधना ८३
०७. श्रीललिता-सौभाग्य-प्रद-अष्टोत्तर-शत-नाम-पूजन-तर्पण-साधना ८७
०८. श्रीललिताम्बिका दिव्याष्टोत्तर-शत-नाम स्तोत्रम् ९१
०९. श्रीललिताम्बिका दिव्य-अष्टोत्तर-शत-नामावली-होम-साधना ९४
१०. श्रीललिता-लकारादि-शत-नाम-स्तोत्र-साधना ९९
११. श्रीललिता-लकारादि-शत-नाम-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) १०४
१२. श्रीललिता-लकारादि-शत-नाम-जप-साधना १०७
१३. श्रीत्रिपुर-सुन्दरी वेद-सार-स्तवः ११०
१४. श्रीत्रिपुर-सुन्दरी वेद-सार-स्तव (हिन्दी-रूपान्तर) ११२
१५. कल्याण-वृष्टि-स्तवः ११५
१६. कल्याण-वृष्टि-स्तवः (हिन्दी-रूपान्तर) ११६
१७. श्रीललिता-पञ्च-रत्न ११८
१८. श्रीत्रिपुरोपनिषत् ११९
१९. श्रीत्रिपुरोपनिषत् (हिन्दी-रूपान्तर) १२०
२०. श्रीललितोपनिषत् १२३
२१. श्रीललितोपनिषत् (हिन्दी-रूपान्तर) १२४
२२. सिद्धि-यामलोक्त श्रीत्रिपुर-सुन्दरी स्तोत्रम् १२७
२३. श्रीत्रिपुर-सुन्दरी सान्निध्य-स्तवः १२९
२४. श्रीत्रिपुर-सुन्दरी विजय-स्तवः १३१
२५. श्रीत्रिपुर-सुन्दरी चक्र-राज-स्तोत्रम् १३३
२६. श्रीललिता-नीराजन १३५
२७. श्रीललिता-पुष्पाञ्जलि-स्तोत्रम् १३५

श्री श्रीविद्या-साधना

दूसरा सोपान

श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-आराधना

विश्व-शान्ति हेतु
असुरों को मारनेवाली

कलि-काल में
कल्याण-कारिणी कालिका

इच्छा-क्रिया-ज्ञान
शक्ति-स्वरूपिणी

कुबेर द्वारा
वन्दिता

बुद्धिमानों द्वारा
उपास्या

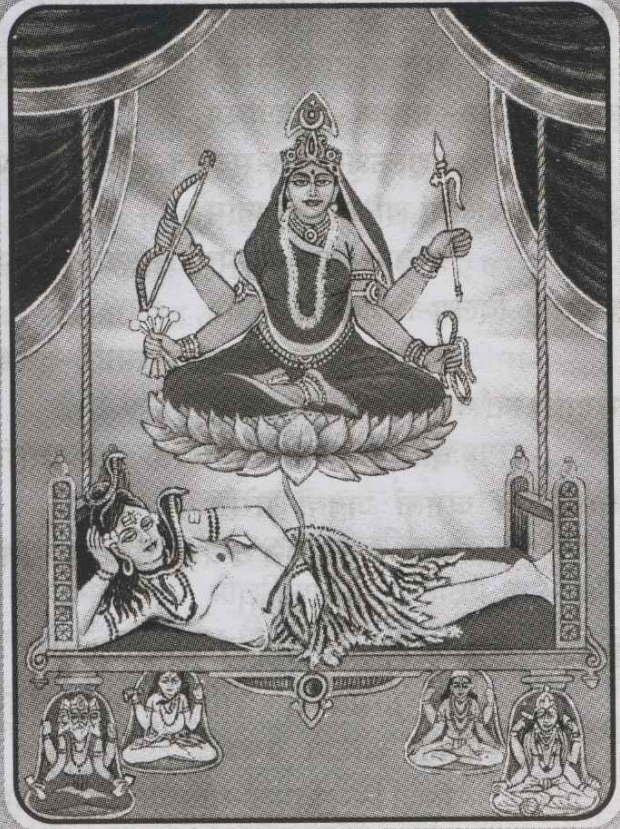

भुक्ति-मुक्ति
फल-प्रदा

सर्व-साक्षिणी

सर्व-जन-प्रिया

कल्याणी

षड्-शास्त्र-निपुणा

अखिल लोकों की
रक्षिता

चतुर्वेद-विशेषज्ञा

।।श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः।।

श्रीललिता प्रातः-स्तोत्र-पञ्चकम्

प्रातः स्मरामि ललिता - वदनारविन्दम्,
बिम्बाधरं पृथुल-मौक्तिक-शोभि-नासाम् ।
आकर्ण-दीर्घ-नयनं मणि-कुण्डलाढ्यम्,
मन्द-स्मितं मृग-मदोज्ज्वल-भाल-देशम् ।।१।।

प्रातर्भजामि ललिता-भुज-कल्प-वल्लीम्,
रक्तांगुलीय-लसदंगुलि-पल्लवाढ्याम् ।
माणिक्य-हेम-वलयाङ्गद-शोभ-मानाम्,
पुण्ड्रेक्षु-चाप-कुसुमेषु सृणीर्दधानाम् ।।२।।

प्रातर्नमामि ललिता - चरणारविन्दम्,
भक्तेष्ट-दान-निरतं भव-सिन्धु-पोतम् ।
पद्मासनादि - सुर - नायक - पूजनीयम्,
पद्मांकुश-ध्वज-सुदर्शन-लाञ्छनाढ्यम् ।।३।।

प्रातः स्तुवै पर-शिवां ललितां भवानीम्,
त्रय्यन्त-वेद्य-विभवां करुणानवद्याम् ।
विश्वस्य सृष्टि-विलय-स्थिति-हेतु-भूताम्,
विश्वेश्वरीं निगम-वाङ्-मनसादि-दूराम् ।।४।।

प्रातर्वदामि ललिते ! तव पुण्य नाम,
कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति ।
श्रीशाम्भवीति जगतां जननी परेति,
वाग् - देवतेति वचसा त्रिपुरेश्वरीति ।।५।।

।।फल-श्रुति।।

यच्छ्लोक-पञ्चकमिदं ललिताम्बिकायाः,
सौभाग्यदं सु - ललितं पठति प्रभाते ।
तस्मै ददाति ललिता झटिति प्रसन्ना,
विद्यां श्रियं विमल-सौख्यमनन्त-कीर्तिम् ।।१।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-साधना

विनियोग—ॐ अस्य श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीआनन्द-भैरव ऋषिः। अनुष्टुपादि छन्दः। श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी देवता। 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' वीजं। 'सौः स-क-ल-ह्रीं' शक्तिः। 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कीलकं। श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-देवता-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—ॐ श्रीआनन्द-भैरव -ऋषये नमः—शिरसि, ॐ अनुष्टुपादि-छन्दसे नमः—मुखे, ॐ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः—हृदि, ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं'-बीजाय नमः—गुह्ये, ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं'-शक्तये नमः—पादयोः, ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं'-बीजाय नमः—नाभौ, ॐ श्रीललिता - त्रिपुर - सुन्दरी-देवता-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः—सर्वाङ्गेषु।

कर-न्यास—ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' तर्जनीभ्यां नमः। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' मध्यमाभ्यां नमः। ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' अनामिकाभ्यां नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

अङ्ग-न्यास—ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' हृदयाय नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' शिरसे स्वाहा। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' शिखायै वषट्। ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' कवचाय हुम्। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' अस्त्राय फट्।

ध्यान—बाल-व्यक्त-दिवाकराऽमित-निभां भद्र-प्रदां भारतीम्।
ईषत्-फुल्ल-मुखाम्बुज-स्मित-करैराशान्धकारापहाम्।।
पाशं चाभयमंकुशं च वरदं संविभ्रतीं भूतिदाम्।
भ्राजन्तीं चतुरम्बुजाकृति-करैर्भक्त्या भजे सुन्दरीम्।।

मानस-पूजन—ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिता- त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। मूल हृदय-स्तोत्र-पाठ ।।

सुन्दरी सकल-कल्मषापहा, कोटि-कञ्ज - प्रिय - काम्य - कान्तिका।
कोटि-कल्प-कृत-पुण्य-कर्मणा, पूजनीय-पद-मदाच्च भक्तितः ।।१।।

शर्वरीश - सम - सुन्दरानना, श्रीश - शक्ति-सुकृताश्रयाश्रिता ।
सज्जनानुसरणीय - सत् -पदा, सङ्कटे सुर-गणैः सु-वन्दिता ।।२।।
याऽसुरोग्र-सङ्गरे जवान्विता, सा जघान जगदम्बिका स्वयम् ।
तां भजामि भव-शान्ति-कृज्जयां, युद्ध-लग्न-दितिजान् सु-दुर्जयान् ।।३।।
योगिनां हृदय-सङ्गतां शिवां, योग-युक्त-मनसां यतात्मनाम् ।
जाग्रतीं जगति यत्नतो द्विजा, यां जपन्ति हृदि तां स्मराम्यहम् ।।४।।
कौलिकास्तु कलयन्ति कालिकां, यत्-कला कलि-जनोप-कारिणीम्।
कौल-वृन्द-कलितांघ्रि-पङ्कजां, तां भजामि कलि-कल्मषापहाम्।।५।।
बालार्कानन्तशोऽर्चिर्निज-तनु-किरणैर्दीपयन्तीं दिगन्तान्,
दीप्तैर्देदीप्य - मानां दनुज-दल-वनानल्प-दावानलाभाम् ।
देवीं दर्पाभि-तप्तां दलित-दिति-सुतां दर्शनीयां दुरन्ताम्,
दीप्तां भक्तार्द्र-चित्तां हृदि मुदित-मनाः भारतीं भावयामि ।।६।।
ध्वस्त-ध्वान्तां धरित्री-धर-विधृत-शिरो-न्यस्त-पादाब्ज-पासूम्,
धूम्रां धीराधरामां तडिदिव चपलां चारु-चन्द्र-प्रभाभाम् ।
धृत्वा पूजोपहारान् धरणि-सुर-कुलोद्धारिणीं ध्यान-गम्याम्,
धी-मद्-ध्येयाऽद्वितीयां धनद-नमितां सुन्दरीं चिन्तयामि ।।७।।
जयतु जयतु खर्वा भारती वेद-हस्ता, जयतु जयतु धात्री धर्मिणी धातृ-शक्तिः ।
जयतु जयतु वाणी ब्राह्मणैर्ब्रह्म-वन्द्या, जयतु जयतु दुर्गा दारिणी देव-शत्रून् ।।८।।
जयतु जयतु माता योगिनी योग-युक्ता, जयतु जयतु पद्मा पद्मिनी केशवस्य ।
जयतु जयतु सौम्या सुन्दरी सुन्दरास्या, जयतु जयतु काली कालिनी काल-कान्ता ।।९।।
देवि! त्वं सृष्टि-काले सकल-भव-भृता राजसी रक्त-वर्णा,
रक्षा-काले त्वमम्बा हरि-हृदय-धृता सात्त्विकी श्वेत-रूपा।
भूरि-क्रोधा भवान्ते भव-भवन-गता तामसी नील-वर्णा,
ह्येताश्चान्यास्त्वमेव क्षिति-मनुज-मता सुन्दरी केवलाद्या ।।१०।।

।। फल-श्रुति ।।

स्तवनमिदममोघं देशिकैर्नित्य-जाप्यम्, श्रवण-मनन-वेद्यं स्तोत्रमेतदघघ्नम्।
सुर-तरु-वर-तुल्यं मोदकं पाठकानां, प्रभवति हृदयाख्यं स्तोत्रमत्यन्त-गुह्यम् ।।१।।
इदं त्रिपुर-सुन्दर्या हृदयं परमाद्भुतम्, यः पठेत्तु नरो भक्त्या स सदा सुखमेधते ।।२।।

।। श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्रम् ।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

विनियोग और **ऋष्यादि-न्यास** मूल-पाठ के अनुसार कर **ध्यान** करें। यथा–

बाल सूर्य के समान आभावाली, **कल्याण-दायिनी**, **ज्ञान-दात्री**, हल्की मुस्कान से खिले हुए मुख-कमल के प्रकाश से दिशाओं के **अँधेरे को दूर करनेवाली**, चार कमलों के समान हाथों में **पाश, अंकुश, अभय** और **वर-मुद्रा** धारण करनेवाली, **ऐश्वर्य-दायिनी भगवती सुन्दरी** का मैं भजन करता हूँ।

मानसोपचारों से पूजा कर प्रणाम करें। तब **'हृदय-स्तोत्र'** का पाठ करें। यथा–

भगवती सुन्दरी सभी पापों को नष्ट करनेवाली हैं। **करोड़ों कमलों** के समान सुन्दर कान्ति-वाली हैं। करोड़ों युगों के पुण्य कर्मों से उनके चरणों की **भक्ति-पूर्वक पूजा** करने का अवसर मिलता है ।।१।।

चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख है, **लक्ष्मी-पति विष्णु** की शक्ति से सम्पन्न हैं, **सज्जन लोग** उनकी शरण लेते हैं और सङ्कट में **देवता** उनकी ही वन्दना करते हैं ।।२।।

उग्र राक्षसों के युद्ध में लड़ते हुए असुरों को **विश्व-शान्ति** के लिए जो **जगदम्बा** स्वयं मारती हैं, उनको मैं भजता हूँ ।।३।।

योग में निमग्न मनवाले **योगियों** के हृदय में जो रहती हैं और संसार में **द्विज-गण** जिन **जाग्रत शिवा** का हृदय में जप करते हैं, उन्हीं को मैं स्मरण करता हूँ ।।४।।

कलि-काल के लोगों की **कल्याण-कारिणी कालिका** की जिस कला का ध्यान **कौल साधक** किया करते हैं और **कलि के पापों को नष्ट करनेवाले** उनके **चरण-कमलों** की सेवा करते रहते हैं, उन्हीं को मैं भजता हूँ ।।५।।

बाल-सूर्य की असंख्य किरणों जैसी अपनी शरीर की आभा से दिशाओं को प्रकाशित करनेवाली, **असुरों के समूह-रूप वन के लिए दावानल जैसी उग्र दीप्ति** रखनेवाली, **राक्षसों के गर्व को अपनी तेजस्विता से दग्ध** करनेवाली और **भक्तों के लिए दया-पूर्ण चित्त** रखनेवाली **ज्ञान-दायिनी** का मैं सानन्द ध्यान करता हूँ ।।६।।

अज्ञान-नाशिनी, **शेष-नाग के शिर पर चरण-कमल** रखनेवाली, **विद्युत्** और **सुन्दर चन्द्रमा** जैसी आभावाली, पूजोपचारों को स्वीकार कर **पृथ्वी के देव-कुलों का उद्धार** करनेवाली, **ध्यान-गम्या**, **बुद्धिमानों द्वारा उपास्या**, **कुबेर द्वारा वन्दिता**, **त्रिपुर-सुन्दरी** की मैं भावना करता हूँ ।।७।।

वेद-हस्ता सरस्वती की जय हो, जो **विधाता की शक्ति** और **ब्राह्मणों की वन्दनीया** हैं । **देव-शत्रुओं का संहार करनेवाली दुर्गा** की जय हो ।।८।।

योगिनी माता की जय हो । **विष्णु की लक्ष्मी** की जय हो । **सुन्दर मुखवाली त्रिपुर-सुन्दरी** की जय हो । **महा-काल की सुन्दर शक्ति काली** की जय हो, जो काल का भी लय करती हैं ।।९।।

हे देवि! सृष्टि के समय तुम **रक्त-वर्णा राजसी** हो, रक्षा करते समय तुम **श्वेत-वर्णा सात्त्विकी माता** हो, संहार के समय तुम **नील-वर्णा तामसी** हो। ये सब तथा अन्य रूप जो पृथ्वी-लोक में पूजनीय हैं, तुम्हारे ही हैं। तुम्हीं एक-मात्र **आद्या त्रिपुर-सुन्दरी** हो ।।१०।।

।। फल-श्रुति ।।

यह **अमोघ स्तवन** साधकों द्वारा प्रति-दिन जपनीय है । **श्रवण** और **मनन** द्वारा ही यह समझ में आता है । यह स्तोत्र **पाप-नाशक** है । **कल्प-वृक्ष** के समान यह फल-दायक है और पाठ-कर्त्ता को आनन्दित कर देता है । **'हृदय'** नामक यह स्तोत्र बड़ा गुप्त है ।।१।। **त्रिपुर-सुन्दरी** का यह **हृदय-स्तोत्र** अति विलक्षण है । जो मनुष्य भक्ति-पूर्वक इसे पढ़ता है, वह सदा सुख पाता है ।।२।।

भगवती श्री ललिता

बाल-रवि-सम सुठि वदन है कमनीय,
कुच-भार नम्रा देह छविहि लजावै है।
कुंमकुम-समान रक्त-अम्बर शरीर सोहै,
अङ्ग-अङ्ग भूषण अनूप छटा छावै है।
चाप-वाण-अंकुश औ पाश धारे करन में,
चकित मृगी से नैन काको नाहिं भावै है।
अर्ध-चन्द्र भाल-मध्य-शशि के समान मुख,
ऐसी मातु 'सुन्दरी' को, को न शीश नावै है।।

—'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिता-सौभाग्य-प्रद-अष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्र-साधना

॥ विनियोग ॥

ॐ अस्य श्रीसौभाग्याष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रस्य श्रीभार्गव ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः। श्रीललिताम्बा देवता। 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' बीजं। 'स-क-ल-ह्रीं' शक्तिः। 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' उत्कीलनं। श्रीललिताम्बा-देवता-प्रसाद-सिद्धये पाठे विनियोगः।

॥ ऋष्यादि-न्यास ॥

ॐ श्रीभार्गव - ऋषये नमः — शिरसि। ॐ अनुष्टुप् - छन्दसे नमः — मुखे । ॐ श्रीललिताम्बा - देवतायै नमः—हृदि। ॐ 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' बीजाय नमः — लिङ्गे । ॐ 'स-क-ल-ह्रीं' शक्तये नमः — नाभौ । ॐ 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' उत्कीलनाय नमः — सर्वाङ्गे । ॐ श्रीललिताम्बा-देवता-प्रसाद-सिद्धये पाठे विनियोगाय नमः — अञ्जलौ ।

॥ कर-न्यास ॥

ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' तर्जनीभ्यां नमः। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' मध्यमाभ्यां नमः। ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' अनामिकाभ्यां नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

॥ अङ्ग-न्यास ॥

ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' हृदयाय नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' शिरसे स्वाहा। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' शिखायै वषट्। ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' कवचाय हुम्। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' अस्त्राय फट्।

॥ ध्यान ॥

बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्बाहुं त्रि-लोचनाम् ।
पाशांकुश-धनुर्वाणान्, धारयन्तीं शिवां भजे ॥

॥ मानस-पूजन ॥

ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिता-

त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। मूल श्रीललिता-सौभाग्य-प्रदाष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रम् ।।

ॐ कामेश्वरी[१] काम-शक्तिः[२], काम-सौभाग्य-दायिनी[३-४]।
काम-रूपा[५] काम-कला[६], कामिनी[७] कमलासना[८] ।। १।।
कमला[९] कलना-हीना[१०], कमनीया[११] कला-वती[१२] ।
पद्मपा[१३] भारती[१४] सेव्या[१५], कल्पिताऽशेष-संस्थितिः[१६] ।। २।।
अनुत्तराऽनघाऽनन्ताऽद्भुत - रूपाऽनलोद्भवा[१७-२१] ।
अति-लोक-चरित्राऽति-सुन्दर्यति-शुभ-प्रदा[२२-२४] ।। ३।।
विश्वाद्या[२५-२६] चाति-विस्ताराऽर्चन-तुष्टाऽमित-प्रभा[२७-२९] ।
एक - रूपैक - वीरैक -नाथैकान्तार्चन-प्रिया[३०-३४] ।। ४।।
एकैक-भाव - तुष्टैक - रसैकान्त -जन -प्रिया[३५-३८] ।
एध-मान - प्रभा[३९] वैध -भक्त -पातक -नाशिनी[४०-४१] ।। ५।।
एलामोद-मुखैर्नोऽद्रि - शक्तायुध - सम - स्थितिः[४२-४४] ।
ईहा - शून्येप्सितेशादि - सेव्येशान - वराङ्गना[४५-४६] ।। ६।।
ईश्वराज्ञापिकेकार - भाव्येप्सित - फल - प्रदा[४७] ।
ईशानेति[४८] हरेशैषा[४९], चारुणाक्षीश्वरेश्वरी[५०] ।। ७।।
ललिता[५१] ललना-रूपा[५२], लय- हीना[५३] लसत् -तनुः[५४] ।
लय-सर्वा[५५] लय -क्षोणिर्लय-कर्त्री[५६-५७] लयात्मिका[५८] ।। ८।।
लघिमा[५९] लघु - मध्याढ्या[६०], लल-माना[६१] लघु-द्रुता[६२] ।
हयारूढा[६३] हताऽमित्रा[६४-६५], हर-कान्ता[६६] हरि-स्तुता[६७] ।। ९।।
हय-ग्रीवेष्टदा[६८] हाला - प्रिया हर्ष[६९] - समुद्भवा[७०]।
हर्षणा[७१] हल्लकाभाङ्गी[७२], हस्त्यन्तैश्वर्य-दायिनी[७३] ।। १०।।
हल - हस्तार्चित - पदा[७४], हविर्दान - प्रसादिनी[७५-७६] ।
रामा[७७] रामार्चिता[७८] राज्ञी[७९], रम्या[८०] रव-मयी[८१] रतिः[८२] ।। ११।।
रक्षिणी[८३] रमणी[८४] राकाऽऽदित्यादि-मण्डल-प्रिया[८५] ।
रक्षिताऽखिल - लोकेशी[८६], रक्षो-गण - निषूदिनी[८७] ।।१२।।
अन्तान्त - कारिण्यम्भोज - क्रियान्तक - भयङ्करी[८८] ।
अम्बु-रूपाम्बुज-कराऽम्बुज-जात-वर-प्रदा[८९-९२] ।।१३।।

अन्तः-पूजा-क्रियान्तःस्था[९३], अन्तर्ध्यान- वचो-मयी[९४] ।
अन्तकाऽराति-वामाङ्क-स्थिताऽन्तः-सुख-रूपिणी[९५-९६] ।। १४।।
सर्वज्ञा[९७] सर्वगा[९८] सारा[९९], समा[१००] सम-सुखा[१०१] सती[१०२]।
सन्ततिः[१०३] सन्तता[१०४] सोमा[१०५], सर्वा[१०६] सांख्या[१०७] सनातनी[१०८] ।। १५।।

।। फल-श्रुति ।।

एतत् ते कथितं देवि!, नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।
अति-गोप्यमिदं स्तोत्रं, सर्वतो सारमुद्धृतम् ।।१।।

हे देवि! यह **एक सौ आठ नाम** तुम्हारे सामने कहे गए। यह स्तोत्र बड़ा **गोपनीय** और सबका सार-भूत है ।।१।।

एतच्छदृशं स्तोत्रं, त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ।
अप्रकाश्यमभक्तानां, पुरतो देवता - द्विषम् ।।२।।

इसके समान स्तोत्र तीनों लोकों में दुर्लभ है। **अभक्तों** और **देव-द्वेषी** लोगों के सामने इसे प्रकट न करे ।।२।।

एतत् सदा - शिवो नित्यं, पठन्त्यन्ये हरादयः ।
एतत्-प्रभावात् कन्दर्पः, त्रैलोक्यं जयति क्षणात् ।।३।।

इसे **सदा-शिव** और **शङ्कर** आदि अन्य देवता नित्य पढ़ते हैं । इसके प्रभाव से **काम-देव** क्षण भर में तीनों लोकों को जीत लेते हैं ।।३।।

सौभाग्याष्टोत्तर-शत - नाम-स्तोत्र - मनोहरम् ।
यस्त्रि-सन्ध्यं पठेन्नित्यं, न तस्य भुवि दुर्लभम् ।।४।।

इस मनोहर **'सौभाग्याष्टोत्तर-शत-नाम स्तोत्र'** को जो **तीनों सन्ध्याओं** में नित्य पढ़ता है, उसके लिए पृथ्वी पर कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता ।।४।।

श्रीविद्योपासन - वतौ, एतदावश्यकं मतम् ।
सकृदेतत् प्रपठतां, नान्य - कर्म विलुप्यते ।। ५।।

श्रीविद्या के उपासकों के लिए यह स्तोत्र आवश्यक है। इसका एक बार पाठ करनेवाले के अन्य कर्म भी सार्थक हो जाते हैं ।।५।।

अपठित्वा स्तोत्रमिदं, नित्यं नैमित्तिकं कृतम् ।
व्यर्थी भवति तन्नर - कृतं कर्म यथा - तथा ।। ६।।

इस स्तोत्र का पाठ न कर जो भी **'नित्य'** या **'नैमित्तिक'**-कर्म किया जाता है, वह व्यर्थ हो जाता है-उसका फल नहीं मिलता ।। ६।।

सहस्र-नाम - पाठादौ, पठेत् स्तोत्रं शुभ-प्रदम् ।
सहस्र-नाम-पाठस्य, फलं शत - गुणं भवेत् ।। ७।।

सहस्र-नाम स्तोत्र का पाठ करने के पूर्व इस **शुभ-दायक स्तोत्र** का पाठ करे, तो **सहस्र-नाम** के पाठ का सौ गुना अधिक फल मिलता है ।।७।।

सहस्र पठनाद् ध्याता, वीक्षणान्नाशयेद् रिपून् ।

करवीरैः रक्त - पुष्पैर्हुत्वा लोकान् वशं नयेत् ।। ८।।

इस स्तोत्र का **एक सहस्र पाठ** करनेवाला केवल दृष्टि-पात द्वारा **शत्रुओं का नाश** करता है। **करवीर** के **रक्त-पुष्पों** द्वारा **हवन** करने से **वशीकरण** होता है ।।८।।

स्तम्भयेत् पीत- कुसुमैर्नीलैरुच्चाटयेद् रिपून ।

मरीचिर्विद्वेषणाय, लवङ्गैर्व्याधिं नश्यते ।। ९।।

पीले पुष्पों के हवन से स्तम्भन, नीले पुष्पों से उच्चाटन, काली मिर्च से विद्वेषण और **लौंग** के **हवन** से **रोग-नाश** होता है ।।९।।

पत्र-पुष्पैः फलैर्वापि, पूजयेत् प्रति-नामभिः ।

चक्र-राजेऽथवाऽन्यत्र, स वसेच्छ्री-पुरं चिरम्।। १०।।

पत्तों, पुष्पों या **फलों** द्वारा भी प्रत्येक नाम से **यन्त्र-राज** में अथवा अन्यत्र पूजन करने से साधक चिर काल तक **मणिपुर** में निवास करता है ।।१०।।

यः सदाऽऽवर्तयन् आस्ते, नामाष्ट-शतमुत्तमम् ।

तस्य श्रीललिता माता, प्रसन्ना वाञ्छित-प्रदा ।।११।।

जो **१०८ नामों** का सदा **जप** करता है, उससे **माता श्री ललिता** प्रसन्न होकर उसके अभीष्ट को प्रदान करती हैं ।। ११।।

।। श्रीललिता सौभाग्य-प्रदाष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रम् ।।

भगवती ललिता की स्तुति

महा-माये! तेरा परम-शिव है मञ्चक बना,
बड़े चारों देव द्रुहिण हरि रुद्रेश्वर मुदा।
बने प्यारे चारों चरण जिसके चारु-चरिते!
विराजै तू माता उस पर पराऽऽनन्द-लहरी।।
महा-शक्ते! तू है सकल जग की प्रेरण-करी,
तवाऽऽज्ञा पाके ही यह चल रही नित्य ललिते!
बिना तेरे माता! नर-असुर औ सर्व सुर भी,
हिले-डोले नाहीं बनकर महाऽशक्त मृत से।।

-'कुल-मार्तण्ड' पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति शास्त्री

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिता-सौभाग्य-प्रद-अष्टोत्तर-शतनाम-पूजन-तर्पण-साधना

॥ विनियोग ॥

ॐ अस्य श्रीसौभाग्याष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्रस्य श्रीभार्गव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीललिताम्बा देवता। 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' बीजं। 'स-क-ल-ह्रीं' शक्तिः। 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' उत्कीलनं। श्रीललिताम्बा-देवता-प्रसाद-सिद्धये पूजने तर्पणे च विनियोगः।

॥ ऋष्यादि-न्यास ॥

ॐ श्रीभार्गव-ऋषये नमः — शिरसि। ॐ अनुष्टुप् - छन्दसे नमः — मुखे। ॐ श्रीललिताम्बा - देवतायै नमः— हृदि। ॐ 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' बीजाय नमः— लिङ्गे। ॐ 'स-क-ल-ह्रीं' शक्तये नमः—नाभौ। ॐ 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' उत्कीलनाय नमः— सर्वाङ्गे। ॐ श्रीललिताम्बा-देवता-प्रसाद-सिद्धये पूजने तर्पणे च विनियोगाय नमः— अञ्जलौः।

॥ कर-न्यास ॥

ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' तर्जनीभ्यां नमः। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' मध्यमाभ्यां नमः। ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' अनामिकाभ्यां नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

॥ अङ्ग-न्यास ॥

ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' हृदयाय नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' शिरसे स्वाहा। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' शिखायै वषट्। ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' कवचाय हुम्। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' अस्त्राय फट्।

॥ ध्यान ॥

बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्बाहुं त्रि-लोचनाम्।
पाशांकुश-धनुर्वाणान्, धारयन्तीं शिवां भजे ॥

॥ मानस-पूजन ॥

ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं

धूपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। सौभाग्य-प्रद-अष्टोत्तर-शत-नामावली द्वारा पूजन एवं तर्पण ।।

१- श्रीकामेश्वर्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २- श्रीकाम-शक्त्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३- श्रीकाम-दायिन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४- श्रीसौभाग्य - दायिन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५- श्रीकाम - रूपायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६- श्रीकाम-कलायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७- श्रीकामिन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८- श्रीकमलासनायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९- श्रीकमलायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १०- श्रीकलना - हीनायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ११- श्रीकमनीयायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः । १२- श्रीकला - वत्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः । १३- श्रीपद्मपायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः । १४- श्रीभारत्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १५- श्रीसेव्यायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १६- श्रीकल्पिताऽशेष - संस्थित्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १७- श्रीअनुत्तरायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १८- श्रीअनघायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १९- श्रीअनन्तायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २०- श्रीअद्भुत-रूपायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २१- श्रीअनलोद्भवायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २२- श्रीअति - लोक - चरित्रायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २३- श्रीअति-सुन्दर्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २४- श्रीशुभ-प्रदायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २५- श्रीविश्वायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः।

२६- श्रीआद्यायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २७- श्रीअति-विस्तारायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २८- श्रीअर्चन-तुष्टायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। २९- श्रीअमित - प्रभायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३०- श्रीएक - रूपायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३१- श्रीएक - वीर - प्रियायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३२- श्रीएक - नाथ - प्रियायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३३- श्रीएकान्त - प्रियायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३४- श्रीअर्चन-प्रियायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३५- श्रीएकायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३६- श्रीएक-भाव-तुष्टायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३७- श्रीएक-रस-प्रियायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३८- श्रीएकान्त-जन-प्रियायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ३९- श्रीएध-मान-प्रभायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४०- श्रीवैध-भक्तायै पूजयामि नमः

तर्पयामि नमः। ४१- श्रीपातक-नाशिन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४२- श्रीएलामोद-मुखाये पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४३- श्रीनोंऽदि-शक्तायुधायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४४- श्रीसम-स्थित्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४५- श्रीईहा - शून्येप्सितेशादि - सेव्येशानायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४६- श्रीवराङ्गनायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४७- श्रीईश्वराज्ञापिकेकार - भाव्येप्सित - फल - प्रदायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४८- श्रीईशानेत्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ४९- श्रीहरेशैषायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५०- श्रीअरुणाक्षीश्वरेश्वर्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः।

५१- श्रीललितायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५२- श्रीललना-रूपायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५३- श्रीलय- हीनायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५४- श्रीलसत् - तनवे पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५५- श्रीलय - सर्वायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५६- श्रीलय-क्षोण्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५७- श्रीलय-कर्त्रे पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५८- श्रीलयात्मिकायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ५९- श्रीलघिमायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६०- श्रीलघु - मध्याढ्यायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६१- श्रीलल-मानायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६२- श्रीलघु-द्रुतायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६३- श्रीहयारूढायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६४- श्रीहतायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६५- श्रीअमित्रायै पूजयामि नमः तंर्पयामि नमः। ६६- श्रीहर - कान्तायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६७- श्रीहरि - स्तुतायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६८- श्रीहय-ग्रीवेष्टदायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ६९- श्रीहाला-प्रियायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७०- श्रीहर्ष-समुद्भवायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७१- श्रीहर्षणायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७२- श्रीहल्लकाभाङ्गचै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७३- श्रीहस्त्यन्तैश्वर्य-दायिन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७४- श्रीहल-हस्तार्चित-पदायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७५- श्रीहवि-प्रसादिन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः।

७६- श्रीदान-प्रसादिन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७७- श्रीरामायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७८- श्रीरामार्चितायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ७९- श्रीराज्ञ्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८०- श्रीरम्यायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८१- श्रीरव-मय्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८२- श्रीरत्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८३- श्रीरक्षिण्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८४- श्रीरमण्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८५- श्रीराकाऽऽदित्यादि-मण्डल-प्रियायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८६- श्रीरक्षिताऽखिल-लोकेश्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८७- श्रीरक्षो-गण-निषूदिन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि

नमः। ८८- श्रीअन्तान्त-कारिण्यम्भोज-क्रियान्तक-भयङ्कर्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ८९- श्रीअम्बु-रूपायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९०- श्रीअम्बुजायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९१- श्रीकराम्बुजायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९२- श्रीजात-वर-प्रदायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९३- श्रीअन्तः-पूजा-क्रियान्तः स्थायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९४- श्रीअन्तर्ध्यान - वचो - मय्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः । ९५- श्रीअन्तकाऽराति-वामाङ्क-स्थितायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९६- श्रीअन्तः-सुख-रूपिण्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९७- श्रीसर्वज्ञायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९८- श्रीसर्वगायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। ९९- श्रीसारायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १००- श्रीसमायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः।

१०१- श्रीसम - सुखायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः । १०२- श्रीसत्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १०३- श्रीसन्तत्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १०४- श्री सन्ततायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः । १०५- सोमायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः । १०६- श्रीसर्वायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १०७- श्रीसांख्यायै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। १०८- श्रीसनातन्यै पूजयामि नमः तर्पयामि नमः।

भगवती के नामों के द्वारा पूजन-तर्पण

भगवती ललिता के *'नामों'* को *'चतुर्थ्यन्त'* बनाकर उनके अन्त में *'पूजयामि नमः तर्पयामि नमः'* जोड़कर *'श्रीयन्त्र'* में अथवा अन्यत्र *'पूजन'* तथा अपने सिर पर *'तर्पण'* किया जा सकता है। इसके द्वारा *पर-ब्रह्म-स्वरूपा भगवती ललिता* और *आत्मा* की एकता का प्रत्यक्षीकरण होता है।

श्री ललिता-सौभाग्य-प्रद-अष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्र की १०वीं *'फल-श्रुति'* में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जो इस प्रकार *'पूजन'* करता है, वह चिर-काल तक भगवती के समीप *'मणिपुर'* में निवास करता है।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिताम्बिका दिव्याष्टोत्तर-शत-नाम स्तोत्रम्

।। पूर्व-पीठिका—श्रीषण्मुख उवाच ।।

वन्दे विघ्नेश्वरं शक्तिं, वन्दे वाणीं विधिं हरिम्।
वन्दे लक्ष्मीं हरं गौरीं, वन्दे माया महेश्वरम् ।।१।।

वन्दे मनोन्मयीं देवीं, वन्दे देवं सदा-शिवम्।
वन्दे पर-शिवं वन्दे, श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम् ।।२।।

पञ्च-ब्रह्मासनासीनां, सर्वाभीष्टार्थ-सिद्धये।
सर्वज्ञ! सर्व-जनक!, सर्वेश्वर! शिव! प्रभो! ।।३।।

नाम्नामष्टोत्तर-शतं, श्रीदेव्याः सत्यमुत्तमम्।
श्रोतुमिच्छाम्यऽहं तात!, नाम-सारात्मकं स्तवम् ।।४।।

।। श्रीशिव उवाच ।।

तद् वदामि तव स्नेहाच्छृणु षण्मुख! तत्त्वतः।
महा-मनोन्मनी[१] शक्तिः[२], शिव-शक्तिः[३] शिव-शङ्करी[४]।
इच्छा-शक्तिः[५] क्रिया-शक्तिः[६], ज्ञान-शक्ति-स्वरूपिणी[७] ।। १।।

शान्त्यातीता कला[८] नन्दा[९], शिव-माया[१०] शिव-प्रिया[११] ।
सर्वज्ञा[१२] सुन्दरी[१३] सौम्या[१४], सच्चिदानन्द - विग्रहा[१५] ।।२।।

परात्परा-मयी[१६] बाला[१७], त्रिपुरा[१८] कुण्डली[१९] शिवा[२०]।
रुद्राणी[२१] विजया[२२] सर्वा[२३], सर्वाणी[२४] भुवनेश्वरी[२५] ।। ३।।

कल्याणी[२६] शूलिनी[२७] कान्ता[२८], महा - त्रिपुर - सुन्दरी[२९]।
मालिनी[३०] मानिनी[३१] शर्वा[३२], मग्नोल्लासा[३३] च मोहिनी[३४] ।।४।।

माहेश्वरी[३५] च मातङ्गी[३६], शिव-कामा[३७] शिवात्मिका[३८] ।
कामाक्षी[३९] कमलाक्षी[४०] च, मीनाक्षी[४१] सर्व-साक्षिणी[४२] ।।५।।

उमा-देवी[४३] महा-काली[४४], श्यामा[४५] सर्व-जन-प्रिया[४६] ।
चित्-परा[४७] चिद्-घनानन्दा[४८], चिन्मया[४९] चित्-स्वरूपिणी[५०]।।६।।

महा-सरस्वती[५१] दुर्गा[५२], ज्वाला दुर्गाऽति - मोहिनी[५३-५४]।
नकुली[५५] शुद्ध-विद्या[५६] च, सच्चिदानन्द - विग्रहा[५७] ।। ७।।

सु-प्रभा[५८] स्व-प्रभा[५९] ज्वाला[६०], इन्द्राक्षी[६१] विश्व-मोहिनी[६२]।
महेन्द्र-जाल-मध्यस्था[६३], माया-मय-विनोदिनी[६४] ।। ८।।

शिवेश्वरी[६५] वृषारूढा[६६], विद्या - जाल - विनोदिनी[६७] ।
मन्त्रेश्वरी[६८] महा-लक्ष्मीर्महा-काली[६९-७०] फल-प्रदा[७१] ।।९।।
चतुर्वेद - विशेषज्ञा[७२], सावित्री[७३] सर्व - देवता[७४] ।
महेन्द्राणी[७५] गणाध्यक्षा[७६], महा-भैरव-मोहिनी[७७] ।।१०।।
महा-मयी[७८] महा - घोरा[७९], महा - देवी[८०] मदापहा[८१] ।
महिषासुर-संहन्त्री[८२], चण्ड - मुण्ड - कुलान्तका[८३] ।।११।।
चक्रेश्वरी चतुर्वेदा[८४], सर्वादिः[८५] सुर - नायिका[८६] ।
षड्-शास्त्र-निपुणा[८७] नित्या[८८], षड्-दर्शन-विचक्षणा[८९] ।।१२।।
काल - रात्रिः[९०] कलातीता[९१], कवि-राज - मनोहरा[९२] ।
शारदा तिलका[९३] तारा[९४], धीरा[९५] शूर-जन-प्रिया[९६] ।।१३।।
उग्र-तारा[९७] महा -मारी[९८], क्षिप्र-मारी[९९] रण-प्रिया[१००] ।
अन्न-पूर्णेश्वरी माता[१०१], स्वर्ण-कान्ति-तटि-प्रभा[१०२] ।। १४।।
स्वर-व्यञ्जन-वर्णाढ्या[१०३], गद्य-पद्यादि -कारणा[१०४] ।
पद-वाक्यार्थ-निलया[१०५], विन्दु-नादादि-कारणा[१०६] ।। १५।।
मोक्षेशी महिषी नित्या[१०७], भुक्ति-मुक्ति - फल - प्रदा[१०८] ।
विज्ञान-दायिनी प्राज्ञा[१०९], प्रज्ञान-फल-दायिनी[११०] ।। १६।।
अहङ्कारा कलातीता[१११], परा - शक्तिः परात्परा[११२] ।
नाम्नामष्टोत्तर-शतं, श्रीदेव्याः परमाद्भुतम् ।। १७।।

।। फल-श्रुति ।।

सर्व - पाप - क्षय करं, महा-पातक - नाशनम् ।
सर्व-व्याधि-हरं सौख्यं, सर्व - ज्वर - विनाशनम् ।। १।।
ग्रह - पीडा - प्रशमनं, सर्व - शत्रु - विनाशनम् ।
आयुरारोग्य - धनदं, सर्व - मोक्ष - शुभ - प्रदम् ।। २।।
देवत्वममरेशत्वं, ब्रह्मत्वं सकल - प्रदम् ।
अग्नि-स्तम्भं जल-स्तम्भं, सेना-स्तम्भादि-दायकम् ।। ३।।
शाकिनी - डाकिनी-पीडा, हाकिन्यादि-निवारणम् ।
देह - रक्षा - करं नित्यं, पर - तन्त्र - निवारणम् ।। ४।।
मन्त्रं यन्त्रं महा-तन्त्रं, सर्व - सिद्धि - प्रदं नृणाम् ।
सर्व - सिद्धि - करं पुंसां, अदृश्यत्वाकरं वरम् ।। ५।।

सर्वाकर्ष-करं नित्यं, सर्व -स्त्री - वश्य-मोहनम् ।
मणि - मन्त्रौषधीनां च, सिद्धिदं शीघ्रमेव च ।। ६।।
भयश्चौरादि - शमनं, दुष्ट - जन्तु - निवारणम् ।
पृथिव्यादि-जनानां च, वाक्-स्थानादि-परो वशम् ।। ७।।
नष्ट - द्रव्यागमं सत्यं, निधि - दर्शन - कारणम् ।
सर्वथा ब्रह्मचारीणां, शीघ्र - कन्या - प्रदायकम् ।। ८।।
सुपुत्र - फलदं शीघ्रं, अश्व - मेध - फल-प्रदम् ।
योगाभ्यासादि-फलदं, श्री-करं तत्त्व - साधनम् ।। ९।।
मोक्ष - साम्राज्य - फलदं, देहान्ते परमं पदम् ।
देव्याः स्तोत्रमिदं पुण्यं, परमार्थ परमं पदम् ।। १०।।
विधिना विष्णुना दिव्यं, सेवितं मया च पुरा ।
सप्त - कोटि-महा - मन्त्र-पारायण- फल - प्रदम् ।। ११।।
चतुर्वर्ग - प्रदं नृणां, सत्यमेव मयोदितम् ।
नाम्नामष्टोत्तर - शतं, यच्छाम्यऽहं सुख - प्रदम् ।। १२।।
कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल - सौभाग्य - प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।। १३।।

।। मन्त्र-राज-कल्पे मोक्ष-पादे स्कन्देश्वर-संवादे श्रीललिता-दिव्य-अष्टोत्तर-शत्त-नाम- स्तोत्रम् ।।

इस स्तोत्र के प्रारम्भ में **गणेश, सरस्वती, ब्रह्मा, विष्णु, लक्ष्मी, शिव, पार्वती, त्रिपुर-सुन्दरी** आदि की **वन्दना** कर **कार्तिकेय** जी- **श्रीदेवी के १०८ नामों** की जिज्ञासा करते हैं और **शिव जी** उन नामों को सुनाते हैं, जो १ से १७ तक श्लोकों में स्पष्ट ही हैं।

फल-श्रुति के अनुसार सभी **रोगों**, सभी **ज्वरों**, **ग्रह-पीड़ादि** को शान्त करनेवाला और सभी **शत्रुओं** का नाशक यह स्तोत्र है। इसके पाठ करने से **दीर्घायु, आरोग्य, धन** और **मोक्ष** की प्राप्ति होती है।

अन्त में **श्रीराज-राजेश्वरी श्री त्रिपुर-सुन्दरी की वन्दना** की गई है।

परम पूज्य गुप्तावतार बाबाश्री के संग्रह के अनुसार **श्रीषोडशी** के उपासकों को उक्त स्तोत्र की अन्तिम पंक्ति निम्न प्रकार पढ़ना चाहिए-

सर्वानन्द-प्रदां सदा-शिव-मयीं वन्दे परां षोडशीम् ।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिताम्बिका-दिव्य-अष्टोत्तर-शत-नामावली-होम-साधना

।। विधि ।।

अपने दाहिने एक हाथ लम्बी-चौड़ी तथा एक अङ्गुल ऊँची बालुका (रेत) की '**वेदी**' बनाए। '**वेदी**' को '**मूल-मन्त्र**' अथवा **श्रीललितायै नमः** नमस्कार-मन्त्र पढ़कर देखे। '**फट्**'-मन्त्र पढ़कर '**पञ्च-पात्र**' के पवित्र जल से '**वेदी**' का '**प्रोक्षण**' करे। दुबारा '**फट्**'-मन्त्र पढ़कर '**कुश**' के अग्र भाग से '**वेदी**' का '**ताड़न**' करे। '**हुम्**'-मन्त्र पढ़कर एक मूठी जल द्वारा '**वेदी**' का '**सिञ्चन**' करे।

फिर '**अग्नि**' लाए। '**अग्नि**' का एक अङ्गार-'**मूलं हूं फट् क्रव्यादेभ्यः**'-यह मन्त्र पढ़कर '**नैर्ऋत्य कोण**' में क्रव्याद का अंश समझ कर गिरा दे। तब '**अग्नि**' को '**मूल-मन्त्र**' पढ़ते हुए '**वेदी**' पर रखे और '**समिधा**' रखकर अग्नि प्रज्वलित कर यह मन्त्र पढ़े–

ॐ अग्निं प्रज्वलितं वन्दे, जातवेदं हुताशनम् ।
सुवर्ण - वर्णमनलं, ममीद्धः सर्वतो मुखम् ।।

इसके बाद दाहिने हाथ में जल लेकर '**सङ्कल्प**' पढ़े। यथा–

ॐ तत्सत् । अद्यैतस्य, ब्रह्मणोऽह्नि-द्वितीय-प्रहरार्द्धे, श्वेत-वराह-कल्पे, जम्बू-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्त्त-देशे, अमुक-पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-संवत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास, श्रालिलता-प्रीत्यर्थे सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे श्रीललिताम्बिका-दिव्य-अष्टोत्तर-शत-नाम-मन्त्रैः यथा-शक्ति होमं करिष्ये।

अब '**मूल-मन्त्र**' से '**प्राणायाम**' कर '**विनियोग-ऋष्यादि-न्यास**' करे और '**भगवती ललिता का ध्यान**' एवं '**मानस-पूजन**' करे। यथा–

।। ध्यान ।।

बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्बाहुं त्रि-लोचनाम् ।
पाशांकुश-धनुर्बाणान्, धारयन्तीं शिवां भजे।।

।। मानस-पूजन ।।

ॐ लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीललिताम्बिका-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिताम्बिका-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीललिताम्बिका-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिताम्बिका-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिताम्बिका-

प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिताम्बिका-प्रीतये समर्पयामि नमः।

फिर '**मूल-मन्त्र**' पढ़कर अथवा **श्रीललिताम्बिकायै नमः** कहकर '**अग्नि**' के ऊपर जल छिड़के। '**अग्नि**' का '**पञ्चोपचारों से पूजन**' करे तथा **भगवती ललिता** का अग्नि-रूप में ध्यान कर उनका '**पञ्चोपचारों से पूजन**' करे।

अब 'अग्नि' में '**घृत**' या '**पायस**' की आहुतियाँ निम्न मन्त्रों से प्रदान करे–**ॐ स्यूं हिरण्यायै स्वाहा। ॐ ष्यूं गगनायै स्वाहा। ॐ श्यूं रक्तायै स्वाहा। ॐ व्यूं कृष्णायै स्वाहा। ॐ ल्यूं सुप्रभायै स्वाहा। ॐ रयूं बहु-रूपायै स्वाहा। ॐ य्यूं अति-रक्तायै स्वाहा। ॐ भूः स्वाहा। ॐ भुवः स्वाहा। ॐ स्वः स्वाहा। ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा।**

फिर '**मूलं श्रीललिताम्बिकायै स्वाहा श्रीललिताम्बिकाया इदं**'–यह मन्त्र तीन बार पढ़कर तीन आहुतियाँ दे।

इसके बाद–१. '**ॐ गुरवे स्वाहा**', २. '**ॐ परम-गुरवे स्वाहा**', ३. '**ॐ परापर-गुरवे स्वाहा**', ४. '**ॐ परमेष्ठि-गुरवे स्वाहा**'–इन चार मन्त्रों से चारों गुरुओं के लिए और १. '**ॐ कामेश्वर्यै स्वाहा**', २. '**ॐ भग-मालिन्यै स्वाहा**', ३. '**ॐ नित्य-क्लिन्नायै स्वाहा**'–इन तीन मन्त्रों से तीन प्रधान आवरण-शक्तियों को आहुतियाँ प्रदान करे।

फिर इष्ट-देवता के षडङ्गों के लिए छः आहुतियाँ दे–**ॐ ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं** हृच्छक्त्यै स्वाहा। **ॐ क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं** शिरः-शक्त्यै स्वाहा। **ॐ सौः स-क-ल-ह्रीं** शिखा-शक्त्यै स्वाहा। **ॐ ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं** कवच-शक्त्यै स्वाहा। **ॐ क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं** नेत्र-शक्त्यै स्वाहा। **ॐ सौः स-क-ल-ह्रीं** अस्त्र-शक्त्यै स्वाहा।

इसके बाद कामदेवों को आहुतियाँ प्रदान करे। यथा– **ॐ मनोभवाय स्वाहा, ॐ मकर-ध्वजाय स्वाहा, ॐ कन्दर्पाय स्वाहा, ॐ मन्मथाय स्वाहा, ॐ कामदेवाय स्वाहा।**

तब काम-देवों की शक्तियों को आहुतियाँ प्रदान करे। यथा–**ॐ द्राविण्यै स्वाहा, ॐ क्षोभिण्यै स्वाहा, ॐ आकर्षिण्यै स्वाहा, ॐ वशीकरिण्यै स्वाहा, ॐ सम्मोहिन्यै स्वाहा।**

फिर आठ शक्तियों को आहुतियाँ प्रदान करे–**१. ॐ सुभगायै स्वाहा, २. ॐ भगायै स्वाहा, ३. ॐ भग-सर्पिण्यै स्वाहा, ४. ॐ भग-मालायै स्वाहा, ५. ॐ अनङ्गायै स्वाहा, ६. ॐ अनङ्ग-कुसुमायै स्वाहा, ७. ॐ अनङ्ग-मेखलायै स्वाहा, ८. ॐ अनङ्ग-मदनायै स्वाहा।**

तब अष्ट-मातृकाओं को आहुतियाँ दे–**१. ॐ ब्राह्म्यै स्वाहा, २. ॐ माहेश्वर्यै स्वाहा, ३. ॐ कौमार्यै स्वाहा, ४. ॐ वैष्णव्यै स्वाहा, ५. ॐ वाराह्यै स्वाहा, ६. ॐ इन्द्राण्यै स्वाहा, ७. ॐ चामुण्डायै स्वाहा, ८. ॐ महा-लक्ष्म्यै स्वाहा।**

फिर आठ भैरवों को आहुतियाँ दे– १. ॐ असिताङ्ग-भैरवाय स्वाहा, २. ॐ रुरु-भैरवाय स्वाहा, ३. ॐ चण्ड-भैरवाय स्वाहा, ४. ॐ क्रोध-भैरवाय स्वाहा, ५. ॐ उन्मत्त-भैरवाय स्वाहा, ६. ॐ कपालि-भैरवाय स्वाहा, ७. ॐ भीषण-भैरवाय स्वाहा, ८. ॐ संहार-भैरवाय स्वाहा।

पुनः आठ पीठों को आहुतियाँ दे–१. ॐ काम-रूप-पीठाय स्वाहा, २. ॐ मलय-पीठाय स्वाहा, ३. ॐ कुल - नाग - पीठाय स्वाहा, ४. ॐ कुलान्त - पीठाय स्वाहा, ५. ॐ चौहार-पीठाय स्वाहा, ६. ॐ जालन्धर-पीठाय स्वाहा, ७. ॐ उड्डीयान-पीठाय स्वाहा, ८. ॐ देवी-कोट-पीठाय स्वाहा।

तब दस भैरवों को आहुतियाँ दे–१. ॐ हेतुकाय स्वाहा, २. ॐ त्रिपुरान्तकाय स्वाहा, ३. ॐ वेतालाय स्वाहा, ४. ॐ अग्नि - जिह्वाय स्वाहा, ५. ॐ कालान्तकाय स्वाहा, ६. ॐ कपालाय स्वाहा, ७. ॐ एक - पादाय स्वाहा, ८. ॐ भीम - रूपाय स्वाहा, ९. ॐ मलयाय स्वाहा, १०. ॐ हाटकेश्वराय स्वाहा।

फिर दस दिक्-पालों को आहुतियाँ दे–१. ॐ इन्द्राय स्वाहा, २. ॐ अग्नये स्वाहा, ३. ॐ यमाय स्वाहा, ४. ॐ निर्ऋताय स्वाहा, ५. ॐ वरुणाय स्वाहा, ६. ॐ वायवे स्वाहा, ७. ॐ कुबेराय स्वाहा, ८. ॐ ईशानाय स्वाहा, ९. ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, १०. ॐ अनन्ताय स्वाहा।

पुनः दिक्-पालों के आयुधों को आहुतियाँ दे–१. ॐ वज्राय स्वाहा, २. ॐ शक्त्यै स्वाहा, ३. ॐ दण्डाय स्वाहा, ४. ॐ खड्गाय स्वाहा, ५. ॐ पाशाय स्वाहा, ६. ॐ अंकुशाय स्वाहा, ७. ॐ गदायै स्वाहा, ८. ॐ त्रिशूलाय स्वाहा, ९. ॐ पद्माय स्वाहा, १०. ॐ चक्राय स्वाहा।

तब बलि-देवताओं को आहुतियाँ दे–१. ॐ वटुकाय स्वाहा, २. ॐ योगिन्यै स्वाहा, ३. ॐ क्षेत्रपालाय स्वाहा, ४. ॐ गणेशाय स्वाहा, ५. ॐ वसवे स्वाहा, ६. ॐ सूर्याय स्वाहा, ७. ॐ शिवाय स्वाहा, ८. ॐ भूताय स्वाहा।

फिर 'स्वाहा'-युक्त चतुर्थ्यन्त भगवती ललिता के नामों को क्रम से पढ़ते हुए आहुतियाँ प्रदान करे। यथा–

१- ॐ श्रीमहा-मनोन्मन्यै नमः स्वाहा। २- ॐ श्रीशक्त्यै नमः स्वाहा। ३- ॐ श्रीशिव-शक्त्यै नमः स्वाहा। ४- ॐ श्रीशि-शङ्कर्यै नमः स्वाहा। ५- ॐ श्रीइच्छा-शक्ति-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा। ६- ॐ श्रीक्रिया-शक्ति-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा। ७- ॐ श्रीज्ञान-शक्ति - स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा। ८- ॐ श्रीशान्त्यातीता कलायै नमः स्वाहा। ९- ॐ श्रीनन्दायै नमः स्वाहा। १०- ॐ श्रीशिव - मायायै नमः स्वाहा। ११- ॐ श्रीशिव - प्रियायै नमः स्वाहा। १२- ॐ श्रीसर्वज्ञायै नमः स्वाहा। १३- ॐ श्रीसुन्दर्यै नमः स्वाहा।

१४- ॐ श्रीसौम्यायै नमः स्वाहा । १५- ॐ श्रीसच्चिदानन्द - विग्रहायै नमः स्वाहा । १६- ॐ श्रीपरात्परा-मय्यै नमः स्वाहा । १७- ॐ श्रीबालायै नमः स्वाहा । १८- ॐ श्रीत्रिपुरायै नमः स्वाहा। १९- ॐ श्रीकुण्डल्यै नमः स्वाहा। २०- ॐ श्रीशिवायै नमः स्वाहा। २१- ॐ श्रीरुद्राण्यै नमः स्वाहा। २२- ॐ श्रीविजयायै नमः स्वाहा। २३- ॐ श्रीसर्वायै नमः स्वाहा। २४- ॐ श्रीसर्वाण्यै नमः स्वाहा। २५- ॐ श्रीभुवनेश्वर्यै नमः स्वाहा।

२६- ॐ श्रीकल्याण्यै नमः स्वाहा। २७- ॐ श्रीशूलिन्यै नमः स्वाहा। २८- ॐ श्रीकान्तायै नमः स्वाहा। २९- ॐ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः स्वाहा। ३०- ॐ श्रीमालिन्यै नमः स्वाहा। ३१- ॐ श्रीमानिन्यै नमः स्वाहा। ३२- ॐ श्रीशर्वायै नमः स्वाहा। ३३- ॐ श्रीमग्नोल्लासायै नमः स्वाहा। ३४- ॐ श्रीमोहिन्यै नमः स्वाहा। ३५- ॐ श्रीमाहेश्वर्यै नमः स्वाहा। ३६- ॐ श्रीमातङ्ग्यै नमः स्वाहा। ३७- ॐ श्रीशिव-कामायै नमः स्वाहा। ३८- ॐ श्रीशिवात्मिकायै नमः स्वाहा। ३९- ॐ श्रीकामाक्ष्यै नमः स्वाहा। ४०- ॐ श्रीकमलाक्ष्यै नमः स्वाहा। ४१- ॐ श्रीमीनाक्ष्यै नमः स्वाहा। ४२- ॐ श्रीसर्व-साक्षिण्यै नमः स्वाहा। ४३- ॐ श्रीउमा-देव्यै नमः स्वाहा। ४४- ॐ श्रीमहा-काल्यै नमः स्वाहा। ४५- ॐ श्रीश्यामायै नमः स्वाहा। ४६- ॐ श्रीसर्व-जन-प्रियायै नमः स्वाहा। ४७- ॐ श्रीचित्-परायै नमः स्वाहा। ४८- ॐ श्रीचिद्-घनानन्दायै नमः स्वाहा। ४९- ॐ श्रीचिन्मयायै नमः स्वाहा। ५०- ॐ श्रीचित्-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा।

५१- ॐ श्रीमहा-सरस्वत्यै नमः स्वाहा। ५२- ॐ श्रीदुर्गायै नमः स्वाहा। ५३- ॐ श्रीज्वाला दुर्गायै नमः स्वाहा। ५४- ॐ श्रीअति-मोहिन्यै नमः स्वाहा। ५५- ॐ श्रीनकुल्यै नमः स्वाहा। ५६- ॐ श्रीशुद्ध-विद्यायै नमः स्वाहा। ५७- ॐ श्रीसच्चिदानन्द-विग्रहायै नमः स्वाहा। ५८- ॐ श्रीसु - प्रभायै नमः स्वाहा। ५९- ॐ श्रीस्व-प्रभायै नमः स्वाहा। ६०- ॐ श्रीज्वालायै नमः स्वाहा। ६१-ॐ श्रीइन्द्राक्ष्यै नमः स्वाहा। ६२- ॐ श्रीविश्व - मोहिन्यै नमः स्वाहा। ६३- ॐ श्रीमहेन्द्र - जाल - मध्यस्थायै नमः स्वाहा। ६४- ॐ श्रीमाया-मय-विनोदिन्यै नमः स्वाहा। ६५- ॐ श्रीशिवेश्वर्यै नमः स्वाहा। ६६- ॐ श्रीवृषारूढायै नमः स्वाहा। ६७- ॐ श्रीविद्या - जाल -विनोदिन्यै नमः स्वाहा। ६८- ॐ श्रीमन्त्रेश्वर्यै नमः स्वाहा। ६९- ॐ श्रीमहा - लक्ष्म्यै नमः स्वाहा। ७०- ॐ श्रीमहा - काल्यै नमः स्वाहा। ७१- ॐ श्रीफल-प्रदायै नमः स्वाहा। ७२- ॐ श्रीचतुर्वेद-विशेषज्ञायै नमः स्वाहा। ७३- ॐ श्रीसावित्र्यै नमः स्वाहा। ७४- ॐ श्रीसर्व - देवतायै नमः स्वाहा। ७५- ॐ श्रीमहेन्द्राण्यै नमः स्वाहा।

७६- ॐ श्रीगणाध्यक्षायै नमः स्वाहा। ७७- ॐ श्रीमहा - भैरव - मोहिन्यै नमः स्वाहा। ७८- ॐ श्रीमहा - मय्यै नमः स्वाहा। ७९- ॐ श्रीमहा - घोरायै नमः स्वाहा। ८०- ॐ श्रीमहा - देव्यै नमः स्वाहा। ८१- ॐ श्रीमदापहायै नमः स्वाहा। ८२- ॐ श्रीमहिषासुर - संहन्त्र्यै नमः स्वाहा। ८३- ॐ श्रीचण्ड - मुण्ड - कुलान्तकायै नमः स्वाहा। ८४- ॐ श्रीचक्रेश्वरी चतुर्वेदायै नमः स्वाहा। ८५- ॐ श्रीसर्वाद्यै नमः स्वाहा। ८६- ॐ श्रीसुर - नायिकायै नमः स्वाहा। ८७- ॐ श्रीषड्-शास्त्र-निपुणायै नमः स्वाहा। ८८- ॐ श्रीनित्यायै नमः स्वाहा। ८९- ॐ श्रीषड् - दर्शन-विचक्षणायै नमः स्वाहा। ९०- ॐ श्रीकाल-रात्र्यै नमः स्वाहा। ९१- ॐ श्रीकलातीतायै नमः स्वाहा। ९२- ॐ श्रीकवि-राज - मनोहरायै नमः स्वाहा। ९३- ॐ श्रीशारदा तिलकायै नमः स्वाहा। ९४- ॐ श्रीतारायै नमः स्वाहा। ९५- ॐ श्रीधीरायै नमः स्वाहा। ९६- ॐ श्रीशूर - जन - प्रियायै नमः स्वाहा। ९७- ॐ श्रीउग्र - तारायै नमः स्वाहा। ९८- ॐ श्रीमहा -मार्यै नमः स्वाहा। ९९- ॐ श्रीक्षिप्र-मार्यै नमः स्वाहा। १००- ॐ श्रीरण-प्रियायै नमः स्वाहा।

१०१- ॐ श्रीअन्न-पूर्णेश्वरी मात्रे नमः स्वाहा। १०२- ॐ श्रीस्वर्ण-कान्ति-तटि-प्रभायै नमः स्वाहा। १०३- ॐ श्रीस्वर-व्यञ्जन-वर्णाढ्यायै नमः स्वाहा। १०४- ॐ श्रीगद्य - पद्यादि - कारणायै नमः स्वाहा। १०५- ॐ श्रीपद - वाक्यार्थ - निलयायै नमः स्वाहा। १०६- ॐ श्रीविन्दु - नादादि-कारणायै नमः स्वाहा। १०७- ॐ श्रीमोक्षेशी-महिषी-नित्यायै नमः स्वाहा। १०८- ॐ श्रीभुक्ति-मुक्ति -फल-प्रदायै नमः स्वाहा। १०९- ॐ श्रीविज्ञान-दायिनी प्राज्ञायै नमः स्वाहा। ११०- ॐ श्रीप्रज्ञान-फल-दायिन्यै नमः स्वाहा। १११- ॐ श्रीअहङ्कारा कलातीतायै नमः स्वाहा। ११२- ॐ श्रीपरा-शक्तिः परात्परायै नमः स्वाहा।

उक्त 'नाम-मन्त्रों' से आहुति देने के बाद 'श्रीललिताम्बिकार्पणमस्तु' ऐसा कहकर 'वेदी' के सम्मुख जल छोड़े। फिर चार आहुतियाँ घी की दें—१ ॐ भूः स्वाहा, २ ॐ भुव स्वाहा, ३ ॐ स्वः स्वाहा, ४ ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा।

अन्त में श्रीललिताम्बिका के पुनः श्रीचक्र अथवा हृदय में विराजने के भावना करते हुए 'भस्म-वन्दन' तथा 'विसर्जन' करना चाहिए। यथा—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्ने कश्यपस्य त्र्यायुषं । यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषं।।

ॐ भो भो वह्ने महा-शक्ते, सर्व-काम-प्रसाधक।
कर्मान्तरेऽपि सम्प्राप्ते, सान्निध्यं कुरु सादरम्।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्री ललिता-लकारादि-शत-नाम-स्तोत्र-साधना

।। पूर्व-पीठिका ।।

कैलास-शिखरासीनं, देव-देवं जगद्-गुरुम् ।
पप्रच्छेशं परानन्दं, भैरवी परमेश्वरम् ।।१।।

।। श्रीभैरव्युवाच ।।

कौलेश! श्रोतुमिच्छामि, सर्व - मन्त्रोत्तमोत्तमम्।
ललिताया शत-नाम,सर्व-काम-फल-प्रदम् ।।२।।

।। श्रीभैरवोवाच ।।

शृणु देवि महा - भागे!, स्तोत्रमेतदनुत्तमम्।
पठनाद् धारणादस्य, सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत् ।।३।।
षट्-कर्माणि सिद्धयन्ति, स्तवस्यास्य प्रसादतः।
गोपनीयं पशोरग्रे, स्व-योनिमपरे यथा ।।४।।

।। विनियोग ।।

ललिताया लकारादि, नाम-शतकस्य देवि!।
राज-राजेश्वरो ऋषिः, प्रोक्तो छन्दोऽनुष्टुप् तथा ।।५।।
देवता ललिता-देवी, षट्-कर्म-सिद्ध्यर्थे तथा।
धर्मार्थ-काम-मोक्षेषु, विनियोगः प्रकीर्तितः ।।६।।
वाक्-काम-शक्ति-वीजेन, कर-षडङ्गमाचरेत्।
प्रयोगे बाला-त्र्यक्षरी, योजयित्वा जपं चरेत् ।।७।।

।। मूल श्रीललिता लकारादि-शत-नाम स्तोत्रम् ।।

ललिता[१] लक्ष्मी[२] लोलाक्षी[३], लक्ष्मणा[४] लक्ष्मणार्चिता[५]।
लक्ष्मण-प्राण - रक्षिणी[६], लाकिनी[७] लक्ष्मण-प्रिया[८] ।।१।।
लोला[९] लकारा[१०] लोमशा[११], लोल-जिह्वा [१२] लज्जा-वती[१३] ।
लक्ष्या[१४] लाक्ष्या[१५] लक्ष-रता[१६], लकाराक्षर-भूषिता[१७] ।।२।।
लोल-लयात्मिका[१८] लीला[१९], लीला-वती[२०] च लाङ्गली[२१] ।
लावण्यामृत - सारा[२२] च, लावण्यामृत -दीर्घिका[२३] ।।३।।
लज्जा[२४] लज्जा-मती[२५] लज्जा[२६], ललना[२७] ललन-प्रिया[२८]।
लवणा[२९] लवली[३०] लसा[३१], लाक्षकी[३२] लुब्धा[३३] लालसा[३४] ।।४।।

लोक-माता[३५] लोक-पूज्या[३६], लोक - जननी[३७] लोलुपा[३८] ।
लोहिता[३९] लोहिताक्षी[४०] च, लिङ्गाख्या[४१] चैव लिङ्गेशी[४२] ।।५।।
लिङ्ग-गीतिः[४३] लिङ्ग-भवा[४४], लिङ्ग-माला[४५] लिङ्ग-प्रिया[४६]।
लिङ्गाभिधायिनी[४७] लिङ्गा[४८], लिङ्ग-नाम-सदानन्दा[४९] ।।६।।
लिङ्गामृत-प्रीता[५०] लिङ्गार्चन-प्रीता[५१] लिङ्ग-पूज्या[५२] ।
लिङ्ग-रूपा[५३] लिङ्गस्था[५४] च, लिङ्गालिङ्गन-तत्परा[५५] ।।७।।
लता-पूजन-रता[५६] च, लता - साधक - तुष्टिदा[५७] ।
लता - पूजक - रक्षिणी[५८], लता-साधन-सिद्धिदा[५९] ।।८।।
लता - गृह - निवासिनी[६०], लता-पूज्या[६१] लताराध्या[६२] ।
लता-पुष्पा[६३] लता-रता[६४], लता-धारा[६५] लता-मयी[६६] ।।९।।
लता - स्पर्शन - सन्तुष्टा[६७], लताऽऽलिङ्गन-हर्षिता[६८]।
लता-विद्या[६९] लता-सारा[७०], लताऽऽचारा[७१] लता-निधिः[७२] ।।१०।।
लवङ्ग - पुष्प - सन्तुष्टा[७३], लवङ्ग-लता-मध्यस्था[७४] ।
लवङ्ग - लतिका - रूपा[७५], लवङ्ग-होम-सन्तुष्टा[७६] ।।११।।
लकाराक्षर - पूजिता[७७], च लकार - वर्णोद्भवा[७८] ।
लकार-वर्ण-भूषिता[७९], लकार-वर्ण-रुचिरा[८०] ।।१२।।
लकार - बीजोद्भवा[८१] तथा लकाराक्षर-स्थिता[८२] ।
लकार-बीज-निलया[८३], लकार-वीज-सर्वस्वा[८४] ।।१३।।
लकार - वर्ण - सर्वाङ्गी[८५], लक्ष्य-छेदन-तत्परा[८६] ।
लक्ष्य-धरा[८७] लक्ष्य-घूर्णा[८८], लक्ष-जापेन-सिद्धिदा[८९] ।।१४।।
लक्ष-कोटि-रूप-धरा[९०], लक्ष-लीला-कला-लक्ष्या[९१] ।
लोक-पालेनार्चिता[९२] च, लाक्षा-राग-विलेपना[९३] ।।१५।।
लोकातीता[९४] लोपा-मुद्रा[९५], लज्जा-बीज-स्वरूपिणी[९६] ।
लज्जा-हीना[९७] लज्जा-मयी[९८], लोक-यात्रा-विधायिनी[९९] ।।१६।।
लास्य-प्रिया[१००] लय-करी[१०१], लोक-लया[१०२] लम्बोदरी[१०३]।
लघिमादि - सिद्धि-दात्री[१०४], लावण्य-निधि-दायिनी[१०५] ।
लकार-वर्ण-ग्रथिता[१०६], लं-बीजा[१०७] ललिताम्बिका[१०८] ।।१७।।

।। फल-श्रुति ।।

इति ते कथितं देवि!, गुह्याद् गुह्य-तरं परम् ।
प्रातः-काले च मध्याह्ने, सायाह्ने च सदा निशि ।
यः पठेत् साधक-श्रेष्ठो, त्रैलोक्य-विजयी भवेत् ।।१।।

सर्व - पापि - विनिर्मुक्तः, स याति ललिता-पदम् ।
शून्यागारे शिवारण्ये, शिव-देवालये तथा ।।२।।
शून्य - देशे तडागे च, नदी - तीरे चतुष्पथे ।
एक-लिङ्गे ऋतु-स्नाता-गेहे वेश्या-गृहे तथा ।।३।।
पठेदष्टोत्तर - शत - नामानि सर्व - सिद्धये ।
साधको वाञ्छां यत्-कुर्यात्, तत्तथैव भविष्यति ।।४।।
ब्रह्माण्ड-गोलके याश्च, याः काश्चिज्जगती-तले ।
समस्ताः सिद्धयो देवि!, करामलक-वत् सदा ।।५।।
साधक - स्मृति - मात्रेण, यावन्त्यः सन्ति सिद्धयः ।
स्वयमायान्ति पुरतो, जपादीनां तु का कथा ।।६।।
अयुतावर्त्तनाद् देवि!, पुरश्चर्याऽस्य गीयते ।
पुरश्चर्या-युतः स्तोत्रः, सर्व-कर्म-फल-प्रदः ।।७।।
सहस्रं च पठेद्यस्तु, मासार्धं साधकोत्तमः ।
दासी-भूतं जगत्-सर्वं, मासार्धाद् भवति ध्रुवम् ।।८।।
नित्यं प्रति - नाम्ना हुत्वा, पलाश - कुसुमैर्नरः ।
भू-लोकस्थाः सर्व-कन्याः, सर्व-लोक-स्थितास्तथा ।।९।।
पातालस्थाः सर्व-कन्याः,नाग-कन्याः यक्ष-कन्याः ।
वशीकुर्यान्मण्डलार्धात्, संशयो नात्र विद्यते ।।१०।।
अश्वत्थ - मूले पठेत् शत - वारं ध्यान - पूर्वकम् ।
तत्-क्षणाद् व्याधि-नाशश्च, भवेद् देवि! न संशयः।।११।।
शून्यागारे पठेत् स्तोत्रं, सहस्रं ध्यान - पूर्वकम् ।
लक्ष्मी प्रसीदति ध्रुवं, स त्रैलोक्यं वशिष्यति ।।१२।।
प्रेत - वस्त्रं भौमे ग्राह्यं, रिपु - नाम च वेष्टितम् ।
प्राण-प्रतिष्ठां कृत्वा तु, पूजां चैव हि कारयेत् ।।१३।।
श्मशाने निखनेद् रात्रौ, द्वि - सहस्रं पठेत् ततः ।
जिह्वा-स्तम्भनमाप्नोति, सद्यो मूकत्वमाप्नुयात् ।।१४।।
श्मशाने पठेत् स्तोत्रं, अयुतार्धं सु - बुद्धिमान् ।
शत्रु-क्षयो भवेत् सद्यो, नान्यथा मम भाषितम् ।।१५।।
प्रेत - वस्त्रं शनौ ग्राह्यं, प्रति - नाम्ना सम्पुटितम् ।
शत्रु-नाम लिखित्वा च, प्राण-प्रतिष्ठां कारयेत् ।।१६।।

ततः ललितां सम्पूज्य, कृष्ण - धत्तूर - पुष्पकैः।
श्मशाने निखनेद् रात्रौ, शत-वारं पठेत् स्तोत्रम् ।।१७।।
ततो मृत्युमवाप्नोति, देव - राज - समोऽपि सः।
श्मशानाङ्गारमादाय, मङ्गले शनिवारे वा ।।१८।।
प्रेत - वस्त्रेण संवेष्ट्य, बध्नीयात् प्रेत - रज्जुना ।
दशाभिमन्त्रितं कृत्वा, खनेद् वैरि-वेश्मनि ।।१९।।
सप्त - रात्रान्तरे तस्योच्चाटनं भ्रामणं भवेत्।
कुमारीं पूजयित्वा तु, यः पठेद् भक्ति-तत्परः ।।२०।।
न किञ्चिद् दुर्लभं तस्य, दिवि वा भुवि मोदते ।
दुर्भिक्षे राज-पीडायां, संग्रामे वैरि-मध्यके ।।२१।।
यत्र यत्र भयं प्राप्तः, सर्वत्र प्रपठेन्नरः ।
तत्र तत्राभयं तस्य, भवत्येव न संशयः ।।२२।।
वाम-पार्श्वे समानीय, शोधितां वर-कामिनीम् ।
जपं कृत्वा पठेद् यस्तु, तस्य सिद्धिः करे स्थिता ।।२३।।
दरिद्रस्तु चतुर्दश्यां, कामिनी - सङ्गमैः सह ।
अष्ट-वारं पठेद् यस्तु, कुबेर-सदृशो भवेत् ।।२४।।
श्रीललितां महा-देवीं, नित्यं सम्पूज्य मानवः ।
प्रति-नाम्ना जुहुयात् स, धन-राशिमवाप्नुयात् ।।२५।।
नवनीतं चाभिमन्त्र्य, स्त्रीभ्यो दद्यान्महेश्वरि !
वन्ध्यां पुत्र-प्रदं देवि!, नात्र कार्या विचारणा।।२६।।
कण्ठे वा वाम-बाहौ वा, योनौ वा धारणाच्छिवे !
बहु-पुत्र-वती नारी, सुभगा जायते ध्रुवम् ।।२७।।
उग्रं उग्रं महदुग्रं, स्तवमिदं ललितायाः ।
सु-विनीताय शान्ताय, दान्तायाति- गुणाय च ।।२८।।
भक्ताय ज्येष्ठ - पुत्राय, गुरु - भक्ति - पराय च ।
भक्त - भक्ताय योग्याय, भक्ति-शक्ति-पराय च ।।२९।।
वेश्या - पूजन - युक्ताय, कुमारी - पूजकाय च ।
दुर्गा-भक्ताय शैवाय, कामेश्वर-प्रजापिने ।।३०।।
अद्वैत - भाव - युक्ताय, शक्ति - भक्ति - पराय च ।
प्रदेयं शत-नामाख्यं, स्वयं ललिताज्ञया ।।३१।।

खलाय पर - तन्त्राय, पर - निन्दा - पराय च ।
भ्रष्टाय दुष्ट-सत्त्वाय, परी-वाद-पराय च ।।३२।।
शिवाभक्ताय दुष्टाय, पर - दार - रताय च ।
वेश्या-स्त्री-निन्दकाय च, पञ्च-मकार-निन्दके ।।३३।।
न स्तोत्रं दर्शयेद् देवि!, मम हत्या-करो भवेत् ।
तस्मान्न दापयेद् देवि!, मनसा कर्मणा गिरा ।।३४।।
अन्यथा कुरुते यस्तु, स क्षीणायुर्भवेद् ध्रुवम् ।
पुत्र-हारी च स्त्री-हारी, राज्य-हारी भवेद् ध्रुवम् ।।३५।।
मन्त्र - क्षोभश्च जायते, तस्य मृत्युर्भविष्यति ।
क्रम-दीक्षा-युतानां च, सिद्धिर्भवति नान्यथा ।।३६।।
क्रम-दीक्षा-युतो देवि!, क्रमाद् राज्यमवाप्नुयात् ।
क्रम-दीक्षा-समायुक्तः, कल्पोक्त-सिद्धि-भाग् भवेत् ।।३७।।
विधेर्लिपिं तु सम्मार्ज्य, किङ्करत्वं विसृज्य च ।
सर्व-सिद्धिमवाप्नोति, नात्र कार्या विचारणा ।।३८।।
क्रम - दीक्षा - युतो देवि!, मम समो न संशयः ।
गोपनीयं गोपनीयं, गोपनीयं सदाऽनघे ।।३९।।
स दीक्षितः सुखी साधुः, सत्य-वादी जितेन्द्रियः ।
स वेद-वक्ता स्वाध्यायी, सर्वानन्द-परायणः ।।४०।।
स्वस्मिन् ललितां सम्भाव्य, पूजयेज्जगदम्बिकाम् ।
त्रैलोक्य-विजयी भूयान्नात्र कार्या विचारणा ।।४१।।
गुरु-रूपं शिवं ध्यात्वा, शिव-रूपं गुरुं स्मरेत् ।
सदा-शिवः स एव स्यान्नात्र कार्या विचारणा ।।४२।।

।। श्रीकौलिकार्णवे श्रीभैरवी-संवादे षट्-कर्म-सिद्ध-दायकं
श्रीमल्ललिताया लकारादि-शत-नाम-स्तोत्रम्।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीललिता-लकारादि-शत-नाम-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

कौलिकार्णव-तन्त्रोक्त **'श्री ललिता शत-नाम स्तोत्र'** यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है। यह स्तोत्र **जगदलपुर** के **करिया पाथर श्मशान** में प्रवास कर रहे **अवधूत श्री चिदानन्द- जी** से प्राप्त हुआ था। **अवधूत श्री चिदानन्द जी** ने अपना कोई परिचय नहीं दिया, किन्तु उनका ज्ञान-भण्डार असीमित था। उन्हीं के कथनानुसार इसकी साधना **श्रीगुरुदेव** के द्वारा अत्यन्त ही योग्य शिष्य को बतलाई जाती है। **पश्वाचारी साधक** यदि इसका प्रयोग करे, तो उसका अनिष्ट हो सकता है। अतः **वीराचारी साधक** को ही इसकी साधना करनी चाहिए। प्रयोगों में जहाँ प्रत्येक नाम का अलग-अलग प्रयोग करना है, वहाँ प्रत्येक नाम **'चतुर्थ्यन्त'** प्रयुक्त होगा, अन्यत्र केवल **स्तोत्र का पाठ** करना चाहिए। अधिक पाठ करते समय **प्रथम आवृत्ति** में **पूरा स्तोत्र** (अन्तिम श्लोक तक) तथा **मध्य की सभी आवृत्तियों** में **केवल नामों का पाठ** और **अन्तिम आवृत्ति** में **नामों के पाठ** के बाद पूरी **फल-श्रुति** का पाठ करना चाहिए। शेष विधि जैसी **फल-श्रुति** में वर्णित है, वैसी ही है। *-श्री भैरवानन्दनाथ*

कैलास शिखर पर बैठे हुए देवों के देव **जगद्-गुरु परमेश्वर** से **भैरवी** ने कहा- **हे कौलेश !**, सभी मन्त्रों में उत्तम से भी उत्तम समस्त कामनाओं के फल को देनेवाला **'श्रीललिता शत-नाम स्तोत्र'** सुनने की इच्छा है ।।१-२।।

श्रीभैरव ने कहा- **हे महा-भागे !** इस **उत्तम स्तोत्र** को सुनो। इसे पढ़ने और धारण करनेवाला समस्त सिद्धियों का स्वामी होता है। इस स्तव की कृपा से षट्-कर्मों की सिद्धि होती है। पशुओं के आगे इसे स्व-योनि के समान गुप्त रखना चाहिए ।।३-४।।

विनियोग-श्रीललिता के इस **नाम-शतक** के **राज-राजेश्वर** ऋषि, **अनुष्टुप्** छन्द, **श्रीललिता देवी** देवता तथा **षट्-कर्मों** की सिद्धि-सहित **धर्म-अर्थ-काम** व **मोक्ष** की प्राप्ति के लिए विनियोग है। वाक् **(ऐं)**, काम **(क्लीं)**, शक्ति **(सौः)**, वीजों से **कर-षडङ्ग-न्यास** करें और प्रयोगों में बाला त्र्यक्षरी **(ऐं क्लीं सौः)** की योजना करें।

श्लोक १ से श्लोक १८ तक प्रथम नाम **'ललिता'** से लेकर **'ललिताम्बिका'** तक **१०८ नाम** स्पष्ट रूप से वर्णित हैं।

फल-श्रुति-जो श्रेष्ठ साधक सदा **प्रातः-काल, मध्याह्न** (दोपहर), **सन्ध्या** और **रात्रि-काल** में इसका पाठ करते हैं, वे सभी पापों से मुक्त होकर त्रैलोक्य-विजयी होते हैं और अन्त में **ललिता** के पद (स्वरूप या मुक्ति) को प्राप्त होते हैं ।।१-२।।

निर्जन भवन, श्मशान, शिवालय, निर्जन स्थान, तालाब और **नदी** के किनारे, **चतुष्पथ** पर, **एक-लिङ्ग** (जिस **शिव-लिङ्ग** के चारों तरफ पाँच कोस तक दूसरा **शिव-लिङ्ग** न हो), **ऋतु-स्नाता स्त्री** या **वेश्या** के घर में समस्त सिद्धियों की प्राप्ति के लिए **अष्टोत्तर-शत-नामों** का पाठ करना चाहिए। इन स्थानों पर पाठ करनेवाला जो भी कामना करता है, वह पूरी होती है। इस पृथ्वी पर और ब्रह्माण्ड में जितनी भी सिद्धियाँ हैं, सभी कर-तल-गत हो जाती हैं और स्मरण करने मात्र से साधक को बिना जप आदि के ही वे प्रत्यक्ष हो जाती हैं ।। ३-६ ।।

अयुत (दस हजार) आवृत्तियों में इसका **पुरश्चरण** होता है। **पुरश्चरण** से सिद्ध स्तोत्र सभी कर्मों के फल को देने में समर्थ होता है ।।७।।

पुरश्चरण के बाद **एक सहस्र** बार इसका पाठ करने से १५ दिन में सारे जगत् का वशीकरण होता है ।।८।।

नित्य प्रत्येक **नाम** द्वारा **पलाश** के पुष्पों से हवन करने से छः मास में सभी लोकों की कन्याओं का वशीकरण होता है ।।९-१०।।

अश्वत्थ वृक्ष के मूल भाग में बैठकर ध्यान-पूर्वक **१०८ बार पाठ** करने से रोग नष्ट होता है ।।११।।

शून्य गृह में ध्यान-पूर्वक **१००० बार पाठ** करने से **लक्ष्मी** प्रसन्न होती है और तीनों लोक वशीभूत होते हैं ।।१२।।

मङ्गल के दिन प्रेत-वस्त्र लाए, शत्रु-नाम उसमें लपेटे, प्राण-प्रतिष्ठा कर उसकी पूजा करे, रात्रि में उस वस्त्र को **श्मशान** में गाड़कर, **२००० पाठ** करे, तो शत्रु की जिह्वा स्तम्भित होती है। वह गूँगा हो जाता है ।।१३-१४।।

श्मशान में इस स्तोत्र का **५००० पाठ** करे, तो **शत्रु-नाश** होता है ।।१५।।

शनि के दिन प्रेत-वस्त्र लाए, प्रत्येक नाम से सम्पुटित शत्रु-नाम लिखे, प्राण-प्रतिष्ठा कर **ललिता** की पूजा **काले धतूर-पुष्पों** से करे, रात्रि में **श्मशान** में गाड़ कर **१०० बार स्तोत्र का पाठ** करे, तो शत्रु की मृत्यु होती है ।।१६-१७।।

मङ्गल या **शनि** के दिन **श्मशान** से अङ्गार लेकर प्रेत-वस्त्र में लपेट कर प्रेत-रस्सी से बाँधे, उसे १० बार अभिमन्त्रित कर शत्रु-गृह में गाड़ दे। सात रात्रि के भीतर शत्रु का उच्चाटन होता है ।।१८-१९।।

कुमारी-पूजा कर **भक्ति - पूर्वक पाठ** करे, तो पृथ्वी पर कुछ भी दुर्लभ नहीं रहता ।।२०।।

दुर्भिक्ष, राज-भय, युद्ध और **शत्रुओं** के मध्य जहाँ कहीं भय हो, इसका पाठ करे, तो सङ्कट दूर होता है ।।२१-२२।।

शोधिता श्रेष्ठ कामिनी को अपने बाँई ओर बैठा कर **जप-पूर्वक स्तोत्र का पाठ** करे, तो सिद्धि शीघ्र मिलती है ।।२३।।

चतुर्दशी के दिन **कामिनी** के साथ जो दरिद्र व्यक्ति **८ बार स्तोत्र-पाठ** करता है, वह **कुबेर** के समान धनाढ्य होता है ।।२४।।

नित्य **श्री महा-देवी ललिता** की पूजा कर **प्रत्येक नाम से हवन** करे, तो विपुल धन प्राप्त होता है ।।२५।।

मक्खन को अभिमन्त्रित कर **बाँझ स्त्री** को खिलाए, तो वह पुत्र-वती होती है ।।२६।।

कण्ठ, बाँई भुजा या **योनि** में धारण करने से स्त्री पुत्र लाभ करती है ।।२७।।

श्रीललिता का यह स्तोत्र **महा - उग्र** है। **विनम्र, शान्त, भक्त, ज्येष्ठ पुत्र, गुरु-भक्ति-परायण, भक्तों के भक्त, वेश्या** और **कुमारी-पूजन-कर्ता, दुर्गा-भक्त, शिव के भक्त, कामेश्वर-मन्त्र के जप-कर्ता, अद्वैत-भावापन्न** और **शक्ति में भक्ति रखनेवाले साधक** को यह **शत-नाम** देना चाहिए, ऐसी स्वयं **ललिता** की आज्ञा है ।।२८-३१।।

खल (दुष्ट प्रकृतिवाला), **पर-तन्त्र** (जो किसी दूसरे के अधीन हो), **दूसरों की निन्दा** करनेवाला, **भ्रष्ट** (पतित या अधर्मी), **परोवादी** (दूसरों की निन्दा करनेवाला), **शिव में अभक्ति** रखनेवाला, दूसरे की स्त्री में आसक्त, वेश्या और स्त्रियों की निन्दा करनेवाला तथा पञ्च-मकारों की निन्दा करनेवाला-इनको यह स्तोत्र दिखाने से मेरी हत्या लगती है। अतः मन, वचन और कर्म से भी स्तोत्र नहीं देना चाहिए। जो इसके विपरीत करता है, वह पुत्र, स्त्री और राज्य से वञ्चित होता है। उसकी आयु निश्चित-रूप से कम हो जाती है। उसका मन्त्र क्षुभित होकर उसी का नाश कर देता है।।३२-३५।।

क्रम-दीक्षा से युक्त साधक को सिद्धि मिलती है। वह कल्पोक्त सिद्धियों को प्राप्त कर क्रमशः राज्य-वैभव को प्राप्त करता है।वह **ब्रह्मा** के लेख (प्रारब्ध) को भी मिटाकर संसार-बन्धन से छूटकर सभी सिद्धियाँ प्राप्त करता है। **क्रम-दीक्षा** से युक्त साधक मेरे समान ही है। वही दीक्षित है, सुखी, साधु, सत्य-वादी, जितेन्द्रिय, वेद-वक्ता, स्वाध्यायी और समस्त आनन्दों में मग्न रहनेवाला है।। ३६-४०।।

जो स्वयं को **ललिता**-रूप जानकर **जगदम्बा** का पूजन करता है, वह त्रैलोक्य-विजयी होता है। जो **शिव** को **गुरु** और **गुरु** को **शिव-रूप** में जानता है, वही **सदा-शिव** है, इसमें सन्देह नहीं। **हे देवि**, प्रयत्न-पूर्वक इसे गोपनीय रखना चाहिए ।।४१-४२।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिता-लकारादि-शत-नाम-जप-साधना

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्रीललिता-लकारादि-शत-नाम-माला-मन्त्रस्य श्रीराज-राजेश्वरो ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीललिताम्बा देवता। 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' बीजं। 'स-क-ल-ह्रीं' शक्तिः। 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' उत्कीलनं। श्रीललिताम्बा-देवता-प्रसाद-सिद्धये षट्-कर्म-सिद्ध्यर्थे तथा धर्मार्थ-काम-मोक्षेषु पूजने तर्पणे च विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

ॐ श्रीराज-राजेश्वरो-ऋषये नमः– शिरसि। ॐ अनुष्टुप्-छन्दसे नमः– मुखे । ॐ श्रीललिताम्बा-देवतायै नमः– हृदि । ॐ 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' बीजाय नमः– लिङ्गे । ॐ 'स-क-ल-ह्रीं' शक्तये नमः– नाभौ । ॐ ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' उत्कीलनाय नमः– सर्वाङ्गे। ॐ श्रीललिताम्बा-देवता-प्रसाद-सिद्धये षट्-कर्म-सिद्ध्यर्थे तथा धर्मार्थ - काम-मोक्षेषु पूजने तर्पणे च विनियोगाय नमः– अञ्जलौ ।

।। कर-न्यास ।।

ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' तर्जनीभ्यां नमः। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' मध्यमाभ्यां नमः। ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' अनामिकाभ्यां नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

।। अङ्ग-न्यास ।।

ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' हृदयाय नमः। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' शिरसे स्वाहा। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' शिखायै वषट्। ॐ 'ऐं क-ए-ई-ल-ह्रीं' कवचाय हुम्। ॐ 'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ 'सौः स-क-ल-ह्रीं' अस्त्राय फट्।

।। ध्यान ।।

बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्बाहुं त्रि-लोचनाम् ।
पाशांकुश-धनुर्वाणान्, धारयन्तीं शिवां भजे ।।

।। मानस-पूजन ।।

ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं

धूपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिता-त्रिपुरा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। श्रीललिता- लकारादि-शत-नामावली द्वारा जप ।।

१- श्रीललितायै नमः। २- श्रीलक्ष्म्यै नमः। ३- श्रीलोलाक्ष्यै नमः। ४-श्रीलक्ष्मणायै नमः। ५- श्रीलक्ष्मणार्चितायै नमः। ६- श्रीलक्ष्मण - प्राण - रक्षिण्यै नमः। ७- श्रीलाकिन्यै नमः। ८- श्रीलक्ष्मण-प्रियायै नमः। ९- श्रीलोलायै नमः। १०- श्रीलकारायै नमः। ११- श्रीलोमशायै नमः। १२- श्रीलोल-जिह्वायै नमः। १३- श्रीलज्जा-वत्यै नमः। १४- श्रीलक्ष्यायै नमः। १५- श्रीलाक्ष्यायै नमः। १६- श्रीलक्ष-रतायै नमः। १७- श्रीलकाराक्षर - भूषितायै नमः। १८- श्रीलोल - लयात्मिकायै नमः। १९- श्रीलीलायै नमः। २०- श्रीलीला - वत्यै नमः। २१- श्रीलाङ्गल्यै नमः। २२- श्रीलावण्यामृत-सारायै नमः। २३- श्रीलावण्यामृत -दीर्घिकायै नमः। २४- श्रीलज्जायै नमः। २५- श्रीलज्जा-मत्यै नमः।

२६ - श्रीलज्जायै नमः । २७ - श्रीललनायै नमः । २८ - श्रीललन - प्रियायै नमः। २९- श्रीलवणायै नमः। ३०- श्रीलवल्यै नमः। ३१- श्रीलसायै नमः। ३२- श्रीलाक्षक्यै नमः । ३३- श्रीलुब्धायै नमः । ३४- श्रीलालसायै नमः। ३५- श्रीलोक - मातायै नमः। ३६- श्रीलोक - पूज्यायै नमः । ३७- श्रीलोक - जनन्यै नमः । ३८- श्रीलोलुपायै नमः। ३९- श्रीलोहितायै नमः। ४०- श्रीलोहिताक्ष्यै नमः। ४१- श्रीलिङ्गाख्यायै नमः। ४२- श्रीलिङ्गेश्यै नमः। ४३- श्रीलिङ्ग-गीत्यै नमः। ४४- श्रीलिङ्ग-भवायै नमः। ४५- श्रीलिङ्ग-मालायै नमः। ४६- श्रीलिङ्ग-प्रियायै नमः। ४७- श्रीलिङ्गाभिधायिन्यै नमः। ४८- श्रीलिङ्गायै नमः।, ४९- श्रीलिङ्ग-नाम-सदानन्दायै नमः। ५०-श्रीलिङ्गामृत-प्रीतायै नमः।

५१- श्रीलिङ्गार्चन-प्रीतायै नमः। ५२- श्रीलिङ्ग-पूज्यायै नमः। ५३- श्रीलिङ्ग-रूपायै नमः। ५४- श्रीलिङ्गस्थायै नमः। ५५- श्रीलिङ्गालिङ्गन-तत्परायै नमः। ५६- श्रीलता-पूजन-रतायै नमः। ५७- श्रीलता-साधक-तुष्टिदायै नमः। ५८- श्रीलता-पूजक-रक्षिण्यै नमः। ५९- श्रीलता -साधन-सिद्धिदायै नमः। ६०- श्रीलता-गृह-निवासिन्यै नमः। ६१- श्रीलता-पूज्यायै नमः। ६२- श्रीलताराध्यायै नमः। ६३- श्रीलता-पुष्पायै नमः। ६४- श्रीलता-रतायै नमः। ६५- श्रीलता-धारायै नमः। ६६- श्रीलता-मय्यै नमः। ६७- श्रीलता-स्पर्शन -सन्तुष्टायै नमः। ६८- श्रीलताऽऽलिङ्गन-हर्षितायै नमः। ६९- श्रीलता-विद्यायै नमः । ७०- श्रीलता - सारायै नमः। ७१- श्रीलताऽऽचारायै नमः। ७२- श्रीलता-निधये नमः। ७३- श्रीलवङ्ग-पुष्प-

सन्तुष्टायै नमः। ७४- श्रीलवङ्ग-लता-मध्यस्थायै नमः। ७५- श्रीलवङ्ग-लतिका-रूपायै नमः।

७६- श्रीलवङ्ग-होम-सन्तुष्टायै नमः। ७७- श्रीलकाराक्षर-पूजितायै नमः। ७८- श्रीलकार-वर्णोद्भवायै नमः। ७९- श्रीलकार-वर्ण-भूषितायै नमः। ८०- श्रीलकार-वर्ण-रुचिरायै नमः। ८१- श्रीलकार-बीजोद्भवायै नमः। ८२- श्रीलकाराक्षर - स्थितायै नमः। ८३- श्रीलकार-बीज-निलयायै नमः। ८४- श्रीलकार-वीज-सर्वस्वायै नमः। ८५- श्रीलकार-वर्ण- सर्वाङ्ग्यै नमः। ८६- श्रीलक्ष्य-छेदन-तत्परायै नमः। ८७- श्रीलक्ष्य-धरायै नमः। ८८- श्रीलक्ष्य-घूर्णायै नमः। ८९- श्रीलक्ष - जापेन - सिद्धिदायै नमः। ९०- श्रीलक्ष-कोटि-रूप-धरायै नमः। ९१- श्रीलक्ष-लीला-कला-लक्ष्यायै नमः। ९२- श्रीलोक-पालेनार्चितायै नमः। ९३- श्रीलाक्षा-राग-विलेपनायै नमः। ९४- श्रीलोकातीतायै नमः। ९५- श्रीलोपा-मुद्रायै नमः।९६- श्रीलज्जा-बीज - स्वरूपिण्यै नमः। ९७- श्रीलज्जा - हीनायै नमः। ९८- श्रीलज्जा - मय्यै नमः। ९९- श्रीलोक- यात्रा-विधायिन्यै नमः। १००- श्रीलास्य-प्रियायै नमः।

१०१- श्रीलय - कर्यै नमः। १०२- श्रीलोक - लयायै नमः। १०३- श्रीलम्बोदर्यै नमः। १०४- श्रीलघिमादि - सिद्धि - दात्र्यै नमः। १०५- श्रीलावण्य -निधि -दायिन्यै नमः। १०६- श्रीलकार-वर्ण-ग्रथितायै नमः। १०७- श्रीलं - बीजायै नमः। १०८- श्रीललिताम्बिकायै नमः।

भगवती के 'नाम-मन्त्रों' द्वारा आराधना

अपने श्वास-प्रश्वास के साथ *भगवती ललिता* के *'नाम-मन्त्रों'* का जप करने पर, *'नाम-मन्त्र'* श्वास-प्रश्वास के साथ एकाकार हो जाता है। ऐसी अवस्था में, *'प्राणायाम'* की क्रिया स्वतः होने लगती है। *'मन' की चञ्चलता* नष्ट हो जाती है और *मन की स्थिरता* के कारण *'स्वतः कुम्भक'* होने लगता है।

फिर क्रमशः *बाहरी 'नाम'-जप* भी बन्द हो जाता है और साधक— *'नाम-मन्त्र' का साक्षात्कार* करता है।

संक्षेप में, *'नाम'-साधना* से *'प्राणायाम'* आदि सभी क्रियाएँ स्वतः सिद्ध हो जाती हैं और *'कुण्डलिनी' का जागरण* होकर *भगवती की लीला का साक्षात्कार* होता है।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी वेद-सार-स्तवः

कस्तूरी-पङ्क-भास्वद् - गल - चलदमल - स्थूल - मुक्तावलीका,
ज्योत्स्ना शुद्धावदाता शशि-शिशु-मुकुटालकृता ब्रह्म-पत्नी ।
साहित्याम्भोज-भृङ्गी कवि-कुल-विनुता सात्त्विकीं वाग् - विभूतिम्,
देयान्मे शुभ्र-वस्त्रा कर-चल-वलया वल्लकीं वादयन्ती ।।१।।
एकान्ते योगि-वृन्दैः प्रशमित-करणैः क्षुत् - पिपासा - विमुक्तैः,
सानन्दं ध्यान-योगाद् विस-गुण-सदृशी दृश्यते चित्त-मध्ये ।
या देवी हंस - रूपा भव - भय - हरणं साधकानां विधत्ते,
सा नित्यं नाद-रूपा त्रिभुवन-जननी मोदमाविष्करोतु ।।२।।
ईक्षित्री सृष्टि - काले त्रिभुवनमथ या तत्क्षणेऽनु - प्रविश्य,
स्थेमानं प्रापयन्ती निज-गुण-विभवैः सर्वथा व्याप्य विश्वम् ।
संहर्त्री सर्व - भासां विलयन - समये स्वात्मनि स्व-प्रकाशा,
सा देवी कर्म-बन्धं मम भव-करणं नाशयत्यादि-शक्तिः ।।३।।
लक्ष्या या चक्र-राजे नव - पुर - लसिते योगिनी-वृन्द-गुप्ते,
सौवर्णे शैल-शृङ्गे सुर-गण-रचिते तत्त्व-सोपान-युक्ते ।
मन्त्रिण्या मेचकाङ्ग्या कुच - भर - नतया कोल - मुख्या च सार्धम्,
साम्राज्ञी सा मदीया मद-गज-गमना दीर्घमायुस्तनोतु ।।४।।
ह्रींकाराम्भोज-भृङ्गी हय-मुख-विनुता हानि - वृद्ध्यादि -हीना,
हंसोऽहं मन्त्र-राज्ञी हरि-हय-वरदा हादि-मन्त्रार्थ-रूपा ।
हस्ते चिन्मुद्रिकाढ्या हत-बहु-दनुजा हस्ति-कृत्ति-प्रिया मे,
हार्दं शोकातिरेकं शमयतु ललिताधीश्वरी पाश-हस्ता ।।५।।
हस्ते पङ्केरुहाभे सरस - सरसिजं बिभ्रती लोक - माता,
क्षीरोदन्वत्-सु-कन्या करि-वर-विनुता नित्य-पुष्टाब्ज-गेहा ।
पद्माक्षी हेम-वर्णा मुर - रिपु - दयिता शेवधिः सम्पदां या,
सा मे दारिद्र्य-दोषं दमयतु करुणा-दृष्टि-पातैरजस्रम् ।।६।।
सच्चिद्-ब्रह्म-स्वरूपां सकल - गुण - युतां निर्गुणां निर्विकाराम्,
राग-द्वेषादि-हन्त्रीं रवि-शशि-नयनां राज्य-दान-प्रवीणाम् ।

चत्वारिंशत्-त्रिकोणे चतुरधिक-समे चक्र-राजे लसन्तीम्,
कामाक्षीं कामितानां वितरण-चतुरां चेतसा भावयामि ।।७।।
कन्दर्पे शान्त - दर्पे त्रिनयन - नयन - ज्योतिषा देव-वृन्दैः,
साशङ्कं साश्रु-पातं स-विनय-करुणं याचिता काम-पत्न्या ।
या देवी दृष्टि-पातैः पुनरपि मदनं जीवयामास सद्यः,
सा नित्यं रोग-शान्त्यै प्रभवतु ललिताधीश्वरी चित्-प्रकाशा ।।८।।
हव्यैः कव्यैश्च सर्वैः श्रुति-चय-विहितैः कर्मभिः कर्म - शीला,
ध्यानाद्यैरष्टभिश्च प्रशमित - कलुषा योगिनः पर्ण - भक्षाः ।
यामेवानेक - रूपां प्रति - दिनमवनौ संश्रयन्ते विधिज्ञाः,
सा मे मोहान्धकारं बहु - भव - जनितं नाशयत्वादि - माता ।।९।।
लक्ष्या मूल-त्रिकोणे गुरु - वर - करुणा - लेशतः काम-पीठे,
यस्या विश्वं समस्तं बहु-तर-विततं जायते कुण्डलिन्याः ।
यस्याः शक्ति - प्ररोहादविरलममृतं विन्दते योगि - वृन्दम्,
तां वन्दे नाद - रूपां प्रणव - पद - मयीं प्राणिनां प्राण - दात्रीम् ।।१०।।
ह्रींकाराम्भोधि-लक्ष्मीं हिम - गिरि - तनयामीश्वरीमीश्वराणाम्,
ह्रीं-मन्त्राराध्य-देवीं श्रुति-शत-शिखरैः मृग्यमानां मृगाक्षीम् ।
ह्रीं-मन्त्रान्तैस्त्रि-कूटैः स्थिर-तर-मतिभिर्धार्यमाणां ज्वलन्तीम्,
ह्रीं ह्रीं ह्रींमित्यजस्रं हृदय - सरसिजे भावयेऽहम् भवानीम् ।।११।।
सर्वेषां ध्यान-मात्रात् सवितुरुदरगा चोदयन्ती मनीषाम्,
सावित्री तत्-पदार्था शशि-युत-मुकुटा पञ्च-शीर्षा त्रि-नेत्रा।
हस्ताग्रैः शङ्ख-चक्राद्यखिल- जन - परित्राण - दक्षायुधानाम्,
बिभ्राणा वृन्दमम्बा विशदयतु मतिं मामकीनां महेशी ।।१२।।
कर्त्री लोकस्य लीला-विलसित - विधिना कारयित्री क्रियाणाम्,
भर्त्री स्वानु-प्रवेशाद् वियदनिल-मुखैः पञ्च-भूतैः स्व-सृष्टैः ।
हर्त्री स्वेनैव धाम्ना पुनरपि विलये काल - रूपं दधाना,
हन्यादामूलमस्मत् - कलुष - भरमुमा भुक्ति - मुक्ति - प्रदात्री ।।१३।।
लक्ष्या या पुण्य-जालैर्गुरु-वर - चरणाम्भोज - सेवा-विशेषात्,
दृश्या स्वान्ते सुधीभिर्दर - दलित - महा - पद्म-कोशेन तुल्ये।

लक्षं जप्त्वाऽपि यस्या मनु-वरमणिमा-सिद्धिमन्तो महान्तः सा,
नित्यं मामकीने हृदय - सरसिजे वासमङ्गी - करोतु ।।१४।।
ह्रीं श्रीमैं-मन्त्र-रूपा हरि-हर-विनुताऽगस्त्य-पत्नी - प्रदिष्टा,
हादिः काद्यर्ण-तत्त्वा सुर-पति-वरदा काम-राज-प्रदिष्टा ।
दुष्टानां दानवानां मद-भर-हरणा दुःख- हन्त्री बुधानाम् ,
साम्राज्ञी चक्र - राज्ञी प्र - दिशतु कुशलं मह्यमोङ्कार - रूपा ।।१५।।
श्रीं-मन्त्रार्थ-स्वरूपाश्रित-जन-दुरित-ध्वान्त-हन्त्री शरण्या,
श्रौत-स्मार्त-क्रियाणामविकलं फलदा काल-नेत्रस्य दाराः ।
श्रीचक्रान्तर्निषणा गुह-वर-जननी दुष्ट-हन्त्री वरेण्या,
श्रीमत् - सिंहासनेशीं प्र - दिशतु विपुलां कीर्तिमानन्द - रूपा ।। १६।।
।। श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरी वेद-सार-स्तवः ।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी वेद-सार-स्तवः (हिन्दी-रूपान्तर)

कस्तूरी के लेप से उज्ज्वल जिनके गले में निर्मल बड़े-बड़े **मोतियों का हार** कम्पायमान है; **चाँदनी** के शुभ्र प्रकाश-जैसी भासमाना जो **बाल-चन्द्र** से युक्त मुकुट से विभूषिता हैं; **साहित्य-रूपी कमल** की भ्रमरी, **कवि-जनों** द्वारा वन्दिता, **श्वेत वस्त्र**-धारिणी, कर-कमलों से **वीणा** बजाती हुई वे **ब्रह्म-पत्नी सरस्वती देवी** मुझे **सतो-गुण से परिपूर्ण वागैश्वर्य** प्रदान करें ।।१।।

जितेन्द्रिय और भूख-प्यास से रहित **योगियों** द्वारा एकान्त में आनन्द-पूर्वक ध्यान किए जाने से जो उनके चित्त के अन्दर **ज्योति-रेखा**-सी दिखाई देती हैं; संसार के दुःख दूर करने के लिए जिन **हंस-स्वरूपा देवी** का ध्यान साधकों द्वारा किया जाता है, वे **नाद-स्वरूपा त्रिलोक-माता** सदैव मुझे **आनन्द** प्रदान करें ।।२।।

तीनों लोकों की सृष्टि के समय उन पर कृपा-दृष्टि रखनेवाली जो **आदि-शक्ति** तत्काल ही उनमें प्रवेश कर सारे जगत् को अपने गुणों के ऐश्वर्य से व्याप्त कर उनका पालन

करती हैं और संहार के समय आत्म-प्रकाश से उद्-भासिता जो **आदि-शक्ति** समस्त दृश्यमान जगत् को अपने में लीन कर लेती हैं, वे देवी संसार में डालनेवाले मेरे **कर्म-बन्धनों** का नाश कर दें ।।३।।

देवताओं द्वारा **स्वर्ण - गिरि** के शिखर पर **तत्त्वात्मक सीढ़ियों** सहित निर्मित और **गुप्त योगिनियों** से युक्त **नौ पुरियों** से विशोभित **चक्रराज** में जिन्हें देखा जा सकता है, **मस्त हाथियों** की जैसी चालवाली वे **राज- राजेश्वरी** कुल-भार से झुकी हुई अपनी **सुन्दरी मन्त्रिणियों** के सहित मुझे **दीर्घायु** प्रदान करें ।।४।।

'**ह्रीं**'-रूपी कमल की भ्रमरी, **हय-ग्रीव** द्वारा वन्दिता, **आदि-अन्त** से रहिता, '**हंसोऽहं**'- मन्त्र की अधिष्ठात्री, **विष्णु** को वर देनेवाली, **हादि**-मन्त्रार्थ-स्वरूपा, बहुत से **असुरों का नाश** करनेवाली, **शङ्कर** की प्रिया, हाथों में **चिन्मुद्रा** और **पाश** धारण करनेवाली **भगवती ललिता** मेरे **महान् दुःखों** को शान्त करें ।।५।।

कमल के समान शोभावाले हाथ में **सुन्दर कमल** से सुशोभिता, **समुद्र**-तनया, **सुन्दर हाथियों** से वन्दिता, सदैव **प्रफुल्लित कमल** में निवासिनी, **कमल-नयना**, **स्वर्ण**-जैसी कान्तिवाली, **विष्णु-पत्नी**, **जगन्माता लक्ष्मी** जो सम्पत्तियों की विभूति हैं, वे मुझ पर निरन्तर अपनी **दया-दृष्टि** डाल कर मेरे **दारिद्र्य-दुःख** को शान्त करें ।।६।।

सच्चिद्-ब्रह्म-स्वरूपा, **समस्त गुणों से सम्पन्ना, निर्गुणा, निर्विकारा**, राग-द्वेष को नष्ट करनेवाली, **सूर्य-चन्द्र**-रूपी नेत्रोंवाली, **राज्यैश्वर्य** देने में निपुणा, **चवालिस त्रिकोणों** से युक्त **चक्र-राज** में सुशोभिता, **अभीष्ट कामनाओं** की पूर्ति करने में कुशला **भगवती कामाक्षी** का मैं अपने **चित्त में ध्यान** करता हूँ ।।७।।

भगवान् शङ्कर की नेत्र-ज्योति से **कामदेव** के गर्व के चूर्ण होने पर, **देवों** और **कामदेव** की पत्नी **रति** द्वारा सशङ्कित और अश्रु-पूर्ण हो करुणा-सहित प्रार्थना करने पर जिन **देवी** ने अपनी दृष्टि डालकर **कामदेव** को तुरन्त ही पुनः जीवित कर दिया, वे **चित्-प्रकाशा भगवती ललिता** सदैव मेरे **रोगों** को शान्त करें ।।८।।

कर्म-काण्डी लोग श्रुतियों द्वारा निर्दिष्ट देवोपयोगी **हवनीय पदार्थों** और **पितरोपयोगी तर्पणीय द्रव्यों** से; पत्ते मात्र खाकर रहनेवाले निष्पाप **योगि-जन** ध्यानादि अष्ट-योगों से और **विधियों के जाननेवाले** विविध-रूपा जिनका आश्रय प्रति-दिन पृथ्वी पर लेते रहते हैं, वे **आदि-माता** अनेक जन्मों से उत्पन्न मेरे **मोह-रूपी अँधेरे** का नाश करें ।।९।।

गुरुदेव की दया मात्र से **मूल त्रिकोणात्मक काम-पीठ** पर जो दिखाई देती हैं; जिनकी **कुण्डलिनी** द्वारा सारा संसार विविध प्रकार से विस्तृत होता है और जिनकी **शक्ति** के

स्फुरण से **योगि-जन** निरन्तर **अमृत-पान** करते हैं; प्राणियों को जीवन देनेवाली, **प्रणव-पद-मयी**, उन **नाद-स्वरूपा भगवती** की मैं **वन्दना** करता हूँ ।।१०।।

हीङ्कार-रूपी सागर की **लक्ष्मी**-स्वरूपा, **हिमालय-पुत्री**, **ईश्वरों की स्वामिनी**, **ह्रीं-मन्त्र द्वारा आराध्या देवी**, सैकड़ों श्रेष्ठ **श्रुतियों** द्वारा अन्वेषिता, मृग-नयनी, स्थिर-बुद्धि साधकों द्वारा अन्त में **'ह्रीं'**-मन्त्रवाले **तीन कूटों** से ध्यान की जानेवाली, **तेजस्विनी भवानी** का **चिन्तन** मैं अपने **हृदय-कमल** में निरन्तर **'ह्रीं ह्रीं ह्रीं'** का जप करते हुए करता हूँ ।।११।।

ध्यान करने मात्र से **सूर्य**-मध्यस्था, **चन्द्र**-युक्त मुकुटवाली, **पञ्च-मुखी**, **त्रिनेत्रा भगवती सावित्री** सभी मनीषियों को उद्‍बोधित करनेवाली हैं। अपने कर-कमलों में समस्त जनों की रक्षा करने में सक्षम, **शङ्ख, चक्रादि अस्त्रों** को धारण करनेवाली **माता महेशी** मेरी **मति** को विकसित करें।।१२।।

ब्रह्मा द्वारा क्रियाओं को कराती हुई **संसार-लीला** करनेवाली, अपने द्वारा उत्पन्न आकाश, वायु आदि **पञ्च-महा-भूतों** द्वारा प्रवेश कर सारे **विश्व का पालन** करनेवाली और संहार के समय **काल**-रूप धारण कर पुनः अपने तेज से उस सबका हरण करनेवाली, **भोग-मोक्ष-दायिनी उमा** मेरे **पाप-समूह** का समूल नाश करें ।।१३।।

गुरु-देव के चरण-कमलों की विशेष सेवा करने से प्राप्त पुण्यों द्वारा जो दिखाई देती हैं; अपने पापों का शमन कर लेने पर सुधी साधक जिन्हें अपने **अन्तःकरण** में देख पाते हैं; जिनके **श्रेष्ठ मन्त्र** का जप कर महान् साधक **अणिमा-सिद्धि** प्राप्त करते हैं; वे **भगवती** मेरे **हृदय-कमल** में नित्य निवास करना स्वीकार करें ।।१४।।

'ह्रीं श्रीं ऐं'- मन्त्र-स्वरूपा, **विष्णु** और **शिव** द्वारा वन्दिता, **अगस्त्य** की पत्नी **लोपामुद्रा** द्वारा उपदिष्टा, **हादि** और **कादि** तत्त्व-स्वरूपा, **इन्द्र** को वर देनेवाली, **कामराज** द्वारा उपदिष्टा, **दुष्ट दानवों** का गर्व चूर करनेवाली, **सज्जनों** का दुःख दूर करनेवाली, **ॐकार**-स्वरूपा, **चक्र-राज्ञी साम्राज्ञी** मेरा **कल्याण** करें ।।१५।।

'श्रीं'-मन्त्र के अर्थ-स्वरूपवाली, **शरणागत भक्तों** के **पाप-समूह** को नष्ट करनेवाली, **शरण-दायिनी**, श्रुति और **स्मृति** द्वारा निर्दिष्ट कर्मों का यथोक्त फल देनेवाली, **श्रीशिव की पत्नी**, **श्रीचक्र के मध्य में विराजमाना, कार्तिकेय की माता, दुष्टों का नाश करनेवाली, श्रेष्ठा, आनन्द-स्वरूपा, श्रीमत्-सिंहासन की ईश्वरी** मुझे **पुष्कल यश** प्रदान करें ।।१६।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

कल्याण-वृष्टि-स्तवः

कल्याण-वृष्टिभिरिवामृत-पूरिताभिर्लक्ष्मीः स्वयं-वरण-मङ्गल-दीपिकाभिः ।
सेवाभिरम्ब! तव पाद-सरोज-मूले, नाकारि किं मनसि भाग्य-वतां जनानाम् ।।१।।
एतावदेव जननि! स्पृहणीयमास्ते, त्वद्-वन्दनेषु सलिल-स्थगिते च नेत्रे ।
सान्निध्यमुद्यदरुणायुत-सोदरस्य, त्वद्-विग्रहस्य परया सुधयाऽऽप्लुतस्य ।।२।।
ईशत्व-नाम-कलुषाः कति नाम सन्ति, ब्रह्मादयः प्रति-भवं प्रलयाभि-भूताः ।
एकः स एव जगति स्थिर-सिद्धिरास्ते, यः पादयोस्तव सकृत् प्रणतिं करोति ।।३।।
लब्ध्वा सकृत् त्रिपुर-सुन्दरि! तावकीनं, कारुण्य-कन्दलित-कान्ति-भरं कटाक्षम् ।
कन्दर्प-कोटि-सुभगास्त्वयि भक्ति-भाजः, सम्मोहयन्ति तरुणीर्भुवन-त्रयेऽपि ।।४।।
ह्रीङ्कारमेव तव नाम गृणन्ति वेदा, मातस्त्रिकोण-निलये, त्रिपुरे, त्रिनेत्रे !
त्वत्-संस्मृतौ यम-भटादि-भयं विहाय, दीव्यन्ति नन्दन-वने सह लोक-पालैः ।।५।।
हन्तुः पुरामधि-गलं परि-पीयमानः, क्रूरः कथं न भविता गरलस्य वेगः।
नाश्वासनाय यदि मातरिदं तवार्धं, देहस्य शश्वदमृतालुप्त-शीतलस्य ।।६।।
सर्वज्ञतां सदसि वाक्-पटुतां प्रसूते, देवि! त्वदंघ्रि-सरसीरुहयोः प्रणामः ।
किं च स्फुरन्मुकुटमुज्ज्वलमात-पत्रं, द्वे चामरे च महतीं वसुधां ददाति ।।७।।
कल्प-द्रुमैरभिमत - प्रतिपादनेषु, कारुण्य - वारिधिभिरम्ब! भवत् - कटाक्षैः ।
आलोकय त्रिपुर-सुन्दरि! मामनाथं, त्वय्येव भक्ति-भरित त्वयि बद्ध-तृष्णम् ।।८।।
हन्तेतरेष्वपि मनांसि विधाय चान्ये, भक्तिं वहन्ति किल पामर-दैवतेषु ।
त्वामेव देवि! मनसा समनु-स्मरामि, त्वामेव नौमि शरणं जननि! त्वमेव ।।९।।
लक्ष्येषु सत्स्वपि कटाक्ष-निरीक्षणानामालोकय त्रिपुर-सुन्दरि! मां कदाचित् ।
नूनं मया तु सदृशः करुणैक - पात्रं, जातो जनिष्यति जनो न च जायते वा ।।१०।।
ह्रीं ह्रीमिति प्रति-दिनं जपतां तवाख्यां, किं नाम दुर्लभमिह त्रिपुराधि-वासे !
माला-किरीट-मद-वारण-माननीयां, तां सेवते वसु-मती स्वयमेव लक्ष्मीः ।।११।।
सम्पत्कराणि सकलेन्द्रिय-नन्दनानि, साम्राज्य-दान-निरतानि सरोरुहाक्षि !
त्वंद्-वन्दनानि दुरिताहरणोद्यतानि, मामेव मातरनिशं कलयन्तु नान्यम् ।।१२।।
कल्पोप- संहृतिषु कल्पित - ताण्डवस्य, देवस्य खण्ड-परशोः पर - भैरवस्य।
पाशांकुशैक्षव - शरासन - पुष्प - बाणा, सा साक्षिणी विजयते तव मूर्तिरेका ।।१३।।

लग्नं सदा भवतु मातरिदं तवार्धं, तेजः परं बहुल - कुंकुम - पङ्क - शोणम् ।
भास्वत् - किरीटममृतांशु - कलावतंसं, मध्ये त्रिकोण - निलयं परमामृतार्द्रम् ।।१४।।
ह्रीङ्कारमेव तव नाम तदेव रूपं, त्वन्नाम दुर्लभमिह त्रिपुरे! गृणन्ति ।
तत् तेजसा परिणतं वियदादिभूतं, सौख्यं तनोति सरसीरुह-सम्भवादेः ।।१५।।

।। फल-श्रुति ।।

ह्रीङ्कार- त्रय - सम्पुटेन महता मन्त्रेण सन्दीपितम् ।
स्तोत्रं यः प्रति-वासरं तव पुरो मातर्जपेन्मन्त्र-वित् ।।
तस्य क्षोणि-भुजो भवन्ति वशगा लक्ष्मीश्चिर-स्थायिनी ।
वाणी निर्मल-सूक्ति-भार-भरिता जागर्ति दीर्घं वयः ।।

।। श्रीमच्छङ्कर-भगवदाचार्य-कृतिषु कल्याण-वृष्टि-स्तवः ।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

कल्याण-वृष्टि-स्तव (हिन्दी-रूपान्तर)

हे माँ! आपके चरण-कमलों में भक्ति-युक्त लोग जो सेवाएँ करते हैं, उन सेवाओं द्वारा उनके मन में **सभी कामनाओं की पूर्ति** हो जाती है क्योंकि **धूप-दीप-नैवेद्यादि पूजा** स्वयं **लक्ष्मी** की कृपा से सम्पन्न होती है और उससे **कल्याण की वर्षा**-सी होती है और **अमृतत्त्व से युक्त मङ्गल** की प्राप्ति होती है ।।१।।

हे जननि! केवल इतना ही वाञ्छनीय है कि आपकी **वन्दना** द्वारा नेत्र आँसुओं से बन्द हो जाएँ। तभी **उदय-कालीन सूर्य** जैसे बड़े-बड़े नेत्रवाले आपके **अमृत-मय स्वरूप** का सामीप्य लाभ होता है ।।२।।

प्रभुत्व की भावना से दूषित कोई नहीं बचता। **ब्रह्मा** आदि सभी हर युग में लय को प्राप्त हो जाते हैं। **हे जननि!** केवल एक वही स्थिर-सिद्धिवाला रहता है, जो एक बार भी आपके **चरणों में नमन** करता है ।।३।।

हे त्रिपुर-सुन्दरि! आपकी **दया-पूर्ण प्रभा-मयी दृष्टि** को एक बार भी पानेवाले **भक्त कामदेव**-जैसे सुन्दर बनकर तीनों लोकों की युवतियों को आकृष्ट कर लेते हैं ।।४।।

हे त्रिकोण-वासिनि मातः! वेद आपके नाम **'ह्रीं'** का ही उच्चारण करते हैं । उसे भले प्रकार ग्रहण करनेवाले **यम-दूतों** को दूर हटाकर **देवों के नन्दन-वन** में **लोक-पालों** के साथ शोभायमान होते हैं ।।५।।

हे मातः! यदि **भगवान् शङ्कर** के अर्ध-भाग में आपका अमृत-मय शीतल स्वरूप आश्वासन देता हुआ स्थित न होता, तो पुरा-काल में उनके गले तक उतरा विष क्यों न घातक होता ? अर्थात् आपके ही प्रभाव से **नील-कण्ठ** होकर ही **शिव** रह गए, **विष का मारक प्रभाव** नहीं हो पाया ।।६।।

हे देवि! आपके **दोनों चरण-कमलों में प्रणाम** करने से **सर्वज्ञता** और **सभा में बोलने की सक्षमता** प्राप्त होती है । यही नहीं, **दो चँवरों** द्वारा आपके मुकुट की उज्ज्वलता को फैलाने से **विशाल भू-सम्पत्ति** मिलती है ।।७।।

हे त्रिपुर-सुन्दरि! मैं अनाथ आपकी ही भक्ति से पूर्ण हूँ, आप ही पर दृष्टि लगाए हूँ । आप अपनी **कृपा-दृष्टि** द्वारा दया-पूर्वक देखकर **कल्प-वृक्ष** के समान **सभी कामनाओं की पूर्ति** करते हुए मुझे कृतार्थ करें ।।८।।

अन्य लोग अन्य देवताओं को मन में रखकर **भक्ति** का निर्वाह करते हैं, किन्तु **हे देवि!** मैं मन से तुम्हीं को **स्मरण** करता हूँ, तुम्हीं को **नमन** करता हूँ और **हे जननि!** तुम्हीं मेरी **आश्रय** हो ।।९।।

हे त्रिपुर-सुन्दरि! तुम्हारी **दया-दृष्टि** की ओर देखनेवाले लाखों हैं, किन्तु मेरा जैसा दयनीय व्यक्ति न हुआ है, न होगा, अतः किसी प्रकार मुझे कृतार्थ करें ।।१०।।

हे त्रिपुर-वासिनि! जो तुम्हारे नाम **'ह्रीं ह्रीं'** को प्रति क्षण जपता रहता है, उसे इस संसार में कुछ भी दुर्लभ नहीं रहता । वह बड़े-से-बड़े लोगों के गर्व को मिटा देता है और स्वयं **वैभव-शालिनी लक्ष्मी** उसकी सेवा करती हैं ।।११।।

हे कमल-नयने! आपके नेत्र **सम्पत्ति देनेवाले, सभी इन्द्रियों को आनन्दित करनेवाले, राज्यैश्वर्य देने में समर्थ** और **पाप-समूह के विनाशक** हैं । **हे मातः!** वे मुझे सदा कृतार्थ करें ।।१२।।

सृष्टि के संहार के लिए उद्यत **परम भैरव** द्वारा किए जानेवाले **ताण्डव नृत्य** को प्रत्यक्ष देखनेवाला आपका स्वरूप **पाश, अंकुश, इक्षु-धनुष** और **पुष्प-वाणों** से युक्त अद्वितीय है। उसकी जय हो ।।१३।।

हे मातः! परमामृत से आर्द्र और **चन्द्र-कला** से युक्त चमकीले मुकुटवाला आपका यह परम तेजस्वी स्वरूप **त्रिकोणावास के मध्य में लाल कुंकुम से शोभायमान** हो ।।१४।।

हे त्रिपुरे! 'ह्रीं' ही आपका **नाम** है, वही आपका **स्वरूप** है। इस संसार में आपका **नाम** दुर्लभ कहा गया है। आपके ही तेज से **आकाशादि महा-भूत-लक्ष्मी** आदि का सुख प्रदान करते हैं ।।१५।।

।। फल-श्रुति ।।

महा-मन्त्र तीन 'ह्रीं' से सम्पुटित इस **स्तोत्र का पाठ** जो **प्रति-दिन** आपके समीप करता है, **शासक** उसके वश में रहते हैं, **लक्ष्मी** उसके पास सदा रहती हैं, उसकी **वाणी** विशुद्ध सुन्दर उक्तियों से विभूषिता होती है और वह **दीर्घायु** प्राप्त करता है।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिता-पञ्च-रत्न

जय वर चाप, सु-पाश सु-अंकुश, पञ्चक-बाण-करैर्लसिते!।
जय जग-वन्दिनि!, दुष्ट-निकन्दिनि!, आनन्द-कन्दिनि मृदु हसिते!।।
जय शिव-सङ्ग-विहारिणि!, हारिणि दुर्गति!, वारुणि-पान-रते!।
जय ललिते!, जय भण्ड-विखण्डिनि!, श्रीपुर-वासिनि!, देव-नुते!।।

★★★

जय त्रिपुरे!, त्रिपुरारि प्रिये!, त्रिगुणात्मक-रूपिणि त्राण-करे!।
जय त्रि-चरित्र-निवासिनि देवि!, त्रि-कूट-शरीरिणि त्रास-हरे!।।
जय त्रय-काल-त्रिकोण-मयि!, त्रय-ताप-निवारिणि त्र्यक्ष-युते!।
जय ललिते!, जय भण्ड-विखण्डिनि!, श्रीपुर-वासिनि!, देव-नुते!।।

★★★

जय गिरिजे!, गिरि-वंश-ध्वजे!, गिरि-विन्ध्य-निवासिनि, गर्ग-नुते!।।
जय गण-राज-गुहेश्वरि!, गङ्गे!, गङ्गा-धर-गुण-गान-रते!।।
जय गुरु-मण्डल-रूपिणि!, गौतम-गुह्यक-तोषिणि गुप्त-मने!।।
जय ललिते!, जय भण्ड-विखण्डिनि!, श्रीपुर-वासिनि!, देव-नुते!।।

★★★

जय जग-तारिणि!, जन-सुख-कारिणि!, कल्मष-हारिणि, मोद-भरे!।
जय असि-शूल-गदा-सुम-धारिणि!, भक्त-मनो-मन्दिर-विहरे!।।
जय त्रि-विलोचनि!, शोच-विमोचनि!, जय शिव-सङ्ग-सुकेलि-रते!।
जय ललिते!, जय भण्ड-विखण्डिनि!, श्रीपुर-वासिनि!, देव-नुते!।।

★★★

भगवति दुर्ग-विदारिणि!, दुर्गे!, दुर्गति-हारिणि!, दुःख-हरे!।
जय मधु-कैटभ-महिषोन्मूलिनि!, धूम्र-विलोचन-नाश-करे!।।
जय जय शुम्भ-निशुम्भ-विनाशिनि!, रक्त-विमर्द्दिनि!, शूल-धृते!।।
जय ललिते!, जय भण्ड-विखण्डिनि!, श्रीपुर-वासिनि!, देव-नुते!।।

–फौजदार श्रीबलवीरसिंह जी यादव 'वीर', दतिया

श्रीत्रिपुरोपनिषत्

ॐ वाङ् मे मनसि प्रतिष्ठिता, मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावीर्म एधि वेदस्य म आणीस्थः, श्रुतं मे म प्रहासीरनेनाहोऽधीतेनाहोरात्रान्त्संदधामि । ऋतं वदिष्यामि । सत्यं वदिष्यामि । तन्मामवतु । तद्-वक्तारमवतु । अवतु माम् । अवतु वक्तारम् ।।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

ॐ तिस्त्रः पुरस्त्रि-पथा विश्व-चर्षणी । अत्राकथा अक्षराः सन्निविष्टाः ।
अधिष्ठायैनामजरा पुराणी । महत्तरा महिमा देवतानाम् ।। १ ।।
नव - योनीर्नव - चक्राणि दीधिरे । नवैव योगा नव-योगिन्यश्च ।
नवानां चक्रे अधि - नाथाः स्योना । नव-मुद्रा नव-भद्रा महीनाम् ।। २ ।।
एका सा आसीत् प्रथमा सा । नवासीदासोन - विंशदासोन - त्रिंशत् ।
चत्वारिंशदथ तिस्त्रः समिधा । उशतीरिव मातरो माऽऽविशन्तु ।। ३ ।।
ऊर्ध्व-ज्वलज्ज्वलन-ज्योतिरग्रे । तमो वै तिरश्चीनमजरं तद्-रजोऽभूत् ।
आनन्दनं मोदनं ज्योतिरिन्दोरेता उ वै मण्डला मण्डयन्ति ।। ४ ।।
तिस्त्रश्च रेखाः सदनानि भूमेस्त्रि - विष्टपास्त्रि-गुणास्त्रि-प्रकाशाः ।
एतत् पुरं पूरकं पूरकाणामत्र प्रथेते मदनो मदन्या ।। ५ ।।
मदन्तिका मानिनी मङ्गला च । सुभगा च सा सुन्दरी शुद्ध - मत्ता ।
लज्जा मतिस्तुष्टिरिष्टा च पुष्टा लक्ष्मीरुमा ललिता लालपन्ती ।। ६ ।।
इमां विज्ञाय सुधया मदन्ति । परिस्त्रुता तर्पयन्तः स्व-पीठम् ।
नाकस्य पृष्ठे महतो वसन्ति । परं धाम त्रैपुरं चाविशन्ति ।। ७ ।।
कामो योनिः कमला वज्र - पाणिर्गुहा हसा मातरिश्वाऽभ्रमिन्द्रः ।
पुनर्गुहा सकला मायया च । पुरूच्येषा विश्व - माताऽऽदि - विद्या ।। ८ ।।
षष्ठं सप्तममथ वह्नि - सारथिमस्या । मूल - त्रिकमावेशयन्तः ।
कथ्यं कविं कल्पकं काममीशं । तुष्टुवांसो अमृतत्त्वं भजन्ते ।। ९ ।।
त्रि-विष्टपं त्रि-मुखं विश्व-मातुर्नव-रेखाः स्वर-मध्यं तदीले ।
वृहत्-तिथीर्दश-पञ्चादि-नित्या । सा षोडशी पुर-मध्यं विभर्त्ति ।। १० ।।
द्वा मण्डला द्वा स्तना बिम्बमेकं । मुखं चाधस्त्रीणि गुहा सदनानि ।
कामीं कलां काम्य-रूपां विदित्वा । नरो जायते काम-रूपश्च काम्यः ।। ११ ।।
परिस्त्रुतं झषमाद्यं पलं च । भक्तानि योनीः सु-परिष्कृतानि ।
निवेदयन् देवतायै महत्यै । स्वात्मीकृत्य सुकृती सिद्धिमेति ।। १२ ।।
सृण्येव सितया विश्व-चर्षणिः । पाशेन प्रति - बध्नात्यभीकान् ।
इषुभिः पञ्चभिर्धनुषा च विध्यत्यादि-शक्तिररुणा विश्व-जन्या ।। १३ ।।

भगः शक्तिर्भगवान् काम ईशः उभा दाताराविह सौभगानाम् ।
सम-प्रधानौ सम-सत्त्वौ समोजौ तयोः शक्तिरजरा विश्व-योनिः ।। १४।।
परिस्रुता हविषा भावितेन प्र - सङ्कोचे गलिते वै मनस्कः ।
शर्वः सर्वस्य जगतो विधाता धर्ता हर्ता विश्व-रूपत्वमेति ।। १५।।
इयं महोपनिषत् त्रिपुरायाः यामक्षयं परमे गीर्भिरीट्टे ।
एषर्ग् - यजुः परमेतच्च सामेवायमथर्वेयमन्या च विद्या ॐ।।१६।।

।। ॐ ह्रीं ॐ ह्रीमिति त्रिपुरोपनिषत् ।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्री त्रिपुरोपनिषत् (हिन्दी-रूपान्तर)

वाणी मेरे मन में प्रतिष्ठित है। मेरा **मन-वाणी** में प्रतिष्ठित है। **वेद** का तत्त्व इन
दोनों में स्थित है। मैंने **श्रुति** का जो अध्ययन किया है, उसे मैं अहर्निश मनन करता हूँ। मैं **ऋत**
बोलूँगा, **सत्य** बोलूँगा। वह मेरी रक्षा करें, वह वक्ता की रक्षा करें।

तीन पुरों की जो **अधीश्वरी** हैं, जिसके **तीन पन्थ** हैं (**मुक्ति** ५ प्रकार की मानी गई
हैं- **१ सालोक्य, २ सामीप्य, ३ सारूप्य ४ सायुज्य** और **५ कैवल्य**। इनमें से **सालोक्य**
का एक मार्ग है और **कैवल्य** का एक। शेष तीन-**सामीप्य, सारूप्य** और **सायुज्य** का एक
मार्ग है। इस प्रकार कुल मिलाकर **तीन मार्ग** हुए। **सालोक्य का मार्ग** है-अपने आश्रमोक्त
कर्मों का **ऊर्ध्व-रेता** रहते हुए अनुष्ठान; मध्यम तीनों का मार्ग है-**प्रतीकोपासना, स्व-स्वाभिमान
से उपासना** तथा **अहं-ग्रहोपासना। कैवल्य का मार्ग** है-**ब्रह्म-ज्ञान** अथवा **निर्गुणोपासना**),
विश्व जिसकी **प्रजा** है, जो **अकारादि** १६, **ककारादि** १६ तथा **थकारादि** १६ अक्षर - रूपों
में सन्निविष्ट है (यहाँ **'अ'** से आरम्भ करके **'अः'** तक १६ रूप हए, फिर **'क'** से आरम्भ
करके **'त'** तक १६ रूप हुए, फिर **'थ'** से आरम्भ करके **'स'** तक १६ रूप हुए। **'अकथा'**
शब्द का यही अभिप्राय है। **'ह'** कार को इस गणना में इसलिए छोड़ दिया जाता है क्योंकि
वह **विमर्श-स्वरूप** है। शेष वर्ण संयुक्ताकार होने से उनकी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है)। जो **जरा-
रहित** है, जो **जन्म - रहित** है, इसी (**त्रि-विन्दु-रूप त्रिपुरा**) का **देवताओं की महत्तरा महिमा**
अधिष्ठान करती है, अर्थात् **ब्रह्मादि देवताओं की महिमा** का अधिष्ठान यही **त्रिपुरा** है।।१।।

वह **नौ योनियों** को, **नौ चक्रों** को, **नौ योगों** को, **नौ योगिनियों** को प्रकाशित करती है। वह
'स्योना' (सुख-हेतु) **नौ चक्र-भूमियों, नौ मुद्राओं** और **नौ भद्राओं** की अधीश्वरी है।।२।।

वह सब **संसार की कारण-भूता** एक ही थी। फिर **विन्दु-चक्र-रूप नव-योन्यात्मक**
थी। फिर **१९ प्रकार** की (**नव-योनियों** और **बहिर्दशार** के मेल से) हुई। फिर इन सबको

मिलाकर **उन्तीस प्रकार** की हुई। फिर वही देवी **४३ प्रकार** की हुई। वह कामना करती हुई **माता** की भाँति मेरे शरीर में प्रवेश करें।।३।।

पहले **स्थिति-चक्रोत्तर चक्रों** में **तमो-गुणात्मक अग्नि**-नामक **ज्योतिर्मण्डल** हुआ। (**'ऊर्ध्व-ज्वलत्'** विशेषण उसके अग्नि के ज्वाला-रूप को स्पष्ट करने के लिए दिया गया है।) उसके पश्चात् तिर्य्यक् रूप से फैलनेवाला **सूर्य-ज्योतिर्मण्डल** (रक्त-वर्ण होने के कारण) **रजो-गुण**-प्रधान हुआ। वह **अजर** था। उसके पश्चात् वैषयिक सुखोत्पादक **चन्द्र-ज्योतिर्मण्डल** हुआ। ये तीनों मण्डल (**अग्नि-मण्डल, सूर्य-मण्डल** और **चन्द्र-मण्डल**) **माता** को विभूषित करते हैं अर्थात् उसकी शोभा बढ़ाते हैं।।४।।

(इस ऋचा में **नवें भू-गृहात्मक चक्र** का उपदेश किया गया है।) **भूमि के सदन** की **तीन रेखाएँ** हैं। वे ही **त्रिभुवन - रूपा** हैं। वे **त्रिगुण - रूपा** हैं । **१ अग्नि, २ सूर्य, ३ चन्द्र**-इन तीन वृत्तों के प्रकाश से प्रकाशित हैं। यह **स-परिवार पर-देवता का निवास-स्थान चक्र-भक्तों के मनोरथों का पूरक** है। यह **शिव, विष्णु** आदि के मनोरथों का भी पूरक है। इस **श्री-चक्र** में **कामेश्वर शिव** (मदनः) और **शिव-काम-सुन्दरी** (मदन्या) अपनी किरण-रूपी **अणिमादि**-द्वारा **अनादि**-रूप का विस्तार करती हुई विलास कर रही हैं।।५।।

वह **देवी** पृथक् - पृथक् क्षेत्रों में **मदन्तिका, मानिनी, मङ्गला, सुभगा, सुन्दरी, शुद्ध - मत्ता, लज्जा, मति, तुष्टि, इष्टा, पुष्टा, लक्ष्मी, उमा, ललिता** और **लालपन्ती** नामों से अभिहित हैं। (**पद्म -पुराण** में **देवी - तीर्थों** की गणना करते हुए क्षेत्र - विशेष के आधार पर, **देवी** के कुछ नाम गिनाए हैं। यथा-**प्रयाग** में **ललिता देवी**, **लङ्का** में **मङ्गला**, **त्रिकूट** में **भद्र-सुन्दरी**, **करवीर**-देश में **महा-लक्ष्मी**, **विनायक**-देश में **देवी**, **देव-दास**-वन में **पुष्टि**, **काश्मीर** में **मेधा**, **वत्सेश्वर** में **तुष्टि** इत्यादि)।।६।।

पूर्वोक्त **पर-देवता** की विधि विशेष-पूर्वक जानकर, **दीक्षादि**-पूर्वक उपासना स्वीकार करके, **अपने शरीर से अभिन्न श्रीचक्र** में पीयूषी-कृत परिस्रुत द्रव से तृप्त करते हुए, जो भक्त **इन्द्रियों के विषयों को निर्विकल्प-रूप से भोगते** हैं, वे **महदाकाश** पृष्ठ पर स्थित **त्रिपुरा के धाम में निवास** करते हैं।।७।।

काम **(क)**, योनि **(ए)**, काम-कला **(ई)**, वज्र-पाणि **(ल)**, गुहा **(ह्रीं)**, हस **(ह, स)**, मातरिश्वा **(क)**, अभ्र **(ह)**, इन्द्र **(ल)**, पुनर्गुहा **(ह्रीं)**, सकला **(स, क, ल)**, मायया (ह्रीं)-यह **विश्व-माता पुरूची आदि-विद्या** है।।८।।

इस विद्या के **प्रथम तीन अक्षर** निकाल कर उनके स्थान पर छठा **(ह)**, सातवाँ **(स)** और 'वह्नि-सारथि' **(क)** रखकर जप करनेवाले **मोक्ष** के भागी होते हैं। वह **पर-शिव-**

कामना करनेवाला **काम**, विश्व-कल्पना का अधिष्ठान **(कल्पक)**, वेद-प्रणेता **(कवि)** और वेदों-द्वारा ज्ञातव्य **(कथ्य)** है।।९।।

नव रेखाओंवाले संहार-चक्र में **'अः'** स्वर का स्थान मध्य में है। इस **त्रि-मुख चक्र** को **त्रिपुर-सुन्दरी का निवास-स्थान** समझ कर मैं उसकी स्तुति करता हूँ। वह **त्रिपुर-सुन्दरी** पन्द्रह तिथियों के पति **(सूर्य)** की भाँति **श्री-चक्र** के मध्य में **निसर्ग-स्वर** के स्थान पर आसीन है।।१०।।

दो मण्डल, दो स्तन, एक बिम्ब-मुख, तीन भू-गृह (गुहा-सदन अर्थात् भू-पुर), **कामेश्वरात्मक मन्मथ-कला-युक्त कमनीय-स्वरूपा का ध्यान** करता हुआ मनुष्य **काम-देव** के समान सुन्दर हो जाता है।।११।।

मद्य, मांस, मत्स्य और ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि विविध जातियों की दृष्टादृष्ट संस्कारों द्वारा परिष्कृत योनियाँ **महा-देवी की सेवा** में निवेदित करके और उसके बाद स्वयं भी सेवन करके भक्त **सिद्धि** को प्राप्त कर लेता है।।१२।।

जो **'अभीक'** हैं अर्थात् इस मार्ग में **लोभ-बुद्धि** से अथवा **भोग-बुद्धि** से प्रवेश करते हैं, उनको प्राणि-मात्र का शुभाशुभ जाननेवाली वह **विश्व-जननी** आदि-शक्ति **तीक्ष्ण श्वेत पाश** से बाँधकर **धनुष** और **पाँच बाणों** से बेधती है।।१३।।

१ ऐश्वर्य, २ धर्म, ३ यश, ४ श्री, ५ ज्ञान और **६ विज्ञान**-इन छहों गुणों के आधार **कामेश्वर** तथा **देवी शक्ति** दोनों इस लोक में **धर्मार्थ-काम**-रूपी विविध फलों के देने वाले हैं; अर्थात् उस **देवी की उपासना** चाहे **स्त्री** - रूप में की जाए या **पुरुष** - रूप में की जाए, दोनों का फल एक जैसा होता है। दोनों - **कामेश्वर** और **कामेश्वरी** - समान रूप से प्रधान हैं क्योंकि **कामेश्वरी** का ध्यान करने में वह **शिव** के अङ्क में आश्रित होने के कारण उसका आधार **शिव** प्रधान हुए और **शक्ति - हीन** स्वयं कुछ करने में असमर्थ होने से **शक्ति** प्रधान हुई। दोनों समान सामर्थ्यवाले हैं। फिर भी इन दोनों समानों में **शक्ति-जरा-रहित** है और **संसार को उत्पन्न करनेवाली** है, अतः वह प्रधान हुई।।१४।।

मन्त्र-संस्कार द्वारा संस्कृत, हवि और मद्य के सेवन द्वारा **मन से सङ्कोच** के दूर हो जाने पर वह उपासक **विश्व-रूपत्व** को प्राप्त हो जाता है। वही **विधाता (ब्रह्मा), धर्त्ता (विष्णु)** और **हर्त्ता (शिव)**-सब कुछ हो जाता है।।१५।।

यह **महोपनिषत्** उस **त्रिपुरा** का है, जिसकी स्तुति **अखण्ड ब्रह्म** भी **अकार, उकार, मकार** द्वारा किया करता है। यह **उपनिषद्-ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम-वेद, अथर्व-वेद** तथा **अष्टादश विद्याओं** का सार-भूत है।।१६।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललितोपनिषत्

ॐ परम-कारण-भूता शक्तिः केन नव-चक्र-रूपो देहः। नव-चक्र-शक्ति-मयं श्री-चक्रं। पुरुषार्थाः सागराः। देहो नव-रत्ने द्वीपः। आधार-नवक-मुद्राः शक्तयः। त्वगादि-सप्त-धातुभिरनेकैः संयुक्ताः सङ्कल्पाः कल्प-तरवः। तेजः कल्पकोद्यानम्।

रसनया भासमाना मधुराम्ल-तिक्त-कटु-कषाय-लवण-रसाः षड्रसाः। क्रिया-शक्ति पीठं, कुण्डलिनी ज्ञान-शक्तिः, अहम् इच्छा-शक्तिः। महा-त्रिपुर-सुन्दरी ज्ञाता, होता, ज्ञानमर्घ्यं, ज्ञेयं हविः, ज्ञातृ-ज्ञान-ज्ञेया। नमो भेद-भावनं श्री-चक्र-पूजनम्।

नियति-सहित-शृङ्गारादयो नव-रसाः। अणिमादयः काम-क्रोध-लोभ-मोह-मद-मात्सर्य-पुण्य-पाप-मया ब्राह्मयादयोऽष्ट-शक्तयः। आधार-नवक-मुद्रा शक्तयः। पृथ्व्यप्-तेजो-वाय्वाकाश-श्रोत्र-त्वक्-चक्षुर्जिह्वा-घ्राण-वाक्-पाणि-पाद-पायूपस्थ मनश्च विकाराः षोडश-शक्तयः। वचनादान-गमन-विसर्गानन्दादानोपादानोपेक्षा - बुद्धयोऽनङ्ग-कुसुमादि-शक्तयोऽष्टौ। अलम्बुषा-कुहू-विश्वोदरी-वरुणा-हस्ति-जिह्वा- यशस्विनी-गान्धारी-पूषा-सरस्वती-इडा-पिङ्गला-सुषुम्ना चेति चतुर्दश-नाड्यः सर्व-संक्षोभिण्यादि चतुर्दशार-देवताः।

प्राणापान-व्यानोदान-समान-नाग-कूर्म-कृकल-देवदत्त-धनञ्जया दश-वायवः सर्व-सिद्धि - प्रदादि बहिर्दशार - देवताः। एतद् - वायु - दशक - संसर्गोपाधि - भेदेन रेचक - पूरक - पोषक - दाहकाल्पावकामृतमिति प्राण - सख्यत्वेन पञ्च-विधोऽस्ति। जठराग्निर्मनुष्याणां मोहको भक्ष्य-भोज्य-लेह्य-चोष्यात्मकं चतुर्विधमन्नं पाचयति। तदा काश-वान् सकलाः सर्वज्ञत्वाद्यन्तर्दशार-देवताः।

शीतोष्ण - सुख - दुःखेच्छा सत्त्व - रजस्तमो - गुणादि वशिन्यादि - शक्तयोऽष्टौ। शब्द - स्पर्श - रूप - रस - गन्धाः पञ्च-तन्मात्राः पञ्च - पुष्प - बाणाः, मनेक्षु-धनुर्वल्यो वाणो, रागः पाशो, द्वेषो अंकुशोऽव्यक्त - महत् - तत्त्वाहङ्कार कामेश्वरी - वज्रेश्वरी-भग-मालिन्योऽन्तस्त्रिकोणाग्र -देवताः।

पञ्च - दश - तिथि - रूपेण कालस्य परिणामावलोकन पञ्च - दश - नित्या शुद्धानुरुपाधि - देवता निरुपाधि - सार्व - देव कामेश्वरी सदाऽऽनन्द - पूर्णाः स्वात्म्यैक्य-रूप-ललिता कामेश्वरी सदाऽऽनन्द-घन-पूर्णा स्वात्मैक्य-रूपा देवता ललितामिति।

साहित्य-करणं सत्त्वं कर्त्तव्यमकर्त्तव्यमिति भावना-मुक्ता उपचारा। अहं त्वमस्ति नास्ति कर्त्तव्याकर्त्तव्यमुपासितव्यानु - पासितव्यमिति विकल्पना। मनो-विलापनं होमः।

बाह्याभ्यन्तर - करणानां रूप - ग्रहण - योग्यतास्तीत्यावाहनं । तस्य बाह्याभ्यन्तर-करणानामेक-रूप-विषय-ग्रहणमासनं। रक्त-शुक्ल-पदैकी-करणं पाद्यं। उज्ज्वलदामोदाऽऽनन्दा सानन्दनमर्घ्यं। स्वछास्वतः शक्तिरित्याचमनं। चिच्चन्द्र-मयी स्मरणं स्नानं। चिदग्नि-स्वरूप परमानन्द-शक्ति-स्मरणं वस्त्रं। प्रत्येकं सप्त-विंशतिधा भिन्नत्वेन इच्छा - क्रियात्मक-ब्रह्म-ग्रन्थि-मयी स-तन्तु ब्रह्म-नाडी ब्रह्म-सूत्रं सव्यातिरिक्त-वस्त्रं। सङ्ग-रहितं स्मरणं विभूषणम्। स्वच्छन्द-परिपूर्ण-स्मरणं गन्धः। समस्त-विषयाणां मनःस्थैर्येणानु - सन्धानं कुसुमं। तेषामेव सर्वदा स्वीकरणं धूपः। पवनाच्छिन्नोर्ध्व- ज्वाला-सच्चिदाह्लादाकाश-देहो दीपः। समस्त-यातायात-वर्जनं नैवेद्यं। अवस्था-त्रयैकीकरणं ताम्बूलं। मूलाधारादाब्रह्म-रन्ध्र-पर्यन्तं ब्रह्मरन्ध्रादामूलाधार-पर्यन्तं गतागत - रूपेण प्रादक्षिण्यं। तुरीयावस्थानं संस्कार - देह - शून्यं प्रमादितावति - मज्जनं बलि - हरणं। सत्त्वमस्ति कर्त्तव्यमकर्त्तव्यमौदासीन्यमात्म - विलापनं होमः। भावना-विषयाणामभेद-भावना तर्पणं। स्वयं तत्-पादुका-निमज्जनं परिपूर्ण-ध्यानम्।

एवं मूर्ति-त्रयं भावनया युक्तो मुक्तो भवति। तस्य देवतात्मैक्य-सिद्धिः चितिकार्याण्यप्रयत्नेन सिध्यन्ति स एव शिव-योगीति कथ्यते।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्री ललितोपनिषत् (हिन्दी-रूपान्तर)

परम-कारण-भूता शक्ति द्वारा मानव शरीर-**नौ चक्र-रूपात्मक** बना है। **'श्री-चक्र'** इन्हीं **नौ चक्रों** की शक्ति से परि-पूर्ण है। **पुरुषार्थ** ही **सागर**-स्वरूप है और उसमें **शरीर-नौ रत्नों में स्थित द्वीप** के समान है। **मूलाधार** की **नौ मुद्राएँ** ही **शक्तियाँ हैं**। **त्वचा** आदि **सात धातुओं** से युक्त अनेक **सङ्कल्प** ही **कल्प-वृक्ष** हैं। **तेज-सुन्दर उपवन** है।

जिह्वा के द्वारा अनुभूत होनेवाले मधुर, अम्ल, तिक्त, कटु, कषाय और लवणात्मक स्वाद ही **छः रस** हैं। **क्रिया-शक्ति-पीठ** है, **ज्ञान-शक्ति-कुण्डलिनी** है और **इच्छा-शक्ति-**

अहङ्कार है। **ज्ञाता** और **होता-महा-त्रिपुर-सुन्दरी** हैं; **ज्ञान-अर्घ्य** है और **ज्ञेय** ही **हवनीय प्रदार्थ** है। **नमन-पूर्वक भेद-भावना** ही **श्रीचक्र का पूजन** है।

शृङ्गार आदि नौ रस हैं; **अणिमा** आदि, **काम-क्रोध-लोभ-मोह-मद-मात्सर्य-पुण्य** और **पाप** तथा **ब्राह्मी** आदि **आठ शक्तियाँ** हैं; **मूलाधार** की **नौ मुद्राएँ** शक्तियाँ हैं। **पृथ्वी, जल, तेज, वायु** और **आकाश; श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा** और **घ्राण, वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ** और **मन के विकार-सोलह शक्तियाँ** हैं। **वचन, आदान, गमन, विसर्ग, आनन्द, आदान-उपादान, उपेक्षा** और **बुद्धि** ही **अनङ्ग-कुसुमादि आठ शक्तियाँ** हैं। **अलम्बुषा, कुहू, विश्वोदरी, वरुणा, हस्ति-जिह्वा, यशस्विनी, गान्धारी, पूषा, सरस्वती, इड़ा, पिङ्गला** और **सुषुम्ना** ये **नाड़ियाँ सर्व-संक्षोभिणी** आदि **चतुर्दशार की देवता** हैं।

प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और **धनञ्जय**-ये १० वायु **सर्व-सिद्धि-प्रदा** आदि **बहिर्दशार की देवता** हैं। इन्हीं १० वायुओं के सम्पर्क से उपाधि-भेद द्वारा **रेचक, पूरक, पोषक, दाहक** और **अल्पावकामृत** नाम से **प्राण** पाँच प्रकार का होता है। मनुष्यों की **जठराग्नि, भक्ष्य, भोज्य, लेह्य** और **चोष्य**-इन चार प्रकार के अन्नों का पाचन करती है। तभी **सर्वज्ञत्व** आदि **अन्तर्दशार के सभी देवता** प्रकाशमान होते हैं।

शीत, उष्ण, सुख, दुःख, इच्छा, सत्त्व, रज, तमो-गुण ही **वशिनी** आदि **८ शक्तियाँ** हैं। **शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध**-ये **५ तन्मात्राएँ- ५ पुष्प-वाण** हैं, **मन-ईख का धनुष** है, **वृत्तियाँ-बाण** हैं, **राग** (आसक्ति)-**पाश** है और **द्वेष-अंकुश** है। **अव्यक्त, महत्-तत्त्व** और **अहङ्कार** मध्यस्थ **त्रिकोण** की **कामेश्वरी, वज्रेश्वरी** और **भग-मालिनी देवता** हैं।

१५ तिथियों के द्वारा काल के परिणाम को देखनेवाली **१५ नित्याएँ** शुद्ध-स्वरूपा अधि-देवता हैं। उपाधि-रहिता **सर्व-देव-मयी कामेश्वरी** सदा आनन्द-पूर्णा हैं। साधक की अपनी आत्मा में मिली हुई स्थितिवाली **परिपूर्ण आनन्द-स्वरूपा ललिता कामेश्वरी** इष्ट-देवता हैं।

सहित करना-सामञ्जस्य करना ही **सत्त्व** है। **कर्तव्य** या **अकर्तव्य** इस भावना से मुक्त होना ही **उपचार** है। **'मैं'- 'तुम'** है, **कर्तव्य** या **अकर्तव्य** नहीं है, **उपासित** और **न उपासित**-यह **विकल्पना** है। **मन को विलय करना** ही **होम** है।

बाहरी और **भीतरी इन्द्रियों** की रूप - ग्रहण करने की योग्यता ही **आवाहन** है। साधक की **बाहरी** और **भीतरी इन्द्रियों** द्वारा **एक रूप-एक विषय का ग्रहण** करना ही

आसन है । **रक्त** और **शुक्ल**-इन दोनों पदों को एक करना **पाद्य** है । **उज्ज्वल आनन्द** से आनन्दित करना **अर्घ्य** है । **शक्ति की स्वच्छता-आचमन** है । **चिच्चन्द्र-मयी का स्मरण-स्नान** है । **चिदग्नि-स्वरूपा परमानन्द-शक्ति का स्मरण-वस्त्र** है । **इच्छा-क्रियात्मक ब्रह्म-ग्रन्थि-मयी ब्रह्म-नाड़ी- ब्रह्म-सूत्र** है । वही २७ प्रकार से भिन्न होकर **अतिरिक्त वस्त्र** है। **सङ्ग-रहित स्मरण** ही **आभूषण** है। **स्वच्छन्द परिपूर्ण स्मरण-**गन्ध है । **मन की स्थिरता द्वारा सभी विषयों का अनुसन्धान** करना-**पुष्प** है । **उन विषयों को सदा स्वीकार** करना-**धूप** है । पवन द्वारा उठी हुई **सच्चिदानन्द की ज्योति** ही **दीपक** है । सारे **आवागमन का त्याग-नैवेद्य** है । **तीनों अवस्थाओं को एक करना-ताम्बूल** है । **मूलाधार** से **ब्रह्म-रन्ध्र** तक और **ब्रह्म-रन्ध्र** से **मूलाधार** तक आना-जाना ही **प्रदक्षिणा** है । **तुरीय स्थिति** को प्राप्त **संस्कार-देह** से रहित होकर **परमानन्द** में डूबना **बलि** देना है । **कर्तव्य-अकर्तव्य की उदासीनता** से **आत्म-लय** कर मात्र **सत्त्व** ही है, यह भावना करना **होम** है । भावना के विषयों में **अभेद का विचार** रखना ही **तर्पण** है । अपने को **श्रीपादुका** में मग्न करना ही **पूर्ण ध्यान** है ।

इस प्रकार **तीनों स्वरूपों की भावना** से युक्त होनेवाला मुक्त हो जाता है । उसे **देवता** और **आत्मा** के ऐक्य की सिद्धि बिना प्रयास के ही प्राप्त हो जाती है और वह **शिव-योगी** कहलाता है ।

भगवती ललिता की स्तुति

पदाब्जों में तेरे भगवति! करूँ एक विनती,
अपर्णे! हो पूर्ण द्रुत वह दया से तव शिवे!
बसे तेरी मूर्ती मम हृदय में मन्त्र मुख में,
चरितों की गाथा सतत प्रविशे कर्ण-पुट में।।
तू ही काली तारा गल ललिता हारा जलधिजा,
शुभाङ्गी मातङ्गी अपिच भुवना षोडशि! शिवे!
कहावे तू धूमा जननि! बगला भैरव-प्रिया,
तू ही छिन्न-ग्रीवा सकल सुर 'योगीन्द्र' विनुते।।

-'कुल-मार्तण्ड' पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति शास्त्री

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

सिद्धि-यामलोक्त श्रीत्रिपुर-सुन्दरी स्तोत्रम्

श्वेत-पद्मासनारूढां, शुद्ध-स्फटिक-सन्निभाम्।
वन्दे वाग्-देवतां ध्यात्वा, देवीं त्रिपुर-सुन्दरीम् ।।१।।
शैलाधि - राज - तनयां, शङ्कर - प्रिय - वल्लभाम्।
तरुणेन्दु-निभां वन्दे, देवीं त्रिपुर-सुन्दरीम् ।।२।।
सर्व-भूत-मनोरम्यां, सर्व-भूतेषु संस्थिताम्।
सर्व-सम्पत्करीं वन्दे, देवीं त्रिपुर-सुन्दरीम् ।।३।।
पद्मालयां पद्म-हस्तां, पद्म-सम्भव-सेविताम्।
पद्म-राग-निभां वन्दे, देवीं त्रिपुर-सुन्दरीम् ।।४।।
पञ्च-वाण-धनुर्बाण-पाशांकुश-धरां शुभाम्।
पञ्च-ब्रह्म-मयीं वन्दे, देवीं त्रिपुर-सुन्दरीम् ।।५।।

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी देवी का ध्यान करके **श्वेत पद्म** (कमल) के आसन पर विराजमान **शुद्ध स्फटिक-मणि** के समान प्रभावाली **वाग्-देवता** की वन्दना करता हूँ ।।१।। **शैलाधिराज** (पर्वत-राज हिमालय) की पुत्री और **श्रीशङ्कर जी** की प्रिय वल्लभा, जो **तरुण चन्द्रमा** के समान प्रभावान् हैं, उन **देवी त्रिपुर-सुन्दरी** की मैं वन्दना करता हूँ ।।२।। जो सभी भूतों (**मानव, दिव्य, अचेतन** आदि समस्त जीव-धारी) के लिए **अत्यन्त मनोरम** (मन को हरनेवाली, सुन्दर, सुघड़) हैं, जो समस्त भूतों में निवास करती हैं; जो **सभी प्रकार की सम्पत्ति** (भौतिक और आध्यात्मिक) करनेवाली (देनेवाली) हैं, उन **देवी त्रिपुर-सुन्दरी** की वन्दना करता हूँ ।।३।। जिनका आलय (घर) **पद्म** है, जो हाथों में **कमल** धारण करती हैं, जो **पद्म-सम्भव (ब्रह्माजी)** से सेवित हैं (पूजी जाती हैं), उन **पद्म-राग मणि** (लाल-माणिक्य) के समान वर्णवाली **देवी त्रिपुर-सुन्दरी** की वन्दना करता हूँ ।।४।। **पञ्च-वाण** (१ द्रावण, २ क्षोभण, ३ वशीकरण, ४ आकर्षण, ५ सम्मोहन), **धनुष, वाण, पाश** और **अंकुश** धारण करनेवाली, कान्ति-मयी, **पञ्च-ब्रह्म-मयी** (१ ब्रह्मा, २ विष्णु, ३ रुद्र, ४ ईश्वर और ५ सदा-शिव-मयी) **देवी त्रिपुर-सुन्दरी** की वन्दना करता हूँ। ।५।।

षट् - पुण्डरीक - निलयां, षडानन - सुपूजिताम्।
षट् - कोणान्तः - स्थितां वन्दे, देवीं त्रिपुर - सुन्दरीम्।।६।।
हरार्ध - भाग - निलयामम्बामद्रि - सुतां मृडाम्।
हरि - प्रियाऽनुजां वन्दे, देवीं त्रिपुर - सुन्दरीम्।।७।।
अष्टैश्वर्य - प्रदामम्बामष्ट - दिक् - पाल - सेविताम्।
अष्ट - मूर्ति - मयीं वन्दे, देवीं त्रिपुर - सुन्दरीम्।।८।।
नव - माणिक्य - मुकुटां, नव - नाथ - सुपूजिताम्।
नव - यौवन - शोभाढ्यां, वन्दे त्रिपुर - सुन्दरीम्।।९।।

काञ्ची-वास-मनोरम्यां, काञ्ची-दाम-विभूषिताम्।
काञ्ची-पुरीश्वरीं वन्दे, देवीं त्रिपुर-सुन्दरीम् ।।१०।।

षट्-पुण्डरीक (छः दलों का कमल अर्थात् **स्वाधिष्ठान** अथवा षट्-कमल अर्थात् **षट्-चक्र** यथा–१ मूलाधार, २ स्वाधिष्ठान, ३ मणिपूर, ४ अनाहत, ५ विशुद्ध और ६ आज्ञा-चक्र) में निवास करनेवाली, **षडानन** (कुमार कार्तिकेय) से पूजित और षट्-कोण के अन्तस् (भीतर) में स्थित **देवी त्रिपुर-सुन्दरी** की वन्दना करता हूँ।।६।। **हर** (शिव) के आधे भाग में निवास करनेवाली **मृडानी** (पार्वती), जो **अद्रिसुता** (पर्वत-राज की पुत्री) हैं, **हरि-प्रिया** (लक्ष्मी) की अनुजा हैं, उन **जगदम्बा देवी त्रिपुर-सुन्दरी** की वन्दना करता हूँ।।७।। **आठ प्रकार के ऐश्वर्य** प्रदान करनेवाली **अम्बिका**, जिनकी सेवा **आठों दिक्-पाल** (१ इन्द्र, २ अग्नि, ३ यम, ४ निऋति, ५ वरुण, ६ वायु, ७ कुबेर तथा ८ ईशान) करते हैं, जो **अष्ट-मूर्ति-मयी** (१ शैली, २ दारु - मयी, ३ लोही, ४ लेप्या, ५ लेख्या, ६ सैकती अर्थात् रेत से निर्मित, ७ मनो-मयी और ८ मणि-मयी) हैं, उन **देवी त्रिपुर-सुन्दरी** की वन्दना करता हूँ।।८।। **नवीन (उज्ज्वल) माणिक्य-रत्नों से बना मुकुट** धारण करनेवाली, **नव - नाथों** (१ प्रकाशानन्द-नाथ, २ विमर्शानन्द-नाथ, ३ आनन्दानन्द-नाथ, ४ ज्ञानानन्द-नाथ, ५ सत्यानन्द-नाथ, ६ पूर्णानन्द-नाथ, ७ स्वभावानन्द-नाथ, ८ प्रतिभानन्द-नाथ, और ९ सुभगानन्द-नाथ) के द्वारा भली प्रकार से पूजी गई, नव-यौवन से शोभिता **श्री-त्रिपुर-सुन्दरी** की वन्दना करता हूँ।।९।। जिन्हें **काञ्ची-पुरी** में रहना अत्यन्त प्रिय है, जो **सुन्दर पुष्पों से निर्मित करधनी** से विभूषिता हैं अर्थात् धारण किए हैं और जो **काञ्ची-पुरी** की ईश्वरी(स्वामिनी) हैं, उन **देवी त्रिपुर-सुन्दरी** की वन्दना करता हूँ ।।१०।।

।। फल-श्रुति ।।

इति ते कथितं देवि!, सुन्दरी-प्रीति-दायकं। महा-निशा-काले पाठ-मात्रेण सिद्धिर्भवति।।१।।
एकादश-सहस्राणि, संख्या चास्य पुरस्क्रिया। ततः काम्यार्थे प्रयोगान्, साधयेत् साधकोत्तमः।।२।।
मारणं मोहनं वश्यं, स्तम्भनोच्चाटनादिकं। पाठ-मात्रेण सिद्ध्यन्ति, सत्यं सत्यं न संशयः।।३।।
निष्कामो यः पठेन्नित्यं, पञ्च-तत्त्व-समन्वितम्। धर्मार्थ-काम-मोक्षं च, लभते नात्र संशय।।
इह-लोके सुखं भुक्त्वा, चान्ते देवी-लोके वसेत् ।।४।।

।। सिद्धि-यामले श्रीत्रिपुर-सुन्दरी-स्तोत्रम् ।।

हे देवि, यह **त्रिपुर - सुन्दरी** की प्रीति (कृपा) देनेवाला स्तोत्र तुमसे कहा है। **महा-निशा-काल** में इसके पाठ-मात्र से सिद्धि मिलती है।।१।। **ग्यारह हजार** इसके पुरश्चरण की संख्या है अर्थात् **ग्यारह हजार पाठ** से इसका पुरश्चरण होता है, तब उत्तम साधक **काम्य प्रयोग** करे।।२।। **मारण, मोहन, वशीकरण, स्तम्भन, उच्चाटन** आदि केवल इसके पाठ-मात्र से सिद्ध हो जाते हैं। यह सत्य है, सत्य है, इसमें संशय नहीं ।।३।। जो **निष्काम** (केवल देवता की प्रीति चाहनेवाला) होकर **पञ्च- तत्त्वों** (१ मद्य, २ मांस, ३ मत्स्य, ४ मुद्रा और ५ मैथुन) सहित नित्य पाठ करता है, वह **धर्म, अर्थ, काम** और **मोक्ष** को पाता है, इसमें संशय नहीं। इस लोक में सुखों को भोगकर वह अन्त में **देवी-लोक** में निवास करता है।।१४।।

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी सान्निध्य-स्तवः

क
कल्प-भानु समान-भास्वर-धाम-लोचन- गोचरम्,
किं किमित्यति-विस्मिते मयि पश्यतीह समागताम् ।
काल-कुन्तल-भार-निर्जित-नील-मेघ-कुलां पुरः,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ।। १।।

ए
एक - दन्त - षडाननादिभिरावृतां जगदीश्वरीम्,
एनसां परि-पन्थिनीमहमेक-भक्ति-मदर्चिताम् ।
एक-हीन-शतेषु जन्मसु सञ्चितात् सुकृतादिमाम्,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ।। २।।

ई
ईदृशीति च वेद - कुन्तल-वाग्भिरप्य निरूपिताम्,
ईश -पङ्कज-नाभ-सृष्टि-कृदादि-वन्द्य - पदाम्बुजाम्।
ईक्षणान्त - निरीक्षणेन मदिष्टदां पुरतोऽधुना,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ।। ३।।

ल
लक्षणोज्ज्वल - हार-शोभि-पयोधर-द्वय-कैतवात्,
लीलयैव दया - रस-स्त्रवदुज्ज्वलत् - कलशान्विताम्।
लाक्षयाङ्कित - पादपाति - मिलिन्द - सन्ततिमग्रतः,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ।। ४।।

ह्रीं
ह्रीमिति प्रति - वासरं जप - सुस्थिरोऽहमुदारया,
योगि - मार्ग - निरूढयैक्य-सुभावनां गतया धिया ।
वत्स! हर्षमवाप्त - वत्यहमित्युदार - गिरं पुरः,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ।। ५।।

ह
हंस - वृन्दमलक्तकारुण - पाद -पङ्कज - नूपुर—
क्वाण - मोहितमादरादनु - धावितं मृदु श्रृण्वतीम्।
हंस - मन्त्र-महार्थ-तत्त्व-मयीं पुरो मम भाग्यतः,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ।। ६।।

स
सङ्गतं जलमभ्र-वृन्द-समुद्भवं धरणी - धराद्,
धारया वहदञ्जसा भ्रममाप्य सैकत - निर्गतम्।
एवमादि - महेन्द्र-जाल-सुकोविदां पुरतोऽधुना,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ।। ७।।

क
कम्बु-सुन्दर-कन्धरां कच-वृन्द-निर्जित-वारिदाम्,
कण्ठ-देश-लसत्-सुमङ्गल-हेम-सूत्र - विराजिताम्।
कादि - मन्त्रमुपासतां सकलेष्टदां मम सन्निधौ,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। ८।।

ह हस्त-पद्म-लसत्-त्रिखण्ड-सुमुद्रिकामहमद्रिजाम्,
हस्ति-कृत्ति-परीत-कार्मुक-वल्लरी-सम-चिल्लिकाम् ।
हर्यज-स्तुत-वैभवां भव-कामिनीं मम भाग्यतः,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। ९।।

ल लक्षणोल्लसदङ्ग-कान्ति-झरी-निराकृत-विद्युतम्,
लास्य-लोल-सुवर्ण-कुण्डल-मण्डितां जगदम्बिकाम् ।
लीलयाऽखिल-सृष्टि-पालन-कर्षणादि-वितन्वतीम्,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। १०।।

ह्रीं ह्रींमिति त्रिपुरा-मनु-स्थिर-चेतसा बहुधाऽर्चिताम्,
हादि - मन्त्र-महाम्बु-जात-विराजमान-सुहंसिकाम् ।
हेम-कुम्भ-घन-स्तनां चल-लोल-मौक्तिक-भूषणाम्,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। ११।।

स सर्व-लोक - नमस्कृतां जित-शर्वरी-रमणाननाम्,
शर्व-देव-मनः-प्रियां नव-यौवनोन्मद-गर्विताम् ।
सर्व-मङ्गल-विग्रहां मम पूर्व-जन्म-तपो-बलात्,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। १२।।

क कन्द-मूल-फलाशिभिर्बहु - योगिभिश्च गवेषिताम्,
कुन्द - सुन्दर-दन्त-पंक्ति - विराजितामपराजिताम्।
कन्दमागम-वीरुधां सुर-सुन्दरीभिरिहागताम्,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। १३।।

ल ल-त्रयाङ्कित-मन्त्र-राट्-समलंकृतां जगदम्बिकाम्,
लोल-नील-सुकुन्तलावलि-निर्जितालि-कदम्बकाम् ।
लोभ-मोह-विदारणीं करुणा-मयीमरुणां शिवाम्,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। १४।।

ह्रीं ह्रीं - पराख्य - महा - मनोरधि-देवतां भुवनेश्वरीम्,
हृत्-सरोज-निवासिनीं हर-वल्लभां बहु-रूपिणीम् ।
हार-कुण्डल - नूपुरादिभिरन्वितां पुरतोऽधुना,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। १५।।

श्रीं श्रीं सु-पञ्च-दशाक्षरीमपि षोडशाक्षर-रूपिणीम्,
श्री-सुधार्णव-मध्य-शोभि-सरोज-कानन-चन्द्रिकाम् ।
श्रीगुह-स्तुत-वैभवां पर-देवतां मम सन्निधौ,
चक्र - राज - निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमहमाश्रये ।। १६।।

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी विजय-स्तवः

क

कल्पान्तोदित-चण्ड-भानु-विलसद्-देह-प्रभा-मण्डिता,
कालाम्भोद-समान-कुन्तल-भरा कारुण्य-वरां निधिः ।
काद्यर्णाङ्कित-मन्त्र-राज-विलसत्-कूट-त्रयोपासिता,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। १।।

ए

एतत्-प्राभव-शालिनीति निगमैरद्याप्यनालोचिता,
हेमाम्भोज-मुखी चलत्-कुवलय-प्रस्पर्धमानेक्षणा ।
एणाङ्कांश-समान-फाल-फलक-प्रोल्लासि-कस्तूरिका,
श्रीचक्राधि - निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। २।।

ई

ईषत्-फुल्ल-कदम्ब-कुण्डला महा-लावण्य-गर्वापहा,
स्निग्ध-स्वच्छ-सुदन्त-कान्ति-विलसन्मन्द-स्मिताऽलंकृता ।
ईशित्वाद्यखिलेष्ट-सिद्धि-फलदा भक्त्या नतानां सदा,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। ३।।

ल

लक्ष्यालक्ष्यावलग्न-देश-विलसद्-रोमावली-वल्लरी,
वृत्त-स्निग्ध-फल-द्वय-भ्रम-करोत्तुङ्ग-स्तनी सुन्दरी ।
रक्ताशोक-शुभ-प्रपाटल-दुकूलाच्छादिताङ्गी मुदा,
श्रीचक्राधि - निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। ४।।

ह्रीं

ह्रीङ्कारी सुर-वाहिनी जल-गभीरावर्तनाभिर्घन—
श्रोणी-मण्डल-भार-मन्द गमना-काञ्ची-कलापोज्ज्वला ।
शुण्डादण्ड-सुवर्ण-वर्ण-कदली-काण्डोपमोरु-द्वयी,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। ५।।

ह

हस्त-प्रोज्ज्वलदिक्षु-कार्मुक-लसत्-पुष्पेषु-पाशांकुशा,
ह्याद्यर्णाङ्कित - मन्त्र - राज-निलया हारादिभिर्भूषिता ।
हस्त-प्रान्त-रणत्-सुवर्ण-वलया हर्यक्ष-सम्पूजिता,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। ६।।

स

संरक्ताम्बुज - पाद - युग्म - विलसन्मञ्जु-क्वणन्नूपुरा,
संसारार्णव - तारणैक - तरणिर्लावण्य - वारां निधिः ।
लीला-लोल-तमं शुकं मधुरया संलालयन्ती गिरा,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। ७।।

क

कल्याणी करुणा-सार्द्र-हृदया कल्याण-सन्दायिनी,
काद्यर्णाङ्कित-मन्त्र-लक्षित-तनुस्तन्वी तमो-नाशिनी ।
कामेशाङ्क-विलासिनी कल-गिरामावास-भूमिः शिवा,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। ८।।

ह

हन्तुं दानव-पुङ्गवं रण-भुवि प्रोच्चण्ड-भण्डाभिधम्,
हर्यक्षाद्यमरार्थिता भगवती दिव्यां तनूमाश्रिता ।
श्रीमाता ललितेत्यचिन्त्य-विभवैर्नाम्नां सहस्रैः स्तुता,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। ९।।

ल

लक्ष्मीर्वाग-गजादिभिर्बहु-विधैः रूपैः स्तुताऽपि स्वयम्,
नी-रूपा गुण-वर्जिता त्रि-जगतां माता च चिद्-रूपिणी ।
भक्तानुग्रह - कारणेन ललितं रूपं समासादिता,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। १०।।

ह्रीं

ह्रीङ्कारैक - परायणार्त - जनता संरक्षणे दीक्षिता,
हार्दसं तमसं व्यपोहित-मलं भूष्णुर्हर - प्रेयसी ।
हत्यादि-प्रकटाघ-सङ्घ -दलने दक्षा च दाक्षायणी,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। ११।।

स

सर्वानन्द - मयी समस्त - जगतामानन्द - सन्दायिनी,
सर्वोत्तुङ्ग-सुवर्ण-शैल-निलया सा सार-साक्षी सती ।
सर्वैर्योगि - चयैः सदैव विचिता साम्राज्य-दान-क्षमा,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। १२।।

क

कन्या-रूप-धरा गलाब्ज-विलसन्मुक्ता-लताऽलंकृता,
कादि - क्षान्तमनु - प्रविष्ट-हृदया कल्याण-शीलान्विता ।
कल्पान्तोद्भट-ताण्डव-प्रमुदिता श्रीकाम-जित्-साक्षिणी,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। १३।।

ल

लक्ष्या भक्ति-रसार्द्र-हृत्-सरसिजे सद्भिः सदाऽऽराधिता,
सान्द्रानन्द-मयी सुधाकर-कला-खण्डोज्ज्वलन्मौलिका ।
शर्वाणी शरणागताऽऽर्ति-शमिनी सच्चिन्मयी सर्वदा,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। १४।।

ह्रीं

ह्रीङ्कार-त्रय-सम्पुटाऽऽति-महता मन्त्रेण सम्पूजिता,
होत्री चन्द्र-समीरणाऽग्नि-जल-भू-भास्वन्नभो-रूपिणी ।
हंसः सोहमिति प्रकृष्ट - धिषणैराराधिता योगिभिः,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। १५।।

श्रीं

श्रीङ्काराम्बुज - हंसिकाऽऽश्रित-जन-क्षेमङ्करी शङ्करी,
शृङ्गारैक - रसाकरस्य मदनस्योज्जीविका - वल्लरी ।
श्रीकामेशरहः-सखी च ललिता श्रीमद्-गुहाऽऽराधिता,
श्रीचक्राधि-निवासिनी विजयते श्रीराज-राजेश्वरी ।। १६।।

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी चक्र-राज-स्तोत्रम्

क

कर्तुं देवि! जगद्-विलास-विधिना सृष्टेन ते मायया,
सर्वानन्द-मयेन मध्य-विलसच्छ्री-विन्दुनाऽलंकृतम् ।
श्रीमद्-सद्-गुरु-पूज्य-पाद-करुणा-संवेद्य-तत्त्वात्मकम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। १।।

ए

एकस्मिन्नणिमादिभिर्विलसितं भूमी-गृहे सिद्धिभिः,
वाह्याद्याभिरुपाश्रितं च दशभिर्मुद्राभिरुद्भासितम् ।
चक्रेश्या प्रकटेड्या त्रिपुरया त्रैलोक्य-सम्मोहनम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। २।।

ई

ईड्याभिर्नव-विद्रुम -च्छवि-समाभिख्याभिरङ्गी-कृतम्,
कामाकर्षिणी कादिभिः स्वर-दले गुप्ताभिधाभिः सदा।
सर्वाशा-परि-पूरके परि-लसद्-देव्या पुरेश्या युतम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। ३।।

ल

लब्ध-प्रोज्ज्वल-यौवनाभिरभितोऽनङ्ग-प्रसूनादिभिः,
सेव्यं गुप्त-तराभिरष्ट-कमले संक्षोभकाख्ये सदा ।
चक्रेश्या पुर-सुन्दरीति जगति प्रख्यातयासङ्गतम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। ४।।

ह्रीं

ह्रीङ्काराङ्कित-मन्त्र-राज-निलयं श्रीसर्व-संक्षोभिणी,
मुख्याभिश्चल-कुन्तलाभिरुषितं मन्वस्र-चक्रे शुभे ।
यत्र श्री-पुर-वासिनी विजयते श्री-सर्व-सौभाग्यदे,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। ५।।

ह

हस्ते पाश-गदादि-शस्त्र-निचयं दीप्तं वहन्तीभिः,
उत्तीर्णाख्याभिरुपास्य पाति शुभदे सर्वार्थ-सिद्धि-प्रदे ।
चक्रे बाह्य-दशारके विलसितं देव्या पूर-श्र्याख्यया,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। ६।।

स

सर्वज्ञादिभिरिन्दु-कान्ति-धवला कालाभिरारक्षिते,
चक्रेऽन्तर्दश-कोणकेऽति-विमले नाम्ना च रक्षा-करे ।
यत्र श्रीत्रिपुर-मालिनी विजयते नित्यं निगर्भा स्तुता,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। ७।।

क

कर्तुं मूकमनर्गल-स्रवदति-द्राक्षादि-वाग्-वैभवम्,
दक्षाभिर्वशिनी-मुखाभिरभितो वाग्-देवताभिर्युताम् ।
अष्टारे पुर-सिद्धया विलसितं रोग-प्रणाशे शुभे,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। ८।।

ह हन्तुं दानव-सङ्घमाहव भुवि स्वेच्छा समाकल्पितैः,
शस्त्रैरस्त्र-चयैश्च चाप-निवहैरत्युग्र-तेजो-भरैः ।
आर्त-त्राण-परायणैररि-कुल-प्रध्वंसिभिः संवृतम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। ९।।

ल लक्ष्मी-वाग-गजादिभिः कर-लसत्-पाशासि-घण्टादिभिः,
कामेश्यादिभिरावृतं शुभ-करं श्री-सर्व-सिद्धि-प्रदम् ।
चक्रेशी च पुराम्बिका विजयते यत्र त्रिकोणे मुदा,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। १०।।

ह्रीं ह्रीङ्कारं परमं जपद्भिरनिशं मित्रेश-नाथादिभिः,
दिव्यौघैर्मनुजौघ-सिद्ध-निवहैः सारूप्य-मुक्तिं गतैः ।
नाना-मन्त्र-रहस्य-विद्भिरखिलैरन्वासितं योगिभिः,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। ११।।

स सर्वोत्कृष्ट - वपुर्धराभिरभितो देवी समाभिर्जगत्,
संरक्षार्थमुप - गताऽभिरसकृन्नित्याभिधाभिर्मुदा ।
कामेश्यादिभिराज्ञयैव ललिता - देव्याः संमुद्भासितम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। १२।।

क कर्तुं श्रीललिताङ्ग-रक्षण-विधिं लावण्य-पूर्णां तनूम्,
आस्थायास्त्र-वरोल्लसत्-कर-पयोजाताभिरध्यासितम् ।
देवीभिर्हृदयादिभिश्च परितो विन्दुं सदाऽऽनन्ददम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। १३।।

ल लक्ष्मीशादि - पदैर्युतेन महता मञ्चेन संशोभितम्,
षट्-त्रिंशद्भिरनर्घ-रत्न-खचितैः सोपानकैर्भूषितम् ।
चिन्ता - रत्न - विनिर्मितेन महता सिंहासनेनोज्ज्वलम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। १४।।

ह्रीं ह्रीङ्कारैक-महा-मनुं प्रजपता कामेश्वरेणोषितम्,
तस्याङ्के च निषण्णया त्रि-जगतां मात्रा चिदाकारया ।
कामेश्या करुणा-रसैक-निधिना कल्याण-दात्र्या युतम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। १५।।

श्रीं श्रीमत् -पञ्च-दशाक्षरैक - निलयं श्रीषोडशी-मन्दिरम्,
श्रीनाथादिभिरर्चितं च बहुधा देवैः समाराधितम् ।
श्रीकामेश-रहस्सखी-निलयनं श्रीमद्-गुहाराधितम्,
श्री-चक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-सिद्धि-प्रदम् ।। १६।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिताम्बा-नीराजनम्

जय देवि!, जय देवि!, जय सुन्दरि तनये!, जय सुन्दरि ललिते! ।
शश्वद्-वसतिं कुरु भोरीश्वरि! मम हृदये।। जय देवि!, जगदम्ब!।

बिन्दु-त्रिकोण-सहितं षट्-कोणं वृत्तम् । तदुपरि वसु-दल-पत्रं वर्तुलमपि धत्तम् ।।
द्वि-गुणी-कृत-वसु-पत्रं मोहित-हर-चित्तं। द्वार चतुष्टय-निर्मित-यन्त्रोपरि तन्त्रम्।।

जय देवि!, जय देवि!, जय सुन्दरि तनये!, जय सुन्दरि ललिते! ।
शश्वद्-वसतिं कुरु भोरीश्वरि! मम हृदये।। जय देवि!, जगदम्ब!।।१।।

वामे कलशे पूजित - पूरितमाधारम् । तस्मिन्नर्पित-पूजित-पूरितमाधारम् ।।
एवं पञ्चावरणित-कर्णित-गुण-सारम् । मां देहि त्वं-भुवने! दुर्घट-संसारम् ।।

जय देवि!, जय देवि!, जय सुन्दरि तनये!, जय सुन्दरि ललिते! ।
शश्वद्-वसतिं कुरु भोरीश्वरि! मम हृदये।। जय देवि!, जगदम्ब!।।२।।

कलशामृत-जल-पूजित-नव-पात्र-समेतं । गणपति-योगिनी-बटुक-क्षेत्राधिप-युक्तम् ।।
अर्चन-विधिना सहितं श्रीगुरु-विधि-युक्तं, तारक-पण्डित-विद्या-भक्त्याऽखिल-दत्तम्।।

जय देवि!, जय देवि!, जय सुन्दरि तनये!, जय सुन्दरि ललिते! ।
शश्वद्-वसतिं कुरु भोरीश्वरि! मम हृदये।। जय देवि!, जगदम्ब!।।३।।

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीललिता-पुष्पाञ्जलि-स्तोत्रम्

ॐ समस्त-मुनि-यक्ष-किंपुरुष-सिद्ध-विद्याधर-
ग्रहा - सुर-सुराप्सरो-गण - मुखैर्गणैः सेविते!
निवृत्ति-तिलकाम्बरा-प्रकृति-शान्ति-विद्या-कला-
कलाप - मधुराकृते कलित एष पुष्पाञ्जलिः।।१।।
त्रिवेद-कृत-विग्रहे, त्रिविध-कृत्य-सन्धायिनि,
त्रिरूप - समवायिनि, त्रिपुर - मार्ग - सञ्चारिणि!
त्रिलोचन - कुटुम्बिनि, त्रिगुण - संविदुद्यत्-पदे,
त्रयि, त्रिपुर-सुन्दरि, त्रि-जगदीशि ! पुष्पाञ्जलिः ।।२।।

पुरन्दर - जलाधिपान्तक - कुबेर - रक्षोहर-
प्रभञ्जन - धनञ्जय - प्रभृति - वन्दनानन्दिते!
प्रवाल - पद-पीठिका-निकट-नित्य-वर्त्ति - स्वम्भू-
विरिञ्चि-विहित-स्तुते! विहित एष पुष्पाञ्जलिः ।। ३।।
यदानति-बलादहंकृतिरुदेति विद्या - वयस्तपो-
द्रविण - रूप - सौरभ - कवित्व - संविन्मयि!।
जरा-मरण-जन्मजं भयमुपैति तस्यै समाखिल-
समीहित - प्रसव - भूमि! तुभ्यं नमः ।। ४।।
निरावरण - संविदुद्भ्रम - परास्त - भेदोल्लसत्-
परात्पर - चिदेकता - वर-शरीरिणि, स्वैरिणि!।
रसायन - तरङ्गिणी - रुचि - तरङ्ग-सञ्चारिणि!,
प्रकाम - परिपूरिणि! प्रकृत एष पुष्पाञ्जलिः ।।५।।
तरङ्गयति सम्पदं तदनु-संहरत्यापदं
सुखं वितरति श्रियं परि-चिनोति हन्ति द्विषः।
क्षिणोति दुरितानि यत् प्रणतिरम्ब! तस्यै सदा शिवङ्करि!,
शिवे पदे, शिव - पुरन्ध्रि तुभ्यं नमः ।। ६।।
शिवे, शिव-सुशितलामृत-तरङ्ग-गन्धोल्लसन्नवावरण-देवते!,
नव-नवामृत- स्पन्दिनि! गुरु-क्रम-पुरस्कृते!, गुण-शरीर-नित्योज्ज्वले!,
षडङ्ग-परिवारिते! कलित एष पुष्पाञ्जलिः ।। ७।।
त्वमेव जननी पिता त्वमथ बन्धवस्त्वं सखा
त्वमायुरपरा त्वमाभरणमात्मनस्त्वं कलाः।
त्वमेव वपुषः स्थितिस्त्वमखिला यतिस्त्वं गुरुः
प्रसीद परमेश्वरि! प्रणत-पात्रि, तुभ्यं नमः ।। ८।।
कञ्जासनादि-सुर-वृन्द-लसत्-किरीट-कोटि-प्रघर्षण-समुज्ज्वलदंघ्रि-पीठे!
त्वमेव यामि शरणं विगतान्यभावं दीनं विलोकय यदार्द्र-विलोकनेन ।। ९।।

'कौल-कल्पतरु' चण्डी की विशेष प्रस्तुति

वर्ष-६१

श्री श्रीविद्या-साधना

(श्री श्रीविद्या-स्तव-मञ्जरी) पुष्प-३

श्रीषोडशी-आराधना

प्रेरणा-स्तम्भ

प्रातः-स्मरणीय 'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक

ऋतशील शर्मा

★

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

प्रकाशक
पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

श्रद्धाञ्जलि!

जिनकी '**दिव्य कृपा**' से
प्रस्तुत **श्री श्रीषोडशी-आराधना** का प्रकाशन हो रहा है

गुप्तावतार
बाबाश्री

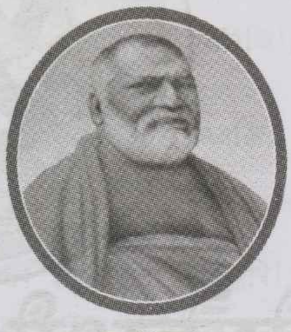

राष्ट्र-गुरु
स्वामी जी महाराज

कौल-कल्पतरु
पं० देवीदत्त शुक्ल

कुल-भूषण
पं० रमादत्त शुक्ल

चतुर्थ संस्करण
शरत्-पूर्णिमा, सं० २०६९ वि०-२९ अक्टूबर, २०१२
सर्वाधिकार सुरक्षित
परा-वाणी प्रेस, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

अनुक्रम

बालार्क - मण्डलाभासां, चतुर्बाहां त्रि - लोचनाम् ।
पाशांकुश - शरांश्चापं, धारयन्तीं शिवां भजे ।।

अर्थात् भगवती श्रीषोडशी के शरीर की कान्ति बाल-सूर्य-मण्डल की कान्ति के समान है। वे चतुर्भुजा और त्रि-नेत्रा हैं। चारों हाथों में १. पाश, २. अंकुश, ३. शर (बाण) और ४. चाप (धनुष)–ये चार अस्त्र धारण किए हैं। ऐसी शिवा का मैं भजन करता हूँ।

०१. प्राक्कथन १४०
०२. जय श्रीषोडशी विद्या माँ १४२
०३. श्रीषोडशी-कवच-स्तोत्र-साधना १४३
०४. श्रीषोडशी-कवच-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) १४४
०५. श्रीतुरीया-षोडशी-त्रैलोक्य-विजय-कवच-स्तोत्र-साधना १४७
०६. श्रीतुरीया-षोडशी-त्रैलोक्य-विजय-कवच-स्तोत्र-साधना (हिन्दी) १५३
०७. श्रीषोडशी-कवच-साधना १५७
०८. श्रीषोडशी-कवच-साधना (हिन्दी-रूपान्तर) १५९
०९. श्रीपरा-महा-योनि-कवच-साधना १६१
१०. श्रीषोडशी-हृदय-स्तोत्र-साधना १६४
११. श्रीषोडशी-अष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्र-साधना १६६
१२. श्रीषोडशी-अष्टोत्तर-शत-नामावली-जप-साधना १६८
१३. श्रीषोडशी-सहस्त्र-नाम-स्तोत्र-साधना १६९
१४. श्रीषोडशी-सहस्त्र-नामावली-जप-साधना १८५
१५. श्रीराज-राजेश्वरी-तर्पण-स्तोत्र-साधना २०३
१६. श्रीचक्र-स्तोत्रम् २०६
१७. श्री-आवरण-सहस्त्राक्षरी-साधना २०७

★★★

प्राक्कथन

'**चण्डी**' आध्यात्मिक पुस्तक-माला के अन्तर्गत **श्री श्रीविद्या-साधना** का क्रमशः प्रकाशन हो रहा है। पुष्प (१)-(३) के द्वारा **भगवती श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी** एवं **भगवती श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी** की आराधना हेतु '**कवच**', '**हृदय**', '**अष्टोत्तर-शत-नाम**' एवं '**स्तोत्रादि**' प्रकाशित हुए। अब पुष्प (४) के द्वारा **श्री श्रीविद्या-साधना** के अन्तिम चरण **श्रीषोडशी-आराधना** हेतु '**कवचादि**' प्रकाशित किए जा रहे हैं।

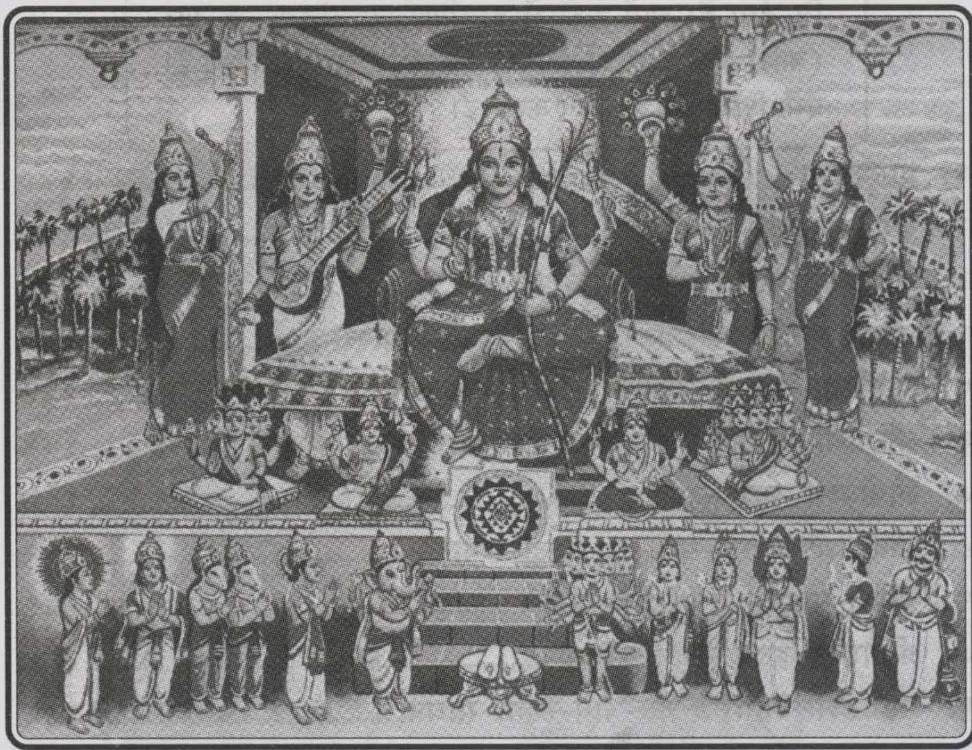

प्रस्तुत '**श्रीषोडशी-आराधना**' में **गुप्तावतार बाबा श्री** के दुर्लभ संग्रह के आधार पर पहली बार '**श्रीषोडशी-सहस्त्र-नाम**' पूर्ण-रूप में, '**नामावली**'-सहित मोटे-मोटे अक्षरों में प्रकाशित हो रहा है। आशा है कि **श्री श्रीविद्या की आराधना** करने के इच्छुक बन्धुओं को इससे विशेष लाभ होगा।

'**तन्त्रों**' में **पञ्च-वक्त्र शिव** की शक्ति का नाम '**षोडशी**' है। '**कार्य**'-भेद से **भगवान् शिव** के अनेक रूप होते हैं। जब **शिव**– पाँच दिशाओं में व्याप्त होते हैं, तो वे '**पञ्च-मुख**' कहलाते हैं। उनके **पाँचों मुख**–१. पूर्व, २. पश्चिम, ३. उत्तर, ४. दक्षिण और ५. ऊर्ध्व 'दिग्'-भेद से क्रमशः **१. तत्पुरुष, २. सद्योजात, ३. वामदेव, ४. अघोर** और **५. ईशान** नाम से प्रसिद्ध हैं। ये **पाँचों**

मुख क्रमशः १. चतुष्कल, २. अष्ट-कल, ३. त्रयोदश-कल, ४. अष्ट-कल और ५. पञ्च-कल हैं। साथ ही, पाँचों क्रमशः १. हरित (हरा), २. रक्त, ३. धूम्र, ४. नील और ५. पीत-वर्ण हैं।

इनके **दस हाथ** हैं। दसों हाथों में– **१. अभय, २. टङ्क (कुठार), ३. शूल, ४. वज्र, ५. पाश, ६. खड्ग, ७. अंकुश, ८. घण्टा, ९. नाग** और **१०. अग्नि**– ये दस आयुध हैं। ये '**पञ्च-वक्त्र शिव**'–**सर्वज्ञ, त्र्यक्ष-रूप, अनादि-बोध स्वरूप, स्वतन्त्र** और **अनन्त** शक्तिमान् हैं। पाँचों दिशाओं में इनकी व्याप्ति होती है और पाँचों दिशाओं को ये देखते हैं।

इन्हीं '**पञ्च-वक्त्र शिव**' की शक्ति का नाम '**षोडशी**' है। '**तन्त्रों**' में ये '**महा-त्रिपुर-सुन्दरी**', '**श्री श्रीविद्या**' से विख्यात हैं। इनका तन्त्रोक्त स्वरूप इस प्रकार है–

बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्बाहां त्रि-लोचनाम् ।
पाशांकुश-शरांश्चापं, धारयन्तीं शिवां भजे ।।

'**सूर्य**' में १. ताप (अग्नि) है, २. **प्रकाश** है, ३. **आहुत सोम (चन्द्रमा)** है। '**त्रीणि ज्योतिषि स च ते स षोडशी**' के अनुसार **षोडशी भगवती** ने इन्हीं तीन रूपों से विश्व को प्रकाशित कर रक्खा है। इसलिए वे '**त्रि-लोचना**' हैं।

'**सोम**' की आहुति से वे शान्त हैं। अतः **प्रातः-काल का बाल-सूर्य (बालार्क)** आपकी साक्षात् प्रकृति है।

'**सूर्य**' से उत्पन्न होनेवाली प्रजा सौर-शक्ति से आबद्ध रहती है। '**सौर-शक्ति**' आकर्षक-रूप से सभी को आबद्ध करती है, अतएव **भगवती षोडशी** के हाथों में '**पाश**' है।

अक्षर-रूपा नियति के भय से सभी अपना कार्य करते हैं। स्वयं '**सूर्य**' भी उससे नियन्त्रित हैं। अतएव **भगवती** के हाथों में '**अंकुश**' है।

जो स्पर्धा के कारण **परमा शक्ति–भगवती षोडशी** के अटल नियमों का उल्लङ्घन करते हैं, उनका वे नाश कर डालती हैं। **१. 'पृथ्वी', २. 'अन्तरिक्ष', ३. 'द्यौ'**–इन तीनों लोकों में व्याप्त अन्न, वायु और वर्षा–ये तीन प्रकार के '**इषु**' (वाण) हैं। इन्हीं '**इषुओं**'–वाणों द्वारा वे संहार करती हैं।

१. सृष्टि-कर्त्ता '**ब्रह्मा**', २. पालन-कर्त्ता '**विष्णु**', ३. संहार-कर्त्ता '**रुद्र**', ४. खण्ड प्रलय के अधिष्ठाता '**यम**'–चारों देवता आपके आधीन हैं। आप पर वे प्रतिष्ठित हैं।

इस प्रकार **भवगती षोडशी–सर्व-सिद्धि-दात्री** हैं। आपकी कृपा से साधकों को '**सर्व-सिद्धि**' प्राप्त होती है। आपके **चारों हाथ आयुधों से भरे हैं**। '**अभय**' और '**वर**'-मुद्रा नहीं है। '**अभय**' व '**वर**'-मुद्रा का कार्य आपके '**चरण-कमल**' से अर्थात् आपकी **आराधना** से ही होता है।

अस्तु! आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत **श्रीषोडशी-आराधना** द्वारा श्रद्धालु बन्धु **भगवती श्रीषोडशी की आराधना** करेंगे और अपना तथा **विश्व का कल्याण** करेंगे।

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग

–ऋतशील शर्मा

जय षोडशि विद्या माँ

त्रिपुर-सुन्दरी माँ, जय षोडशि विद्या माँ,
जग-कारिणि-पालिनि पर-ब्रह्म सनातनि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

कामाकर्षिणि पड़वे, बुद्ध्याकर्षणि माँ,
बीजी नित्या बीजे, अमरुत-वर्षणि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

अहङ्कार-आकर्षिणि, त्रीजी नित्या माँ,
त्रीजे पूजन करता, त्रीजी पद्धति माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

शब्दाकर्षिणि चोथे गणप चतुर्थी माँ,
चन्द्र-कला कमिनीया, पर-पद-दायिनि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ ।।

रूपाकर्षिपि पञ्चमि, जग-सञ्चालिनि माँ,
दिव्य सुरासुर मानव, जन-मन-रञ्जनि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

स्पर्शाकर्षिणि षष्ठी, भाग्य-विधायिनि माँ,
भक्त-जन-प्रिय माता, जगदुद्धारिणि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

सप्तमि रस-आकर्षिणि, विश्व-विनोदिनि माँ,
स्वाद अमर-फल दायिनि, सुरस सुधा-सर माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

अष्टमि गन्धाकर्षिणि, पुष्प-धराधरि माँ,
सर्वारम्भ क्रिया करि, शुचि शशि-धर-सरि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

नवमी चित्ताकर्षिणि, नव-नव दुर्गा माँ,
शक्ति परापर मालिनि, भव-तारिणि भव माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

धैर्याकर्षिणि नित्या, रणदुर्द्धर्षिणि माँ,
दशमी धीरज-दायिनि, जय-दायिनि जय माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

स्मृत्याकर्षिणि स्पर्शिनि, दर्शन दर्शिनि माँ
एकादशि तवर्त्तिनि निज पद-दायिनि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

भासाकर्षिणि भंव-भय भक्त-निवारिणि माँ,
द्वादशि परिमाणु-ध्वज, विश्व-विहारिणि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

बीजाकर्षिणि अक्षर गति विस्फोटिनि माँ,
तत्त्व-अनन्त-विकासिनि, तेरश, तेरश माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

चौदश अमृताकर्षिणि, दिव्य दरश-धर माँ,
ताप-त्रिताप-निवारिणि, भग-मालिनि, भग माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

पूनम देहाकर्षिणि, नृत्य कला-धरि माँ,
स्थूल जगत-कर कारिणि, जग-धारिणि जग माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

अमा समा रस पूर, सर्वाकर्षिणि माँ, विश्वाकर्षणि माँ,
पूरण दल-पर षोडशि, कृष्ण सनातनि माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

पंदर तिथि नित्या-गति, शक्ति अपर परमा,
'मोति' कला-धर भय-हर, विश्वम्भर-सर माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

त्रिपुर-सुन्दरी माँ, जय्र षोडशि विद्या माँ,
जग-कारिणि-पालिनि पर-ब्रह्म, सनातन माँ,
त्रिपुर-सुन्दरी माँ० ।।

–गुप्तावतार बाबाश्री

★★★

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीषोडशी-कवच-स्तोत्र-साधना

।। पूर्व-पीठिका—श्रीदेव्युवाच ।।

देव-देव! महा-देव!, भक्तानां प्रीति-वर्द्धनम्।
सूचितं यन् महा-देव्याः, कवचं कथयस्व मे ।।१।।

।। श्रीमहा-देव उवाच ।।

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि, कवचं देव-दुर्लभम्।
न प्रकाश्यं परं गुह्यं, साधकाभीष्ट-सिद्धिदम् ।।२।।

कवचस्य ऋषिर्देवि!, दक्षिणा-मूर्तिरव्ययः।
छन्दः पंक्तिः समुद्दिष्टं, देवी त्रिपुर-सुन्दरी ।।३।।

धर्मार्थ-काम-मोक्षाणां, विनियोगस्तु साधने।
वाग्भवः काम-राजश्च, शक्ति-वीजं सुरेश्वरि!।।४।।

।। कवच-स्तोत्रम् ।।

वाग्भवः पातु शीर्षे मां, काम-राजस्तथा हृदि।
शक्ति-बीजं सदा पातु, नाभौ गुह्ये च पादयोः ।।१।।

ऐं क्लीं सौः वदने पातु, बाला मां सर्व-सिद्धये।
ह्सौः हसकलह्रीं पातु, भैरवी कण्ठ-देशतः ।।२।।

सुन्दरी नाभि-देशे च, शीर्षे काम-कला सदा।
भ्रू-नासयोरन्तराले, महा-त्रिपुर-सुन्दरी ।।३।।

ललाटे सुभगा पातु, भगा मां कण्ठ-देशतः।
भगोदया च हृदये, उदरे भग-सर्पिणी ।।४।।

भग-माला नाभि-देशे, लिङ्गे पातु मनोभवा।
गुह्ये पातु महा-देवी, राज-राजेश्वरी शिवा ।।५।।

चैतन्य-रूपिणी पातु, पादयोर्जगदम्बिका।
नारायणी सर्व-गात्रे, सर्व-कार्ये शुभङ्करी ।।६।।

ब्रह्माणी पातु मां पूर्वे, दक्षिणे वैष्णवी तथा।
पश्चिमे पातु वाराही, उत्तरे तु महेश्वरी ।।७।।

आग्नेयां पातु कौमारी, महा-लक्ष्मीस्तु नैर्ऋते।
वायव्यां पातु चामुण्डा, इन्द्राणी पातु ईशके ।।८।।

जले पातु महा-माया, पृथिव्यां सर्व-मङ्गला।
आकाशे पातु वरदा, सर्वत्र भुवनेश्वरी ।।९।।

।। फल-श्रुति ।।

इदं तु कवचं देव्या, देवानामपि दुर्लभम्।
पठेत् प्रातः समुत्थाय, शुचिः प्रयत-मानसः ।।१।।
नाधयो व्याधयस्तस्य, न भयं च कश्चिद् भवेत्।
न च मारी-भयं तस्य, पातकानां भयं तथा ।।२।।
न दारिद्र्य-वशं गच्छेत्, तिष्ठेन्मृत्यु-वशे न च।
गच्छेच्छिव-पुरं देवि!, सत्यं सत्यं वदाम्यऽहम् ।।३।।
इदं कवचमज्ञात्वा, श्रीविद्यां यो जपेत् सदा।
स नाप्नोति फलं तस्य, प्राप्नुयाच्छस्त्र-घातनम् ।।४।।

।। सिद्ध-यामले श्रीषोडशी-कवचम् ।।

★★★

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीषोडशी-कवच-स्तोत्र-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

।। पूर्व-पीठिका ।।

श्री देवी ने कहा-**हे देव-देव महा-देव**! तुम भक्त-वृन्द की प्रीति बढ़ाते रहते हो, इसलिए तुमने पहिले जो **महा-देवी** के **कवच** का उल्लेख किया था, उसे अब कहो ।।१।।

श्रीमहा-देव ने कहा-**हे देवि**! उस **मन्त्र-मूर्ति कवच** को मैं कहूँगा, सुनो। इस **कवच** से सब प्रकार की इष्ट-सिद्धियाँ मिलती हैं। यह **कवच** गोपनीय वस्तु है, इसे प्रकट नहीं करना चाहिए ।।२।।

इस **कवच** के ऋषि **अव्यय दक्षिणामूर्ति** हैं, छन्द **पंक्ति** है, इसकी देवी **त्रिपुर-सुन्दरी** हैं, वाग्भव **'ऐं'** बीज है, **'सौः'** शक्ति है, काम-राज **'क्लीं'** कीलक और **धर्म, अर्थ, काम** तथा **मोक्ष** इस चतुर्वर्ग के साधन में इसका विनियोग है ।।३-४।।

।।कवच-स्तोत्र।।

वाग्भव **'ऐं'** मेरे मस्तक की रक्षा करें। काम-राज वीज **'क्लीं'** हृदय की रक्षा करें। शक्ति-बीज **'सौः'** नियत रूप में मेरी नाभि, गुह्य और दोनों पैरों की रक्षा करें ।।१।।

'ऐं क्लीं सौः'- ये **त्रि-बीज-रूपिणी बाला** सब सिद्धियाँ प्रदान कर मेरी रक्षा करें। **'हसौः' 'हसकलहीं'**,-ये बीज-रूपिणी **भैरवी** मेरे कण्ठ-देश की रक्षा करें ।।२।।

'सुन्दरी' मेरी नाभि की और **'काम-कला'** मेरे शीर्ष-देश की रक्षा करें।

'महा-त्रिपुर-सुन्दरी' भौहों और नासिका के मध्य-स्थल की, **'सुभगा'** ललाट की, **'भगा'** कण्ठ की और **'भगोदया'** हृदय की, **'भग-सर्पिणी'** उदर की रक्षा करें।। ३-४।।

'भग-माला' नाभि-देश की और **'मनोभवा'** मेरे लिङ्ग की रक्षा करें। **'महा-देवी राज-राजेश्वरी शिवा'** मेरे गुह्य-देश की और **'चैतन्य-रूपिणी जगदम्बिका'** मेरे पाद-युगल की रक्षा करें। **'नारायणी'** मेरे सर्वाङ्ग की और सब कामों में **'शुभङ्करी'** रक्षा करें ।।५-६।।

'ब्रह्माणी' पूर्व दिशा में और **'वैष्णवी'** दक्षिण दिशा में मेरी रक्षा करें। **'वाराही'** पश्चिम दिशा में, **'माहेश्वरी'** उत्तर दिशा में, **'कौमारी'** अग्नि-कोण में और **'महा-लक्ष्मी'** नैर्ऋत-कोण में मेरी रक्षा करें। **'चामुण्डा'** वायु-कोण में और **'इन्द्राणी'** ईशान-कोण में मेरी रक्षा करें। जल में **'महा-माया'**, पृथ्वी पर **'सर्व-मङ्गला'**, **'वरदा'** आकाश में और **'भुवनेश्वरी'** सब स्थानों में मेरी रक्षा करें ।।७-९।।

।। फल-श्रुति।।

देवी का यह कवच **देव-वृन्द** को भी दुष्प्राप्य है। **प्रभात-काल** में जगकर पवित्र-भाव से **एकाग्र-मन** होकर इसका पाठ करना चाहिए ।।१।।

इस **कवच** के पाठ के फल से **आधि-व्याधि** नहीं रहतीं और कहीं भी **भय** नहीं होता। पाठ-कर्ता के **मारी-भय** और सब प्रकार के **पातकों के भय** नहीं रहते ।।२।।

इस **कवच** का पाठ-कर्ता **दारिद्र्य** के वश में नहीं आएगा, वह **मृत्यु-मुख** में कभी नहीं पड़ेगा। **हे देवि**! वह व्यक्ति **शिव-धाम** को जाएगा, यह मैं तुमसे सर्वथा सत्य कह रहा हूँ ।।३।।

इस **कवच** को न जानकर जो व्यक्ति **श्री-विद्या** के मन्त्र का जप करता है, वह जप का फल नहीं पाता, ऊपर से **अस्त्र-घात** को प्राप्त होता है ।।४।।

भगवती षोडशी की आराधना

सुधा-सिन्धु के मध्य, कल्प-वृक्षों की वाटी से वेष्टित-
मणि-द्वीप में नीप-वनों के चिन्तामणि-गृह में सज्जित-
शिवाकार-मञ्च-स्थित पर-शिव-पर्यङ्कोपरि शोभा-वान।
चिदानन्द-लहरी, तुमको हैं भजते कोई धन्य सुजान।।

थोड़े से ही भाग्यवान् हैं, जो **'चित्'** और **'आनन्द'** की धारा-रूपिणी, **अमृत-सागर के मध्य में 'मणि-द्वीप'** में अलौकिक **वृक्षों के उद्यान** से वेष्टित और **उपवन** से युक्त **'चिन्तामणि'**-गृह में **'परम शिव-रूपी'** पंलग पर बैठी हुई तुमको भजते हैं।

श्रीमहाकामेश्वर-सहिता भगवती श्रीपराम्बा

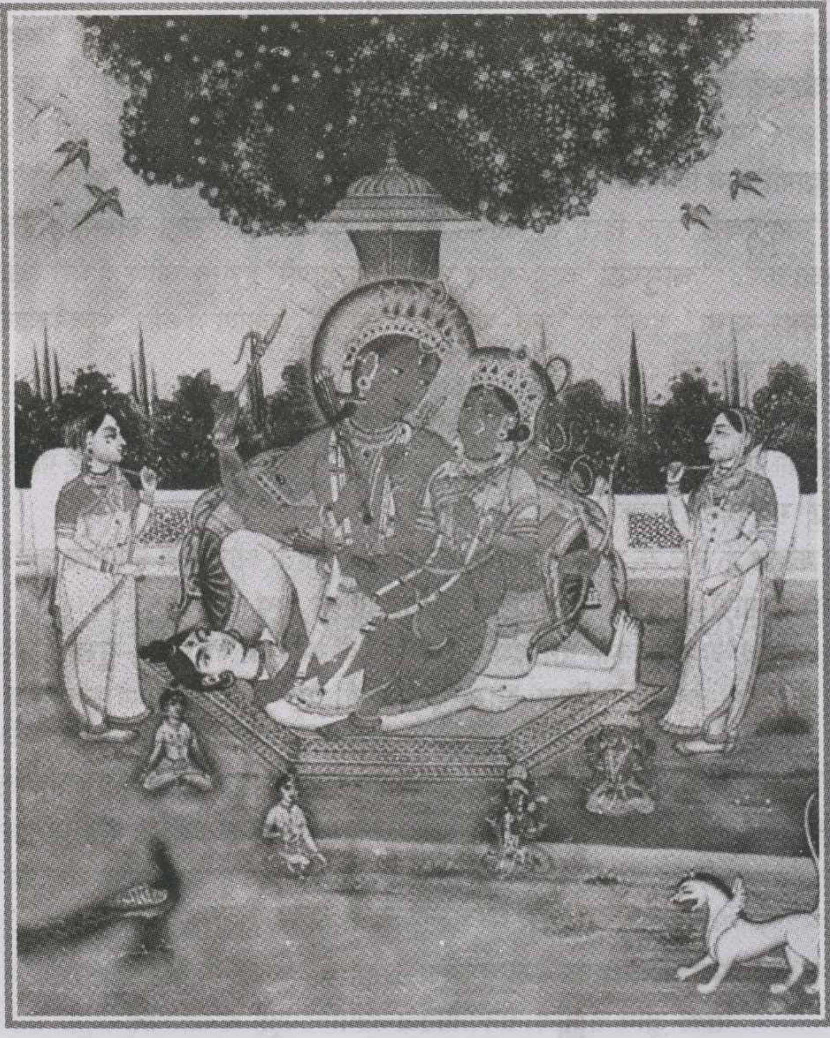

बालार्कायुत-तेजसं त्रि-नयनां रक्ताम्बरोल्लासिनीम् ।
नानालंकृति-राजमान-वपुषं बालोडुराट्-शेखराम् ।।
हस्तैरिक्षु-धनुः सृणिं सुमशरं पाशं मुदा विभ्रतीम् ।
श्रीचक्र-स्थित-सुन्दरीं त्रि-जगतामाधार-भूतां स्मरेत् ।।
बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्बाहां त्रि-लोचनाम् ।
पाशांकुश - शरांश्चापं, धारयन्तीं शिवां भजे ।।

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीतुरीया-षोडशी-त्रैलोक्य-विजय-कवच-स्तोत्र-साधना

।। पूर्व-पीठिका ।।

कैलास-शिखरे रम्ये, देव-देवं जगद्-गुरुम् ।
शङ्करं परि-पप्रच्छ, कुमारः शिखि-वाहनः ।।१।।

।। श्रीस्कन्द उवाच ।।

जनक, श्रीगुरो, देव, पुत्र-वात्सल्य-वर्धन! ।
कवचं षोडशाक्षर्या, वद मे परमेश्वर! ।।२।।

।। श्रीईश्वर उवाच ।।

शृणु पुत्र महा-भाग!, कवचं मन्त्र-विग्रहम् ।
गोप्याद् गोप्यतरं गोप्यं, गुह्याद् गुह्य-तरं महत् ।।३।।

तव स्नेहात् प्रवक्ष्यामि, नाख्यातं यस्य कस्यचित् ।
ब्रह्मेश-विष्णु-शक्रेभ्यो, मया न कथितं पुरा ।।४।।

देवाग्रे नैव दैत्याग्रे, न शौनक-गुणाग्रके ।
तव भक्त्या तु कवचं, गोप्यं कर्तुं न शक्यते ।।५।।

एकादश-महा-विद्या, स-वर्णा सद्-गुणान्विता ।
सर्व-शक्ति-प्रधाना हि, कवचं मन्मुखोदितम् ।।६।।

गणेशश्च रविर्विष्णुः, शिव-शक्तिश्च भैरवः ।
पञ्च-तत्त्वादि-सर्वेषां, वर्मावर्तेन तुष्यताम् ।।७।।

ऊर्ध्वाम्नायं महा-मन्त्रं, कवचं निर्मितं मया ।
त्रैलोक्य-विजयं दिव्यं, तुरीयं कवचं शुभम् ।।८।।

।। श्रीस्कन्द उवाच ।।

कवचं परमं देव्याः, श्रोतुमिच्छाम्यऽहं प्रभो! ।
यत्-सूचितं त्वया पूर्वं, धर्म-कामार्थ-मोक्षदम् ।।९।।

तद्-विनाऽऽराधनं नास्ति, जपं ध्यानादि-कर्मणि ।
तस्याश्च कवचं यस्मात्, तस्मात् तद् वद मे प्रभो ।।१०।।

।। श्रीईश्वर उवाच ।।

शृणु पुत्र महा-प्राज्ञ!, रहस्याति-रहस्यकम् ।
तुरीयं कवचं दिव्यं, सर्व-मन्त्र-मयं शुभम् ।।११।।

पूजान्ते तु जपात्-पूर्वं, कवचं समुदीरयेत् ।

।। विनियोग ।।

अस्य श्रीकवचस्यास्य, ऋषिरानन्द-भैरवः ।।१२।।

श्रीविद्या देवताश्छन्दो, गायत्री-रुचि-वृत्तिकम् ।

रमा-बीजं परा-शक्तिः, वाग्भवं कीलकं स्मृतम् ।।१३।।

मम सर्वार्थ-सिद्ध्यर्थे, जपे तु विनियोगतः ।

।। कर-न्यास ।।

अंगुष्ठाग्रे वाग्भवं च, ह्रल्लेखां तर्जनी न्यसेत् ।।१४।।

लक्ष्मी-वीजं मध्यमायामङ्गिराऽनामिका तथा ।

परा-बीजं कनिष्ठायां, लक्ष्मीं कर-तले न्यसेत् ।।१५।।

।। षडङ्ग-न्यास ।।

ह्रदये वाग्भवं न्यस्यात्, परां शिरसि च न्यसेत् ।

लक्ष्मी-बीजं शिखायां च, कवचे वाग्भवं न्यसेत् ।।१६।।

ह्रल्लेखां नेत्रयोर्न्यस्यादस्त्रं तु कमलां न्यसेत् ।

।। दिग्-बन्धन ।।

भूर्भुवः स्वरिति मनुना दिग्-बन्धनमाचरेत् ।।१७।।

ध्यानं तस्य प्रवक्ष्यामि, धर्म-कामार्थ-मोक्षदम् ।

न्यास-ध्यानादिकं सर्वं, कृत्त्वा तु कवचं पठेत् ।।१८।।

।। ध्यान ।।

क्षीर-सागर-मध्यस्थे, रत्न-द्वीपे मनोहरे ।

रत्न-सिंहासने दिव्ये, तत्र देवीं विचिन्तयेत् ।।१९।।

कोटि-सूर्य-प्रतीकाशां, चन्द्र-कोटि-निभाननाम् ।

दाडिमी-पुष्प-सङ्काशां, कुंकुमोदर-सन्निभाम् ।।२०।।

जपा-कुसुम-सङ्काशां, त्रिनेत्रां च चतुर्भुजाम् ।

पाशांकुश-धरां रम्यामिक्षु-चाप-शरान्विताम् ।।२१।।

कर्पूर-शकलोन्मिश्र-ताम्बूल-पूरिताननाम् ।

सर्व-श्रृङ्गार वेषाढ्यां, सर्वावयव-शोभिनीम् ।।२२।।

सर्वायुध-समायुक्तां , प्रसन्न-वदने क्षणाम् ।

सपरिवार-सावरणां सर्वोपचारार्चिताम् ।।२३।।

एवं ध्यायेत् ततो वीर!, कवचं सर्व-कामदम् ।
आवर्तयेत् स्व-देहे तु, सर्व-रक्षा-करं शुभम् ।।२४।।

।। कवच-पाठ ।।

शिखायां मे 'ह्सौः' पातु, 'स्हौ' मे पातु ब्रह्मरन्ध्रके ।
सर्वदा 'ह्लौं' च मां पातु, वाम-दक्षिण-भागयोः ।।१।।
'ऐं ह्रीं श्रीं' सर्वदा पातु, षोडशी सुन्दरी परा ।
'श्रीं ह्रीं क्लीं' सर्वदा पातु, 'ऐं सौं ॐ' पातु मे सदा ।।२।।
'ह्रीं श्रीं ऐं' पातु सर्वत्र, 'क्नौं रं लं ह्रीं' सदा मम ।
'क्लीं हसकहलह्रीं' मे, पातु सदा 'सौः क्लीं' मम ।।३।।
'सौः ऐं क्लीं ह्रीं' श्रिया पातु, स-बीजा षोडशाक्षरी ।
आपाद-मस्तकं पातु, महा-त्रिपुर-सुन्दरी ।।४।।
श्रीजयन्ती मस्तके मां, पातु नित्यं विभूतये ।
'ह्रीं' मङ्गला सदा नेत्रे, पातु सर्वार्थ-सिद्धये ।।५।।
'क्लीं' कालिका कर्ण-युग्मं, पातु सर्व-शुभावहा ।
'ऐं' भारती घ्राण-युग्मं, पातु सर्व-जयाप्तये ।।६।।
'सौः' कराली मुखं पातु, सर्व-लोक-वशाप्तये ।
'ऐं' शारदा सदा वाचं, पातु साहित्य-सिद्धये ।।७।।
'ॐ' कपालिनी मे कर्णौ, पातु सद्-गान-सिद्धये ।
'ह्रीं' दुर्गा-सहिता पातु, स्कन्ध-देशौ सदा मम ।।८।।
'श्रीं' क्षम-सहिता पातु, हृदयं मम सर्वदा ।
'ककार'-सहिता धात्री, पार्श्व-युग्मं सदाऽवतु ।।९।।
'एकार'-सहिता स्वाहा, पातु मे जठरं सदा ।
'ईकार'-सहिता नाभिं, स्वधा मां सर्वदाऽवतु ।।१०।।
'लकार'-सहिता ब्राह्मी, पृष्ठ-देशं सदाऽवतु ।
'ह्रीङ्कार'-सह-माहेशी, कटिं पातु सदा मम ।।११।।
'हकार'-सहिता गुह्यं, कौमारी पातु सर्वदा ।
'सकार'-सहिता पातु, वैष्णवी गुद-देशकम् ।।१२।।
'ककार'-युक्ता वाराही, ह्यूरु-युग्मं सदाऽवतु ।
'हकार'-सहिता जानु-युग्मं माहेन्द्री मेऽवतु ।।१३।।

'लकार'-युक्ता चामुण्डा, जङ्घा-युग्मं सदाऽवतु ।
'ह्रीङ्कार'-सहिता गुल्फ-युग्मं लक्ष्मीः सदाऽवतु ।।१४।।
'सकार'-युक्ता मे पाद-युग्मेऽव्यात् शिव-दूतिका ।
'ककार'-सहिता प्राच्यां, चण्डा रक्षतु सर्वदा ।।१५।।
'लकार'-सहिताऽऽग्नेयां, प्रचण्डा सर्वदाऽवतु ।
'ह्रीङ्कार'-सहिता पातु, दक्षिणे चण्ड-नायिका ।।१६।।
'सौःकार'-सहिता चण्ड-वेगिनी नैर्ऋतेऽवतु ।
'ऐङ्कार'-संयुता चण्ड-प्रकाशा पातु पश्चिमे ।।१७।।
'क्लीङ्कार'-सहिता पातु, चण्डिका वायु-गोचरे ।
'ह्रीङ्कार'-सहिता पातु, चामुण्डा चोत्तरे मम ।।१८।।
'श्रीङ्कार'-सहिता रौद्री, पायादैशान्यके मम ।
ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेत्, षोडशी-सह सर्वदा ।।१९।।
अधस्ताद् वैष्णवी रक्षेत्, पुनः षोडशी-संयुता ।
सर्वाङ्गं सर्वदा पातु, सहिता भुवनेश्वरी ।।२०।।
जले दावानलेऽरण्ये, महोत्पाते च सागरे ।
दिवा-रात्रौ च मे रक्षेद्, देवी तार-त्रयी मम ।।२१।।

।। फल-श्रुति ।।

इदं तुरीया-सहितं, षोडशाक्षरिकात्मकम् ।
अभेद्यं कवचं त्वेदं, मन्त्र-बीज - समन्वितम् ।।१।।
योगिनी-चक्र-सहितं, तव प्रीत्या प्रकाशितम् ।
धारयस्व मया दत्तं, गोपनीयं सु-पुत्रक ।।२।।
न पुत्राय न शिष्याय, बन्धुभ्यो न प्रकाशयेत् ।
इदं त्रिपुर-सुन्दर्यास्तुरीयं कवचं शुभम् ।।३।।
गोपनीयं प्रयत्नेन, मन्त्र-वर्ण-क्रमोदितम् ।
प्रातरारभ्य सायान्तं, कर्म-वेदान्तमोक्तिकम् ।।४।।
तत्फलं समवाप्नोति, तुरीय-कवच-व्रतम् ।
दशधा मातृका-न्यासं, लघु-षोढा ततः परम् ।।५।।
शक्ति-न्यासं महा-षोढ़ां, कृत्वा बाह्यान्तरं न्यसेत् ।
श्रीविद्यायां महा-न्यासं, क्रमात् सावर्णतां व्रजेत् ।।६।।

पूजान्ते यत्फलं प्राप्तं, तत्फलं कवच-व्रते ।
सवत्सां दुग्ध-सहितां, साधकः कामधेनु-वत् ।।७।।
त्रैलोक्य-विजयायेदं, कवचं परमाद्भुतम् ।
यथा चिन्ता-मणौ पुत्र!, मनसा परि-कल्पिते ।।८।।
तत्सर्वं लभते शीघ्रं, मम वाक्यान्न संशयः ।
सायुरारोग्यमैश्वर्यं, सदा सम्पत्प्रवर्धनम् ।।९।।
कवचस्य प्रभावेण, त्रैलोक्य-विजयी भवेत् ।
अदीक्षिताय न देयं, श्रद्धा-विरहितात्मने ।।१०।।
नाख्येयं यस्य कस्यापि, कृतघ्नायाततायिने ।
शान्ताय गुरु-भक्ताय, देयं शुद्धाय साधने ।।११।।
अज्ञात्वा कवचं चेदं, यो जपेत् पर-देवताम् ।
सिद्धिर्न जायते वत्स!, कल्प-कोटि-शतैरपि ।।१२।।
स एव च गुरु साक्षात्, कवचं यस्तु पुत्रक! ।
त्रि-सन्ध्यं च पठेन्नित्यमिदं कवचमुत्तमम् ।।१३।।
निशार्धे जप-काले वा, प्रत्यहं यन्त्रमग्रतः ।
जगद्वश्यं भवेच्छीघ्रं, नात्र कार्या विचारणा ।।१४।।
सप्त-कोटि-महा-मन्त्राः, सवर्णाः सगुणान्विताः ।
सर्वे प्रसन्नतां यान्ति,सत्यं सत्यं न संशयः ।।१५।।
इति ते कथितं दिव्यं, सगुणे भजन-क्रमम् ।
निर्गुणं परमं वक्ष्ये, तुरीयं कवचं शृणु ।।१६।।
कवचस्यास्य माहात्म्यं, वर्णितुं नैव शक्यते ।
मूलादि-ब्रह्म-रन्ध्रान्तं, श्रीचक्रं समुदीरयेत् ।।१७।।
देह-मध्ये च सर्वस्वं, श्रीचक्रं चिन्तयेत् सुत! ।
पञ्च-विंशति-तत्त्वं च, अतलं वितलं तथा ।।१८।।
सुतलं च तलातलं, महा-तलं च पञ्चमम् ।
रसातलं षष्ठं वक्ष्ये, सप्तमं पाताल-लोकम् ।।१९।।
भूर्भुवः स्वर्लोकमतो, महल्लोक-जनस्तथा ।
तपश्च सत्य-लोकश्च, भुवनानि चतुर्दश ।।२०।।

सर्व श्रीभुवनं चैव, निराकारं विचिन्तयेत् ।
मानसे पूजयेत् ध्यायेज्ज्योति-रूपं सुचिन्मयम् ।
कवचं प्रजपेद् वत्स!, राज-राजेश्वरो भवेत् ।।२१।।
इति परम-रहस्यं, सर्व-मन्त्रार्थ-सारम् ।
भजति परम-भक्त्या, निश्चलं निर्मलत्वम् ।।२२।।
विलसित भुवि मध्ये, पुत्र-पौत्राभि-वृद्धिम् ।
धन-सकल-समृद्धिं, भोग-मोक्ष-प्रदं च ।।२३।।

।। श्रीचूड़ामणौ श्रीशिव-स्कन्द-संवादे त्रैलोक्य-विजयं नाम श्रीतुरीया-षोडशी श्रीराज-राजेश्वरी महा-त्रिपुर-सुन्दरी-कवचम् ।।

★★★

भगवती षोडशी की आराधना

तव युग-चरणों की पूजा करने से त्रिगुण-जनित अविलम्ब-
तीनों देवों की पूजा भी, हो जाती है पूरी अम्ब!
क्योंकि निकट मणि-पीठ मंजु जो धारण करता चरण त्वदीय।
सदा खड़े रहते ये जोड़े, निज मुकुटों पर कर कमनीय।।

हे शिवे ! तुम्हारे चरण-युगल की पूजा ही सत्त्व, रज और तमो-गुणों से सृष्ट तीनों देवों की पूजा है क्योंकि ये उच्च मुकुटवाले (देव) हाथ जोड़े तुम्हारे पाँव रखने की मणियों की बनी चौकी के समीप खड़े हैं।

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीतुरीया-षोडशी-त्रैलोक्य-विजय-कवच-साधना(हिन्दी-रूपान्तर)

।। पूर्व-पीठिका ।।

सुरम्य कैलास पर्वत पर **देवाधि-देव जगद्-गुरु शङ्कर** से **मयूर-वाहन कुमार** (**कार्त्तिकेय** या **स्कन्द**) ने पूछा ।।१।।

श्रीस्कन्द ने कहा-**हे पिताजी, श्रीगुरुदेव!** आप पुत्र-प्रेम बढ़ानेवाले हैं। **हे परमेश्वर! षोडशाक्षरी** (विद्या का) कवच कहिए ।।२।।

श्रीशिव जी ने कहा-हे पुत्र! **मन्त्र-विग्रहात्मक** यह **कवच** गुप्त-से-गुप्त है ।।३।। तुम्हारे प्रति स्नेह से कहता हूँ। जिस-तिस से नहीं कहा गया है। **ब्रह्मा, ईश, विष्णु** और **इन्द्र** से भी नहीं कहा गया है ।।४।। न तो **दैत्यों**, न **देवताओं** और न ही **शौनकादि** से कहा है, किन्तु तुम्हारी भक्ति-वश इस **कवच** को गुप्त रखने में समर्थ नहीं हूँ ।।५।।

सवर्णा और सद्-गुणों से युक्त **एकादश महा-विद्याओं** में प्रधान यह **कवच** मेरे द्वारा कहा गयां है ।।६।। **गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव - शक्ति, भैरव** और **सभी पाँचों तत्त्व-कवच** के आवर्तन (सतत-पाठ) से सन्तुष्ट होते हैं ।।७।।

त्रैलोक्य-विजय-दायक यह **तुरीय कवच** (यहाँ **'तुरीय'** शब्द संख्या-वाचक न होकर विशेषण के रूप में है) **ऊर्ध्वाम्नाय** के **महा-मन्त्रों** से मेरे द्वारा निर्मित है ।।८।।

श्रीस्कन्द ने कहा-**धर्म, अर्थ, काम** और **मोक्ष** देनेवाली देवी का **श्रेष्ठ कवच** जो आपने पहले सूचित किया है, मैं सुनना चाहता हूँ ।।९।। जिसके बिना **आराधना, जप** और **ध्यानादि कर्म** नहीं होते, वह **कवच**, **हे प्रभो**! जैसे भी हो, मुझसे कहिए ।।१०।।

श्रीईश्वर ने कहा-**हे महा-प्रज्ञावान् पुत्र!** यह **दिव्य तुरीय कवच** अत्यन्त शुभ और सभी मन्त्रों से युक्त, रहस्य का भी रहस्य (अत्यन्त रहस्य-मय) है ।।११।।

पूजन के अन्त में जप के पूर्व **कवच** पढ़ना चाहिए। इस **कवच** के ऋषि **आनन्द-भैरव** हैं ।।१२।। **गायत्री** छन्द है और **श्रीश्रीविद्या** इसकी देवता हैं। **'रमा'** (**श्रीं**) इसका बीज है, **'परा'** (**ह्रीं**) बीज इसकी शक्ति और **'वाग्भव'** (**ऐं**) बीज कीलक है ।।१३।।

सर्वार्थ-सिद्धि के लिए इसका विनियोग है। अंगुष्ठ में **'वाग्भव'** (**ऐं**) तथा तर्जनी में **'हृल्लेखा'** (**ह्रीं**) का न्यास करे ।।१४।। **'लक्ष्मी-बीज'** (**श्रीं**) का मध्यमा में, **अङ्गिरा** (**ऐं**) बीज का अनामिका में, **'परा-बीज'** (**ह्रीं**) का कनिष्ठा में और **'लक्ष्मी'** (**श्रीं**) का करतल में न्यास करे ।।१५।।

हृदय में **'वाग्भव'** (**ऐं**), शिर में **'परा'** (**ह्रीं**), शिखा में **'लक्ष्मी'** (**श्रीं**), **कवच** में **'वाग्भव'** (**ऐं**), नेत्रों में **'ह्ल्लेखा'** (**ह्रीं**) और अस्त्र में **'कमला'** (**श्रीं**) का न्यास करे। **'भूर्भुवः स्वः'** से **दिग्-बन्धन** करे। **न्यास, ध्यान** आदि करके ही **कवच** का पाठ करना चाहिए। **धर्म, अर्थ, काम** और **मोक्ष-दायक ध्यान** कहता हूँ ।।१६-१८।।

क्षीर-सागर के मध्य में **मनोहर रत्न-द्वीप** में स्थित **रत्न-सिंहासन** पर **देवी का चिन्तन** (**ध्यान**) करे ।।१९।। वे **करोड़ों सूर्यों** के समान प्रकाशमान हैं। **करोड़ों चन्द्रमाओं** के समान उनका मुख-मण्डल है, वे **दाडिम (अनार) पुष्प** और **कुंकुम** के समान रङ्ग की आभा से युक्त हैं ।।२०।।

जपा-कुसुम (जासौन) के समान उनके तीन नेत्र हैं। **पाश, अंकुश, इक्षु-चाप** (गन्ने से बना धनुष) और **बाणों** से युक्त **चार भुजाएँ** हैं ।।२१।। **कपूर** आदि से सुवासित **ताम्बूल** से उनका मुख भरा है। सब प्रकार के शृङ्गार से युक्त उनके सभी अवयव (अङ्ग) अत्यन्त सुन्दर हैं ।।२२।। वे सभी आयुधों से युक्त हैं, पूरे परिवार और आवरण-देवताओं से युक्त हैं। प्रसन्नता उनके शरीर और आँखों से झलकती है ।।२३।।

हे वीर! इस प्रकार ध्यान करके **समस्त कामनाओं के दाता** और **सब प्रकार से रक्षा** करनेवाले **शुभ कवच** से अपनी देह को ढाँके (रक्षा करे) ।।२४।।

।। कवच-स्तोत्र-पाठ ।।

मेरी शिखा की रक्षा **'ह्सौः'** और ब्रह्म-रन्ध्र की रक्षा **'स्हौ'** करें। मेरे बाँएँ और दाहिने भाग की रक्षा सदा **'ह्लौं'** करें ।।१।। **'ऐं ह्रीं श्रीं' षोडशी सुन्दरी परा** सदा रक्षा करें। **'श्रीं ह्रीं क्लीं'** सर्वदा रक्षा करें, **'ऐं सौः ॐ'** सदा मेरी रक्षा करें ।।२।। **'ह्रीं श्रीं ऐं'** सब जगह और **'क्नौं रं लं ह्रीं'** सदा मेरी रक्षा करें। **'क्लीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं'** और **'सौः क्लीं'** सदा मेरी रक्षा करें ।।३।।

'सौः ऐं क्लीं ह्रीं' बीज-युक्त **षोडशाक्षरी लक्ष्मी** मेरी रक्षा करें। आपाद-मस्तक (सिर से पैरों तक) **महा-त्रिपुर-सुन्दरी** रक्षा करें ।।४।। सदा विभूति के लिए **श्रीजयन्ती** मेरे मस्तक की रक्षा करें। सर्वार्थ-सिद्धि के लिए **'ह्रीं' मङ्गला** सदा मेरे नेत्रों की रक्षा करें ।।५।। सर्व-शुभावहा **'क्लीं' कालिका** दोनों कानों की रक्षा करें। सर्व-विध जय-प्राप्ति के लिए **'ऐं' भारती** घ्राण-युग्म (नासा-पुट-द्वय) की रक्षा करें ।।६।।

सर्व-लोक-वशीकरण के लिए **'सौः' कराली** मुख की रक्षा करें। साहित्य-सिद्धि के लिए **'ऐं' शारदा** सदा वाचा (वाणी) की रक्षा करें ।।७।। सद्-गायन की सिद्धि के लिए **'ॐ' कपालिनी** मेरे कानों की रक्षा करें। **दुर्गा** के साथ **'ह्रीं'** मेरे स्कन्ध 'कन्धे' की सदा रक्षा

करें।।८।। **क्षमा**-सहित **'श्रीं'** सर्वदा मेरे हृदय की रक्षा करें। **ककार-सहित धात्री** मेरे दोनों पाश्र्वों की रक्षा करें।।९।।

एकार-सहित 'स्वाहा' मेरे जठर (पेट) की रक्षा करें। **ईकार-सहित 'स्वधा'** सर्वदा मेरी नाभि की रक्षा करें।।१०।। **लकार-सहित ब्राह्मी** सदा पृष्ठ-देश की रक्षा करें। **'ह्रीं'कार-सहित माहेशी** सदा मेरी कमर की रक्षा करें।।११।। **हकार-सहित कौमारी** सर्वदा गुह्य-स्थान की रक्षा करें। **सकार-सहित वैष्णवी** गुद-देश की रक्षा करें।।१२।।

ककार-सहित वाराही सदा उरु-द्वय की रक्षा करें। **हकार-सहित माहेन्द्री** जानु-द्वय की रक्षा करें।।१३।। **लकार-सहित चामुण्डा** दोनों जंघाओ की सदा रक्षा करें। **ह्रींकार-सहित लक्ष्मी** (महा-लक्ष्मी) गुल्फ-द्वय की रक्षा करें।।१४।। **सकार-सहित शिव-दूती** दोनों पैरों की रक्षा करें। **ककार-सहित चण्डा** सदा पूर्व दिशा में रक्षा करें।।१५।।

लकार-सहित प्रचण्डा सर्वदा आग्नेय दिशा में रक्षा करें। **ह्रींकार-सहित चण्ड-नायिका** दक्षिण - दिशा में रक्षा करें।।१६।। **सौः-कार-सहित चण्ड-वेगिनी** नैऋत्य दिशा में रक्षा करें। **ऐंकार-सहित चण्ड-प्रकाशा** पश्चिम दिशा में रक्षा करें।।१७।। **क्लींकार-सहित चण्डिका** वायव्य दिशा में रक्षा करें। **ह्रींकार-सहित चामुण्डा** उत्तर-दिशा में रक्षा करें।।१८।।

श्रींकार-सहित रौद्री ईशान-दिशा में मेरी रक्षा करें। **षोडशी के साथ ब्रह्माणी** ऊर्ध्व-दिशा में रक्षा करें।।१९।। **षोडशी के साथ वैष्णवी** अधो-दिशा में रक्षा करें। सर्वाङ्ग की सर्वदा रक्षा **षोडशी-सहित भुवनेश्वरी** करें।।२०।। जल में, दावानल में, जङ्गल में, महोत्पात में, समुद्र में दिन-रात **तार-त्रयी ('ऐं ह्रीं श्रीं'** -स्वरूपा) **देवी** मेरी रक्षा करें।।२१।।

।। फल-श्रुति ।।

यह **तुरीया-कवच षोडशाक्षर-मन्त्र** के बीजों से निर्मित और अभेद्य है।।१।। **योगिनी-चक्र -सहित** इसे तुम्हारी प्रीति-वश प्रकाशित किया है। **हे सुपुत्र**! मेरे द्वारा दिए गए इस गोपनीय कवच को धारण करो।।२।। **श्रीत्रिपुर-सुन्दरी** का यह **तुरीय-कवच** पुत्र, शिष्य और बन्धु आदि को भी नहीं बताना चाहिए।।३।। **मन्त्र-वर्णों** के क्रम में कहा गया यह **कवच** प्रयत्न-पूर्वक गुप्त रखे। **प्रातः -काल से सन्ध्या-काल** तक के कर्म वैदिक कहे गए हैं।।४।।

इनके समान फल **तुरीय-कवच** के व्रत से मिलता है। दस प्रकार के **मातृका-न्यास, लघु-षोढा-न्यास**।।५।। **शक्ति-न्यास** तथा **महा-षोढा-न्यास** बाह्य और अन्तर में करे।

श्रीश्रीविद्या के **महा-न्यास** से क्रमानुसार सावर्णता मिलती है।।६।। इन **न्यासों-सहित पूजन** से जो फल मिलता है, वह **कवच-व्रत (पाठ)** से ही मिल जाता है। साधक बछड़े और दुग्ध-दायी काम-धेनु के समान हो जाता है ।।७।।

यह **त्रैलोक्य-विजय कवच** परम अद्‌भुत है। जिस प्रकार **हे पुत्र**! मन-चाही वस्तु सोचते ही **चिन्ता-मणि** उसे प्रदान करती है ।।८।। उसी प्रकार इससे भी शीघ्र ही कामना-पूर्ति होती है, यह मेरा कथन संशय-हीन है। **आयु, ऐश्वर्य** और **सदा सम्पत्ति की वृद्धि** के साथ, **कवच** के प्रभाव से साधक **त्रैलोक्य-विजयी** होता है। अदीक्षित और श्रद्धा से हीन मनवाले व्यक्ति को यह **कवच** नहीं देना चाहिए ।।९-१०।। न ही कृतघ्न और आत-तायी (अत्याचारी) आदि जिस-तिस से इसे कहना चाहिए। **शान्त, गुरु-भक्त, शुद्ध** और **साधु** को ही देना चाहिए ।।११।।

इस **कवच** को बिना जाने जो **पर-देवता का मन्त्र** जपता है, उसे **हे वत्स**! सैकड़ों करोड़ कल्पों में भी सिद्धि नहीं मिलती ।।१२।। **हे पुत्र**! जो **तीनों सन्ध्याओं** में इस **उत्तम कवच** का **नित्य पाठ** करता है, वह **साक्षात् गुरु** है ।।१३।।**अर्ध-रात्रि** में, **जप-काल** में, प्रति-दिन **यन्त्र-राज** के आगे जो इसका **पाठ** करता है, वह सारे संसार को शीघ्र ही वश में कर लेता है, इसमें संशय नहीं ।।१४।। उत्तम वर्ण और गुणों से युक्त **सात करोड़ महा-मन्त्र** (इसके **पाठ** से) प्रसन्न हो जाते हैं। यह सत्य है, इसमें संशय नहीं ।।१५।। **कवच** का यह **सगुण भजन-क्रम** है। अब इसका **निर्गुण-क्रम** सुनो-।।१६।।

इस **कवच** का माहात्म्य वर्णित करने में मैं समर्थ नहीं हूँ। **मूलाधार** से **ब्रह्म-रन्ध्र** तक **श्रीचक्र** कहा गया है अर्थात् **मूलाधार** से **ब्रह्म-रन्ध्र** पर्यन्त करे ।।१७।। **शरीर के मध्य में समस्त श्रीचक्र का चिन्तन** करे। **पच्चीस तत्त्वों** तथा **अतल, वितल, सुतल, तलातल, महा-तल, रसातल** और सातवाँ **पाताल-लोक** ।।१८-१९।। **भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः तपः** और **सत्य-लोक-ये चौदह भुवन** ।।२०।। इन सभी के साथ **श्रीभुवन** को भी **निराकार ध्यान** करके **चिन्मय-ज्योति-स्वरूपिणी देवता** का **मानसिक पूजन** करके **कवच का पाठ-कर्त्ता** हे वत्स! **राज-राजेश्वर** होता है।।२१।।

यह सभी मन्त्रों का सार **परम रहस्य-मय** है। जो **परम भक्ति** से निश्चल (दृढ़) और निर्मल मन से इस (**कवच**) का **भजन** करता है, वह इस लोक में पुत्र-पौत्रादि की वृद्धि, सभी प्रकार की धन-सम्पत्ति-युक्त पाकर **क्रीड़ा** (**जीवन-यापन**) करता है और **भोग-मोक्ष** को पाता है ।।२३।।

★★★

।। श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः।।

श्रीषोडशी-कवच-साधना

।। पूर्व-पीठिका—श्रीदेव्युवाच ।।

भगवन् देव-देवेश!, लोकानुग्रह-कारक ।
त्वत्-प्रसादान् महा-देव!, श्रुता मन्त्रास्त्वनेकधा ।।१।।
साधनं विविधं देव!, कीलकोद्धरणं तथा ।
शापादि-दूषणोद्धारः, श्रुतस्त्वत्तो मया प्रभो! ।।२।।
राज-राजेश्वरी-देव्याः, कवचं सञ्चितं मया ।
श्रोतुमिच्छामि त्वत्तस्तत्कथयस्व दया-निधे! ।।३।।

।। श्रीईश्वर उवाच ।।

लक्ष-वार-सहस्राणि, वारिताऽसि पुनः पुनः ।
स्त्री-स्वभावात् पुनर्देवि!, पृच्छसि त्वं मम प्रिये! ।।४।।
अत्यन्त-गुह्यं कवचं, सर्व-काम-फल-प्रदम्।
प्रीतये तव देवेशि!, कथयामि शृणुष्व तत् ।।५।।

।। कवच-स्तोत्रम् ।।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीषोडशी-कवचस्य श्रीमहादेव ऋषिः। प्रस्तार-पंक्तिश्छन्दः। श्री राज-राजेश्वरी महा-त्रिपुर-सुन्दरी देवता। धर्मार्थ-काम-मोक्ष-साधने पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीमहादेव-ऋषये नमः शिरसि। प्रस्तार-पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे। श्रीराज-राजेश्वरी-महा-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः हृदि। धर्मार्थ-काम-मोक्ष-साधने पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

पूर्वे मां भैरवी पातु, बाला मां पातु दक्षिणे ।
मालिनी पश्चिमे पातु, त्रासिनी तूत्तरेऽवतु ।।१।।
ऊर्ध्वं पातु महा-देवी, महा-त्रिपुर-सुन्दरी ।
अधस्तात् पातु देवेशी, पातालातल-वासिनी ।।२।।
आधारे वाग्भवः पातु, काम-राजस्तथा हृदि ।
डामरः पातु मां नित्यं, मस्तके सर्व-कामदः ।।३।।
ब्रह्म-रन्ध्रे सर्व-गात्रे, छिद्र-स्थाने च सर्वदा ।
महा-विद्या भगवती, पातु मां परमेश्वरी ।।४।।

ऐंह्रीं ललाटे मां पातु, क्लीं क्लुं सश्च नेत्रयोः ।

नासायां मे कर्णयोश्च, द्रीं द्रैं द्रां द्रीं चिबुके तथा ।।५।।

सौः पातु गले हृदये, सहह्रीं नाभि-देशके ।

कलह्रीं क्लीं स्त्रीं गुह्य-देशे सह्रीं पादयोस्तथा ।।६।।

सह्रीं मां सर्वतः पातु, सकली पातु सन्धिषु ।

जले स्थले तथाकाशे, दिक्षु राज-गृहे तथा ।।७।।

हूं क्षेमा त्वरिता पातु, सह्रीं सक्लीं मनोभवा ।

हंसः पायान् महा-देवि!, परं निष्कल-देवता ।।८।।

विजया मङ्गला दूती, कल्याणी भग-मालिनी ।

ज्वाला च मालिनी नित्या, सर्वदा पातु मां शिवा ।।९।।

।। फल-श्रुति ।।

इत्येवं कवचं देवि!, देवानामपि दुर्लभम् ।

तव प्रीत्या मयाख्यातं, गोपनीयं प्रयत्नतः ।।१।।

इदं रहस्यं परमं, गुह्याद् गुह्यतरं प्रिये! ।

धन्यं यशस्यमायुष्यं, भोग-मोक्ष-प्रदं शिवे! ।।२।।

दुःस्वप्न-नाशनं पुण्यं, नर-नारी-वशङ्करम् ।

आकर्षण-करं देवि!, स्तम्भोच्चाटकं शिवे! ।।३।।

इदं कवचमज्ञात्वा, राज-राजेश्वरीं पराम् ।

योऽर्चयेद् योगिनी-वृन्दैः, स भक्ष्यो नात्र संशयः ।।४।।

न तस्य मन्त्र-सिद्धिः स्यात्, कदाचिदपि शाङ्करि! ।

इह-लोके च दारिद्र्यं, रोग-दुःखाशुभानि च ।।५।।

परत्र नरकं गत्वा, पशु-योनिमवाप्नुयात् ।

तस्मादेतत् सदाभ्यासादधिकारी भवेत् किल ।।६।।

मद्-वक्त्र-निर्गतमिदं,देव्याः कवचं सु-पुण्यम् ।

पूजा-विधेश्च पुरतो विधिना पठेद्यः ।।७।।

सौभाग्य-भाग-ललितानि शुभानि भुक्त्वा ।

देव्याः पदं भजति तत् पुनरन्त-काले ।।८।।

।। कुलानन्द-संहितायां श्रीषोडशी-कवचम्।।

★★★

॥ श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी को नमस्कार॥

श्रीषोडशी-कवच-साधना (हिन्दी-रूपान्तर)

।। पूर्व-पीठिका ।।

श्रीदेवी ने कहा–**हे देव-देवेश्वर भगवन्!** आप लोकों पर दया करनेवाले हैं। आपकी कृपा से मैंने अनेक प्रकार के मन्त्र सुने हैं। अनेक प्रकार के साधन, कीलक, उद्धार, शापादि-दोषों के दूर करने के उपाय आपसे मैंने सुने हैं। **राज-राजेश्वरी देवी** का कवच मैं सुनना चाहती हूँ। हे दया-निधे! उसे कहिए।।१-३।।

श्री ईश्वर ने कहा–लाखों बार मना करने पर भी **हे देवि!** स्त्री-स्वभाव से तुम पुनः उस अति गोपनीय कवच को पूछ रही हो, जो सभी कामनाओं का फल देनेवाला है। **हे देवेशि!** तुम्हारी प्रसन्नता के लिए उसे कहता हूँ , सुनो।।४-५।।

।। विनियोग ।।

इस **श्रीषोडशी - कवच** के ऋषि **श्रीमहा - देव**, छन्द **प्रस्तार - पंक्ति**, देवता **श्रीराज-राजेश्वरी महा-त्रिपुर-सुन्दरी** हैं और इसके पाठ का विनियोग **धर्मार्थ-काम-मोक्ष** की सिद्धि के लिए किया जाता है।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

शिर में **श्री महा-देव** ऋषि को, मुख में **प्रस्तार-पंक्ति** छन्द को, हृदय में **श्रीराज-राजेश्वरी महा-त्रिपुर-सुन्दरी** देवता को नमस्कार है और सारे शरीर में **धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष** की सिद्धि हेतु इसके पाठ के विनियोग को नमस्कार है।

।। श्रीषोडशी-कवच-स्तोत्र ।।

पूर्व में **भैरवी** मेरी रक्षा करें, **बाला** दक्षिण में मेरी रक्षा करें। **मालिनी** पश्चिम में, उत्तर में **त्रासिनी** रक्षा करें ।।१।।

ऊपर **महा-देवी महा-त्रिपुर-सुन्दरी** रक्षा करें, नीचे पातालातल-वासिनी **देवेशी** रक्षा करें ।।२।।

मूलाधार में **वाग्भव 'ऐं'** रक्षा करें और हृदय में **काम--राज 'क्लीं'**। सभी कामनाओं को पूरा करनेवाला **डामर 'सौः'** सदा मेरे मस्तक की रक्षा करें ।।३।।

ब्रह्म-रन्ध्र में और शरीर के सभी छिद्र-स्थानों में **महा-विद्या भगवती परमेश्वरी** सदा मेरी रक्षा करें ।।४।।

ललाट में **'ऐं ह्रीं'** मेरी रक्षा करें और नेत्रों में **'क्लीं क्लुं सः'**। नाकों और कानों में तथा चिबुक (ठोड़ी-ठुड्डी) में **'द्रीं द्रैं द्रां द्रीं'** ।।५।।

गले और हृदय में **'सौः'** रक्षा करें, नाभि में **'सहहीं'**। गुह्य में **'कलहीं क्लीं स्त्रीं'** और पैरों में **'सहीं'** ।।६।।

सभी ओर **'सहीं'** मेरी रक्षा करें। सन्धियों में, जल-स्थल-आकाश और दिशाओं में तथा राज-महल में **'सकली'** रक्षा करें ।।७।।

'हूं क्षेमा त्वरिता', 'सहीं सक्लीं मनोभवा' रक्षा करें। **हे महा-देवि!** परम निष्कल देवता **'हंसः'** रक्षा करें ।।८।।

'विजया, मङ्गला, दूती, कल्याणी, भग-मालिनी, ज्वाला-मालिनी, नित्या, शिवा' सदैव मेरी रक्षा करें ।।९।।

।। फल-श्रुति ।।

हे देवि! यह **कवच** देवों के लिए भी दुर्लभ है। तुम्हारे प्रेम-वश कहा है, इसे यत्न-पूर्वक गुप्त रखना चाहिए।।१।।

हे प्रिये! यह गुप्त से भी गुप्त **अति गुप्त** है। यह **धन-धान्य, आयु, भोग** और **मोक्ष** देनेवाला है।।२।।

बुरे स्वप्नों के प्रभाव को यह नष्ट करनेवाला और स्त्री-पुरुष सभी को वशीभूत करनेवाला है। **हे शिवे!** इससे आकर्षण, स्तम्भन और उच्चाटन होते हैं ।।३।।

इस **कवच** को जाने बिना जो **परा देवी राज-राजेश्वरी** की पूजा करता है, उसे **योगिनियाँ** खा जाती हैं, इसमें सन्देह नहीं ।।४।।

हे शाङ्करि! उसे कभी **मन्त्र की सिद्धि** नहीं मिलती। इस संसार में **दरिद्रता, रोग, दुःख** और **अकल्याण**-ग्रस्त होकर अन्त में नरक में जाकर वह पशु-योनि में जन्म लेता है। इसलिए विधि-वत् अभ्यास कर इस **कवच का अधिकारी** बनना चाहिए।।५-६।

मेरे मुख से निकला हुआ यह **कवच** बहुत ही पुण्य-दायक है। **कवच की पूजा-विधि** को **गुरु** से जानकर जो विधि-पूर्वक इसका पाठ करता है, वह **सुन्दर सौभाग्य** को भोग कर अन्त में **देवी के परम पद** को प्राप्त करता है।।७-८।।

★★★

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीपरा-महा-योनि-कवच-साधना

।। पूर्व-पीठिका ।।

ॐ नमः शिवाय गुरवे, नाद-विन्दु-कलात्मने।
श्रीगणेशाय नमः। श्रीमन्महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः ।

।। श्रीभैरव उवाच ।।

क्रम-दीक्षा-विधानानि, मयोक्तानि महेश्वरि!।
त्वयात्मनः कुलागारे, कवचं यत् सु-गोपितम् ।।१।।
अधुना कृपया त्वं च, तत्-सर्वं वक्तुमर्हसि।

।। श्रीभैरव्युवाच ।।

श‍ृणु! नाथ प्रवक्ष्यामि, तन्त्र-सारमिदं महत् ।।२।।
एतच्छ्री-कवचस्यास्य, पर-ब्रह्म ऋषिः शिवः।
महती जगतीच्छन्दश्चिच्छक्तिर्देवतोच्यते।।३।।
ऐं वीजं ह्रीं तथा शक्तिः, सकलह्रीं कीलकं तथा।
पर-ब्रह्म-प्राप्ति-हेतौ, विनियोगः प्रकीर्तितः।।४।।

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्री परा-महा-योनि-कवचस्य श्री पर-ब्रह्म-शिवः ऋषिः। महती जगतीः छन्दः। श्री चिच्छक्तिः देवता। ऐं वीजं। ह्रीं शक्तिः। सकलह्रीं कीलकं। पर-ब्रह्म-प्राप्ति-हेतौ पाठे विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

श्री पर - ब्रह्म - शिवः - ऋषये नमः शिरसि। महती जगतीः - छन्दसे नमः मुखे। श्री चिच्छक्तिः-देवतायै नमः हृदये। ऐं-वीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं-शक्त्ये नमः नाभौ। सकलह्रीं-कीलकाय नमः पादयोः। पर-ब्रह्म-प्राप्ति-हेतौ पाठे विनियोगाय नमः सर्वांगे।

। ध्यान ।।

ॐ आधारे तरुणार्क-बिम्ब-रुचिरं हेम-प्रभं वाग्भवम्।
बीजं मन्मथमिन्द्र-गोप-सदृशं हृत्-पङ्कजे संस्थितम् ।।
विष्णु-ब्रह्म-पदस्थ-शक्ति-कलितं सोम-प्रभा-भासुरम्।
ये ध्यायन्ति पद-त्रयं तव शिवे! ते यांति सौख्यं पदम् ।।

।। कवच-पाठ ।।

ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् उग्र-तारा, मूलाधारं ममावतु ।
ह्रीं भुवनेश्वरी पातु, स्वाधिष्ठानं च मे सदा।।१।।
क्रीं हूं ह्रीं दक्षिणा पातु, मणिपुरं तथा मम।
नमो भगवत्यै हस्ख्फ्रें, कुब्जिकायै स्हां स्हीं स्हूं -
ङञणनमे-अघोरा-मुखि छां छी किणि-किणि विच्चे ।।२।।
अनाहतं सदा पातु, कुब्जिका परमेश्वरी।
फ्रें ख्फ्रें गुह्य-काली सा, विशुद्धं मे च रक्षतु ।।३।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं श्रीं ।
आज्ञा-चक्रं महा-देवी, षोडशी पातु मे सदा ।।४।।
हस्क्ष्म्लवरयूँ स्हक्ष्म्लवरयीं।
नाद-चक्रं च मे पातु, श्रीमदानन्द-भैरवः ।।५।।
ह्सौंः स्हौंः अर्ध-नारीश्वरी बिन्दुश्च मेऽवतु।
हंसः सोऽहं सदा पातु, सहस्रारं सदा मम ।।६।।
कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं श्रीं।
शिरो मे पातु सा देवी, महा-त्रिपुर-सुन्दरी ।।७।।
'कएईलह्रीं' कामेशी, भ्रू-मध्यं मे सदाऽवतु।
'हसकहलह्रीं' वज्रेशी, दक्ष-नेत्रं सदाऽवतु ।।८।।
'सकलह्रीं' वाम-नेत्रं, रक्षतु भग-मालिनी ।
'हस्रें हस्कलह्रीं ह्सौंः', त्रि-नेत्रं पातु भैरवी ।।९।।
'ह्रीं श्रीं सौः' त्रिपुरा-सिद्धा, कर्णौ मे परि-रक्षतु ।
'ह्रीं क्लीं क्षुं' मां सदा पातु, मुखं त्रिपुर-मालिनी।।१०।।
'हसैं हस्क्लीं हसौं' कण्ठं, पातु श्रीत्रिपुरा-श्रीर्मे।
'हैं हक्लीं हसौं' पातु, वक्षस्त्रिपुर-वासिनी ।।११।।
दौवारिजौ सदा पातु, ह्याणिमाद्यष्ट-सिद्धयः ।
'ह्रीं क्लीं सौः' पातु मे नाभिं, परा त्रिपुर-सुन्दरी ।।१२।।
दश-मुद्रा-युता देवी, ममोरू पातु सर्वदा ।
'ऐं क्लीं सौः' पातु मे जानू, श्रीमहा-त्रिपुरेश्वरी ।।१३।।
षड्-दर्शनं सदा पातु, जङ्घा-युग्मं च सर्वदा ।
'अं आं सौः' त्रिपुरा पातु, पादौ च सतत नमः ।।१४।।

'ॐ ह्रीं श्रीं' पातु मां पूर्वे, श्रीमहा-भुवनेश्वरी।
'कएईलह्रीं' दक्षिणे मां, पराऽऽद्या परि-रक्षतु ।।१५।।
'सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं' श्रीकुजा, पश्चिमे मां सदाऽवतु।
'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः' चोत्तरे मां, पातु योगेश्वरी परा।।१६।।
'हसकहलह्रीं' पातु, मामधो वज्र-योगिनी ।
'सकलह्रीं' सा ललिता, ह्यूर्ध्वे मां परि-रक्षतु ।।१७।।
श्रीं-५ ॐ-३ क-५ ह-६ स-४ सौः-५ सदाऽवतु।
सर्वाङ्गं मे च चिद्रूपा, महा-त्रिपुर-सुन्दरी ।।१८।।

(श्रीं-५ = श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः, ॐ-३ = ॐ ह्रीं श्रीं, क-५ = क ए ई ल ह्रीं, ह-६ = ह स क ह ल ह्रीं, स-४ = स क ल ह्रीं, सौः-५ = सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं)

।। फल-श्रुति।।

इति ते कथितं देव!, ब्रह्मानन्द-मयं परम् ।
श्रीमहा - योनिराख्यातं, कवचं देव-दुर्लभम् ।।१।।
मम तेजसा रचितं, श्रीविद्या-क्रम-संयुतम् ।
तव स्नेहान्महा-देव!, तवाग्रे तु मयोदितम् ।।२।।
राज्यं देयं शिरो देयं, न देयं कवचं परम् ।
देयं पूर्णाभिषिक्ताय, स्व-शिष्याय महेश्वर! ।।३।।
अन्यथा नारकी भूयात्, कल्प-कोटि-शतैरपि ।
दिक्-सहस्रेण पाठेन, ह्यसाध्यं साध्यते क्षणात् ।।४।।
लक्षं जप्त्वा महा-देव!, तद्दशांशं हुनेद् यदि ।
ब्रह्म - ज्ञानमवाप्नोति, पर-ब्रह्मणि लीयते ।।५।।
भूर्जे विलिख्य गुटिकां, स्वर्णस्थां धारयेद् यदि ।
कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ, साक्षात् कामेश्वरो भवेत् ।
नारी वाम - भुजे धृत्वा, भवेत् त्रिपुर-सुन्दरी ।।६।।

ॐ तत्सत् श्रीमहा-निर्वाण-तन्त्रे श्रीमहा-योनि-नाम
श्रीमन्महा-त्रिपुर-सुन्दरी-कवचम्।।

★★★

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीषोडशी-हृदय-स्तोत्र-साधना

कैलासे करुणाक्रान्ता, परोपकृति-मानसा।
पप्रच्छ करुणा-सिन्धुं, सु-प्रसन्नं महेश्वरम् ।।१।।

।। श्रीपार्वत्युवाच ।।

आगामिनि कलौ ब्रह्मन्!, धर्म-कर्म-विवर्जिताः।
भविष्यन्ति जनास्तेषां, कथं श्रेयो भविष्यति? ।।२।।

।। श्रीशिव उवाच ।।

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि, तव स्नेहान्महेश्वरि! ।
दुर्लभं यत् त्रिलोकेषु, सुन्दरी-हृदय-स्तवम् ।।३।।

ये नरा दुःख-सन्तप्ता, दारिद्र्य-हत-मानसाः।
अस्यैव पाठ-मात्रेण, तेषां श्रेयो भविष्यति ।।४।।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-हृदय-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्री आनन्द-भैरव ऋषिः । दैवी गायत्री छन्दः । श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी देवता । ऐं बीजं । सौः शक्तिः। क्लीं कीलकं । धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्री आनन्द-भैरवाय-ऋषये नमः शिरसि। दैवी-गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः हृदये। ऐं बीजाय नमः लिङ्गे। सौः शक्तये नमः नाभौ। क्लीं कीलकाय नमः मूलाधारे। धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे विनियोगाय नमः पादयोः ।

षडङ्ग-न्यासः	कर	अङ्ग
ऐं ह्रीं क्लीं	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
क्लीं श्रीं सौः ऐं	तर्जनीभ्यां स्वाहाः	शिरसे स्वाहा
सौः ॐ ह्रीं श्रीं	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ऐं कएईलह्रीं हसकहलह्रीं	अनामिकाभ्यां हुम्	कवचाय हुम्
क्लीं सकलह्रीं	कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
सौः सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं	करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

।। ध्यानम् ।।

बाल - व्यक्त - विभाकरामित - निभां भव्य - प्रदां भारतीम्,
ईषत् - फुल्ल - मुखाम्बुज - स्मित-करैराशा-भवान्धापहाम् ।
पाशं साभयमंकुशं च वरदं सम्बिभ्रतीं भूतिदाम्,
भ्राजन्तीं चतुरम्बुजाकृति-करैर्भक्त्या भजे सुन्दरीम् ।।

।। हृदय-स्तोत्र-पाठ ।।

सुन्दरी सकल - कल्मषापहा, कोटि-कञ्ज-प्रिय-काम्य-कान्तिका ।
कोटि-कल्प-कृत-पुण्य-कर्मणा, पूजनीय-पद-पुण्य-पुष्करा ।।१।।
शर्वरीश-सम-सुन्दरानना, श्रीश - शक्ति - सुकृताश्रय - श्रिता ।
सज्जनानु-शरणीय-सत्-पदा, सङ्कटे सुर-गणैः सु-वन्दिता ।।२।।
या सुरासुर-रणे जयान्विता, आजघान जगदम्बिकाऽजिता ।
तां भजामि जगतां जनिं जयां, युद्ध-युक्त-दितिजान् सु-दुर्जयान् ।।३।।
योगिनां हृदय-सङ्गतां शिवां, योग - युक्त - मनसां यतात्मनाम् ।
जाग्रतीं जगति यत्नतो द्विजा, यां जपन्ति हृदि तां भजाम्यहम् ।।४।।
कल्पकास्तु कलयन्ति कालिकां, यत्-कला कलि-जनोपकारिकाम् ।
कौल-कालि-कलिताङ्घ्रि-कञ्जकां, तां भजामि कलि-कल्मषापहाम् ।।५।।
बालार्कानन्त - शोचिर्निज - तनु - किरणैर्दीपयन्तीं दिगन्तान्,
दीप्तैर्देदीप्यमानां दनुज-दल-वनानल्प-दावानलाभाम् ।
दान्तो दन्तोग्र-चित्तान् दलित-दिति-सुतान् दर्शनीयान् दुरन्तान्,
देवीं दीनार्द्र-चित्तां हृदि मुदित-मनाः सुन्दरीं संस्मरामि ।।६।।
धीरान् धन्यान् धरित्रीं धव-विधृत-शिरो-धूत-धूल्यब्ज-पादान्,
धृष्टान् धाराधराधो-विनिधृत-चपला-चारु-चन्द्रत्-प्रभाभाम् ।
धर्मान् धूतोपहारान् धरणि सुर-धवोद्धारिणीं ध्येय-रूपाम्,
धीमद्-धन्याऽति-धन्यां घनद-घन-वृतां सुन्दरीं चिन्तयामि ।।७।।
जयतु जयतु जल्पा योगिनी योग-युक्ता, जयतु जयतु सौम्या सुन्दरी सुन्दरास्या ।
जयतु जयतु पद्मा पद्मिनी केशवस्य,जयतु जयतु काली कालिनी काल-कान्ता ।।८।।
जयतु जयतु खर्वा षोडशी वेद-हस्ता, जयतु जयतु धात्री धर्मिणी धातृ-शक्तिः ।
जयतु जयतु वाणी ब्राह्मणा ब्रह्म-वन्द्या, जयतु जयतु दुर्गा दारिणी देव-शत्रोः।।९।।
देवी त्वं सृष्टि - काले कमल - भव - भृता राजसी रक्त-रूपा,
रक्षा - काले त्वमम्बा हरि-हृदय - धृता सात्त्विकी श्वेत-रूपा।
भूरि - क्रोधा भवान्ते भव - भवन - गता तामसी कृष्ण-रूपा,
एताश्चान्यास्त्वमेव क्षिति - मनुज - मता सुन्दरी केवलाद्या।।१०।।
सुमल - सुमनमेतद् देवि! गोप्यं गुणज्ञे, ग्रहण - मनन - योग्यं षोडशीयं खलघ्नम्।
सुर-तरु-सम-शीलं सम्प्रदं पाठकानां, प्रभवति हृदयाख्यं स्तोत्रमत्यन्त-मान्यम्।।११।।
इदं त्रिपुर-सुन्दर्याः षोडश्याः परमाद्भुतं, यः शृणोति नरः स्तोत्रं स सदा सुखमश्नुते ।।१२।।

।। श्रीत्रिपुर-सुन्दरी-तन्त्रे हृदयाख्यं स्तोत्रम् ।।

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीषोडशी-अष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्र-साधना

चतुर्वक्त्र जगन्नाथ!, स्तोत्रं वद मम प्रभो।
यस्यानुष्ठान-मात्रेण, नरो भक्तिमवाप्नुयात् ।।१।।
सहस्त्र-नाम्नामाकृष्य, नाम्नामष्टोत्तरं शतम्।
गुह्याद्-गुह्यतरं गुह्यं, सुन्दर्याः परि-कीर्तितम् ।।२।।

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्रीषोडश्यष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रस्य श्री शम्भुः ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः । श्रीषोडशी देवता । धर्मार्थ-काम-मोक्ष-सिद्धये पाठे विनियोगः ।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

श्रीशम्भु-ऋषये नमः शिरसि । अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे। श्रीषोडशी-देवतायै नमः हृदये। धर्मार्थ-काम-मोक्ष-सिद्धये पाठे विनियोगाय नमः सर्वांगे।

।। ध्यान ।।

बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्बाहां त्रि-लोचनाम् ।
पाशांकुश-शरांश्चापं, धारयन्तीं शिवां भजे ।।

।। अष्टोत्तर-शत-नाम ।।

ॐत्रिपुरा[१] षोडशी[२] माता[३], त्र्यक्षरा[४] त्रितया[५] त्रयी[६]।
सुन्दरी[७] सुमुखी[८] सेव्या[९], साम-वेद-परायणा[१०] ।।१।।
शारदा[११] शब्द-निलया[१२], सागरा[१३] सरिदम्बरा[१४]।
शुद्धा[१५] शुद्ध-तनुः[१६] साध्वी[१७], शिव-ध्यान-परायणा[१८] ।।२।।
स्वामिनी[१९] शम्भु-वनिता[२०], शाम्भवी[२१] च सरस्वती[२२]।
समुद्र-मथिनी[२३] शीघ्र-गामिनी[२४] शीघ्र-सिद्धिदा[२५] ।।३।।
साधु-सेव्या[२६] साधु-गम्या[२७], साधु-सन्तुष्ट-मानसा[२८]।
खट्वाङ्ग-धारिणी[२९] खर्वा[३०], खड्ग-खर्पर-धारिणी[३१] ।।४।।
षड्-वर्ग-भाव-रहिता[३२], षड्-वर्ग-परिचारिका[३३]।
षड्-वर्गा[३४] च षडङ्गा[३५] च, षोढा[३६] षोडश-वार्षिकी[३७] ।।५।।
ऋतु-रूपा[३८] क्रतु-मती[३९], ऋभुक्ष-क्रतु-मण्डिता[४०]।
कवर्गादि-पवर्गान्ता[४१], अन्तःस्था[४२] अन्त-रूपिणी[४३] ।।६।।

अकाराकार-रहिता[४४], काल-मृत्यु-जरा-पहा[४५]।

तन्वी[४६] तत्त्वेश्वरी[४७] तारा[४८], त्रि-वर्षा[४९] ज्ञान-रूपिणी[५०] ॥७॥

काली[५१] कराली[५२] कामेशी[५३], च छाया-संज्ञाप्यरुन्धती[५४-५६]।

निर्विकल्पा[५७] महा-वेगा[५८], महोत्साहा[५९] महोदरी[६०] ॥८॥

मेधा[६१] बलाका[६२] विमला[६३], विमल-ज्ञान-दायिनी[६४]।

गौरी[६५] वसुन्धरा[६६] गोप्त्री[६७], गवां पति-निषेविता[६८] ॥९॥

भगाङ्गा[६९] भग-रूपा[७०] च, भक्ति-भाव-परायणा[७१-७२]।

छिन्न-मस्ता[७३] महा-धूमा[७४], तथा धूम्र-विभूषणा[७५] ॥१०॥

धर्म-कर्मादि-रहिता[७६], धर्म-कर्म-परायणा[७७]।

सीता[७८] मातङ्गिनी[७९] मेधा[८०], मधु-दैत्य-विनाशिनी[८१] ॥११॥

भैरवी[८२] भुवना[८३] माताऽभयदा[८४-८५] भव - सुन्दरी[८६]।

भावुका[८७] बगला[८८] कृत्या[८९], बाला[९०] त्रिपुर-सुन्दरी[९१] ॥१२॥

रोहिणी[९२] रेवती[९३] रम्या[९४], रम्भा[९५] रावण-वन्दिता[९६]।

शत-यज्ञ-मयी[९७] सत्त्वा[९८], शत-क्रतु-वर-प्रदा[९९] ॥१३॥

शत-चन्द्रानना देवी[१००], सहस्त्रादित्य-सन्निभा[१०१]।

सोम-सूर्याग्नि-नयना[१०२-१०३], व्याघ्र-चर्माम्बरावृता[१०४]।

अर्द्धेन्दु-धारिणी[१०५] मत्ता[१०६], मदिरा[१०७] मदिरेक्षणा[१०८] ॥१४॥

॥ फल-श्रुति ॥

इति ते कथितं गोप्यं, नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।

सुन्दर्याः सर्वदा सेव्यं, महा-पातक-नाशनम्।

गोपनीयं गोपनीयं, गोपनीयं कलौ युगे ॥१॥

सहस्त्र-नाम-पाठस्य, फलं यद् वै प्रकीर्तितम्।

तस्मात् कोटि-गुणं पुण्यं, स्तवस्यास्य प्रकीर्तनात् ॥२॥

पठेत् सदा भक्ति-युतो नरो तु यो निशीथ-कालेऽप्यरुणोदये वा।

प्रदोष-काले नवमी-दिनेऽथवा लभेत् भोगान् परमाद्भुतान् प्रियान् ॥३॥

॥ ब्रह्म-यामले षोडश्यष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रम्॥

★★★

श्रीषोडशी-अष्टोत्तर-शत-नामावली-जप-साधना

'श्रीषोडशी-अष्टोत्तर-शत-नाम-साधना' में दिए गए 'विनियोगादि' को कर, यहाँ प्रकाशित 'नामों' का जप करना चाहिए। 'विनियोगादि' में 'पाठे' के स्थान पर 'जपे' कहना चाहिए।

१. श्रीत्रिपुरायै नमः। २. श्रीषोडश्यै नमः। ३. श्रीमात्रे नमः। ४. श्रीत्र्यक्षरायै नमः। ५. श्रीत्रितयायै नमः। ६. श्रीत्रय्यै नमः। ७. श्रीसुन्दर्यै नमः। ८. श्रीसुमुख्यै नमः। ९. श्रीसेव्यायै नमः। १०. श्रीसाम-वेद-परायणायै नमः। ११. श्रीशारदायै नमः। १२. श्रीशब्द-निलयायै नमः। १३. श्रीसागरायै नमः। १४. श्रीसरिदम्बरायै नमः। १५. श्रीशुद्धायै नमः। १६. श्रीशुद्ध-तनवे नमः। १७. श्रीसाध्व्यै नमः। १८. श्रीशिव-ध्यान-परायणायै नमः। १९. श्रीस्वामिन्यै नमः। २०. श्रीशम्भु-वनितायै नमः। २१. श्रीशाम्भव्यै नमः। २२. श्रीसरस्वत्यै नमः। २३. श्रीसमुद्र-मथिन्यै नमः। २४. श्रीशीघ्र-गामिन्यै नमः। २५. श्रीशीघ्र-सिद्धिदायै नमः।

२६. श्रीसाधु-सेव्यायै नमः। २७. श्रीसाधु-गम्यायै नमः। २८. श्रीसाधु-सन्तुष्ट-मानसायै नमः। २९. श्रीखट्वाङ्ग-धारिण्यै नमः। ३०. श्रीखर्वायै नमः। ३१. श्रीखड्ग-खर्पर-धारिण्यै नमः। ३२. श्रीषड्-वर्ग-भाव-रहितायै नमः। ३३. श्रीषड्-वर्ग-परिचारिकायै नमः। ३४. श्रीषड्-वर्गायै नमः। ३५. श्रीषडङ्गायै नमः। ३६. श्रीषोढायै नमः। ३७. श्रीषोडश-वार्षिक्यै नमः। ३८. श्रीऋतु-रूपायै नमः। ३९. श्रीक्रतु-मत्यै नमः। ४०. श्रीऋभुक्ष-क्रतु-मण्डितायै नमः। ४१. श्रीकवर्गादि-पवर्गान्तायै नमः। ४२. श्रीअन्तःस्थायै नमः। ४३. श्रीअन्त-रूपिण्यै नमः। ४४. श्रीअकाराकार-रहितायै नमः। ४५. श्रीकाल-मृत्यु-जरा-पहायै नमः। ४६. श्रीतन्व्यै नमः। ४७. श्रीतत्त्वेश्वर्यै नमः। ४८. श्रीतारायै नमः। ४९. श्रीत्रि-वर्षायै नमः। ५०. श्रीज्ञान-रूपिण्यै नमः।

५१. श्रीकाल्यै नमः। ५२. श्रीकराल्यै नमः। ५३. श्रीकामेश्यै नमः। ५४. श्रीछायायै नमः। ५५. श्रीसंज्ञायै नमः। ५६. श्रीअरुन्धत्यै नमः। ५७. श्रीनिर्विकल्पायै नमः। ५८. श्रीमहा-वेगायै नमः। ५९. श्रीमहोत्साहायै नमः। ६०. श्रीमहोदर्यै नमः। ६१. श्रीमेधायै नमः। ६२. श्रीबलाकायै नमः। ६३. श्रीविमलायै नमः। ६४. श्रीविमल-ज्ञान-दायिन्यै नमः। ६५. श्रीगौर्यै नमः। ६६. श्रीवसुन्धरायै नमः। ६७. श्रीगोप्त्र्यै नमः। ६८. श्रीगवाम्पति-निषेवितायै नमः। ६९. श्रीभगाङ्गायै नमः। ७०. श्रीभग-रूपायै नमः। ७१. श्रीभक्ति-परायणायै नमः। ७२. श्रीभाव-परायणायै नमः। ७३. श्रीछिन्न-मस्तायै नमः। ७४. श्रीमहा-धूमायै नमः। ७५. श्रीधूम्र-विभूषणायै नमः।

७६. श्रीधर्म-कर्मादि-रहितायै नमः। ७७. श्रीधर्म-कर्म-परायणायै नमः। ७८. श्रीसीतायै नमः। ७९. श्रीमातङ्गिन्यै नमः। ८०. श्रीमेधायै नमः। ८१. श्रीमधु-दैत्य-विनाशिन्यै नमः। ८२. श्रीभैरव्यै नमः। ८३. श्रीभुवनायै नमः। ८४. श्रीमात्रे नमः। ८५. श्रीअभयदायै नमः। ८६. श्रीभव-सुन्दर्यै नमः। ८७. श्रीभावुकायै नमः। ८८. श्रीबगलायै नमः। ८९. श्रीकृत्यायै नमः। ९०. श्रीबालायै नमः। ९१. श्रीत्रिपुर-सुन्दर्यै नमः। ९२. श्रीरोहिण्यै नमः। ९३. श्रीरेवत्यै नमः। ९४. श्रीरम्यायै नमः। ९५. श्रीरम्भायै नमः। ९६. श्रीरावण-वन्दितायै नमः। ९७. श्रीशत-यज्ञ-मय्यै नमः। ९८. श्रीसत्त्वायै नमः। ९९. श्रीशत-क्रतु-वर-प्रदायै नमः। १००. श्रीशत-चन्द्रानना-देव्यै नमः।

१०१. श्रीसहस्रादित्य-सन्निभायै नमः। १०२. श्रीसोम-नयनायै नमः। १०३. श्रीसूर्याग्नि-नयनायै नमः। १०४. श्रीव्याघ्र-चर्माम्बरावृतायै नमः। १०५. श्रीअर्द्धेन्दु-धारिण्यै नमः। १०६. श्रीमत्तायै नमः। १०७. श्रीमदिरायै नमः। १०८. श्रीमदिरेक्षणायै नमः।

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीषोडशी-सहस्र-नाम-स्तोत्र-साधना

।। पूर्व-पीठिका ।।

कैलास-शिखरे रम्ये, नाना-रत्नोप-शोभिते।
कल्प-पादप-मध्यस्थे, नाना-पुष्पोप-शोभिते ।।१।।
मणि-मण्डप-मध्यस्थे, मुनि-गन्धर्व-सेविते।
कदाचित् सुखमासीनं, भगवन्तं जगद्-गुरुम् ।।२।।
कपाल-खट्वाङ्ग-धरं, चन्द्रार्ध-कृत - शेखरम्।
हस्त-त्रिशूल-डमरुं, महा-वृषभ-वहनम् ।।३।।
जटा-जूट-धरं देवं, कण्ठ-भूषण - वासुकिम्।
विभूति-भूषणं देवं, नील-कण्ठं त्रि-लोचनम् ।।४।।
द्वीपि-चर्म-परीधानं, शुद्ध-स्फटिक-सन्निभम्।
सहस्रादित्य-सङ्काशं, गिरिजार्द्धाङ्ग-भूषणम् ।।५।।
प्रणम्य शिरसा नाथं, कारणं विश्व-रूपिणम्।
कृताञ्जलि-पुटो भूत्वा, प्राहैनं शिख-वाहनः ।।६।।

।। कार्तिकेय उवाच ।।

देव-देव जगन्नाथ!, सृष्टि-स्थिति-लयात्मक।
त्वमेव परमात्मा च, त्वं गतिः सर्व-देहिनाम् ।।७।।
त्वं गतिः सर्व-लोकानां, दीनानां च त्वमेव हि।
त्वमेव जगदाधारस्त्वमेव विश्व-कारणम् ।।८।।
त्वमेव पूज्यः सर्वेषां, त्वदन्यो नास्ति मे गतिः।
किं गुह्यं परमं लोके, किमेकं सर्व-सिद्धिदम् ।।९।।
किमेकं परमं श्रेष्ठं, को योगः स्वर्ग-मोक्षदः।
विना तीर्थेन तपसा, विना दानैर्विना मखैः ।।१०।।
विना लयेन ध्यानेन, नरः सिद्धिमवाप्नुयात्।
कस्मादुत्पद्यते सृष्टिः, कस्मिंश्च प्रलयो भवेत् ।।११।।
कस्मादुत्तीर्यते देव!, संसारार्णव - सङ्कटात्।
तदऽहं श्रोतुमिच्छामि, कथयस्व महेश्वर! ।।१२।।

।। ईश्वर उवाच ।।

साधु साधु त्वया पृष्टं, पार्वती-प्रिय-नन्दन।
अस्ति गुह्य-तमं पुत्र!, कथयिष्याम्यसंशयम् ।।१३।।

सत्त्वं रजस्तमश्चैव, ये चान्ये महदादयः।
ये चान्ये बहवो भूताः, सर्वे प्रकृति-सम्भवाः ।।१४।।
सैव देवी परा-शक्तिः, महा-त्रिपुर-सुन्दरी।
सैव प्रसूयते विश्वं, विश्वं सैव प्रपास्यति ।।१५।।
सैव संहरते विश्वं, जगदेतच्चराचरम्।
आधारः सर्व-भूतानां, सैव रोगार्ति - हारिणी ।।१६।।
इच्छा-ज्ञान-क्रिया-शक्तिः, ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मिका।
त्रिधा शक्ति-स्वरूपेण, सृष्टि-स्थिति-विनाशिनी ।।१७।।
सृज्यते ब्रह्म-रूपेण, विष्णु - रूपेण पाल्यते।
ह्रियते रुद्र - रूपेण, जगदेतच्चराचरम् ।।१८।।
यस्या योनौ जगत्-सर्वमद्यापि परिवर्तते।
यस्यां प्रलीयते चान्ते, यस्यां च जायते पुनः ।।१९।।
यां समाराध्य त्रैलोक्ये, सम्प्राप्यं पदमुत्तमम्।
तस्या नाम-सहस्रं तु, कथयामि शृणुष्व तत् ।।२०।।

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-सहस्र-नाम-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीभगवान् दक्षिणा-मूर्तिः ऋषिः। जगतीच्छन्दः। समस्त-प्रकट-गुप्त-सम्प्रदाय-कुल-कौलोत्तीर्ण-निर्गर्भ- रहस्याचिन्त्य-प्रभावती देवता। ॐ वीजं। ह्रीं शक्तिः। क्लीं कीलकं। धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे पाठे विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

ॐश्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-सहस्र-नाम-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीभगवान् दक्षिणा-मूर्ति-ऋषये नमः शिरसि। ॐजगतीच्छन्दसे नमः मुखे। ॐसमस्त-प्रकट-गुप्त-सम्प्रदाय- कुल-कौलोत्तीर्ण-निर्गर्भ-रहस्याचिन्त्य-प्रभावती-देवतायै नमः हृदये। ॐ ॐ-वीजाय नमः नाभौ। ॐह्रीं-शक्तये नमः गुह्ये। ॐक्लीं-कीलकाय नमः पादयोः। ॐधर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

।। ध्यान ।।

ॐ आधारे तरुणार्क-बिम्ब-रुचिरं हेम-प्रभं वाग्भवम्।
बीजं मन्मथमिन्द्र-गोप-सदृशं हृत्-पङ्कजे संस्थितम् ।।
विष्णु-ब्रह्म-पदस्थ-शक्ति-कलितं सोम-प्रभा-भासुरम्।
ये ध्यायन्ति पद-त्रयं तव शिवे! ते यांति सौख्यं पदम् ।।

।। मानस-पूजन ।।

ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये घ्रापयामि नमः।
ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये दर्शयामि नमः।
ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये निवेदयामि नमः।
ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। मूल-पाठ ।।

कल्याणी[१] कमला[२] काली[३], कराली[४] काम-रूपिणी[५]।
कामाख्या[६] कामदा[७] काम्या[८], कामना[९] काम-चारिणी[१०] ।।१।।
काल-रात्रिः[११] महा-रात्रिः[१२], कपाली[१३] काम-रूपिणी[१४]।
कौमारी[१५] करुणा[१६] मुक्तिः, कलि - कल्मष - नाशिनी[१७] ।।२।।
कात्यायनी[१८] कराधारा[१९], कौमुदी[२०] कमल - प्रिया[२१]।
कीर्तिदा[२२] बुद्धिदा[२३] मेधा[२४], नीतिज्ञा[२५] नीति-वत्सला[२६] ।।३।।
माहेश्वरी[२७] महा-माया[२८], महा-तेजा[२९] महेश्वरी[३०]।
महा-जिह्वा[३१] महा-घोरा[३२], महा-दंष्ट्रा[३३] महा-भुजा[३४] ।।४।।
महा - मोहान्धकारघ्नी[३५], महा - मोक्ष - प्रदायिनी[३६]।
महा - दारिद्र्य - नाशा[३७] च, महा - शत्रु - विमर्दिनी[३८] ।।५।।
महा-माया[३९] महा-वीर्या[४०], महा-पातक-नाशिनी[४१]।
महा - मखा[४२] मन्त्र - मयी[४३], मणि - पूरक - वासिनी[४४] ।।६।।
मानसी[४५] मानदा[४६] मान्या[४७], मनश्चक्षू-रणे-चरा[४८]।
गण - माता[४९] च गायत्री[५०], गण - गन्धर्व - सेविता[५१] ।।७।।
गिरिजा[५२] गिरिशा[५३] साध्वी[५४], गिरिस्था[५५] गिरि-वल्लभा[५६] ।
चण्डेश्वरी[५७] चण्ड-रूपा[५८], प्रचण्डा[५९] चण्ड-मालिनी[६०] ।।८।।
चर्विका[६१] चर्चिकाकारा[६२], चण्डिका[६३] चारु-रूपिणी[६४]।
यज्ञेश्वरी[६५] यज्ञ-रूपा[६६], जप-यज्ञ-परायणा[६७] ।।९।।

यज्ञ - माता[६८] यज्ञ - भोक्त्री[६९], यज्ञेशी[७०] यज्ञ - सम्भवा[७१]।
सिद्ध-यज्ञा[७२]-क्रिया-सिद्धिर्यज्ञाङ्गी[७३-७४] यज्ञ-रक्षिका[७५] ।।१०।।
यज्ञ - क्रिया[७६] च यज्ञा[७७] च, यज्ञा - यज्ञ - क्रियालया[७८]।
जालन्धरी[७९] जगन्माता[८०], जात - वेदा[८१] जगत् - प्रिया[८२] ।।११।।
जितेन्द्रिया[८३] जित - क्रोधा[८४], जननी[८५] जन्म-दायिनी[८६] ।
गङ्गा[८७] गोदावरी[८८] चैव, गोमती[८९] च शतद्रुका[९०] ।।१२।।
घर्घरा[९१] वेद - गर्भा[९२] च, रेचिका[९३] सम - वासिनी[९४] ।
सिन्धुर्मन्दाकिनी[९५-९६] क्षिप्रा[९७], यमुना[९८] च सरस्वती[९९]।।१३।।
भद्रा[१००] रागा[१०१] विपाशा[१०२] च, गण्डकी[१०३] विन्ध्य-वासिनी[१०४] ।
नर्मदा[१०५] ताप्ती[१०६] कावेरी[१०७], वेत्र-वत्या[१०८] सु-कौशिकी[१०९] ।।१४।।
महेन्द्र - तनया[११०] चैव, अहल्या[१११] चर्मकावती[११२] ।
अयोध्या[११३] मथुरा[११४] माया[११५] ,काशी[११६] काञ्ची[११७] अवन्तिका[११८] ।।१५।।
पुरी[११९] द्वारावती[१२०] तीर्था[१२१], महा-किल्विष-नाशिनी[१२२] ।
पद्मिनी[१२३] पद्म-मध्यस्था[१२४], पद्म-किञ्जल्क-वासिनी[१२५] ।।१६।।
पद्म-वक्त्रा[१२६] चकोराक्षी[१२७], पद्मस्था[१२८] पद्म-सम्भवा[१२९] ।
ह्रीङ्कारी[१३०] कुण्डला-धारा[१३१], हृत्-पद्मस्था[१३२] सु-लोचना[१३३] ।।१७।।
श्रीङ्कारी[१३४] भूषणा[१३५] लक्ष्मी:[१३६], क्लीङ्कारी[१३७] क्लेश-नाशिनी[१३८] ।
हरि - वक्त्रोद्भवा[१३९] शान्ता[१४०], हरि - वक्त्र - कृतालया[१४१] ।।१८।।
हरि-वक्त्रोपमा[१४२] हाला[१४३], हरि-वक्ष:-स्थला-स्थिता[१४४] ।
वैष्णवी[१४५] विष्णु-रूपा[१४६] च, विष्णु-मातृ-स्वरूपिणी[१४७] ।।१९।।
विष्णु-माया[१४८] विशालाक्षी[१४९], विशाल-नयनोज्ज्वला[१५०] ।
विंश्वेश्वरी[१५१] च विश्वात्मा[१५२], विश्वेशी[१५३] विश्व-रूपिणी[१५४] ।।२०।।
विश्व-नाथा[१५५] शिवाराध्या[१५६], शिव-नाथा[१५७] शिव-प्रिया[१५८] ।
शिव-माता[१५९] शिवाख्या[१६०] च, शिवदा[१६१] शिव-रूपिणी[१६२] ।।२१।।

भवेश्वरी[163] भवाराध्या[164], भवेशी[165] भव - नायिका[166] ।
भव - माता[167] भव - गम्या[168], भव - कण्टक - नाशिनी[169] ।।२२।।
भव - प्रिया[170] भवानन्दा[171], भवानी[172] भव - मोहिनी[173] ।
गायत्री[174] चैव सावित्री[175], ब्रह्माणी[176] ब्रह्म-रूपिणी[177] ।।२३।।
ब्रह्मेशी[178] ब्रह्मदा[179] ब्रह्मा[180], ब्रह्माणी[181] ब्रह्म-वादिनी[182] ।
दुर्गस्था[183] दुर्ग-रूपा[184] च, दुर्गा[185] दुर्गार्ति-नाशिनी[186] ।।२४।।
सुगमा[187] दुर्गमा[188] दान्ता[189], दया[190] दोग्ध्री[191] दुरापहा[192] ।
दुरितघ्नी[193] दुराध्यक्षा[194], दुरा[195] दुष्कृत-नाशिनी[196] ।।२५।।
पञ्चास्या[197] पञ्चमी[198] पूर्णा[199], पूर्ण-पीठ-निवासिनी[200] ।
सत्त्वस्था[201] सत्त्व-रूपा[202] च, सत्त्वगा[203] सत्त्व-सम्भवा[204] ।।२६।।
रजस्था[205] च रजो-रूपा[206], रजो-गुण-समुद्भवा[207] ।
तमस्था[208] च तमो-रूपा[209], तामसी[210] तामस-प्रिया[211] ।।२७।।
तमो-गुण-समुद्भूता[212], सात्विकी[213] राजसी[214] कला[215] ।
काष्ठा[216] मुहूर्ता[217] निमिषा[218], अनिमेषा[219] ततः परम्।।२८।।
अर्द्ध - मासा[220] च मासा[221] च, संवत्सर - स्वरूपिणी[222] ।
योगस्था[223] योग-रूपा[224] च, कल्पस्था[225] कल्प-रूपिणी[226] ।।२९।।
नाना - रत्न - विचित्राङ्गी[227], नानाऽऽभरण - मण्डिता[228] ।
विश्वात्मिका[229] विश्व-माता[230], विश्व-पाश-विनाशिनी[231] ।।३०।।
विश्वास-कारिणी[232] विश्वा[233], विश्व-शक्ति-विचारणा[234] ।
जपा - कुसुम - सङ्काशा[235], दाडिमी - कुसुमोपमा[236] ।।३१।।
चतुरङ्गी[237] चतुर्बाहुश्चतुराचार - वासिनी[238-239] ।
सर्वेशी[240] सर्वदा[241] सर्वा[242], सर्वदा-सर्व-दायिनी[243] ।।३२।।
माहेश्वरी[244] च सर्वाद्या[245], शर्वाणी[246] सर्व - मङ्गला[247] ।
नलिनी[248] नन्दिनी[249] नन्दा[250], आनन्दानन्द-वर्द्धिनी[251-252] ।।३३।।

व्यापिनी सर्व - भूतेषु[२५३], भव - भार - विनाशिनी[२५४] ।
सर्व - शृङ्गार - वेषाढ्या[२५५], पाशांकुश - करोद्यता[२५६] ।।३४।।
सूर्य - कोटि - सहस्राभा[२५७], चन्द्र - कोटि - निभानना[२५८] ।
गणेश - कोटि - लावण्या[२५९], विष्णु - कोट्यरि - मर्दिनी[२६०] ।।३५।।
दावाग्नि - कोटि - दलिनी[२६१], रुद्र - कोट्युग्र - रूपिणी[२६२] ।
समुद्र - कोटि - गम्भीरा[२६३], वायु - कोटि - महा - बला[२६४] ।।३६।।
आकाश - कोटि - विस्तारा[२६५], यम - कोटि - भयङ्करी[२६६] ।
मेरु - कोटि - समुच्छ्राया[२६७], गण - कोटि - समृद्धिदा[२६८] ।।३७।।
निष्कस्तोका[२६९] निराधारा[२७०], निर्गुणा[२७१] गुण-वर्जिता[२७२] ।
अशोका[२७३] शोक - रहिता[२७४], ताप - त्रय - विवर्जिता[२७५] ।।३८।।
वसिष्ठा[२७६] विश्व-जननी[२७७], विश्वाख्या[२७८] विश्व-वर्द्धिनी[२७९] ।
चित्रा[२८०] विचित्र-चित्राङ्गी[२८१], हेतु-गर्भा[२८२] कुलेश्वरी[२८३] ।।३९।।
इच्छा-शक्तिः[२८४] ज्ञान-शक्तिः[२८५], क्रिया-शक्तिः[२८६] शुचि-स्मिता[२८७] ।
शुचिः[२८८] स्मृति-मयी[२८९] सत्या[२९०], श्रुति-रूपा[२९१] श्रुति-प्रिया[२९२] ।।४०।।
महा - सत्त्व-मयी[२९३] सत्त्वा[२९४], पञ्च - तत्त्वोपरि - स्थिता[२९५] ।
पार्वती[२९६] हिमवत्-पुत्री[२९७], पारस्था[२९८] पार-रूपिणी[२९९] ।।४१।।
जयन्ती[३००] भद्र-काली[३०१] च, अहल्या[३०२] कुल-नायिका[३०३] ।
भूत-धात्री[३०४] च भूतेशी[३०५], भूतस्था[३०६] भूत-भाविनी[३०७] ।।४२।।
महा - कुण्डलिनी - शक्तिः[३०८], महा - विभव - वर्द्धिनी[३०९] ।
हंसाक्षी[३१०] हंस-रूपा[३११] च, हंसस्था[३१२] हंस-रूपिणी[३१३] ।।४३।।
सोम - सूर्याग्नि - मध्यस्था[३१४-३१५], मणि-मण्डल-वासिनी[३१६] ।
द्वादशार - सरोजस्था[३१७], सूर्य - मण्डल - वासिनी[३१८] ।।४४।।
अकलङ्का[३१९] शशाङ्काभा[३२०] ,षोडशार - निवासिनी[३२१] ।
डाकिनी[३२२] राकिनी[३२३] चैव, लाकिनी[३२४] काकिनी[३२५] तथा ।।४५।।

शाकिनी[३२६] हाकिनी[३२७] चैव, षट् - चक्रेषु - निवासिनी ।
सृष्टि-स्थिति-विनाशिनी[३२८], सृष्ट्यन्ता[३२९] सृष्टि-कारिणी[३३०] ।।४६।।
श्री-कण्ठ-प्रिया[३३१] हृत्कण्ठा[३३२], नन्दाख्या[३३३] विन्दु-मालिनी[३३४] ।
चतुष्षटि - कलाधारा[३३५], देह - दण्ड - समाश्रिता[३३६] ।।४७।।
माया[३३७] काली[३३८] धृतिर्मेधा[३३९-३४०], क्षुधा[३४१] तुष्टिर्महा-द्युतिः[३४२-३४३] ।
हिंगुला[३४४] मङ्गला[३४५] सीता[३४६], सुषुम्ना-मध्य-गामिनी[३४७] ।।४८।।
पर - घोरा[३४८] करालाक्षी[३४९], विजया[३५०] जय - दायिनी[३५१] ।
हृत्-पद्म-निलया[३५२] भीमा[३५३], महा - भैरव - नादिनी[३५४] ।।४९।।
आकाश - लिङ्ग - सम्भूता[३५५], भुवनोद्यान - वासिनी[३५६] ।
महत्-सूक्ष्मा[३५७] च कङ्काली[३५८], भीम-रूपा[३५९] महा-बला[३६०] ।।५०।।
मेनका - गर्भ - सम्भूता[३६१], तप्त - काञ्चन - सन्निभा[३६२] ।
अन्तरस्था[३६३] कूट - बीजा[३६४], त्रिकूटाचल - वासिनी[३६५] ।।५१।।
वर्णाख्या[३६६] वर्ण - रहिता[३६७], पञ्चाशद्वर्ण - भेदिनी[३६८] ।
विद्याधरी[३६९] लोक-धात्री[३७०], अप्सरा[३७१] अप्सरः - प्रिया[३७२] ।।५२।।
दीक्षा[३७३] दाक्षायणी[३७४] दक्षा[३७५], दक्ष-यज्ञ-विनाशिनी[३७६] ।
यशः - पूर्णा[३७७] यशोदा[३७८] च, यशोदा - गर्भ - सम्भवा[३७९] ।।५३।।
देवकी[३८०] देव - माता[३८१] च, राधिका कृष्ण - वल्लभा[३८२] ।
अरुन्धती[३८३] शचीन्द्राणी[३८४-३८५], गान्धारी[३८६] गन्ध-मालिनी[३८७] ।।५४।।
ध्यानातीता[३८८], ध्यान-गम्या[३८९], ध्यानज्ञा[३९०] ध्यान-धारिणी[३९१] ।
लम्बोदरी[३९२] च लम्बोष्ठी[३९३], जाम्बवन्ती[३९४] जलोदरी[३९५] ।।५५।।
महोदरी[३९६] मुक्त - केशी[३९७], मुक्त - कामार्थ - सिद्धिदा[३९८] ।
तपस्विनी[३९९] तपो - निष्ठा[४००], सुपर्णा[४०१] धर्म - वासिनी[४०२] ।।५६।।
बाण-चाप-धरा[४०३] धीरा[४०४], पाञ्चाली[४०५] पञ्चम-प्रिया[४०६] ।
गुह्याङ्गी[४०७] च सु-भीमाङ्गी[४०८], गुह्य-तत्त्वा[४०९] निरञ्जना[४१०] ।।५७।।

अशरीरा[४११] शरीरस्था[४१२], संसारार्णव - तारिणी[४१३] ।
अमृता[४१४] निष्कला[४१५] भद्रा[४१६], सकला[४१७] कृष्ण-पिङ्गला[४१८] ।।५८।।
चक्र-प्रिया[४१९] च चक्राह्वा[४२०], पञ्च-चक्रादि-दारिणी[४२१] ।
पद्म - राग - प्रतीकाशा[४२२], निर्मलाकाश - सन्निभा[४२३] ।।५९।।
अध:स्था[४२४] ऊर्ध्व-रूपा[४२५] च, ऊर्ध्व - पद्म - निवासिनी[४२६] ।
कार्य - कारण - कर्तृत्वे, शश्वद् - रूपेषु - संस्थिता[४२७] ।।६०।।
रसज्ञा[४२८] रस - मध्यस्था[४२९] गन्धस्था[४३०] गन्ध - रूपिणी[४३१] ।
पर - ब्रह्म - स्वरूपा[४३२] च, पर - ब्रह्म - निवासिनी[४३३] ।।६१।।
शब्द - ब्रह्म - स्वरूपा[४३४] च, शब्दस्था[४३५] शब्द - वर्जिता[४३६] ।
सिद्धि:[४३७] बुद्धि:[४३८] परा-बुद्धि:[४३९], सन्दीप्तिर्मध्य - संस्थिता[४४०] ।।६२।।
स्व-गुह्या[४४१] शाम्भवी-शक्ति:[४४२], तत्त्वस्था[४४३] तत्त्व-रूपिणी[४४४] ।
शाश्वती[४४५] भूत-माता[४४६] च, महा - भूताधिप - प्रिया[४४७] ।।६३।।
शुचि - प्रेता[४४८] धर्म - सिद्धि:[४४९], धर्म-वृद्धि:[४५०] पराजिता[४५१] ।
काम - सन्दीपिनी[४५२] कामा[४५३], सदा कौतूहल - प्रिया[४५४] ।।६४।।
जटा - जूट - धरा[४५५] मुक्ता[४५६], सूक्ष्मा[४५७] शक्ति-विभूषणा[४५८] ।
द्वीपि - चर्म - परीधाना[४५९], चीर - वल्कल - धारिणी[४६०] ।।६५।।
त्रिशूल - डमरु - धरा[४६१], नर - माला - विभूषणा[४६२] ।
अत्युग्ररूपिणी[४६३] चोग्रा[४६४], कल्पान्त - दहनोपमा[४६५] ।।६६।।
त्रैलोक्य-साधिनी[४६६] साध्या[४६७], सिद्धि[४६८] साधक-वत्सला[४६९] ।
सर्व-विद्या-मयी[४७०] सारा[४७१], चासुराणां विनाशिनी[४७२] ।।६७।।
दमनी[४७३] दामिनी[४७४] दान्ता[४७५], दया[४७६] दोग्ध्री[४७७] दुरापहा[४७८] ।
अग्नि - जिह्वोपमा[४७९] घोराघोर - घोर - तरानना[४८०] ।।६८।।
नारायणी[४८१] नारसिंही[४८२], नृसिंह - हृदये - स्थिता[४८३] ।
योगेश्वरी[४८४] योग - रूपा[४८५], योग - माता[४८६] च योगिनी[४८७] ।।६९।।

खेचरी[४८८] खचरी[४८९] खेला[४९०], निर्वाण - पद - संश्रया[४९१] ।
नागिनी[४९२] नाग-कन्या[४९३] च, सुवेशा[४९४] नाग-नायिका[४९५] ।।७०।।
विष - ज्वालावती[४९६] दीप्ता[४९७], कला - शत - विभूषणा[४९८] ।
तीव्र-वक्त्रा[४९९] महा-वक्त्रा[५००], नाग - कोटित्व - धारिणी[५०१] ।।७१।।
महा-सत्त्वा[५०२] च धर्मज्ञा[५०३], धर्माति - सुख - दायिनी[५०४] ।
कृष्ण - मूर्द्धा[५०५] महा - मूर्द्धा[५०६], घोर - मूर्द्धा[५०७] वरानना[५०८] ।।७२।।
सर्वेन्द्रिय - मनोन्मत्ता[५०९], सर्वेन्द्रिय - मनो - मयी[५१०] ।
सर्व - संग्राम - जयदा[५११], सर्व - प्रहरणोद्यता[५१२] ।।७३।।
सर्व - पीडोप - शमनी[५१३], सर्वारिष्ट - निवारिणी[५१४] ।
सर्वैश्वर्य - समुत्पन्ना[५१५], सर्व - ग्रह - विनाशिनी[५१६] ।।७४।।
मातङ्गी[५१७] मत्त-मातङ्गी[५१८], मातङ्गी - प्रिय - मण्डला[५१९] ।
अमृतोदधि - मध्यस्था[५२०], कटि - सूत्रैरलंकृता[५२१] ।।७५।।
अमृतोदधि - मध्यस्था, प्रवाल - वसनाम्बुजा[५२२] ।
मणि - मण्डल - मध्यस्था[५२३], ईषत् - प्रहसितानना[५२४] ।।७६।।
कुमुदा[५२५] ललिता[५२६] लोला[५२७], लाक्षा - लोहित - लोचना[५२८] ।
दिग्वासा[५२९] देवदूती[५३०] च, देव - देवाधि - देवता[५३१] ।।७७।।
सिंहोपरि - समारूढा[५३२], हिमाचल - निवासिनी[५३३] ।
अट्टाट्ट - हासिनी[५३४] घोरा[५३५], घोर - दैत्य - विनाशिनी[५३६] ।।७८।।
अत्युग्र - रक्त - वस्त्राभा[५३७], नाग - केयूर - मण्डिता[५३८] ।
मुक्ताहार - लतोपेता[५३९], तुङ्ग - पीन - पयोधरा[५४०] ।।७९।।
रक्तोत्पल - दलाकारा[५४१], मदाघूर्णित - लोचना[५४२] ।
समस्त - देवता - मूर्तिः[५४३], सुरारि - क्षय - कारिणी[५४४] ।।८०।।
खड्गिनी[५४५] शूल-हस्ता[५४६] च, चक्रिणी[५४७] चक्र-मालिनी[५४८] ।
शङ्खिनी[५४९] चापिणी[५५०] वाणा[५५१], वज्रिणी[५५२] वज्र-दण्डिनी[५५३] ।।८१।।

आनन्दोदधि - मध्यस्था[५५४], कटि - सूत्र - धारा परा[५५५] ।
नानाभरण - दीप्ताङ्गा[५५६], नाना - मणि - विभूषिता[५५७] ।।८२।।
जगदानन्द - सम्भूता[५५८], चिन्तामणि - गुणान्विता[५५९] ।
त्रैलोक्य - नमिता[५६०] तुर्या[५६१], चिन्मयानन्द - रूपिणी[५६२] ।।८३।।
त्रैलोक्य - नन्दिनी देवी[५६३], दुःख - दुस्वप्न - नाशिनी[५६४] ।
घोराग्नि - दाह - शमनी[५६५], राज्य - देवार्थ - साधिनी[५६६] ।।८४।।
महाऽपराध - राशिघ्नी[५६७], महा - चौर - भयापहा[५६८] ।
रागादि - दोष - रहिता[५६९], जरा - मरण - वर्जिता[५७०] ।।८५।।
चन्द्र - मण्डल - मध्यस्था[५७१], पीयूषार्णव - सम्भवा[५७२] ।
सर्व - देवैः स्तुता देवी[५७३], सर्व - सिद्धैर्नमस्कृता[५७४] ।।८६।।
अचिन्त्य - शक्ति - रूपा[५७५] च, मणि - मन्त्र - महौषधी[५७६] ।
अस्ति - स्वस्ति - मयी बाला[५७७], मलयाचल - वासिनी[५७८] ।।८७।।
धात्री[५७९] विधात्री[५८०] संहारी[५८१], रतिज्ञा[५८२] रति-दायिनी[५८३] ।
रुद्राणी[५८४] रुद्र-रूपा[५८५] च, रुद्र-रौद्रार्ति-नाशिनी[५८६] ।।८८।।
सर्वज्ञा[५८७] चैव धर्मज्ञा[५८८], रसज्ञा[५८९] दीन - वत्सला[५९०] ।
अनाहता[५९१] त्रि-नयना[५९२], निर्भारा[५९३] निर्वृतिः परा[५९४], ।।८९।।
पराऽघोरा[५९५] करालाक्षी[५९६], सुमती[५९७] श्रेष्ठ - दायिनी[५९८] ।
मन्त्रालिका[५९९] मन्त्र-गम्या[६००], मन्त्र-माला[६०१] सु-मन्त्रिणी[६०२] ।।९०।।
श्रद्धानन्दा[६०३] महा-भद्रा[६०४], निर्द्वन्द्वा[६०५] निर्गुणात्मिका[६०६] ।
धरिणी[६०७] धारिणी-पृथ्वी[६०८], धरा-धात्री[६०९] वसुन्धरा[६१०] ।।९१।।
मेरु - मन्दर - मध्यस्था[६११], स्थितिः[६१२] शङ्कर - वल्लभा[६१३] ।
श्री-मती[६१४] श्री-मयी[६१५] श्रेष्ठा[६१६], श्री-करी[६१७] भाव-भाविनी[६१८] ।।९२।।
श्री-दा[६१९] श्री-मा[६२०] श्री-निवासा[६२१], श्री-वती[६२२] श्री-मताङ्गतिः[६२३] ।
उमा[६२४] सारङ्गिणी कृष्णा[६२५], कुटिला[६२६] कुटिलालिका[६२७] ।।९३।।

त्रि-लोचना[६२८] त्रि - लोकात्मा[६२९], पुण्यपुण्या - प्रकीर्तिता[६३०] ।
अमृता[६३१] सत्य-सङ्कल्पा[६३२], सा सत्या[६३३] ग्रन्थि-भेदिनी[६३४] ।।९४।।
परेशी[६३५] परमा - साध्या[६३६], परा - विद्या[६३७] परात्परा[६३८] ।
सुन्दराङ्गी[६३९] सुवर्णाभा[६४०], सुरासुर - नमस्कृता[६४१] ।।९५।।
प्रजा[६४२] प्रजा - वती[६४३] धन्या[६४४], धन-धान्य-समृद्धिदा[६४५] ।
ईशानी[६४६] भुवनेशानी[६४७], भवानी[६४८] भुवनेश्वरी[६४९] ।।९६।।
अनन्तानन्त - महिता[६५०], जगत् - सारा[६५१] जगद् - भवा[६५२] ।
अचिन्त्यात्माचिन्त्य-शक्तिः[६५३-५४], चिन्त्याचिन्त्य-स्वरूपिणी[६५५-५६] ।।९७।।
ज्ञान-गम्या[६५७] ज्ञान-मूर्तिः[६५८], ज्ञानिनी[६५९] ज्ञान-शालिनी[६६०] ।
असिता[६६१] घोर-रूपा[६६२] च, सुधा - धारा[६६३] सुधा - वहा[६६४] ।।९८।।
भास्करी[६६५] भास्वरी[६६६] भीतिर्भास्वदक्षानुशायिनी[६६७] ।
अनसूया[६६८] क्षमा[६६९] लज्जा[६७०], दुर्लभाभरणात्मिका[६७१] ।।९९।।
विश्वघ्नी[६७२] विश्व-वीरा[६७३] च, विश्वाशा[६७४] विश्व-संस्थिता[६७५] ।
शीलस्था[६७६] शील-रूपा[६७७] च, शीला[६७८] शील-प्रदायिनी[६७९] ।।१००।।
बोधनी[६८०] बोध - कुशला[६८१], रोधिनी - बोधिनी[६८२] तथा ।
विद्योतिनी[६८३] विचित्रात्मा[६८४], विद्युत् - पटल - सन्निभा[६८५] ।।१०१।।
विश्व-योनिः[६८६] महा-योनिः[६८७], कर्म-योनिः[६८८] प्रियात्मिका[६८९] ।
रोहिणी[६९०] रोग - शमनी[६९१], महा - रोग - ज्वरापहा[६९२] ।।१०२।।
रसदा[६९३] पुष्टिदा[६९४] पुष्टिः[६९५], मानदा[६९६] मानव-प्रिया[६९७] ।
कृष्णाङ्ग - वाहिनी[६९८] कृष्णाऽकला[६९९-७००] कृष्ण-सहोदरा[७०१] ।।१०३।।
शाम्भवी[७०२] शम्भु-रूपा[७०३] च, शम्भुस्था[७०४] शम्भु-सम्भवा[७०५] ।
विश्वोदरी[७०६] योग-माता[७०७], योग-मुद्रा[७०८] सु-योगिनी[७०९] ।।१०४।।
वागीश्वरी[७१०] योग-निद्रा[७११], योगिनी-कोटि-सेविता[७१२] ।
कौलिका[७१३] नन्द-कन्या[७१४] च, शृङ्गार - पीठ - वासिनी[७१५] ।।१०५।।

क्षेमङ्करी[७१६] सर्व-रूपा[७१७], दिव्य-रूपा[७१८] दिगम्बरी[७१९] ।
धूम्र-वक्त्रा[७२०] धूम्र-नेत्रा[७२१], धूम्र-केशी[७२२] च धूसरा[७२३] ।।१०६।।
पिनाकी[७२४] रुद्र - वेताली[७२५], महा - वेताल - रूपिणी[७२६] ।
तपिनी[७२७] तापिनी[७२८] दीक्षा[७२९], विष्णु - विद्यात्मनाश्रिता[७३०] ।।१०७।।
मन्थरा[७३१] जठरा[७३२] तीव्राऽग्नि - जिह्वा[७३३] च भयापहा[७३४] ।
पशुघ्नी[७३५] पशु-पाला[७३६] च, पशुहा[७३७] पशु - वाहिनी[७३८] ।।१०८।।
पिता-माता[७३९] च धीरा[७४०] च, पशु-पाश-विनाशिनी[७४१] ।
चन्द्र - प्रभा[७४२] चन्द्र - रेखा[७४३], चन्द्र - कान्ति - विभूषिणी[७४४] ।।१०९।।
कुङ्कमाङ्कित - सर्वाङ्गी[७४५], सुधा[७४६] सद् - गुरु - लोचना[७४७] ।
शुक्लाम्बर - धरा देवी[७४८], वीणा - पुस्तक - धारिणी[७४९] ।।११०।।
ऐरावत - पद्म - धरा[७५०], श्वेत - पद्मासन - स्थिता[७५१] ।
रक्ताम्बर - धरा देवी[७५२], रक्त - पद्म - विलोचना[७५३] ।।१११।।
दुस्तरा[७५४] तारिणी[७५५] तारा[७५६], तरुणी[७५७] तार-रूपिणी[७५८] ।
सुधा - धारा[७५९] च धर्मज्ञा[७६०], धर्म - संघोपदेशिनी[७६१] ।।११२।।
भगेश्वरी[७६२] भगाराध्या[७६३], भगिनी[७६४] भग-नायिका[७६५] ।
भग-बिम्बा[७६६] भग-क्लिन्ना[७६७], भग-योनिः[७६८] भग-प्रदा[७६९] ।।११३।।
भगेशी[७७०] भग-रूपा[७७१] च, भग-गुह्या[७७२] भगावहा[७७३] ।
भगोदरी[७७४] भगानन्दा[७७५], भगस्था[७७६] भग-शालिनी[७७७] ।।११४।।
सर्व - संक्षोभिणी शक्तिः[७७८], सर्व - विद्राविणी[७७९] तथा।
मालिनी[७८०] माधवी[७८१] माध्वी[७८२], मधु-रूपा[७८३] महोत्कटा[७८४] ।।११५।।
भेरुण्डा[७८५] चन्द्रिका[७८६] ज्योत्स्ना[७८७], विश्व-चक्षुस्तमोपहा[७८८] ।
सु - प्रसन्ना[७८९] महा - दूती[७९०], यम - दूती भयङ्करी[७९१] ।।११६।।
उन्मादिनी[७९२] महा - रूपा[७९३], दिव्य - रूपा[७९४] सुरार्चिता[७९५]।
चैतन्य - रूपिणी[७९६] नित्या[७९७], क्लिन्ना काम - मदोद्धता[७९८] ।।११७।।

मदिरानन्द - कैवल्या[७९९], मदिराक्षी[८००] मदालसा[८०१]।
सिद्धेश्वरी[८०२] सिद्ध-विद्या[८०३], सिद्धाद्या[८०४] सिद्ध-सम्भवा[८०५] ।।११८।।
सिद्धर्द्धि:[८०६] सिद्ध-माता[८०७] च, सिद्धि: सर्वार्थ-सिद्धिदा[८०८]।
मनो-मयी[८०९] गुणातीता[८१०], परं ज्योति:- स्वरूपिणी[८११] ।।११९।।
परेशी[८१२] परगापारा[८१३], परा - सिद्धि:[८१४] परा - गति:[८१५]।
विमला[८१६] मोहिनी[८१७] आद्या[८१८], मधु - पान - परायणा[८१९] ।।१२०।।
वेद - वेदाङ्ग - जननी[८२०], सर्व - शास्त्र - विशारदा[८२१]।
सर्व - देव - मयी विद्या[८२२], सर्व - शास्त्र - मयी[८२३] तथा ।।१२१।।
सर्व - ज्ञान - मयी देवी[८२४], सर्व - धर्म - मयीश्वरी[८२५]।
सर्व - यज्ञ - मयी[८२६] यज्ञा[८२७], सर्व - मन्त्राधिकारिणी[८२८] ।।१२२।।
सर्व - सम्पत् - प्रतिष्ठात्री[८२९], सर्व - विद्राविणी परा[८३०]।
सर्व - संक्षोभिणी देवी[८३१], सर्व - मङ्गल - कारिणी[८३२] ।।१२३।।
त्रैलोक्याकर्षिणी देवी[८३३], सर्वाह्लादन - कारिणी[८३४]।
सर्व - सम्मोहिनी देवी[८३५], सर्व - स्तम्भन - कारिणी[८३६]।।१२४।।
त्रैलोक्य - जृम्भिणी देवी[८३७], तथा सर्व - वशङ्करी[८३८]।
त्रैलोक्य - रञ्जिनी देवी[८३९], सर्व - सम्पत्ति - दायिनी[८४०] ।।१२५।।
सर्व - मन्त्र - मयी देवी[८४१], सर्व - द्वन्द्व - क्षयङ्करी[८४२]।
सर्व - सिद्धि - प्रदा देवी[८४३], सर्व - सम्पत् - प्रदायिनी[८४४] ।।१२६।।
सर्व - प्रियङ्करी देवी[८४५], सर्व - मङ्गल - कारिणी[८४६]।
सर्व - काम - प्रदा देवी[८४७], सर्व - दु:ख - विमोचिनी[८४८] ।।१२७।।
सर्व - मृत्यु - प्रशमनी[८४९], सर्व - विघ्न - विनाशिनी[८५०]।
सर्वाङ्ग - सुन्दरी माता[८५१], सर्व - सौभाग्य - दायिनी[८५२] ।।१२८।।
सर्वज्ञा[८५३] सर्व - शक्तिश्च[८५४], सर्वैश्वर्य - फल - प्रदा[८५५]।
सर्व - ज्ञान - मयी देवी[८५६], सर्व - व्याधि - विनाशिनी[८५७] ।।१२९।।

सर्वाधार - स्वरूपा[८५८] च, सर्व - पाप - हरा[८५९] तथा।
सर्वानन्द - मयी देवी[८६०], सर्वेच्छाया: - स्वरूपिणी[८६१] ।।१३०।।
सर्व - लक्ष्मी - मयी विद्या[८६२], सर्वेप्सित - फल - प्रदा[८६३]।
सर्वारिष्ट - प्रशमनी[८६४], परमानन्द - दायिनी[८६५] ।।१३१।।
त्रिकोण-निलया[८६६] त्रिस्था[८६७], त्रिमात्रा[८६८] त्रि-तनु-स्थिता[८६९]।
त्रिवेणी[८७०] त्रिपथा[८७१] - गुण्या[८७२], त्रिमूर्ति:[८७३] त्रिपुरेश्वरी[८७४] ।।१३२।।
त्रिधाम्नी[८७५] त्रिदशाध्यक्षा[८७६], त्रिवित्[८७७] त्रिपुर - वासिनी[८७८]।
त्रयी-विद्या[८७९] च त्रि-शिरा[८८०], त्रैलोक्या[८८१] च त्रिपुष्करा[८८२] ।।१३३।।
त्रिकोटरस्था[८८३] त्रिविधा[८८४], त्रिपुरा[८८५] त्रिपुरात्मिका[८८६]।
त्रिपुरा-श्री[८८७] त्रि-जननी[८८८], त्रिपुरा त्रिपुर-सुन्दरी[८८९] ।।१३४।।
महा-माया[८९०] महा-मेधा[८९१], महा-चक्षु:[८९२] महोक्षजा[८९३] ।
महा-वेधा[८९४] परा-शक्ति:[८९५], परा-प्रज्ञा[८९६] परम्परा[८९७] ।।१३५।।
महा-लक्ष्या[८९८] महा-भक्ष्या[८९९], महा-कक्ष्याऽकलेश्वरी[९००-९०१] ।
कलेश्वरी[९०२] कलानन्दा[९०३], कलेशी[९०४] कल-सुन्दरी[९०५] ।।१३६।।
कलशा[९०६] कलशेशी[९०७] च, कुम्भ-मुद्रा[९०८] कृषोदरी[९०९] ।
कुम्भपा[९१०] कुम्भ-मध्येशी[९११], कुम्भानन्द-प्रदायिनी[९१२] ।।१३७।।
कुम्भजानन्द - नाथा[९१३] च, कुम्भजानन्द - वर्द्धिनी[९१४] ।
कुम्भजानन्द - सन्तोषा[९१५], कुम्भज - तर्पिणी - मुदा[९१६] ।।१३८।।
वृत्ति:[९१७] वृत्तीश्वरीऽमोघा[९१८-९१९], विश्व - वृत्त्यंत - तर्पिणी[९२०] ।
विश्व-शान्ति:[९२१] विशालाक्षी[९२२], मीनाक्षी[९२३] मीन-वर्णदा[९२४] ।।१३९।।
विश्वाक्षी[९२५] दुर्धरा[९२६] धूमा[९२७], इन्द्राक्षी[९२८] विष्णु-सेविता[९२९] ।
विरंचि-सेविता[९३०] विश्वा[९३१], ईशाना[९३२] ईश-वन्दिता[९३३] ।।१४०।।
महा-शोभा[९३४] महा-लोभा[९३५], महा-मोहा[९३६] महेश्वरी[९३७] ।
महा-भीमा[९३८] महा-क्रोधा[९३९], मन्मथा[९४०] मदनेश्वरी[९४१] ।।१४१।।

महानला[९४२] महाक्रोधा[९४३], विश्व - संहार - ताण्डवा[९४४] ।
सर्व - संहार - वर्णेशी[९४५], सर्व - पालन - तत्परा[९४६] ।।१४२।।
सर्वादि: सृष्टि-कर्त्री[९४७] च, शिवाद्या[९४८] शम्भु-स्वामिनी[९४९] ।
महा-नन्देश्वरी[९५०] मृत्यु:[९५१], महा-स्पन्देश्वरी[९५२] सुधा[९५३] ।।१४३।।
पर्णापर्णा[९५४-९५५] परा - वर्णाऽपर्णेशी[९५६-९५७] पर्ण - मानसा[९५८] ।
वराही[९५९] तुण्डदा[९६०] तुण्डा[९६१], गणेशी[९६२] गण-नायिका[९६३] ।।१४४।।
वटुका[९६४] वटुकेशी[९६५] च, क्रौच - दारण - जन्मदा[९६६] ।
क-ए-ई-ल महा-माया[९६७], ह-स-क-ह-ल मायया[९६८] ।।१४५।।
दिव्य-नामा[९६९] सदा-कामा[९७०], श्यामा[९७१] रामा[९७२] रमा[९७३] रसा[९७४] ।
स-क-ल-ह्रीं तत्स्वरूपा[९७५] च, श्रीं ह्रीं नामादि-रूपिणी[९७६] ।।१४६।।
कालज्ञा[९७७] कालहा - मूर्ति:[९७८], सर्व - सौभाग्यदा - मुदा[९७९] ।
उर्वा[९८०] उर्वेश्वरी[९८१] खर्वा[९८२], खर्व-पर्वा[९८३] खगेश्वरी[९८४] ।।१४७।।
गरुडा[९८५] गारुडी - माता[९८६], गरुडेश्वर - पूजिता[९८७] ।
अन्तरिक्षान्तर[९८८] पदा[९८९], प्रज्ञा[९९०] प्रज्ञानदा-परा[९९१] ।।१४८।।
विज्ञाना[९९२] विश्व - विज्ञाना[९९३], अन्तराक्षा[९९४] विशारदा[९९५] ।
अन्तर्ज्ञान - मयी[९९६] सौम्या[९९७], मोक्षानन्द - विवर्द्धिनी[९९८] ।।१४९।।
शिव - शक्ति - मयी शक्ति:[९९९], एकानन्द - प्रवर्तिनी[१०००] ।
श्रीमाता[१००१] श्रीपरा-विद्या[१००२], सिद्धाश्री[१००३] सिद्ध-सागरा[१००४] ।
सिद्ध-लक्ष्मी[१००५] सिद्ध-विद्या[१००६], सिद्धा[१००७] सिद्धेश्वरी[१००८] सुधा[१००९] ।।१५०।।

।। फल-श्रुति।।

इदं त्रिपुर-सुन्दर्या:, स्तोत्रं नाम - सहस्रकम् ।
गुह्याद्-गुह्य-तरं पुत्र!, तव प्रीत्यै प्रकीर्तितम् ।।१।।
गोपनीयं प्रयत्नेन, पठनीयं प्रयत्नतः ।
नातः पर-तरं पुण्यं, नातः पर-तरं तपः ।।२।।
नातः पर-तरं स्तोत्रं, नातः पर-तरा गतिः।
स्तोत्रं सहस्र-नामाख्यं, मम वक्त्राद् विनिर्गतम् ।।३।।
यः पठेत् प्रयतो भक्त्या, शृणुयाद् वा समाहितः ।
मोक्षार्थी लभते मोक्षं, स्वर्गार्थी स्वर्गमाप्नुयात् ।।४।।

कामांश्च प्राप्नुयात् कामी, धनार्थी च लभेद् धनम् ।
विद्यार्थी लभते विद्यां, यशोऽर्थी लभते यशः ।।५।।

कन्यार्थी लभते कन्या, सुतार्थी लभते सुतम्।
गुर्विणी जनयेत् पुत्रं, कन्या विन्दति सत्-पतिम् ।।६।।

मूर्खोऽपि लभते शास्त्रं, हीनोऽपि लभते गतिम्।
संक्रान्त्यां वार्कामावस्यां, अष्टम्यां च विशेषतः ।।७।।

पौर्णमास्यां चतुर्दश्यां, नवम्यां भौम-वासरे।
पठेद् वा पाठयेद् वापि, शृणुयाद् वा समाहितः ।।८।।

स मुक्तो सर्व-पापेभ्यः, कामेश्वर-समो भवेत्।
लक्ष्मी-वान् धर्मवांश्चैव, वल्लभस्सर्व-योषिताम् ।।९।।

तस्य वश्यं भवेदाशु, त्रैलोक्यं स-चराचरम् ।
रुद्रं दृष्ट्वा यथा देवा, विष्णुं दृष्ट्वा च दानवाः ।।१०।।

यथाहिर्गरुडं दृष्ट्वा, सिंह दृष्टा यथा गजाः।
कीट-वत् प्रपलायन्ते, तस्य वक्त्रावलोकनात् ।।११।।

अग्नि-चौर-भयं तस्य, कदाचिन्नैव सम्भवेत् ।
पातका विविधाः शन्तिर्मेरु-पर्वत-सन्निभाः ।।१२।।

यस्मात् तच्छृणुयाद् विघ्नांस्तृणं वह्नि-हुतं यथा ।
एकदा पठनादेव, सर्व-पाप-क्षयो भवेत् ।।१३।।

दशधा पठनादेव, वाचा-सिद्धिः प्रजायते ।
शतधा पठनाद् वापि, खेचरो जायते नरः ।।१४।।

सहस्र-दश-संख्यातं, यः पठेद् भक्ति-मानसः ।
माताऽस्य जगतां धात्री, प्रत्यक्षा भवति ध्रुवम् ।।१५।।

लक्ष-पूर्णे यथा पुत्र!, स्तोत्र-राजं पठेत् सुधीः ।
भव-पाश-विनिर्मुक्तो, मम तुल्यो न संशयः ।।१६।।

सर्व-तीर्थेषु यत्-पुण्यं, सकृज्जप्त्वा लभेन्नरः ।
सर्व-वेदेषु यत्-प्रोक्तं, तत्-फलं परिकर्त्तितम् ।।१७।।

भूत्वा च बलवान्-पुत्र, धन-वान् सर्व-सम्पदः ।
देहान्ते परमं स्थानं, यत्-सुरैरपि दुर्लभम् ।।१८।।
स यास्यति न सन्देहः, स्तव-राजस्य कीर्त्तनात् ।।१९।।

।। श्रीवामकेश्वर-तन्त्रे षोडश्याः सहस्त्र-नाम-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीषोडशी-सहस्र-नामावली-जप-साधना

।। विनियोग ।।

ॐ अस्य श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-सहस्र-नाम-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीभगवान् दक्षिणा-मूर्तिः ऋषिः। जगतीच्छन्दः। समस्त-प्रकट-गुप्त-सम्प्रदाय-कुल-कौलोत्तीर्ण-निर्गर्भ-रहस्याचिन्त्य-प्रभावती देवता। ॐ वीजं। ह्रीं शक्तिः। क्लीं कीलकं। धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे जपे विनियोगः।

।। ऋष्यादि-न्यास ।।

ॐ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-सहस्र-नाम-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीभगवान् दक्षिणा-मूर्ति-ऋषये नमः शिरसि। ॐ जगतीच्छन्दसे नमः मुखे। ॐ समस्त-प्रकट-गुप्त-सम्प्रदाय-कुल-कौलोत्तीर्ण-निर्गर्भ-रहस्याचिन्त्य-प्रभावती-देवतायै नमः हृदये। ॐ ॐ-वीजाय नमः नाभौ। ॐ ह्रीं-शक्तये नमः गुह्ये। ॐ क्लीं-कीलकाय नमः पादयोः। ॐ धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

।। ध्यान ।।

ॐ आधारे तरुणार्क-बिम्ब-रुचिरं हेम-प्रभं वाग्भवम्।
बीजं मन्मथमिन्द्र-गोप-सदृशं हृत्-पङ्कजे संस्थितम् ।।
विष्णु-ब्रह्म-पदस्थ-शक्ति-कलितं सोम-प्रभा-भासुरम्।
ये ध्यायन्ति पद-त्रयं तव शिवे! ते यांति सौख्यं पदम् ।।

।। मानस-पूजन ।।

ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः।
ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये घ्रापयामि नमः।
ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये दर्शयामि नमः।
ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये निवेदयामि नमः।
ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी-श्रीषोडशी-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः।

।। नामावली-जप ।।

१ ॐ श्रीकल्याण्यै नमः
२ ॐ श्रीकमलायै नमः
३ ॐ श्रीकाल्यै नमः
४ ॐ श्रीकराल्यै नमः

५ ॐ श्रीकाम-रूपिण्यै नमः
६ ॐ श्रीकामाख्यायै नमः
७ ॐ श्रीकामदायै नमः
८ ॐ श्रीकाम्यायै नमः
९ ॐ श्रीकामनायै नमः
१० ॐ श्रीकाम-चारिण्यै नमः
११ ॐ श्रीकाल-रात्र्यै नमः
१२ ॐ श्रीमहा-रात्र्यै नमः
१३ ॐ श्रीकपाल्यै नमः
१४ ॐ श्रीकाम-रूपिण्यै नमः
१५ ॐ श्रीकौमार्यै नमः
१६ ॐ श्रीकरुणायै नमः
१७ ॐ श्रीमुक्तिः कलि-कल्मष-नाशिन्यै नमः
१८ ॐ श्रीकात्यायन्यै नमः
१९ ॐ श्रीकराधारायै नमः
२० ॐ श्रीकौमुद्यै नमः
२१ ॐ श्रीकमल-प्रियायै नमः
२२ ॐ श्रीकीर्तिदायै नमः
२३ ॐ श्रीबुद्धिदायै नमः
२४ ॐ श्रीमेधायै नमः
२५ ॐ श्रीनीतिज्ञायै नमः
२६ ॐ श्रीनीति-वत्सलायै नमः
२७ ॐ श्रीमाहेश्वर्यै नमः
२८ ॐ श्रीमहा-मायायै नमः
२९ ॐ श्रीमहा-तेजायै नमः
३० ॐ श्रीमहेश्वर्यै नमः
३१ ॐ श्रीमहा-जिह्वायै नमः
३२ ॐ श्रीमहा-घोरायै नमः
३३ ॐ श्रीमहा-दंष्ट्रायै नमः
३४ ॐ श्रीमहा-भुजायै नमः
३५ ॐ श्रीमहा-मोहान्धकारघ्न्यै नमः
३६ ॐ श्रीमहा-मोक्ष-प्रदायिन्यै नमः
३७ ॐ श्रीमहा-दारिद्र्य-नाशायै नमः
३८ ॐ श्रीमहा-शत्रु-विमर्दिन्यै नमः
३९ ॐ श्रीमहा-मायायै नमः
४० ॐ श्रीमहा-वीर्यायै नमः
४१ ॐ श्रीमहा-पातक-नाशिन्यै नमः
४२ ॐ श्रीमहा-मखायै नमः
४३ ॐ श्रीमन्त्र-मय्यै नमः
४४ ॐ श्रीमणि-पूरक-वासिन्यै नमः
४५ ॐ श्रीमानस्यै नमः
४६ ॐ श्रीमानदायै नमः
४७ ॐ श्रीमान्यायै नमः
४८ ॐ श्रीमनश्चक्षू-रणे-चरायै नमः
४९ ॐ श्रीगण-मात्रे नमः
५० ॐ श्रीगायत्र्यै नमः
५१ ॐ श्रीगण-गन्धर्व-सेवितायै नमः
५२ ॐ श्रीगिरिजायै नमः
५३ ॐ श्रीगिरिशायै नमः
५४ ॐ श्रीसाध्व्यै नमः
५५ ॐ श्रीगिरिस्थायै नमः
५६ ॐ श्रीगिरि-वल्लभायै नमः
५७ ॐ श्रीचण्डेश्वर्यै नमः
५८ ॐ श्रीचण्ड-रूपायै नमः
५९ ॐ श्रीप्रचण्डायै नमः
६० ॐ श्रीचण्ड-मालिन्यै नमः
६१ ॐ श्रीचर्विकायै नमः
६२ ॐ श्रीचर्चिकाकारायै नमः
६३ ॐ श्रीचण्डिकायै नमः
६४ ॐ श्रीचारु-रूपिण्यै नमः

६५ ॐ श्रीयज्ञेश्वर्यै नमः
६६ ॐ श्रीयज्ञ-रूपायै नमः
६७ ॐ श्रीजप-यज्ञ-परायणायै नमः
६८ ॐ. श्रीयज्ञ-मात्रे नमः
६९ ॐ श्रीयज्ञ-भोक्त्र्यै नमः
७० ॐ श्रीयज्ञेश्यै नमः
७१ ॐ श्रीयज्ञ-सम्भवायै नमः
७२ ॐ श्रीसिद्ध-यज्ञायै नमः
७३ ॐ श्रीसिद्ध-क्रिया-सिद्ध्यै नमः
७४ ॐ श्रीसिद्ध-यज्ञाङ्ग्यै नमः
७५ ॐ श्रीयज्ञ-रक्षिकायै नमः
७६ ॐ श्रीयज्ञ-क्रियायै नमः
७७ ॐ श्रीयज्ञायै नमः
७८ ॐ श्रीयज्ञा-यज्ञ-क्रियालयायै नमः
७९ ॐ श्रीजालन्धर्यै नमः
८० ॐ श्रीजगन्मातायै नमः
८१ ॐ श्रीजात-वेदायै नमः
८२ ॐ श्रीजगत्-प्रियायै नमः
८३ ॐ श्रीजितेन्द्रियायै नमः
८४ ॐ श्रीजित-क्रोधायै नमः
८५ ॐ श्रीजनन्यै नमः
८६ ॐ श्रीजन्म-दायिन्यै नमः
८७ ॐ श्रीगङ्गायै नमः
८८ ॐ श्रीगोदावर्यै नमः
८९ ॐ श्रीगोमत्यै ननः
९० ॐ श्रीशतद्रुकायै नमः
९१ ॐ श्रीघर्घरायै नमः
९२ ॐ श्रीवेद-गर्भायै नमः
९३ ॐ श्रीरेचिकायै नमः
९४ ॐ श्रीसम-वासिन्यै नमः
९५ ॐ श्रीसिन्धवे नमः
९६ ॐ श्रीमन्दाकिन्यै नमः
९७ ॐ श्रीक्षिप्रायै नमः
९८ ॐ श्रीयमुनायै नमः
९९ ॐ श्रीसरस्वत्यै नमः
१०० ॐ श्रीभद्रायै नमः
१०१ ॐ श्रीरागायै नमः
१०२ ॐ श्रीविपाशायै नमः
१०३ ॐ श्रीगण्डक्यै नमः
१०४ ॐ श्रीविन्ध्य-वासिन्यै नमः
१०५ ॐ श्रीनर्मदायै नमः
१०६ ॐ श्रीताप्त्यै नमः
१०७ ॐ श्रीकावेर्यै नमः
१०८ ॐ श्रीवेत्र-वत्यायै नमः
१०९ ॐ श्रीसु-कौशिक्यै नमः
११० ॐ श्रीमहेन्द्र-तनयायै नमः
१११ ॐ श्रीअहल्यायै नमः
११२ ॐ श्रीचर्मकावत्यै नमः
११३ ॐ श्रीअयोध्यायै नमः
११४ ॐ श्रीमथुरायै नमः
११५ ॐ श्रीमायायै नमः
११६ ॐ श्रीकाश्यै नमः
११७ ॐ श्रीकाञ्च्यै नमः
११८ ॐ श्रीअवन्तिकायै नमः
११९ ॐ श्रीपुरे नमः
१२० ॐ श्रीद्वारावत्यै नमः
१२१ ॐ श्रीतीर्थायै नमः
१२२ ॐ श्रीमहा-किल्विष-नाशिन्यै नमः
१२३ ॐ श्रीपद्मिन्यै नमः
१२४ ॐ श्रीपद्म-मध्यस्थायै नमः

१२५ ॐ श्रीपद्म-किञ्जल्क-वासिन्यै नमः
१२६ ॐ श्रीपद्म-वक्त्रायै नमः
१२७ ॐ श्रीचकोराक्ष्यै नमः
१२८ ॐ श्रीपद्मस्थायै नमः
१२९ ॐ श्रीपद्म-सम्भवायै नमः
१३० ॐ श्रीह्रीङ्कार्यै नमः
१३१ ॐ श्रीकुण्डला-धारायै नमः
१३२ ॐ श्रीहृत्-पद्मस्थायै नमः
१३३ ॐ श्रीसु-लोचनायै नमः
१३४ ॐ श्रीश्रीङ्कार्यै नमः
१३५ ॐ श्रीभूषणायै नमः
१३६ ॐ श्रीलक्ष्म्यै नमः
१३७ ॐ श्रीक्लीङ्कार्यै नमः
१३८ ॐ श्रीक्लेश-नाशिन्यै नमः
१३९ ॐ श्रीहरि-वक्त्रोद्भवायै नमः
१४० ॐ श्रीशान्तायै नमः
१४१ ॐ श्रीहरि-वक्त्र-कृतालयायै नमः
१४२ ॐ श्रीहरि-वक्त्रोपमायै नमः
१४३ ॐ श्रीहालायै नमः
१४४ ॐ श्रीहरि-वक्षः-स्थला-स्थितायै नमः
१४५ ॐ श्रीवैष्णव्यै नमः
१४६ ॐ श्रीविष्णु-रूपायै नमः
१४७ ॐ श्रीविष्णु-मातृ-स्वरूपिण्यै नमः
१४८ ॐ श्रीविष्णु-मायायै नमः
१४९ ॐ श्रीविशालाक्ष्यै नमः
१५० ॐ श्रीविशाल-नयनोज्ज्वलायै नमः
१५१ ॐ श्रीविश्वेश्वर्यै नमः
१५२ ॐ श्रीविश्वात्मायै नमः
१५३ ॐ श्रीविश्वेश्यै नमः
१५४ ॐ श्रीविश्व-रूपिण्यै नमः
१५५ ॐ श्रीविश्व-नाथायै नमः
१५६ ॐ श्रीशिवाराध्यायै नमः
१५७ ॐ श्रीशिव-नाथायै नमः
१५८ ॐ श्रीशिव-प्रियायै नमः
१५९ ॐ श्रीशिव-मातायै नमः
१६० ॐ श्रीशिवाख्यायै नमः
१६१ ॐ श्रीशिवदायै नमः
१६२ ॐ श्रीशिव-रूपिण्यै नमः
१६३ ॐ श्रीभवेश्वर्यै नमः
१६४ ॐ श्रीभवाराध्यायै नमः
१६५ ॐ श्रीभवेश्यै नमः
१६६ ॐ श्रीभव-नायिकायै नमः
१६७ ॐ श्रीभव-मातायै नमः
१६८ ॐ श्रीभव-गम्यायै नमः
१६९ ॐ श्रीभव-कण्टक-नाशिन्यै नमः
१७० ॐ श्रीभव-प्रियायै नमः
१७१ ॐ श्रीभवानन्दायै नमः
१७२ ॐ श्रीभवान्यै नमः
१७३ ॐ श्रीभव-मोहिन्यै नमः
१७४ ॐ श्रीगायत्र्यै नमः
१७५ ॐ श्रीसावित्र्यै नमः
१७६ ॐ श्रीब्रह्माण्यै नमः
१७७ ॐ श्रीब्रह्म-रूपिण्यै नमः
१७८ ॐ श्रीब्रह्मेश्यै नमः
१७९ ॐ श्रीब्रह्मदायै नमः
१८० ॐ श्रीब्रह्मायै नमः
१८१ ॐ श्रीब्रह्माण्यै नमः
१८२ ॐ श्रीब्रह्म-वादिन्यै नमः
१८३ ॐ श्रीदुर्गस्थायै नमः
१८४ ॐ श्रीदुर्ग-रूपायै नमः

१८५ ॐ श्रीदुर्गायै नमः
१८६ ॐ श्रीदुर्गार्ति-नाशिन्यै नमः
१८७ ॐ श्रीसुगमायै नमः
१८८ ॐ श्रीदुर्गमायै नमः
१८९ ॐ श्रीदान्तायै नमः
१९० ॐ श्रीदयायै नमः
१९१ ॐ श्रीदोग्ध्र्यै नमः
१९२ ॐ श्रीदुरापहायै नमः
१९३ ॐ श्रीदुरितघ्न्यै नमः
१९४ ॐ श्रीदुराध्यक्षायै नमः
१९५ ॐ श्रीदुरायै नमः
१९६ ॐ श्रीदुष्कृत-नाशिन्यै नमः
१९७ ॐ श्रीपञ्चास्यायै नमः
१९८ ॐ श्रीपञ्चम्यै नमः
१९९ ॐ श्रीपूर्णायै नमः
२०० ॐ श्रीपूर्ण-पीठ-निवासिन्यै नमः
२०१ ॐ श्रीसत्त्वस्थायै नमः
२०२ ॐ श्रीसत्त्व-रूपायै नमः
२०३ ॐ श्रीसत्त्वगायै नमः
२०४ ॐ श्रीसत्त्व-सम्भवायै नमः
२०५ ॐ श्रीरजस्थायै नमः
२०६ ॐ श्रीरजो-रूपायै नमः
२०७ ॐ श्रीरजो-गुण-समुद्भवायै नमः
२०८ ॐ श्रीतमस्थायै नमः
२०९ ॐ श्रीतमो-रूपायै नमः
२१० ॐ श्रीतामस्यै नमः
२११ ॐ श्रीतामस-प्रियायै नमः
२१२ ॐ श्रीतमो-गुण-समुद्भूतायै नमः
२१३ ॐ श्रीसात्विक्यै नमः
२१४ ॐ श्रीराजस्यै नमः
२१५ ॐ श्रीकलायै नमः
२१६ ॐ श्रीकाष्ठायै नमः
२१७ ॐ श्रीमुहूर्तायै नमः
२१८ ॐ श्रीनिमिषायै नमः
२१९ ॐ श्रीअनिमेषायै नमः
२२० ॐ श्रीअर्द्ध-मासायै नमः
२२१ ॐ श्रीमासायै नमः
२२२ ॐ श्रीसंवत्सर-स्वरूपिण्यै नमः
२२३ ॐ श्रीयोगस्थायै नमः
२२४ ॐ श्रीयोग-रूपायै नमः
२२५ ॐ श्रीकल्पस्थायै नमः
२२६ ॐ श्रीकल्प-रूपिण्यै नमः
२२७ ॐ श्रीनाना-रत्न-विचित्राङ्गयै नमः
२२८ ॐ श्रीनानाऽऽभरण-मण्डितायै नमः
२२९ ॐ श्रीविश्वात्मिकायै नमः
२३० ॐ श्रीविश्व-मात्रे नमः
२३१ ॐ श्रीविश्व-पाश-विनाशिन्यै नमः
२३२ ॐ श्रीविश्वास-कारिण्यै नमः
२३३ ॐ श्रीविश्वायै नमः
२३४ ॐ श्रीविश्व-शक्ति-विचारणायै नमः
२३५ ॐ श्रीजपा-कुसुम-सङ्काशायै नमः
२३६ ॐ श्रीदाडिमी-कुसुमोपमायै नमः
२३७ ॐ श्रीचतुरङ्गयै नमः
२३८ ॐ श्रीचतुर्बाहु-वासिन्यै नमः
२३९ ॐ श्रीचतुराचार-वासिन्यै नमः
२४० ॐ श्रीसर्वेश्यै नमः
२४१ ॐ श्रीसर्वदायै नमः
२४२ ॐ श्रीसर्वायै नमः
२४३ ॐ श्रीसर्वदा-सर्व-दायिन्यै नमः
२४४ ॐ श्रीमाहेश्वर्यै नमः

२४५ ॐ श्रीसर्वाद्यायै नमः
२४६ ॐ श्रीशर्वाण्यै नमः
२४७ ॐ श्रीसर्व - मङ्गलायै नमः
२४८ ॐ श्रीनलिन्यै नमः
२४९ ॐ श्रीनन्दिन्यै नमः
२५० ॐ श्रीनन्दायै नमः
२५१ ॐ श्रीआनन्दायै नमः
२५२ ॐ श्रीआनन्द-वर्द्धिन्यै नमः
२५३ ॐ श्रीव्यापिनी सर्व-भूतवे नमः
२५४ ॐ श्रीभव-भार-विनाशिन्यै नमः
२५५ ॐ श्रीसर्व-शृङ्गार-वेषाढ्यायै नमः
२५६ ॐ श्रीपाशांकुश-करोद्यतायै नमः
२५७ ॐ श्रीसूर्य-कोटि-सहस्राभायै नमः
२५८ ॐ श्रीचन्द्र-कोटि-निभाननायै नमः
२५९ ॐ श्रीगणेश-कोटि-लावण्यायै नमः
२६० ॐ श्रीविष्णु-कोट्यरि-मर्दिन्यै नमः
२६१ ॐ श्रीदावाग्नि-कोटि-दलिन्यै नमः
२६२ ॐ श्रीरुद्र-कोट्युग्र-रूपिण्यै नमः
२६३ ॐ श्रीसमुद्र-कोटि-गम्भीरायै नमः
२६४ ॐ श्रीवायु-कोटि-महा-बलायै नमः
२६५ ॐ श्रीआकाश-कोटि-विस्तारायै नमः
२६६ ॐ श्रीयम-कोटि-भयङ्कर्यै नमः
२६७ ॐ श्रीमेरु-कोटि-समुच्छ्रायायै नमः
२६८ ॐ श्रीगण-कोटि-समृद्धिदायै नमः
२६९ ॐ श्रीनिष्कस्तोकायै नमः
२७० ॐ श्रीनिराधारायै नमः
२७१ ॐ श्रीनिर्गुणायै नमः
२७२ ॐ श्रीगुण-वर्जितायै नमः
२७३ ॐ श्रीअशोकायै नमः
२७४ ॐ श्रीशोक-रहितायै नमः
२७५ ॐ श्रीताप-त्रय-विवर्जितायै नमः
२७६ ॐ श्रीवसिष्ठायै नमः
२७७ ॐ श्रीविश्व-जनन्यै नमः
२७८ ॐ श्रीविश्वाख्यायै नमः
२७९ ॐ श्रीविश्व-वर्द्धिन्यै नमः
२८० ॐ श्रीचित्रायै नमः
२८१ ॐ श्रीविचित्र-चित्राङ्ग्यै नमः
२८२ ॐ श्रीहेतु-गर्भायै नमः
२८३ ॐ श्रीकुलेश्वर्यै नमः
२८४ ॐ श्रीइच्छा-शक्त्यै नमः
२८५ ॐ श्रीज्ञान-शक्त्यै नमः
२८६ ॐ श्रीक्रिया-शक्त्यै नमः
२८७ ॐ श्रीशुचि-स्मितायै नमः
२८८ ॐ श्रीशुच्यै नमः
२८९ ॐ श्रीस्मृति-मय्यै नमः
२९० ॐ श्रीसत्यायै नमः
२९१ ॐ श्रीश्रुति-रूपायै नमः
२९२ ॐ श्रीश्रुति-प्रियायै नमः
२९३ ॐ श्रीमहा-सत्त्व-मय्यै नमः
२९४ ॐ श्रीसत्त्वायै नमः
२९५ ॐ श्रीपञ्च-तत्त्वोपरि-स्थितायै नमः
२९६ ॐ श्रीपार्वत्यै नमः
२९७ ॐ श्रीहिमवत्-पुत्र्यै नमः
२९८ ॐ श्रीपारस्थायै नमः
२९९ ॐ श्रीपार-रूपिण्यै नमः
३०० ॐ श्रीजयन्त्यै नमः
३०१ ॐ श्रीभद्र-काल्यै नमः
३०२ ॐ श्रीअहल्यायै नमः
३०३ ॐ श्रीकुल-नायिकायै नमः
३०४ ॐ श्रीभूत-धात्र्यै नमः

३०५ ॐ श्रीभूतेश्यै नमः
३०६ ॐ श्रीभूतस्थायै नमः
३०७ ॐ श्रीभूत-भाविन्यै नमः
३०८ ॐ श्रीमहा-कुण्डलिनी-शक्त्यै नमः
३०९ ॐ श्रीमहा-विभव-वर्द्धिन्यै नमः
३१० ॐ श्रीहंसाक्ष्यै नमः
३११ ॐ श्रीहंस-रूपायै नमः
३१२ ॐ श्रीहंसस्थायै नमः
३१३ ॐ श्रीहंस-रूपिण्यै नमः
३१४ ॐ श्रीसोमाग्नि-मध्यस्थायै नमः
३१५ ॐ श्रीसूर्याग्नि-मध्यस्थायै नमः
३१६ ॐ श्रीमणि-मण्डल-वासिन्यै नमः
३१७ ॐ श्रीद्वादशार-सरोजस्थायै नमः
३१८ ॐ श्रीसूर्य-मण्डल-वासिन्यै नमः
३१९ ॐ श्रीअकलङ्कायै नमः
३२० ॐ श्रीशशाङ्काभायै नमः
३२१ ॐ श्रीषोडशार-निवासिन्यै नमः
३२२ ॐ श्रीडाकिन्यै नमः
३२३ ॐ श्रीराकिन्यै नमः
३२४ ॐ श्रीलाकिन्यै नमः
३२५ ॐ श्रीकाकिन्यै नमः
३२६ ॐ श्रीशाकिन्यै नमः
३२७ ॐ श्रीहाकिनी षट्-चक्रेषु-निवासिन्यै नमः
३२८ ॐ श्रीसृष्टि-स्थिति-विनाशिन्यै नमः
३२९ ॐ श्रीसृष्ट्यन्तायै नमः
३३० ॐ श्रीसृष्टि-कारिण्यै नमः
३३१ ॐ श्रीश्री-कण्ठ-प्रियायै नमः
३३२ ॐ श्रीहृत्कण्ठायै नमः
३३३ ॐ श्रीनन्दाख्यायै नमः
३३४ ॐ श्रीविन्दु-मालिन्यै नमः
३३५ ॐ श्रीचतुष्षटि-कलाधारायै नमः
३३६ ॐ श्रीदेह-दण्ड-समाश्रितायै नमः
३३७ ॐ श्रीमायायै नमः
३३८ ॐ श्रीकाल्यै नमः
३३९ ॐ श्रीधृत्यै नमः
३४० ॐ श्रीमेधायै नमः
३४१ ॐ श्रीक्षुधायै नमः
३४२ ॐ श्रीतुष्ट्यै नमः
३४३ ॐ श्रीमहा-द्युत्यै नमः
३४४ ॐ श्रीहिंगुलायै नमः
३४५ ॐ श्रीमङ्गलायै नमः
३४६ ॐ श्रीसीतायै नमः
३४७ ॐ श्रीसुषुम्ना-मध्य-गामिन्यै नमः
३४८ ॐ श्रीपर-घोरायै नमः
३४९ ॐ श्रीकरालाक्ष्यै नमः
३५० ॐ श्रीविजयायै नमः
३५१ ॐ श्रीजय-दायिन्यै नमः
३५२ ॐ श्रीहृत्-पद्म-निलयायै नमः
३५३ ॐ श्रीभीमायै नमः
३५४ ॐ श्रीमहा-भैरव-नादिन्यै नमः
३५५ ॐ श्रीआकाश-लिङ्ग-सम्भूतायै नमः
३५६ ॐ श्रीभुवनोद्यान-वासिन्यै नमः
३५७ ॐ श्रीमहत्-सूक्ष्मायै नमः
३५८ ॐ श्रीकङ्काल्यै नमः
३५९ ॐ श्रीभीम-रूपायै नमः
३६० ॐ श्रीमहा-बलायै नमः
३६१ ॐ श्रीमेनका-गर्भ-सम्भूतायै नमः
३६२ ॐ श्रीतप्त-काञ्चन-सन्निभायै नमः
३६३ ॐ श्रीअन्तरस्थायै नमः
३६४ ॐ श्रीकूट-बीजायै नमः

३६५ ॐ श्रीत्रिकूटाचल-वासिन्यै नमः
३६६ ॐ श्रीवर्णाख्यायै नमः
३६७ ॐ श्रीवर्ण-रहितायै नमः
३६८ ॐ श्रीपञ्चाशद्वर्ण-भेदिन्यै नमः
३६९ ॐ श्रीविद्याधर्यै नमः
३७० ॐ श्रीलोक-धात्र्यै नमः
३७१ ॐ श्रीअप्सरायै नमः
३७२ ॐ श्रीअप्सरः-प्रियायै नमः
३७३ ॐ श्रीदीक्षायै नमः
३७४ ॐ श्रीदाक्षायण्यै नमः
३७५ ॐ श्रीदक्षायै नमः
३७६ ॐ श्रीदक्ष-यज्ञ-विनाशिन्यै नमः
३७७ ॐ श्रीयशः-पूर्णायै नमः
३७८ ॐ श्रीयशोदायै नमः
३७९ ॐ श्रीयशोदा-गर्भ-सम्भवायै नमः
३८० ॐ श्रीदेवक्यै नमः
३८१ ॐ श्रीदेव-मात्रे नमः
३८२ ॐ श्रीराधिका कृष्ण-वल्लभायै नमः
३८३ ॐ श्रीअरुन्धत्यै नमः
३८४ ॐ श्रीशच्यै नमः
३८५ ॐ श्रीइन्द्राण्यै नमः
३८६ ॐ श्रीगान्धार्यै नमः
३८७ ॐ श्रीगन्ध-मालिन्यै नमः
३८८ ॐ श्रीध्यानातीतायै नमः
३८९ ॐ श्रीध्यान-गम्यायै नमः
३९० ॐ श्रीध्यानज्ञायै नमः
३९१ ॐ श्रीध्यान-धारिण्यै नमः
३९२ ॐ श्रीलम्बोदर्यै नमः
३९३ ॐ श्रीलम्बोष्ठ्यै नमः
३९४ ॐ श्रीजाम्बवन्त्यै नमः
३९५ ॐ श्रीजलोदर्यै नमः
३९६ ॐ श्रीमहोदर्यै नमः
३९७ ॐ श्रीमुक्त-केश्यै नमः
३९८ ॐ श्रीमुक्त-कामार्थ-सिद्धिदायै नमः
३९९ ॐ श्रीतपस्विन्यै नमः
४०० ॐ श्रीतपो-निष्ठायै नमः
४०१ ॐ श्रीसुपर्णायै नमः
४०२ ॐ श्रीधर्म-वासिन्यै नमः
४०३ ॐ श्रीबाण-चाप-धरायै नमः
४०४ ॐ श्रीधीरायै नमः
४०५ ॐ श्रीपाञ्चाल्यै नमः
४०६ ॐ श्रीपञ्चम-प्रियायै नमः
४०७ ॐ श्रीगुह्याङ्ग्यै नमः
४०८ ॐ श्रीसु-भीमाङ्ग्यै नमः
४०९ ॐ श्रीगुह्य-तत्त्वायै नमः
४१० ॐ श्रीनिरञ्जनायै नमः
४११ ॐ श्रीअशरीरायै नमः
४१२ ॐ श्रीशरीरस्थायै नमः
४१३ ॐ श्रीसंसारार्णव-तारिण्यै नमः
४१४ ॐ श्रीअमृतायै नमः
४१५ ॐ श्रीनिष्कलायै नमः
४१६ ॐ श्रीभद्रायै नमः
४१७ ॐ श्रीसकलायै नमः
४१८ ॐ श्रीकृष्ण-पिङ्गलायै नमः
४१९ ॐ श्रीचक्र-प्रियायै नमः
४२० ॐ श्रीचक्राह्वायै नमः
४२१ ॐ श्रीपञ्च-चक्रादि-दारिण्यै नमः
४२२ ॐ श्रीपद्म-राग-प्रतीकाशायै नमः
४२३ ॐ श्रीनिर्मलाकाश-सन्निभायै नमः
४२४ ॐ श्रीअधःस्थायै नमः

४२५ ॐ श्रीऊर्ध्व-रूपायै नमः
४२६ ॐ श्रीऊर्ध्व-पद्म-निवासिन्यै नमः
४२७ ॐ श्रीकार्य-कारण-कर्तृत्वे, शश्वद्-रूपेषु-संस्थितायै नमः
४२८ ॐ श्रीरसज्ञायै नमः
४२९ ॐ श्रीरस-मध्यस्थायै नमः
४३० ॐ श्रीगन्धस्थायै नमः
४३१ ॐ श्रीगन्ध-रूपिण्यै नमः
४३२ ॐ श्रीपर-ब्रह्म-स्वरूपायै नमः
४३३ ॐ श्रीपर-ब्रह्म-निवासिन्यै नमः
४३४ ॐ श्रीशब्द-ब्रह्म-स्वरूपायै नमः
४३५ ॐ श्रीशब्दस्थायै नमः
४३६ ॐ श्रीशब्द-वर्जितायै नमः
४३७ ॐ श्रीसिद्ध्यै नमः
४३८ ॐ श्रीबुद्ध्यै नमः
४३९ ॐ श्रीपरा-बुद्ध्यै नमः
४४० ॐ श्रीसन्दीप्तिर्मध्य-संस्थितायै नमः
४४१ ॐ श्रीस्व-गुह्यायै नमः
४४२ ॐ श्रीशाम्भवी-शक्त्यै नमः
४४३ ॐ श्रीतत्त्वस्थायै नमः
४४४ ॐ श्रीतत्त्व-रूपिण्यै नमः
४४५ ॐ श्रीशाश्वत्यै नमः
४४६ ॐ श्रीभूत-मात्रे नमः
४४७ ॐ श्रीमहा-भूताधिप-प्रियायै नमः
४४८ ॐ श्रीशुचि-प्रेतायै नमः
४४९ ॐ श्रीधर्म-सिद्ध्यै नमः
४५० ॐ श्रीधर्म-वृद्ध्यै नमः
४५१ ॐ श्रीपराजितायै नमः
४५२ ॐ श्रीकाम-सन्दीपिन्यै नमः
४५३ ॐ श्रीकामायै नमः
४५४ ॐ श्रीसदा कौतूहल-प्रियायै नमः
४५५ ॐ श्रीजटा-जूट-धरायै नमः
४५६ ॐ श्रीमुक्तायै नमः
४५७ ॐ श्रीसूक्ष्मायै नमः
४५८ ॐ श्रीशक्ति-विभूषणायै नमः
४५९ ॐ श्रीद्वीपि-चर्म-परीधानायै नमः
४६० ॐ श्रीचीर-वल्कल-धारिण्यै नमः
४६१ ॐ श्रीत्रिशूल-डमरु-धरायै नमः
४६२ ॐ श्रीनर-माला-विभूषणायै नमः
४६३ ॐ श्रीअत्युग्र-रूपिण्यै नमः
४६४ ॐ श्रीउग्रायै नमः
४६५ ॐ श्रीकल्पान्त-दहनोपमायै नमः
४६६ ॐ श्रीत्रैलोक्य-साधिन्यै नमः
४६७ ॐ श्रीसाध्यायै नमः
४६८ ॐ श्रीसिद्ध्यै नमः
४६९ ॐ श्रीसाधक-वत्सलायै नमः
४७० ॐ श्रीसर्व-विद्या-मय्यै नमः
४७१ ॐ श्रीसारायै नमः
४७२ ॐ श्रीअसुराणां विनाशिन्यै नमः
४७३ ॐ श्रीदमन्यै नमः
४७४ ॐ श्रीदामिन्यै नमः
४७५ ॐ श्रीदान्तायै नमः
४७६ ॐ श्रीदयायै नमः
४७७ ॐ श्रीदोग्ध्र्यै नमः
४७८ ॐ श्रीदुरापहायै नमः
४७९ ॐ श्रीअग्नि-जिह्वोपमायै नमः
४८० ॐ श्रीघोराघोर-घोर-तराननायै नमः
४८१ ॐ श्रीनारायण्यै नमः
४८२ ॐ श्रीनारसिंह्यै नमः
४८३ ॐ श्रीनृसिंह-हृदये-स्थितायै नमः

४८४ ॐ श्रीयोगेश्वर्यै नमः
४८५ ॐ श्रीयोग-रूपायै नमः
४८६ ॐ श्रीयोग-मात्रे नमः
४८७ ॐ श्रीयोगिन्यै नमः
४८८ ॐ श्रीखेचर्यै नमः
४८९ ॐ श्रीखचर्यै नमः
४९० ॐ श्रीखेलायै नमः
४९१ ॐ श्रीनिर्वाण-पद-संश्रयायै नमः
४९२ ॐ श्रीनागिन्यै नमः
४९३ ॐ श्रीनाग-कन्यायै नमः
४९४ ॐ श्रीसुवेशायै नमः
४९५ ॐ श्रीनाग-नायिकायै नमः
४९६ ॐ श्रीविष-ज्वालावत्यै नमः
४९७ ॐ श्रीदीप्तायै नमः
४९८ ॐ श्रीकला-शत-विभूषणायै नमः
४९९ ॐ श्रीतीव्र-वक्त्रायै नमः
५०० ॐ श्रीमहा-वक्त्रायै नमः
५०१ ॐ श्रीनाग-कोटित्व-धारिण्यै नमः
५०२ ॐ श्रीमहा-सत्त्वायै नमः
५०३ ॐ श्रीधर्मज्ञायै नमः
५०४ ॐ श्रीधर्माति-सुख-दायिन्यै नमः
५०५ ॐ श्रीकृष्ण-मूर्द्धायै नमः
५०६ ॐ श्रीमहा-मूर्द्धायै नमः
५०७ ॐ श्रीघोर-मूर्द्धायै नमः
५०८ ॐ श्रीवराननायै नमः
५०९ ॐ श्रीसर्वेन्द्रिय-मनोन्मत्तायै नमः
५१० ॐ श्रीसर्वेन्द्रिय-मनो-मय्यै नमः
५११ ॐ श्रीसर्व-संग्राम-जयदायै नमः
५१२ ॐ श्रीसर्व-प्रहरणोद्यतायै नमः
५१३ ॐ श्रीसर्व-पीडोप-शमन्यै नमः
५१४ ॐ श्रीसर्वारिष्ट-निवारिण्यै नमः
५१५ ॐ श्रीसर्वैश्वर्य-समुत्पन्नायै नमः
५१६ ॐ श्रीसर्व-ग्रह-विनाशिन्यै नमः
५१७ ॐ श्रीमातङ्ग्यै नमः
५१८ ॐ श्रीमत्त-मातङ्ग्यै नमः
५१९ ॐ श्रीमातङ्गी-प्रिय-मण्डलायै नमः
५२० ॐ श्रीअमृतोदधि-मध्यस्थायै नमः
५२१ ॐ श्रीकटि-सूत्रैरलंकृतायै नमः
५२२ ॐ श्रीप्रवांल-वसनाम्बुजायै नमः
५२३ ॐ श्रीमणि-मण्डल-मध्यस्थायै नमः
५२४ ॐ श्रीईषत्-प्रहसिताननायै नमः
५२५ ॐ श्रीकुमुदायै नमः
५२६ ॐ श्रीललितायै नमः
५२७ ॐ श्रीलोलायै नमः
५२८ ॐ श्रीलाक्षा-लोहित-लोचनायै नमः
५२९ ॐ श्रीदिग्वासायै नमः
५३० ॐ श्रीदेवदूत्यै नमः
५३१ ॐ श्रीदेव-देवाधि-देवतायै नमः
५३२ ॐ श्रीसिंहोपरि-समारूढायै नमः
५३३ ॐ श्रीहिमाचल-निवासिन्यै नमः
५३४ ॐ श्रीअट्टाट्ट-हासिन्यै नमः
५३५ ॐ श्रीघोरायै नमः
५३६ ॐ श्रीघोर-दैत्य-विनाशिन्यै नमः
५३७ ॐ श्रीअत्युग्र-रक्त-वस्त्राभायै नमः
५३८ ॐ श्रीनाग-केयूर-मण्डितायै नमः
५३९ ॐ श्रीमुक्ताहार-लतोपेतायै नमः
५४० ॐ श्रीतुङ्ग-पीन-पयोधरायै नमः
५४१ ॐ श्रीरक्तोत्पल-दलाकारायै नमः
५४२ ॐ श्रीमदाघू र्णित-लोचनायै नमः
५४३ ॐ श्रीसमस्त-देवता-मूर्त्यै नमः

५४४ ॐ श्रीसुरारि-क्षय-कारिण्यै नमः
५४५ ॐ श्रीखड्गिन्यै नमः
५४६ ॐ श्रीशूल-हस्तायै नमः
५४७ ॐ श्रीचक्रिण्यै नमः
५४८ ॐ श्रीचक्र-मालिन्यै नमः
५४९ ॐ श्रीशङ्खिन्यै नमः
५५० ॐ श्रीचापिण्यै नमः
५५१ ॐ श्रीवाणायै नमः
५५२ ॐ श्रीवज्रिण्यै नमः
५५३ ॐ श्रीवज्र-दण्डिन्यै नमः
५५४ ॐ श्रीआनन्दोदधि-मध्यस्थायै नमः
५५५ ॐ श्रीकटि-सूत्र-धरा परायै नमः
५५६ ॐ श्रीनानाभरण-दीप्ताङ्गायै नमः
५५७ ॐ श्रीनाना-मणि-विभूषितायै नमः
५५८ ॐ श्रीजगदानन्द-सम्भूतायै नमः
५५९ ॐ श्रीचिन्तामणि-गुणान्वितायै नमः
५६० ॐ श्रीत्रैलोक्य-नमितायै नमः
५६१ ॐ श्रीतुर्यायै नमः
५६२ ॐ श्रीचिन्मयानन्द-रूपिण्यै नमः
५६३ ॐ श्रीत्रैलोक्य-नन्दिनी देव्यै नमः
५६४ ॐ श्रीदुःख-दुस्वप्न-नाशिन्यै नमः
५६५ ॐ श्रीघोराग्नि-दाह-शमन्यै नमः
५६६ ॐ श्रीराज्य-देवार्थ-साधिन्यै नमः
५६७ ॐ श्रीमहाऽपराध-राशिघ्न्यै नमः
५६८ ॐ श्रीमहा-चौर-भयापहायै नमः
५६९ ॐ श्रीरागादि-दोष-रहितायै नमः
५७० ॐ श्रीजरा-मरण-वर्जितायै नमः
५७१ ॐ श्रीचन्द्र-मण्डल-मध्यस्थायै नमः
५७२ ॐ श्रीपीयूषार्णव-सम्भवायै नमः
५७३ ॐ श्रीसर्व-देवैः स्तुता देव्यै नमः
५७४ ॐ श्रीसर्व-सिद्धैर्नमस्कृतायै नमः
५७५ ॐ श्रीअचिन्त्य-शक्ति-रूपायै नमः
५७६ ॐ श्रीमणि-मन्त्र-महौषध्यै नमः
५७७ ॐ श्रीअस्ति-स्वस्ति-मयी बालायै नमः
५७८ ॐ श्रीमलयाचल-वासिन्यै नमः
५७९ ॐ श्रीधात्र्यै नमः
५८० ॐ श्रीविधात्र्यै नमः
५८१ ॐ श्रीसंहार्यै नमः
५८२ ॐ श्रीरतिज्ञायै नमः
५८३ ॐ श्रीरति-दायिन्यै नमः
५८४ ॐ श्रीरुद्राण्यै नमः
५८५ ॐ श्रीरुद्र-रूपायै नमः
५८६ ॐ श्रीरुद्र-रौद्रार्ति-नाशिन्यै नमः
५८७ ॐ श्रीसर्वज्ञायै नमः
५८८ ॐ श्रीधर्मज्ञायै नमः
५८९ ॐ श्रीरसज्ञायै नमः
५९० ॐ श्रीदीन-वत्सलायै नमः
५९१ ॐ श्रीअनाहतायै नमः
५९२ ॐ श्रीत्रि-नयनायै नमः
५९३ ॐ श्रीनिर्भारायै नमः
५९४ ॐ श्रीनिर्वृतिः परायै नमः
५९५ ॐ श्रीपराऽघोरायै नमः
५९६ ॐ श्रीकरालाक्ष्यै नमः
५९७ ॐ श्रीसुमत्यै नमः
५९८ ॐ श्रीश्रेष्ठ-दायिन्यै नमः
५९९ ॐ श्रीमन्त्रालिकायै नमः
६०० ॐ श्रीमन्त्र-गम्यायै नमः
६०१ ॐ श्रीमन्त्र-मालायै नमः
६०२ ॐ श्रीसु-मन्त्रिण्यै नमः
६०३ ॐ श्रीश्रद्धानन्दायै नमः

६०४ ॐ श्रीमहा-भद्रायै नमः
६०५ ॐ श्रीनिर्द्वन्द्वायै नमः
६०६ ॐ श्रीनिर्गुणात्मिकायै नमः
६०७ ॐ श्रीधरिण्यै नमः
६०८ ॐ श्रीधारिणी-पृथ्व्यै नमः
६०९ ॐ श्रीधरा-धात्र्यै नमः
६१० ॐ श्रीवसुन्धरायै नमः
६११ ॐ श्रीमेरु-मन्दर-मध्यस्थायै नमः
६१२ ॐ श्रीस्थित्यै नमः
६१३ ॐ श्रीशङ्कर-वल्लभायै नमः
६१४ ॐ श्री श्रीमत्यै नमः
६१५ ॐ श्री श्रीमय्यै नमः
६१६ ॐ श्री श्रेष्ठायै नमः
६१७ ॐ श्री श्रीकर्यै नमः
६१८ ॐ श्रीभाव-भाविन्यै नमः
६१९ ॐ श्री श्रीदायै नमः
६२० ॐ श्री श्रीमायै नमः
६२१ ॐ श्री श्रीनिवासायै नमः
६२२ ॐ श्री श्रीवत्यै नमः
६२३ ॐ श्री श्रीमताङ्गत्यै नमः
६२४ ॐ श्रीउमायै नमः
६२५ ॐ श्रीसारङ्गिणी कृष्णायै नमः
६२६ ॐ श्रीकुटिलायै नमः
६२७ ॐ श्रीकुटिलालिकायै नमः
६२८ ॐ श्रीत्रि-लोचनायै नमः
६२९ ॐ श्रीत्रि-लोकात्मायै नमः
६३० ॐ श्रीपुण्यपुण्या-प्रकीर्तितायै नमः
६३१ ॐ श्रीअमृतायै नमः
६३२ ॐ श्रीसत्य-सङ्कल्पायै नमः
६३३ ॐ श्री सा सत्यायै नमः
६३४ ॐ श्रीग्रन्थि-भेदिन्यै नमः
६३५ ॐ श्रीपरेश्यै नमः
६३६ ॐ श्रीपरमा-साध्यायै नमः
६३७ ॐ श्रीपरा-विद्यायै नमः
६३८ ॐ श्रीपरात्परायै नमः
६३९ ॐ श्रीसुन्दराङ्ग्यै नमः
६४० ॐ श्रीसुवर्णाभायै नमः
६४१ ॐ श्रीसुरासुर-नमस्कृतायै नमः
६४२ ॐ श्रीप्रजायै नमः
६४३ ॐ श्रीप्रजा-वत्यै नमः
६४४ ॐ श्रीधन्यायै नमः
६४५ ॐ श्रीधन-धान्य-समृद्धिदायै नमः
६४६ ॐ श्रीईशान्यै नमः
६४७ ॐ श्रीभुवनेशान्यै नमः
६४८ ॐ श्रीभवान्यै नमः
६४९ ॐ श्रीभुवनेश्वर्यै नमः
६५० ॐ श्रीअनन्तानन्त-महितायै नमः
६५१ ॐ श्रीजगत्-सारायै नमः
६५२ ॐ श्रीजगद्-भवायै नमः
६५३ ॐ श्रीअचिन्त्यात्म-शक्त्यै नमः
६५४ ॐ श्रीअचिन्त्य-शक्त्यै नमः
६५५ ॐ श्रीचिन्त्य-स्वरूपिण्यै नमः
६५६ ॐ श्रीअचिन्त्य-स्वरूपिण्यै नमः
६५७ ॐ श्रीज्ञान-गम्यायै नमः
६५८ ॐ श्रीज्ञान-मूर्त्यै नमः
६५९ ॐ श्रीज्ञानिन्यै नमः
६६० ॐ श्रीज्ञान-शालिन्यै नमः
६६१ ॐ श्रीअसितायै नमः
६६२ ॐ श्रीघोर-रूपायै नमः
६६३ ॐ श्रीसुधा-धारायै नमः

६६४ ॐ श्रीसुधा-वहायै नमः
६६५ ॐ श्रीभास्कर्यै नमः
६६६ ॐ श्रीभास्वर्यै नमः
६६७ ॐ श्रीभीतिर्भास्वदक्षानुशायिन्यै नमः
६६८ ॐ श्रीअनसूयायै नमः
६६९ ॐ श्रीक्षमायै नमः
६७० ॐ श्रीलज्जायै नमः
६७१ ॐ श्रीदुर्लभाभरणात्मिकायै नमः
६७२ ॐ श्रीविश्वघ्न्यै नमः
६७३ ॐ श्रीविश्व-वीरायै नमः
६७४ ॐ श्रीविश्वाशायै नमः
६७५ ॐ श्रीविश्व-संस्थितायै नमः
६७६ ॐ श्रीशीलस्थायै नमः
६७७ ॐ श्रीशील-रूपायै नमः
६७८ ॐ श्रीशीलायै नमः
६७९ ॐ श्रीशील-प्रदायिन्यै नमः
६८० ॐ श्रीबोधन्यै नमः
६८१ ॐ श्रीबोध-कुशलायै नमः
६८२ ॐ श्रीरोधिनी-बोधिन्यै नमः
६८३ ॐ श्रीविद्योतिन्यै नमः
६८४ ॐ श्रीविचित्रात्मायै नमः
६८५ ॐ श्रीविद्युत्-पटल-सन्निभायै नमः
६८६ ॐ श्रीविश्व-योन्यै नमः
६८७ ॐ श्रीमहा-योन्यै नमः
६८८ ॐ श्रीकर्म-योन्यै नमः
६८९ ॐ श्रीप्रियात्मिकायै नमः
६९० ॐ श्रीरोहिण्यै नमः
६९१ ॐ श्रीरोग-शमन्यै नमः
६९२ ॐ श्रीमहा-रोग-ज्वरापहायै नमः
६९३ ॐ श्रीरसदायै नमः
६९४ ॐ श्रीपुष्टिदायै नमः
६९५ ॐ श्रीपुष्ट्यै नमः
६९६ ॐ श्रीमानदायै नमः
६९७ ॐ श्रीमानव-प्रियायै नमः
६९८ ॐ श्रीकृष्णाङ्ग-वाहिन्यै नमः
६९९ ॐ श्रीकृष्णायै नमः
७०० ॐ श्रीअकलायै नमः
७०१ ॐ श्रीकृष्ण-सहोदरायै नमः
७०२ ॐ श्रीशाम्भव्यै नमः
७०३ ॐ श्रीशम्भु-रूपायै नमः
७०४ ॐ श्रीशम्भुस्थायै नमः
७०५ ॐ श्रीशम्भु-सम्भवायै नमः
७०६ ॐ श्रीविश्वोदर्यै नमः
७०७ ॐ श्रीयोग-मात्रे नमः
७०८ ॐ श्रीयोग-मुद्रायै नमः
७०९ ॐ श्रीसु-योगिन्यै नमः
७१० ॐ श्रीवागीश्वर्यै नमः
७११ ॐ श्रीयोग-निद्रायै नमः
७१२ ॐ श्रीयोगिनी-कोटि-सेवितायै नमः
७१३ ॐ श्रीकौलिकायै नमः
७१४ ॐ श्रीनन्द-कन्यायै नमः
७१५ ॐ श्रीशृङ्गार-पीठ-वासिन्यै नमः
७१६ ॐ श्रीक्षेमङ्कर्यै नमः
७१७ ॐ श्रीसर्व-रूपायै नमः
७१८ ॐ श्रीदिव्य-रूपायै नमः
७१९ ॐ श्रीदिगम्बर्यै नमः
७२० ॐ श्रीधूम्र-वक्त्रायै नमः
७२१ ॐ श्रीधूम्र-नेत्रायै नमः
७२२ ॐ श्रीधूम्र-केश्यै नमः
७२३ ॐ श्रीधूसरायै नमः

७२४ ॐ श्रीपिनाक्यै नमः
७२५ ॐ श्रीरुद्र-वेताल्यै नमः
७२६ ॐ श्रीमहा-वेताल-रूपिण्यै नमः
७२७ ॐ श्रीतपिन्यै नमः
७२८ ॐ श्रीतापिन्यै नमः
७२९ ॐ श्रीदीक्षायै नमः
७३० ॐ श्रीविष्णु-विद्यात्मनाश्रितायै नमः
७३१ ॐ श्रीमन्थरायै नमः
७३२ ॐ श्रीजठरायै नमः
७३३ ॐ श्रीतीव्राऽग्नि-जिह्वायै नमः
७३४ ॐ श्रीभयापहायै नमः
७३५ ॐ श्रीपशुघ्न्यै नमः
७३६ ॐ श्रीपशु-पालायै नमः
७३७ ॐ श्रीपशुहायै नमः
७३८ ॐ श्रीपशु-वाहिन्यै नमः
७३९ ॐ श्रीपिता-मात्रे नमः
७४० ॐ श्रीधीरायै नमः
७४१ ॐ श्रीपशु-पाश-विनाशिन्यै नमः
७४२ ॐ श्रीचन्द्र-प्रभायै नमः
७४३ ॐ श्रीचन्द्र-रेखायै नमः
७४४ ॐ श्रीचन्द्र-कान्ति-विभूषिण्यै नमः
७४५ ॐ श्रीकुङ्कमाङ्कित-सर्वाङ्ग्यै नमः
७४६ ॐ श्रीसुधायै नमः
७४७ ॐ श्रीसद्-गुरु-लोचनायै नमः
७४८ ॐ श्रीशुक्लाम्बर-धरा देव्यै नमः
७४९ ॐ श्रीवीणा-पुस्तक-धारिण्यै नमः
७५० ॐ श्रीऐरावत-पद्म-धरायै नमः
७५१ ॐ श्रीश्वेत-पद्मासन-स्थितायै नमः
७५२ ॐ श्रीरक्ताम्बर-धरा देव्यै नमः
७५३ ॐ श्रीरक्त-पद्म-विलोचनायै नमः

७५४ ॐ श्रीदुस्तरायै नमः
७५५ ॐ श्रीतारिण्यै नमः
७५६ ॐ श्रीतारायै नमः
७५७ ॐ श्रीतरुण्यै नमः
७५८ ॐ श्रीतार-रूपिण्यै नमः
७५९ ॐ श्रीसुधा-धारायै नमः
७६० ॐ श्रीधर्मज्ञायै नमः
७६१ ॐ श्रीधर्म-संघोपदेशिन्यै नमः
७६२ ॐ श्रीभगेश्वर्यै नमः
७६३ ॐ श्रीभगाराध्यायै नमः
७६४ ॐ श्रीभगिन्यै नमः
७६५ ॐ श्रीभग-नायिकायै नमः
७६६ ॐ श्रीभग-बिम्बायै नमः
७६७ ॐ श्रीभग-क्लिन्नायै नमः
७६८ ॐ श्रीभग-योन्यै नमः
७६९ ॐ श्रीभग-प्रदायै नमः
७७० ॐ श्रीभगेश्यै नमः
७७१ ॐ श्रीभग-रूपायै नमः
७७२ ॐ श्रीभग-गुह्यायै नमः
७७३ ॐ श्रीभगावहायै नमः
७७४ ॐ श्रीभगोदर्यै नमः
७७५ ॐ श्रीभगानन्दायै नमः
७७६ ॐ श्रीभगस्थायै नमः
७७७ ॐ श्रीभग-शालिन्यै नमः
७७८ ॐ श्रीसर्व-संक्षोभिणी शक्त्यै नमः
७७९ ॐ श्रीसर्व-विद्राविण्यै नमः
७८० ॐ श्रीमालिन्यै नमः
७८१ ॐ श्रीमाधव्यै नमः
७८२ ॐ श्रीमाध्व्यै नमः
७८३ ॐ श्रीमधु-रूपायै नमः

७८४ ॐ श्रीमहोत्कटायै नमः
७८५ ॐ श्रीभेरुण्डायै नमः
७८६ ॐ श्रीचन्द्रिकायै नमः
७८७ ॐ श्रीज्योत्स्नायै नमः
७८८ ॐ श्रीविश्व-चक्षुस्तमोपहायै नमः
७८९ ॐ श्रीसु-प्रसन्नायै नमः
७९० ॐ श्रीमहा-दूत्यै नमः
७९१ ॐ श्रीयम-दूती भयङ्कर्यै नमः
७९२ ॐ श्रीउन्मादिन्यै नमः
७९३ ॐ श्रीमहा-रूपायै नमः
७९४ ॐ श्रीदिव्य-रूपायै नमः
७९५ ॐ श्रीसुरार्चितायै नमः
७९६ ॐ श्रीचैतन्य-रूपिण्यै नमः
७९७ ॐ श्रीनित्यायै नमः
७९८ ॐ श्रीक्लिन्ना काम-मदोद्धतायै नमः
७९९ ॐ श्रीमदिरानन्द-कैवल्यायै नमः
८०० ॐ श्रीमदिराक्ष्यै नमः
८०१ ॐ श्रीमदालसायै नमः
८०२ ॐ श्रीसिद्धेश्वर्यै नमः
८०३ ॐ श्रीसिद्ध-विद्यायै नमः
८०४ ॐ श्रीसिद्धाद्यायै नमः
८०५ ॐ श्रीसिद्ध-सम्भवायै नमः
८०६ ॐ श्रीसिद्ध-ऋद्ध्यै नमः
८०७ ॐ श्रीसिद्ध-मात्रे नमः
८०८ ॐ श्रीसिद्धिः सर्वार्थ-सिद्धिदायै नमः
८०९ ॐ श्रीमनो-मय्यै नमः
८१० ॐ श्रीगुणातीतायै नमः
८११ ॐ श्रीपरं ज्योतिः- स्वरूपिण्यै नमः
८१२ ॐ श्रीपरेश्यै नमः
८१३ ॐ श्रीपरगापारायै नमः
८१४ ॐ श्रीपरा-सिद्ध्यै नमः
८१५ ॐ श्रीपरा-गत्यै नमः
८१६ ॐ श्रीविमलायै नमः
८१७ ॐ श्रीमोहिन्यै नमः
८१८ ॐ श्रीआद्यायै नमः
८१९ ॐ श्रीमधु-पान-परायणायै नमः
८२० ॐ श्रीवेद-वेदाङ्ग-जनन्यै नमः
८२१ ॐ श्रीसर्व-शास्त्र-विशारदायै नमः
८२२ ॐ श्रीसर्व-देव-मयी-विद्यायै नमः
८२३ ॐ श्रीसर्व-शास्त्र-मय्यै नमः
८२४ ॐ श्रीसर्व-ज्ञान-मयी-देव्यै नमः
८२५ ॐ श्रीसर्व-धर्म-मयीश्वर्यै नमः
८२६ ॐ श्रीसर्व-यज्ञ-मय्यै नमः
८२७ ॐ श्रीयज्ञायै नमः
८२८ ॐ श्रीसर्व-मन्त्राधिकारिण्यै नमः
८२९. ॐ श्रीसर्व-सम्पत्-प्रतिष्ठात्र्यै नमः
८३० ॐ श्रीसर्व-विद्राविण्यै नमः
८३१ ॐ श्रीसर्व-संक्षोभिणी-देव्यै नमः
८३२ ॐ श्रीसर्व-मङ्गल-कारिण्यै नमः
८३३ ॐ श्रीत्रैलोक्याकर्षिणी-देव्यै नमः
८३४ ॐ श्रीसर्वाह्लादन-कारिण्यै नमः
८३५ ॐ श्रीसर्व-सम्मोहिनी-देव्यै नमः
८३६ ॐ श्रीसर्व-स्तम्भन-कारिण्यै नमः
८३७ ॐ श्रीत्रैलोक्य-जृम्भिणी-देव्यै नमः
८३८ ॐ श्रीसर्व-वशङ्कर्यै नमः
८३९ ॐ श्रीत्रैलोक्य-रञ्जिनी-देव्यै नमः
८४० ॐ श्रीसर्व-सम्पत्ति-दायिन्यै नमः
८४१ ॐ श्रीसर्व-मन्त्र-मयी-देव्यै नमः
८४२ ॐ श्रीसर्व-द्वन्द्व-क्षयङ्कर्यै नमः
८४३ ॐ श्रीसर्व-सिद्धि-प्रदा-देव्यै नमः

८४४ ॐ श्रीसर्व-सम्पत्-प्रदायिन्यै नमः
८४५ ॐ श्रीसर्व-प्रियङ्करी-देव्यै नमः
८४६ ॐ श्रीसर्व-मङ्गल-कारिण्यै नमः
८४७ ॐ श्रीसर्व-काम-प्रदा-देव्यै नमः
८४८ ॐ श्रीसर्व-दुःख-विमोचिन्यै नमः
८४९ ॐ श्रीसर्व-मृत्यु-प्रशमन्यै नमः
८५० ॐ श्रीसर्व-विघ्न-विनाशिन्यै नमः
८५१ ॐ श्रीसर्वाङ्ग-सुन्दरी मात्रे नमः
८५२ ॐ श्रीसर्व-सौभाग्य-दायिन्यै नमः
८५३ ॐ श्रीसर्वज्ञायै नमः
८५४ ॐ श्रीसर्व-शक्त्यै नमः
८५५ ॐ श्रीसर्वैश्वर्य-फल-प्रदायै नमः
८५६ ॐ श्रीसर्व-ज्ञान-मयी-देव्यै नमः
८५७ ॐ श्रीसर्व-व्याधि-विनाशिन्यै नमः
८५८ ॐ श्रीसर्वाधार-स्वरूपायै नमः
८५९ ॐ श्रीसर्व-पाप-हरायै नमः
८६० ॐ श्रीसर्वानन्द-मयी-देव्यै नमः
८६१ ॐ श्रीसर्वेच्छायाः-स्वरूपिण्यै नमः
८६२ ॐ श्रीसर्व-लक्ष्मी-मयी-विद्यायै नमः
८६३ ॐ श्रीसर्वेप्सित-फल-प्रदायै नमः
८६४ ॐ श्रीसर्वारिष्ट-प्रशमन्यै नमः
८६५ ॐ श्रीपरमानन्द-दायिन्यै नमः
८६६ ॐ श्रीत्रि-कोण-निलयायै नमः
८६७ ॐ श्रीत्रि-स्थायै नमः
८६८ ॐ श्रीत्रि-मात्रायै नमः
८६९ ॐ श्रीत्रि-तनु-स्थितायै नमः
८७० ॐ श्रीत्रि-वेण्यै नमः
८७१ ॐ श्रीत्रि-पथायै नमः
८७२ ॐ श्रीत्रि-गुण्यायै नमः
८७३ ॐ श्रीत्रि-मूर्त्यै नमः
८७४ ॐ श्रीत्रि-पुरेश्वर्यै नमः
८७५ ॐ श्रीत्रि-धाम्न्यै नमः
८७६ ॐ श्रीत्रि-दशाध्यक्षायै नमः
८७७ ॐ श्रीत्रि-वित्यै नमः
८७८ ॐ श्रीत्रिपुर-वासिन्यै नमः
८७९ ॐ श्रीत्रयी-विद्यायै नमः
८८० ॐ श्रीत्रि-शिरायै नमः
८८१ ॐ श्रीत्रैलोक्यायै नमः
८८२ ॐ श्रीत्रि-पुष्करायै नमः
८८३ ॐ श्रीत्रि-कोटरस्थायै नमः
८८४ ॐ श्रीत्रि-विधायै नमः
८८५ ॐ श्रीत्रि-पुरायै नमः
८८६ ॐ श्रीत्रि-पुरात्मिकायै नमः
८८७ ॐ श्रीत्रि-पुरा-श्रियै नमः
८८८ ॐ श्रीत्रि-जनन्यै नमः
८८९ ॐ श्रीत्रि-पुरा त्रि-पुर-सुन्दर्यै नमः
८९० ॐ श्रीमहा-मायायै नमः
८९१ ॐ श्रीमहा-मेधायै नमः
८९२ ॐ श्रीमहा-चक्षुषे नमः
८९३ ॐ श्रीमहोक्षजायै नमः
८९४ ॐ श्रीमहा-वेधायै नमः
८९५ ॐ श्रीपरा-शक्त्यै नमः
८९६ ॐ श्रीपरा-प्रज्ञायै नमः
८९७ ॐ श्रीपरम्परायै नमः
८९८ ॐ श्रीमहा-लक्ष्यायै नमः
८९९ ॐ श्रीमहा-भक्ष्यायै नमः
९०० ॐ श्रीमहा-कक्ष्यायै नमः
९०१ ॐ श्रीअकलेश्वर्यै नमः
९०२ ॐ श्रीकलेश्वर्यै नमः
९०३ ॐ श्रीकलानन्दायै नमः

९०४ ॐ श्रीकलेश्यै नमः
९०५ ॐ श्रीकल-सुन्दर्यै नमः
९०६ ॐ श्रीकलशायै नमः
९०७ ॐ श्रीकलशेश्यै नमः
९०८ ॐ श्रीकुम्भ-मुद्रायै नमः
९०९ ॐ श्रीकृषोदर्यै नमः
९१० ॐ श्रीकुम्भपायै नमः
९११ ॐ श्रीकुम्भ-मध्येश्यै नमः
९१२ ॐ श्रीकुम्भानन्द-प्रदायिन्यै नमः
९१३ ॐ श्रीकुम्भजानन्द-नाथायै नमः
९१४ ॐ श्रीकुम्भजानन्द-वर्द्धिन्यै नमः
९१५ ॐ श्रीकुम्भजानन्द-सन्तोषायै नमः
९१६ ॐ श्रीकुम्भज-तर्पिणी-मुदायै नमः
९१७ ॐ श्रीवृत्त्यै नमः
९१८ ॐ श्रीवृत्तीश्वर्यै नमः
९१९ ॐ श्रीअमोघायै नमः
९२० ॐ श्रीविश्व-वृत्त्यन्त-तर्पिण्यै नमः
९२१ ॐ श्रीविश्व-शान्त्यै नमः
९२२ ॐ श्रीविशालाक्ष्यै नमः
९२३ ॐ श्रीमीनाक्ष्यै नमः
९२४ ॐ श्रीमीन-वर्णदायै नमः
९२५ ॐ श्रीविश्वाक्ष्यै नमः
९२६ ॐ श्रीदुर्धरायै नमः
९२७ ॐ श्रीधूमायै नमः
९२८ ॐ श्रीइन्द्राक्ष्यै नमः
९२९ ॐ श्रीविष्णु-सेवितायै नमः
९३० ॐ श्रीविरञ्चि-सेवितायै नमः
९३१ ॐ श्रीविश्वायै नमः
९३२ ॐ श्रीईशानायै नमः
९३३ ॐ श्रीईश-वन्दितायै नमः
९३४ ॐ श्रीमहा-शोभायै नमः
९३५ ॐ श्रीमहा-लोभायै नमः
९३६ ॐ श्रीमहा-मोहायै नमः
९३७ ॐ श्रीमहेश्वर्यै नमः
९३८ ॐ श्रीमहा-भीमायै नमः
९३९ ॐ श्रीमहा-क्रोधायै नमः
९४० ॐ श्रीमन्मथायै नमः
९४१ ॐ श्रीमदनेश्वर्यै नमः
९४२ ॐ श्रीमहानलायै नमः
९४३ ॐ श्रीमहाक्रोधायै नमः
९४४ ॐ श्रीविश्व-संहार-ताण्डवायै नमः
९४५ ॐ श्रीसर्व-संहार-वर्णेश्यै नमः
९४६ ॐ श्रीसर्व-पालन-तत्परायै नमः
९४७ ॐ श्रीसर्वादिः सृष्टि-कर्त्र्यै नमः
९४८ ॐ श्रीशिवाद्यायै नमः
९४९ ॐ श्रीशम्भु-स्वामिन्यै नमः
९५० ॐ श्रीमहा-नन्देश्वर्यै नमः
९५१ ॐ श्रीमृत्यवे नमः
९५२ ॐ श्रीमहा-स्पन्देश्वर्यै नमः
९५३ ॐ श्रीसुधायै नमः
९५४ ॐ श्रीपर्णायै नमः
९५५ ॐ श्रीअपर्णायै नमः
९५६ ॐ श्रीपरा-वर्णायै नमः
९५७ ॐ श्रीअपर्णेश्यै नमः
९५८ ॐ श्रीपर्ण-मानसायै नमः
९५९ ॐ श्रीवराह्यै नमः
९६० ॐ श्रीतुण्डदायै नमः
९६१ ॐ श्रीतुण्डायै नमः
९६२ ॐ श्रीगणेश्यै नमः
९६३ ॐ श्रीगण-नायिकायै नमः

९६४ ॐ श्रीवटुकायै नमः
९६५ ॐ श्रीवटुकेश्यै नमः
९६६ ॐ श्रीक्रौच-दारण-जन्मदायै नमः
९६७ ॐ श्रीक-ए-ई-ल महा-मायायै नमः
९६८ ॐ श्रीह-स-क-ह-ल माययायै नमः
९६९ ॐ श्रीदिव्य-नामायै नमः
९७० ॐ श्रीसदा-कामायै नमः
९७१ ॐ श्रीश्यामायै नमः
९७२ ॐ श्रीरामायै नमः
९७३ ॐ श्रीरमायै नमः
९७४ ॐ श्रीरसायै नमः
९७५ ॐ श्रीस-क-ल-ह्रीं तत्स्वरूपायै नमः
९७६ ॐ श्रीश्रीं ह्रीं नामादि-रूपिण्यै नमः
९७७ ॐ श्रीकालज्ञायै नमः
९७८ ॐ श्रीकालहा-मूर्त्यै नमः
९७९ ॐ श्रीसर्व-सौभाग्यदा-मुदायै नमः
९८० ॐ श्रीउर्वायै नमः
९८१ ॐ श्रीउर्वेश्वर्यै नमः
९८२ ॐ श्रीखर्वायै नमः
९८३ ॐ श्रीखर्व-पर्वायै नमः
९८४ ॐ श्रीखगेश्वर्यै नमः
९८५ ॐ श्रीगरुडायै नमः
९८६ ॐ श्रीगारुडी-मात्रे नमः
९८७ ॐ श्रीगरुडेश्वर-पूजितायै नमः
९८८ ॐ श्रीअन्तरिक्षान्तरायै नमः
९८९ ॐ श्रीपदायै नमः
९९० ॐ श्रीप्रज्ञायै नमः
९९१ ॐ श्रीप्रज्ञानदा-परायै नमः
९९२ ॐ श्रीविज्ञानायै नमः
९९३ ॐ श्रीविश्व-विज्ञानायै नमः
९९४ ॐ श्रीअन्तराक्षायै नमः
९९५ ॐ श्रीविशारदायै नमः
९९६ ॐ श्रीअन्तर्ज्ञान-मय्यै नमः
९९७ ॐ श्रीसौम्यायै नमः
९९८ ॐ श्रीमोक्षानन्द-विवर्द्धिन्यै नमः
९९९ ॐ श्रीशिव-शक्ति-मयी-शक्त्यै नमः
१००० ॐ श्रीएकानन्द-प्रवर्तिन्यै नमः
१००१ ॐ श्री श्रीमात्रे नमः
१००२ ॐ श्री श्रीपरा-विद्यायै नमः
१००३ ॐ श्रीसिद्धा-श्रियै नमः
१००४ ॐ श्रीसिद्ध-सागरायै नमः
१००५ ॐ श्रीसिद्ध-लक्ष्म्यै नमः
१००६ ॐ श्रीसिद्ध-विद्यायै नमः
१००७ ॐ श्रीसिद्धायै नमः
१००८ ॐ श्रीसिद्धेश्वर्यै नमः
१००९ ॐ श्रीसुधायै नमः

★★★

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीराज-राजेश्वरी-तर्पण-स्तोत्र-साधना

।। ध्यान ।।

बालार्कायुत-तेजसं त्रि-नयनां रक्ताम्बरोल्लासिनीम् ।
नानालंकृति-राजमान-वपुषं बालोडुराट्-शेखराम् ।।
हस्तैरिक्षु-धनुः सृणिं सुमशरं पाशं मुदा विभ्रतीम् ।
श्रीचक्र-स्थित-सुन्दरीं त्रि-जगतामाधार-भूतां स्मरेत् ।।१।।
बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्बाहां त्रि-लोचनाम् ।
पाशांकुश - शरांश्चापं, धारयन्तीं शिवां भजे ।।२।।

उक्त प्रकार से **श्रीचक्र-स्थित भगवती षोडशी का ध्यान** कर प्रस्तुत स्तोत्र का पाठ एवं **तर्पण** करना चाहिए। यथा–

छन्दः-पाद-युगां निरुक्ति-सुमुखां शिक्षां च जङ्घा-युगाम्,
ऋग्वेदोरु-युगां यजुस्तु जघनां या साम-वेदोदराम् ।
तर्क-न्याय-कुचां श्रुति-स्मृति-करां काव्यादि-वेदाननाम्,
वेदान्तामृत-लोचनां भगवती-श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।१।।
कल्याणयुत -पूर्ण - बिम्ब - वदनां पूर्णेश्वरानन्दिनीम्,
पूर्णां पूर्ण-परां परेश-महिषीं पूर्णामृतास्वादिनीम् ।
सम्पूर्णां परमोत्तमामृत - कलां विद्यावतीं भारतीम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।२।।
एकानेकमनेक - कार्य - विविधां कार्यैकंचिद् - रूपिणीम्,
चैतन्यात्मक-एक-चक्र-रचितां चक्राङ्क-एकाकिनीम् ।
भावाभाव - विवर्द्धिनीं भय - हरां सद्-भक्ति-चिन्ता-मणिम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।३।।
ईशाधीश्वर-योगि-वृन्द-विदितां सानन्द-भूतां पराम्,
पश्यन्तीं तनु-मध्यमां विलसतीं श्रीभैरवी-रूपिणीम् ।
आत्मानात्म-विचारिणीं विवरगां विद्यां त्रि-बीज-त्रयीम्,
श्रीचक्र-प्रिय-विन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।४।।
लक्ष्यालक्ष्य-निरीक्षणां निरुपमां रुद्राक्ष-माला-धराम्,
साक्षात् कारण-दक्ष-वंश-कलितां दीर्घाक्षि-दीर्घेश्वरीम् ।

भद्रां भद्र - वर - प्रदां भगवतीं भद्रेश्वरीं भद्रिणीम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।५।।
ह्रीं-बीजान्वित-नाद-विन्दु-भरितां ॐकार - नादात्मिकाम्,
ब्रह्मानन्द-घनोदरीं गुण-वतीं ज्ञानेश्वरीं ज्ञानदाम्।
इच्छा-ज्ञान-क्रिया-वतीं जित-वतीं गन्धर्व-संसेविताम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।६।।
हर्षोन्मत्त - सुवर्ण - पात्र - भरितां पानोन्नताघूर्णिताम्,
हुङ्कार-प्रिय-शब्द-ब्रह्म-निरतां सारस्वतोल्लासिनीम् ।
सारासार-विचार-चारु-चतुरां वर्णाश्रमाकारिणीम्,
श्रीचक्र-प्रिय-विन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।७।।
सर्व - ज्ञान - कलावतीं स-करुणां सन्नादिनीं नन्दिनीम्,
सर्वान्तर्गत - शालिनीं शिव-तनुं सन्दीपिनीं दीपिनीम् ।
संयोग - प्रिय - रूपिणीं प्रिय - वतीं प्रीति - प्रतापोन्नताम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।८।।
कर्माकर्म - विवर्जितां कुल - वतीं कर्म - प्रदां कौलिनीम्,
कारुण्यां तनु-बुद्धि-कर्म-निरतां सिन्धु-प्रियां शालिनीम् ।
पञ्च - ब्रह्म - सनातनां शव - हृदां ज्ञेयाङ्ग - योगान्विताम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।९।।
हस्ते कुम्भ-निभां पयोधर-धरां पीनोन्नतां नौमि ताम्,
हाराद्याभरणां सुरेन्द्र-विनुतां शृङ्गार-पीठालयाम् ।
योन्याकारिणि योनि - मुद्रित - करां नित्यां च वर्णात्मिकाम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।१०।।
लक्ष्मी-लक्षण-पूर्ण-भक्ति-वरदां लीला-विनोद-स्थिताम्,
लाक्षा-रञ्जित-पाद-पद्म-युगलां ब्रह्माण्ड-संसेविताम्।
लोकालोकित-लोक-काम-जननीं लोक-श्रियाङ्क-स्थिताम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।११।।
ह्रीङ्कारायुत - शङ्कर - प्रिय - तनुं श्रीयोग - पीठेश्वरीम्,
माङ्गल्यायुत-पङ्कजाभ-नयनां माङ्गल्य-सिद्धि-प्रदाम् ।

तारुण्यां तपसार्चितां तरुणिकां तत्रोद्भवां तत्त्विनीम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।१२।।

सर्वेशाङ्ग - विहारिणीं स - करुणां सर्वेश्वरीं सर्वगाम्,
सत्यां सर्व-मयीं सहस्र-दलजां सप्तार्णवोप-स्थिताम् ।

सङ्गासङ्ग-विवर्जितां शुभ-करीं बालार्क-कोटि-प्रभाम्,
श्रीचक्र-प्रिय-विन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।१३।।

कादि-क्षान्त-सुवर्ण-विन्दु-सुतनुं स्वर्णादि - सिंहासिनीम्,
नाना-वर्ण-विचित्र-चित्र-चरितां चातुर्य - चिन्ता-मणिम् ।

चित्तानन्द-विधायिनीं सु-विपुलां रूढ-त्रयां शेषिकाम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।१४।।

लक्ष्मीशादि-विधीन्द्र-चन्द्र-मुकुटामष्टाङ्ग-पीठार्चिताम्,
सूर्येन्द्राग्नि-मयैक-पीठ-निलयां त्रिरथां त्रिकोणेश्वरीम् ।

गोप्त्रीं गुर्विणि-गर्वितां गगनगां गङ्गा-गणेश-प्रियाम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।१५।।

ह्रीं-कूट-त्रय-रूपिणीं समयिनीं संसारिणीं हंसिनीम्,
वामाचार-परायणां सु-कुलजां बीजावतीं मुद्रिणीम् ।

कामाक्षीं करुणार्द्र-चित्त-चरितां श्रीमन्त्र-मूर्त्यात्मिकाम्,
श्रीचक्र-प्रिय-बिन्दु-तर्पण-परां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।१६।।

।। श्रीशङ्कराचार्य-विरचितं श्रीराज-राजेश्वरी-स्तोत्रम् ।।

★★★

'तर्पण' और उसका फल

'तन्त्रों' के अनुसार 'मधु' से 'तर्पण' करे, तो सभी कामनाएँ पूरी होती हैं। पूर्णायु की कामना हो, तो 'घृत' से, आरोग्य-लाभ की इच्छा हो, तो 'दुग्ध' से 'तर्पण' करना चाहिए। सभी कामनाओं की सिद्धि के लिए 'नारिकेल'-जल से 'तर्पण' करना चाहिए।

श्रीचक्र-स्तोत्रम्

प्रोक्ता पञ्च-दशी विद्या, महा-त्रिपुर-सुन्दरी।
श्रीमहा-षोडशी प्रोक्ता, महा-माहेश्वरी सदा ।।१।।

प्रोक्ता श्रीदक्षिणा काली, महा-राज्ञीति संज्ञया।
आगमेषु महा-शक्तिः, ख्याता श्रीभुवनेश्वरी ।।२।।

महा-गुप्ता गुह्य-काली, नाम्ना शास्त्रेषु कीर्तिता।
महोग्र-तारा निर्दिष्टा, महा-ज्ञप्तेति भू-तले ।।३।।

महानन्दा कुब्जिका स्यात्, लोकेऽत्र जगदम्बिका।
त्रिशक्त्याद्याऽत्र चामुण्डा, महा-स्पन्दा प्रकीर्तिता ।।४।।

महा-महाशया प्रोक्ता, बाला त्रिपुर-सुन्दरी।
श्रीचक्र-राजः सम्प्रोक्तस्त्रि-भागेन महेश्वरि ।।५।।

-ब्रह्मीभूत पूज्य श्रीस्वामी विद्यारण्य की कृपा से प्राप्त

पञ्च-दशी विद्या 'महा-त्रिपुर-सुन्दरी' और **श्रीमहा-षोडशी विद्या** सदैव **'महा-महेश्वरी'** कही गई हैं। **श्रीदक्षिणा काली** को **'महा-राज्ञी'** नाम से कहा गया है और **श्री भुवनेश्वरी** आगमों में **'महा-शक्ति'** नाम से प्रसिद्ध हैं। शास्त्रों में **गुह्य-काली** नाम से **'महा-गुप्ता'** का वर्णन है और पृथ्वी पर **महोग्र-तारा- 'महा-ज्ञप्ता'** बताई गई हैं। **जगदम्बा कुब्जिका** इस लोक में **'महानन्दा'** हैं और **त्रिशक्त्यात्मिका आद्या चामुण्डा- 'महा-स्पन्दा'** कही गई हैं। **बाला त्रिपुर-सुन्दरी- 'महा-महाशया'** कही गई हैं। **हे महेश्वर**! इस प्रकार तीन भागों में **श्रीचक्र-राज** का वर्णन है।

पाठान्तर : दूसरे श्लोक का प्रथम चरण-लोके ख्याता महा-राज्ञी, नाम्ना दक्षिण- कालिका।

★★★

श्रीषोडशी-आराधना

भगवती षोडशी की आराधना **सर्व-सिद्धि-दायिनी** है। **'श्रीषोडशी-सहस्र-नाम'** के निम्न-लिखित नामों से इनकी आराधना का माहात्म्य स्पष्ट होता है। यथा-**'सर्व-सम्पत् -प्रतिष्ठात्री', 'सर्व-मङ्गल-कारिणी', 'सर्वाह्लादन-कारिणी', 'सर्व-सम्मोहिनी देवी', 'सर्व-स्तम्भन-कारिणी', 'सर्व-सम्पत्ति-दायिनी', 'सर्व-मन्त्र-मयी', 'सर्व-द्वन्द्व-क्षयङ्करी', 'सर्व-सिद्धि-प्रदा', 'सर्व-दुःख-विमोचिनी', 'सर्व-सौभाग्य-दायिनी', 'सर्वैश्वर्य-फल-प्रदा', 'सर्व-व्याधि-विनाशिनी', 'सर्व-पाप-हरा', 'सर्व-लक्ष्मी-मयी विद्या', 'सर्वेप्सित-फल-प्रदा', 'सर्वारिष्ट-प्रशमनी'**।

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीआवरण-सहस्राक्षरी-साधना

त्रैलोक्य-पूजिता भगवती षोडशी की आवरण-शक्तियों का नित्य स्मरण करते हुए 'पराम्बा' का 'सहस्रार' में पूजन किया जाता है। यथा-

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः ॐ नमो भगवति!, अक्षोभ्ये!, रूक्ष-कर्णे!, राक्षसि!, पक्ष-त्रणे!, क्षपे!, पिङ्गलाक्षि!, अरुणे!, क्षये लीले!, लोले!, ललिते!, लूते!, लुलिते!, लम्बिके!, लङ्केश्वरि!, लासे!, विमले!, हुताशनि!, विशालाक्षि!, हूँ-कारे!, वडवा-मुखि!, महा-रवे!, महा-क्रीड-क्रोधिनि!, खरास्ये!, सर्वज्ञे!, तरले!, तारे!, दृष्टि-हृष्टे!, खग-कन्धरे!, सारसि!, रस-संग्रहिणि!, ताल-जङ्घे!, करङ्किणि!, मेघ-नादे!, प्रचण्डोग्रे!, काल-कर्णि!, चेल-प्रदे!, चम्पे!, चम्पावति!, प्रचम्पे!, मलयान्तकि!, पितृ-वक्त्रे!, पिशाचाक्षि!, पिशुनि!, लोलुपे!, वानति!, वानरि!, वायु-विकृतास्ये!, वागु-वेगे!, बृहत्-कुक्षि-विकृते!, विश्व-रूपिणि!

यम-जिह्वे!, जये!, दुर्जये!, पुमन्तकि!, बिडाल-रेवति!, पूतने!, विजये!, अनन्ते!, क्रन्दिनि!, चण्डि!, रेकर्णि! (सर्व-संक्षोभिणि, सर्व-विद्राविणि, सर्वाकर्षिणि, सर्व-वशङ्करि), सर्वोन्मादिनि!, सर्व-महांकुशे!, खेचरि! (ख-चक्र-धारिणि), सर्व-बीज-रूपे!, महा-योनि-रूपे!, त्रिखण्डे!

अनङ्ग-ब्राह्मि!, अनङ्ग-माहेश्वरि!, अनङ्ग-कौमारि!, अनङ्ग-वैष्णवि!, अनङ्ग-वाराहि!, अनङ्ग-इन्द्राणि!, अनङ्ग-चामुण्डे!, अनङ्ग-महा-लक्ष्मि!, प्रकट-योगिनीशि!, चार्वाक-दर्शनाङ्गि!, त्रैलोक्य-मोहन-चक्र-स्वामिनि!

कामाकर्षिणि! (बुद्ध्याकर्षिणि, अहङ्काराकर्षिणि, शब्दाकर्षिणि, स्पर्शाकर्षिणि, रूपाकर्षिणि, रसाकर्षिणि, गन्धाकर्षिणि, चित्ताकर्षिणि, धैर्याकर्षिणि, स्मृत्याकर्षिणि, नामाकर्षिणि, बीजाकर्षिणि, आत्माकर्षिणि), अमृताकर्षिणि!, शरीराकर्षिणि!, गुप्त-योगिनीशि!, बौद्ध-दर्शनाङ्गि!, सर्वाशा-पूरक-चक्र-स्वामिनि!

अनङ्ग-कुसुमे!, अनङ्ग-मेखले!, अनङ्ग-मदने!, अनङ्ग-मदनातुरे!, अनङ्ग-रेखे!, अनङ्ग-वेगिनि, अनङ्गांकुशे!, अनङ्ग-मालिनि!, अति-गुप्त-योगिनीशि!, रौद्र-दर्शनाङ्गि!, सर्व-संक्षोभिणि-चक्र-स्वामिनि!, पूर्वाम्नायेशि!, सृष्टि-प्रदे!

सर्व-संक्षोभिणि!, सर्व-विद्राविणि!, सर्वाकर्षिणि!, सर्वाह्लादिनि!, सर्व-सम्मोहिनि!, सर्व-स्तम्भनि!, सर्व-जृम्भिनि!, सर्व-वशङ्करि!, सर्व-रञ्जनि!, सर्वोन्मादिनि!, सर्वार्थ-साधनि!, सर्व-सम्पत्-प्रपूरणि!, सर्व-मन्त्र-मयि!, सर्व-द्वन्द्व-क्षयङ्करि!, सम्प्रदाय-योगिनीशि!, सर्व-दर्शनाङ्गि!, सर्व-सौभाग्य-दायक-चक्र-स्वामिनि!

सर्व-सिद्धि-प्रदे!, सर्व-सम्पत्-प्रदे!, सर्व-प्रियङ्करि!, सर्व-मङ्गल-कारिणि!, सर्व-काम-प्रदे!, सर्व-दु:ख-विमोचनि!, सर्व-मृत्यु-प्रशमनि!, सर्व-विघ्न-निवारणि!, सर्वाङ्ग-सुन्दरि!, सर्व-सौभाग्य-दायिनि!, कुल-कौल-योगिनीशि!, सर्वार्थ-साधक-चक्र-स्वामिनि!

सर्वज्ञे!, सर्व-शक्ते!, सर्वैश्वर्य-प्रदायिनि!, सर्व-ज्ञान-मयि!, सर्व-व्याधि-विनाशिनि!, सर्वाधार-स्वरूपे!, सर्व-पाप-हरे!, सर्वानन्द-मयि!, सर्व-रक्षा-स्वरूपे!, सर्वेप्सित-फल-प्रदे!, निगर्भ-योगिनीशि!, सर्व-रक्षा-कर-चक्र-स्वामिनि!, दक्षिणाम्नायेशि!, स्थिति-प्रदे!

ब्लूं वशिनि!, कलह्रीं कामेशि!, न्व्लूँ मोदिनि!, य्लूं विमले!, ज्म्रीं अरुणे!, हसलवरयूं जयिनि!, झमरयूं सर्वेश्वरि!, क्ष्म्रीं कौलिनि!, रहस्य-योगिनीशि!, शाक्त-दर्शनाङ्गि!, सर्व-रोग-हर-चक्र-स्वामिनि!, द्रां क्लिन्ने! मोहन-काम-बाण!, द्रीं शोषण-काम-बाण!, क्लीं नित्य - सन्दीपन - काम-बाण!, ब्लूं मन्द - सन्तापन - काम - बाण!, स: द्रवे! उन्मादन-काम-बाण!, द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं स:।

जम्भिनि! जम्भय जम्भय, मोहिनि! मोहय मोहय, आं आकर्षिणि! आकर्षय आकर्षय, स्तम्भिनि! स्तम्भय स्तम्भय, ऐं कामेशि! क्लीं वज्रेशि! सौ: भग-माले!

अति-रहस्य-योगिनीशि!,सर्व-सिद्धि-मय-चक्र-स्वामिनि!, काम-राज-विद्या-महा-त्रिपुर-सुन्दरी-मात:!, परापर-रहस्य-योगिनीशि!, सौगत-दर्शनाङ्गि!, सर्वानन्द-मय-चक्र-स्वामिनि!, पश्चिमाम्नायेशि!

अं आं सौ: त्रिपुरे!, ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरेश्वरि!, ह्रीं क्लीं सौ: त्रिपुर-सुन्दरि!, हैं हक्लीं हसौ: त्रिपुर-वासिनि!, हसैं हसक्लीं हसौ: त्रिपुरा-श्रि!, ह्रीं क्लीं ब्लें त्रिपुर-मालिनि!, ह्रीं श्रीं सौ: त्रिपुरा-सिद्धे!, हस्रैं हसकलरीं हस्रौं त्रिपुराम्बे!, हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौं: महा-त्रिपुर-भैरवि!, अं कामेशि!, आं भग-माले!, इं नित्य-क्लिन्ने!, ईं भीरुण्डे!, उं वह्नि-वासिनि!, ऊं महा-वज्रेश्वरि!, ऋं शिव-दूति!, ॠं त्वरिते!, लृं कुल-सुन्दरि!, ॡं नित्ये!, एं नील-पताके!, ऐं विजये!, ओं सर्व-मङ्गले!, औं ज्वाला-मालिनि!, अं विचित्रे!, अ: कामेश्वरि!

विद्या-मालिनि!, अकुले!, कुलाकुल-महा-कुले!, सर्वोत्तर-पञ्चार्थ-ज्ञान-प्रदे!, सर्व-दर्शनाङ्ग-मयि!, सर्व-दर्शनोत्तीर्ण-स्वरूपिणि!, सर्वाध्व-शोधनि!, काल-कालेश-वर्णे!, नवाक्षरि!, बाल-विद्या षोडशाधिका च नव-कूट-द्वयं सहखफ्रें आनन्देश्वरि!, घोर-कालिनि! अम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि हंस: श्रीं ह्रीं ऐं ।।

इत्यावृत्ति-सहस्रार्णा-विद्या त्रैलोक्य-पूजिता।।

'कौल-कल्पतरु' चण्डी की विशेष प्रस्तुति

वर्ष-६९

श्री श्रीविद्या-साधना

(श्री श्रीविद्या-स्तव-मञ्जरी)   पुष्प-४

श्रीपरा-पूजा

प्रेरणा-स्तम्भ

प्रातः-स्मरणीय 'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक

ऋतशील शर्मा

*

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

प्रकाशक
पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

श्रद्धाञ्जलि!

जिनकी 'दिव्य कृपा' से
प्रस्तुत श्री श्रीषोडशी-आराधना का प्रकाशन हो रहा है

गुप्तावतार
बाबाश्री

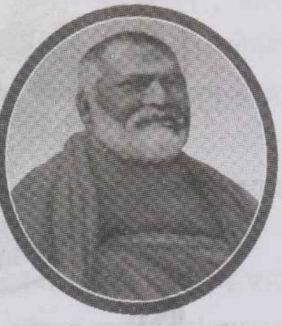

राष्ट्र-गुरु
स्वामी जी महाराज

कौल-कल्पतरु
पं० देवीदत्त शुक्ल

कुल-भूषण
पं० रमादत्त शुक्ल

चतुर्थ संस्करण
शरत्-पूर्णिमा, सं० २०६९ वि०-२९ अक्टूबर, २०१२
सर्वाधिकार सुरक्षित
परा-वाणी प्रेस, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

अनक्रम

सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा, यत्फलं समवाप्नुयात्।
तत्फलं लभते भक्त्या, कृत्वा श्रीचक्र-दर्शनम्।।
महा-षोडशरानानि, कृत्वा यल्लभते फलम्।
तत्फलं समवाप्नोति, कृत्वा श्रीचक्र-दर्शनम्।।
सार्धः त्रि-कोटि-तीर्थेषु, स्नात्वा यत्फलमश्नुते।
तत्फलं लभते भक्त्या, कृत्वा श्रीचक्र-दर्शनम्।।

०१. प्राक्कथन २१२
०२. पुराणों में भगवती षोडशी की उत्पत्ति २१३
०३. 'श्री-यन्त्र' एवं 'शरीर'-चक्र २१८
०४. तन्त्रों में श्री षोडशी देवी २१९
०५. भगवती षोडशी का विस्तृत मानसिक पूजन २४०
०६. श्रीपरा-पूजा-प्रकाश-स्तोत्रम् २४३
०७. श्रीसुभगोदय-स्तुति २५५
०८. श्रीसुभगोदय-स्तुति (मूल) २६५
०९. श्रीमकरन्द-स्तव-राज २७३
१०. श्रीश्रीविद्या वृहत् कर्पूर-स्तोत्रम् २७७
११. श्रीत्रिपुर-सुन्दरी पुष्पाञ्जलि-स्तवः २८४
१२. श्रीत्रिपुर-सुन्दर्युपस्थान-सहस्त्राक्षरी २८६
१३. अपराध-क्षमापण-स्तोत्रम् २८७

★ ★ ★

प्राक्कथन

'**चण्डी**' आध्यात्मिक पुस्तक-माला के अन्तर्गत **श्री श्रीविद्या-साधना** का क्रमशः प्रकाशन हो रहा है। पुष्प (१)-(३) के द्वारा **भगवती श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी** एवं **भगवती श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी** की आराधना हेतु '**कवच**', '**हृदय**', '**अष्टोत्तर-शत-नाम**' एवं '**स्तोत्रादि**' प्रकाशित हुए। **पुष्प (४)** के द्वारा **श्री श्रीविद्या-साधना** के अन्तिम चरण **श्रीषोडशी-आराधना** हेतु '**कवचादि**' प्रकाशित हुए। अब प्रस्तुत **पुष्प-(५)** के द्वारा **श्री षोडशी-आराधना** हेतु कुछ **महत्त्व-पूर्ण स्तुतियाँ** प्रकाशित की जा रही हैं।

परम पूज्य आदि-शङ्कराचार्य जी के **परम गुरु श्री गौडपादाचार्य जी** द्वारा रचित '**श्री सुभगोदय-स्तुति**' को यहाँ **आदरणीय डॉ० रुद्रदेव जी** की विस्तृत हिन्दी-टिप्पणी के साथ पहली बार प्रकाशित किया जा रहा है।

भगवती षोडशी के प्रसिद्ध स्तोत्र '**श्री परा-पूजा-प्रकाश**' को भी यहाँ विस्तृत हिन्दी-अर्थ के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त **परम पूज्य बाबाश्री** के द्वारा प्राप्त दुर्लभ स्तुतियों '**श्रीश्रीविद्या वृहत्-कर्पूर-स्तोत्र**' एवं '**श्री मकरन्द-स्तव-राज**' को भी यहाँ पहले-पहल संशोधित रूप में प्रकाशित किया जा रहा है।

प्रस्तुत सभी दुर्लभ स्तुतियों से **श्रीश्रीविद्या-साधना** का महत्त्व तो स्पष्ट होता ही है, साथ ही साधना के महत्त्व-पूर्ण सूत्र भी स्पष्ट होते हैं।

अस्तु! आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत **श्रीषोडशी-आराधना** द्वारा श्रद्धालु बन्धु **भगवती श्रीषोडशी की आराधना** विधि-वत् करेंगे और अपना तथा **विश्व का कल्याण** करेंगे।

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग — **-ऋतशील शर्मा**

★★★

पुराणों में–

भगवती षोडशी की उत्पत्ति

काली तारा महा-विद्या, षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्न-मस्ता च, विद्या धूमावती तथा।।
बगला सिद्ध-विद्या च, मातङ्गी कमलात्मिका।
एता दश-महा-विद्याः, सिद्ध-विद्याः प्रकीर्तिताः।।

भगवती षोडशी देवी–दश-महा-विद्याओं में से एक हैं। **दश-महा-विद्याओं की उत्पत्ति** के सम्बन्ध में **श्रीमद्-भागवत** में इस प्रकार लिखा है कि–**सती** जब विवाह योग्य हुईं, तब **दक्ष-प्रजापति** को उनके विवाह की चिन्ता हुई और उन्होंने **सती** के स्वयम्वर का निश्चय करके समस्त **देवता, दैत्य** और **मुनियों** को निमन्त्रण दिया, किन्तु यह विचार कर कि **शङ्कर** मेरी आज्ञा के वशवर्ती हैं, उन्हें नहीं बुलाया।

स्वयम्वर की सभा में एकत्रित **देवताओं, असुरों** और **ऋषियों** का परिचय देकर **दक्ष** ने **सती** से कहा कि अब तुम अपनी रुचि के अनुसार अपना पति चुनने के लिए माला पहनाओ। उस समय **वृषभ** पर आरूढ़ **भगवान् शङ्कर** अन्तरिक्ष से यह सब दृश्य देख रहे थे। **प्रकृति-रूपिणी परम-सुन्दरी सती** ने किसी ओर न देखकर **'नमः शिवाय'** कहकर हाथ की माला पृथ्वी को समर्पित कर दी, तब दिव्य रूप धारण करके **भगवान् शङ्कर** ने प्रकट होकर वह माला अपने शिर पर धारण कर ली और अन्तर्धान हो गए। **दक्ष-प्रजापति** ने **सती** के द्वारा **शङ्कर** को वरण करने के कारण **शङ्कर** तथा **सती** की बड़ी भर्त्सना की, किन्तु **सती** का विवाह **भगवान् शङ्कर** के साथ हो गया। फिर भी **दक्ष** ने **शङ्कर** की निन्दा करना नहीं छोड़ा।

एक दिन **नारद** जी ने आकर **दक्ष** से कहा कि 'आप सदैव **शङ्कर** की निन्दा किया करते हैं, वे क्रुद्ध होकर भस्म, अस्थि और रुधिर की वर्षा करके आपके कुल का नाश कर देंगे, इसका भी कुछ उपाय सोचें। यह मैंने स्नेह के कारण आप से कहा है। आप इस बात को किसी पर प्रकट न करना।' यह कहकर **नारद** जी चले गए। **नारद** जी के वचनों से चिन्तित होकर **दक्ष** ने अपने मन्त्रियों से परामर्श करके निश्चय किया कि **भगवान् विष्णु** यज्ञेश्वर और सर्व-विघ्न-निवारक हैं, अतः **श्मशानवासी शङ्कर** के बिना एक यज्ञ करके शक्ति सञ्चय की जाए और **विष्णु** जी को यज्ञ का रक्षक बनाया जाए। तदनुसार **दक्ष** ने **क्षीर-समुद्र** के तीर पहुँच कर **विष्णु** जी की प्रार्थना की। **विष्णु** जी ने प्रसन्न होकर **यज्ञ की रक्षा** करना स्वीकार कर

लिया और वे **दक्ष-नगरी** में आ गए। इधर यज्ञ का निमन्त्रण पाकर **इन्द्रादि देवता, ऋषि, गन्धर्व, किन्नर** आदि भी उपस्थित हो गए। **भगवान् शङ्कर** को उपस्थित न देखकर प्रथम तो सब लोग भयभीत हुए, किन्तु **विष्णु जी** को यज्ञ की रक्षा करते देखकर सबने अपने-अपने आसन ग्रहण किए। किन्तु **शिव-तत्त्व** के ज्ञाता **दधीचि, दुर्वासा, वामदेव, च्यवन, गौतम** आदि **शङ्कर** के न होने के करण **दक्ष** से वाद-विवाद हो जाने पर यज्ञ से उठ गए।

इधर **दक्ष** के बन्धु-बान्धव **सती** के न बुलाने की चर्चा करने लगे। **मेना** ने भी **सती** को बुलाने की **दक्ष** से प्रार्थना की, किन्तु प्रार्थना निष्फल देखकर **मेना** ने समझा कि मेरे पति का पुण्य क्षीण हो गया है। **नारद जी** ने भी यही समझा कि **दक्ष** का पुण्य क्षीण हो गया है। **सती-महा-माया, सर्वज्ञा** और **जगदम्बिका** हैं, उन्हें न बुलाकर **दक्ष** ने उनका अपमान किया है। इधर **दक्ष-कन्या सती** भी इस अपमान के कारण प्रति-क्षण **दक्ष-यज्ञ** को विध्वंस करने का उपाय सोचने लगीं। ऐसे ही समय **नारद जी** दक्ष-यज्ञ से **भगवान् शङ्कर** के समीप पहुँचे और उनकी तीन प्रदक्षिणा करके बोले, 'प्रभो! **दक्ष-यज्ञ** में स्वर्ग और मृत्यु-लोक के सभी लोग एकत्रित हुए हैं, किन्तु आपको वहाँ न देखकर दुःख के कारण मैं चला आया, आपको वहाँ शीघ्र ही चलना चाहिए।'

शङ्कर बोले-मेरा वहाँ क्या प्रयोजन है? **प्रजापति** को जैसा रुचता है, वैसा वे कर रहे हैं।

नारद जी बोले-आपके अपमान को देखकर जो लोग वहाँ उपस्थित हैं, वे भी उसी प्रकार आपकी अवज्ञा करेंगे, ऐसा विचार कर आप वहाँ चलें और **यज्ञ-भाग** ग्रहण करें अथवा यज्ञ में विघ्न डालें।

शङ्कर बोले-न तो मैं वहाँ जाऊँगा और न **यज्ञ-भाग** ग्रहण करूँगा।

तब **नारद जी सती** से बोले-'**हे सुरेश्वरी!** पिता के घर यज्ञ-महोत्सव सुनकर कन्या धैर्य-पूर्वक कैसे बैठी रह सकती है? **शिव** तो परम योगी हैं। उनके समक्ष मान और अपमान बराबर हैं। न तो वे यज्ञ में जाएँगे और न वहाँ विघ्न ही डालेंगे। **हे जगदम्बिके!** दक्ष ने दर्प के कारण तुम्हें त्याग दिया है, अतएव उनका **दर्प-नाश** करने के लिए तुम्हें वहाँ जाना चाहिए।' ऐसा कहकर **नारद जी** पुनः **दक्ष-नगरी** को चले गए।

इसके पश्चात् **सती बोलीं-हे प्रभो!** पिता दक्ष यज्ञ कर रहे हैं, यद्यपि उन्होंने बुलाया नहीं है, फिर भी वहाँ पहुँचने पर वे सम्मान करेंगे।

शङ्कर बोले-हे प्रिये! बिना बुलाए जाना मरण-तुल्य है, उन्होंने मेरा अपमान किया है। यदि हम लोग वहाँ जाएँगे, तो वे कभी सम्मान नहीं करेंगे। सम्मान होने पर ही श्वसुरालय जाना चाहिए अन्यथा **धर्म-हानि** होती है। **दक्ष** तो सदैव यही कहते हैं कि मैं दरिद्री और दुखी हूँ।

उनके इस प्रकार के दुर्वाक्य असहनीय हैं। अतएव अपमान के लाभ के लिए वहाँ कौन बुद्धिमान् जाएगा?

सती बोलीं–**हे प्रभो!** आप सत्य कहते हैं, किन्तु सम्भव है, वे वहाँ पहुँचने पर सम्मान करें।

किन्तु **शङ्कर जी** जाने के लिए सहमत नहीं हुए। तब **सती** बोलीं–आपको जो रुचे वही करें, किन्तु मुझे जाने की आज्ञा दें। कन्या को पिता के घर जाने के लिए निमन्त्रण की आवश्यकता नहीं है, मेरे पहुँचने पर यदि उन्होंने सम्मान किया और आपके निमित्त **यज्ञ-भाग** दिया, तब तो ठीक ही है और यदि उन्होंने मेरे सामने आपकी निन्दा की, तो मैं उस **महा-यज्ञ** को नष्ट कर दूँगी।

शङ्कर बोले–स्वयं अपकर्म करने से बढ़कर और दूसरा क्या हो सकता है? मैं सत्य कहता हूँ, वहाँ तुम्हारा सम्मान नहीं होगा। अतः वहाँ तुम्हारा जाना उचित नहीं है।

सती बोलीं–आप आज्ञा दें या न दें, मैं वहाँ अवश्य जाऊँगी।

शङ्कर बोले–यदि तुम नहीं मानती हो, तो मेरी आज्ञा की क्या आवश्यकता है! जैसा रुचे, वैसा करो।

यह सुनकर **सती** क्रोधित हो गईं और क्षण में ही उनके नेत्र लाल हो गए। **शङ्कर** ने देखा कि क्रोध से **सती** के अधर काँप रहे हैं और नेत्र कालाग्नि तुल्य हो गए हैं। सहसा **सती** ने भयानक दाँतों द्वारा अट्टहास किया, यह देखकर **महादेव** भयभीत हो गए। उन्होंने कष्ट से नेत्र उठाकर भयानक दृश्य देखा कि सहसा **सती** ने **वृद्धावस्था, दिगम्बरा, खुले केश, ललज्जिह्वा, चतुर्भुजा, पसीने से युक्त कालानल सदृश देह, महा-भयङ्कर, घोर-शब्द करनेवाली, मुण्ड-माला विभूषित, ललाट पर अर्ध-चन्द्र** और **देदीप्यमान उज्ज्वल किरीट, भयानक** और **जाज्वल्यमान रूप** धारण किया है और सहसा **घोर अट्टहास** करके जलने को उद्यत हैं, यह देखकर **शङ्कर** भयभीत हो वहाँ से भाग पड़े।

पति को भागते देखकर **सती** ने दया-पूर्वक उन्हें रोकने की इच्छा से **समस्त दिशाओं** में क्षण में **दश-रूप** धारण करके पति का मार्ग रोका। **शङ्कर** ने देखा कि मैं जिस दिशा में जाता हूँ, उसी दिशा में **अट्टहास करती हुई भयानक मूर्ति** सामने दिखाई देती है। तब उन्होंने सन्मुख स्थित **हँसमुखी, पीन-पयोधरी, दिगम्बरा, भीम-विशाल-लोचना, मुक्त-केशी, करोड़ों सूर्य की आभा के समान, चतुर्भुजा श्यामा** से पूछा–**हे श्यामा!** तुम कौन हो और मेरी प्राण-वल्लभा **सती** कहाँ गईं?

सती बोलीं–**हे महा-देव!** आप देखते नहीं, **सती** मेरे शरीर में स्थित हैं। ये **दशों दिशाओं** में जो रूप आप देख रहे हैं, वे सब उन्हीं के हैं, जो **कृष्णा** आपके गृह पर हैं,

वे **भीम-लोचना काली** हैं। ऊपर अन्तरिक्ष में **श्याम-वर्णा महा-काल-स्वरूपिणी तारा** हैं। आपके दाहिनी ओर **अत्यन्त भय-प्रदा छिन्नमस्ता** हैं। बाँईं ओर **भुवनेश्वरी** हैं, आपके पीछे शत्रु-सूदिनी **बगला देवी** हैं। अग्नि-कोण में विधवा-रूप-धारिणी **धूमावती** हैं। नैर्ऋत्य में त्रिपुर-सुन्दरी हैं, वायव्य में **मातङ्गी** हैं, ईशान में **षोडशी देवी** हैं और मैं स्वयं **भीमा भैरवी** हूँ।

हे शम्भो! आप भयभीत न हों। ये **दश-महा-विद्या** भक्तों को **चतुर्वर्ग-फल प्रदान करनेवाली** हैं। इनके **मन्त्र, यन्त्र, पूजा, होम-विधि, पुरश्चरण, स्तोत्र, कवच, आचार** और **नियम** आदि आप ही कहने में समर्थ हैं, अन्य नहीं। आपके द्वारा कथित **आगम-शास्त्र** और **वेद** मेरी दोनों बाहू हैं। मैं आपकी प्रियतमा हूँ और आप मेरे प्रियपति हैं। मैं **प्रजापति का दर्प-नाश** करने के लिए जाना चाहती हूँ, यदि आप नहीं जाना चाहते, तो मुझे आज्ञा दें। इतना कहकर वे सब मूर्तियाँ अन्तर्द्धान हो गईं और **एक-रूपा सती** रह गईं।

तदुपरान्त **शङ्कर** से आज्ञा लेकर **सिंहों से जुते हुए दिव्य रथ में सती काली**-रूप से **दक्ष-यज्ञ** नष्ट करने के लिए गईं।

अन्य **'पुराण'** के मत से **भगवती षोडशी देवी** की उत्पत्ति इस प्रकार है-

जिस समय **शङ्कर** रमणीय **कैलास** शिखर पर वास करते थे, उस समय उनका स्तव करने के लिए **इन्द्र** ने अप्सराओं को भेजा। उन्होंने आकर **महा-देव** का स्तव किया। **महा-देव जी** उनके स्तव से सन्तुष्ट होकर करुणामृत वचनों से बोले-पुरुष का अतिथि पुरुष और स्त्री का अतिथि स्त्री होना चाहिए। अतएव तुम सब **काली** के निकट जाओ। ऐसा कहकर **महा-देव जी** रम्यपुर चले गए और यह वृत्तान्त **काली** को सुनाया। अप्सराओं को परम दुर्लभ प्रीति प्राप्त हुई जानकर **देवी महा-काली** ने बारम्बार चिन्ता करके **शुद्ध गौरी**-रूप-धारण कर लिया, जिससे **महा-देव जी 'काली-काली'** कहकर चिल्लाने लगे। इधर **शुद्ध गौरी-रूप महा-काली** वहाँ से अन्तर्धान हो गईं। पश्चात् **महादेव जी** अन्तःपुर पहुँचे, जब वहाँ भी **काली** को नहीं देखा, तब वे वहीं रहने लगे। किसी समय **नारद जी** वहाँ पहुँचे, **शङ्कर जी** ने बाँएँ हाथ से उन्हें स्पर्श करके उनका सत्कार किया और अनेक प्रकार की बात चीत की। अन्त में **नारद जी** ने **महादेव जी** से पूछा-हे प्रभो! **काल-विकाशिनी काली** आपको छोड़कर कहाँ चली गईं?

महादेव जी ने कहा-**काली** मुझे छोड़कर अन्तर्धान हो गई हैं।

यह सुनकर **नारद जी** बड़े प्रसन्न हुए, उन्होंने **काली** और **महादेव** के विवाद को सोचकर ध्यान-चक्षु से देखा कि **सुमेरु** के उत्तर पार्श्व में **महा-देवी** अवस्थान करती हैं। तब **नारद जी जगन्मयी** के निकट उपस्थित हो, उन्हें प्रणाम करके वहीं रहने लगे।

महादेवी नारद जी से बोलीं–**महादेव** मुझे त्याग कर क्या करते रहते हैं, उनका कुशल-मङ्गल कहो।

नारद जी बोले–**हे गिरि-सुते!** देव-देव **महा-देव** परम-विहार के लिए उद्योग कर रहे हैं, आप उन्हें रोकिए।

यह सुनकर **देवी** क्रोधित हो गईं, उनके नेत्र रक्त-वर्ण हो गए। पश्चात् **देवी** ने दूसरा रूप धारण किया, उन्होंने जैसा सौन्दर्य धारण किया, वैसा तीनों लोकों में कहीं भी नहीं था। ऐसे अतुलनीय रूप को धारण कर वे **भगवान् महेश्वर** के समीप उपस्थित हुईं। **महादेवी** ने **शम्भु** के हृदय में एक छाया देखकर अत्यन्त क्रोधित हो कहा–हे कृतघ्न **महादेव!** तुम मेरे साथ प्रतिज्ञा-पाश से बँधे हुए हो, फिर उसे क्यों उल्लङ्घन करते हो? **हे शिव!** तुमने विवाह करके मुझे अपने हृदय में स्थान दिया है। फिर मैं यह किसकी छाया तुम्हारे हृदय में देख रही हूँ?

महादेव काली के यह वचन सुनकर कुछ मुस्करा कर प्रेम-पूर्वक गद्-गद् कण्ठ से बोले–**हे कल्याणी!** मैं कृतघ्न नहीं हूँ और न मैंने प्रतिज्ञा ही उल्लङ्घन की है, मेरे हृदय में जो छाया तुमने देखी है, वह तुम्हारी ही है, इसमें सन्देह नहीं। **हे महा-भागे!** तुम ध्यान-पूर्वक ज्ञान-चक्षु से देखो, वह तुम्हारी ही छाया है।

पीछे **काली** अपनी ही छाया देखकर स्वस्थ हुईं और **महादेव जी** से बोलीं–**हे जगत्पते!** यह छाया क्या है? सो कहिए।

महादेव यह वचन सुनकर प्रेम-पूर्वक **काली** से बोले–**हे शिवे!** तुमने त्रि-भुवन में श्रेष्ठ रूप धारण किया है। अतएव स्वर्ग में, मृत्यु-लोक में और पाताल लोक में तुम क्रमशः **सुन्दरी, पञ्चमी** और **श्रीत्रिपुर-सुन्दरी** नाम से प्रसिद्ध होगी और सर्वदा षोडश-वर्षीया होकर **षोडशी** नाम से विख्यात होगी। **हे सुरेश्वरी!** मेरे हृदय में छाया देखकर तुम भयभीत हो गई थीं, इस कारण तीनों लोकों में तुम्हारा नाम **त्रिपुर-भैरवी** होगा। **भगवती** की **कृपा-मयी सुस्थचित्ता** जो अवस्था है, उसको **भुवनेश्वरी** या **राज-राजेश्वरी** समझो। जो **उग्र-तारिणी, दिक्कर-वासिनी, ललित-कान्ता, मङ्गल-चण्डिका, कौशिकी, देवदूती** आदि नामों से प्रसद्धि होंगी। जो **भुवनेश्वरी** नाम से विख्यात होंगी उनके अनेक भेद होंगे। यथा-**त्रिपुटा, जय-दुर्गा, वन-दुर्गा, त्रिकण्टकी, कात्यायनी, महिषघ्नी, दुर्गा, वन-देवता, श्रीराम-देवता, वज्र-प्रस्तारिणी, शूलिनी, गृहदेवी, गृहारूढ़ा, मेधा, राधा, कालिका** इत्यादि।

–पण्डित महावीरप्रसाद जी मिश्र

★★★

'श्री-यन्त्र' एवं 'शरीर'-चक्र

मातस्तावकमासनं द्युति-मयं बिन्दु-त्रिकोणाञ्चितं,
तत्पश्चाद् वसु-दिग्-दशामनुभिः कोणैर्युतं सुन्दरम्।
अग्रे नाग-दलाङ्कितं त्रिभिरथो वृत्तैस्तथा भूपुरै-
र्युक्तं सर्व-सुखावहं पुर-मयं 'श्रीयन्त्रराजं' भजे।।

चक्र का नाम	अधिष्ठातृ देवी	शरीर में स्थान	दल की संख्या	देवी
१-विन्दु (सर्वानन्द-मय)	महा-त्रिपुर-सुन्दरी	भ्रू-मध्य (आज्ञा-चक्र)	द्वि-दल	प्रकटा
२-त्रि-कोण (सर्व-सिद्धि-प्रद)	त्रिपुराम्बा	लम्बिका (इन्द्र-योनि)	अष्ट-दल	गुप्ता
३-अष्ट-कोण (सर्व-रोग-हर)	त्रिपुर-सिद्धा	कण्ठ (विशुद्धि)	षोडश-दल	गुप्त-तरा
४-अन्तर्दशार (सर्व-रक्षा-कर)	त्रिपुर-मालिनी	हृदय (अनाहत)	द्वादश-दल	परा
५-बहिर्दशार (सर्वार्थ-साधक)	त्रिपुरा-श्री	नाभि (मणिपुर)	दश-दल	सम्प्रदाया
६-चतुर्दशार (सर्व-सौभाग्य-दायक)	त्रिपुर-वासिनी	वस्ति (स्वाधिष्ठान)	षट्-दल	कुल-कौला
७-अष्ट-दल (सर्व-संक्षोभण-कारक)	त्रिपुर-सुन्दरी	गुदा (मूलाधार)	चतुर्दल	निगर्भा
८-षोडश-दल (सर्वाशा-परिपूरक)	त्रिपुरेशी	तदधोदेश (कुल)	षट्-दल	अति-रहस्या
९-भू-पुर चतुरस्र (त्रैलोक्य-मोहन)	त्रिपुरा	तदधोदेश (अकुल)	सहस्र-दल	परापर-रहस्या

तन्त्रों में–

श्री षोडशी देवी

जो **पञ्च-शवासना** हैं, जिन्हें जानने से सब जाना जाता है, जिन्हें सुनने से सब सुना जाता है, जिन्हें समझने से सब समझा जाता है, उन्हीं का **तन्त्रों में षोडशी, त्रिपुर-सुन्दरी, श्रीसुन्दरी, ललिता, कामेश्वरी** आदि नामों से उल्लेख हुआ है। उनका एक स्वरूप **'श्री-यन्त्र'** भी है। **'तन्त्र'** में **कामेश्वरी** और **षोडशी** के **ध्यान** का **मन्त्र** भी एक ही है तथा कहा गया है कि जो इन्हें जानता है, वह **सर्वज्ञ है, मुक्त** है।

'त्रिपुरोपनिषद्' कहती है–

'पुरं हन्त्री मुखं विश्वमान् रवे रेका स्वर-मध्यं तदेषा। वृहन्तिथिर्दश पञ्च च नित्या स षोडशीकं पुरमध्यं विभर्ति।' इससे सिद्ध होता है कि **त्रिपुर-सुन्दरी** अथवा **कामेश्वरी** ही **षोडशी** हैं।

जगदम्बा षोडशी का गृह 'श्री-यन्त्र'

'श्री-यन्त्र'-रूप श्रीसुन्दरी का गृह–१. **जाग्रत**, २. **स्वप्न** और ३. **सुषुप्ति** अथवा १. **प्रमाता**, २. **प्रमेय** और ३. **प्रमाण**-रूप से **त्रि-पुरात्मक** तथा १. **सूर्य**, २. **चन्द्र**, ३. **अग्नि**-रूप से **त्रि-खण्डात्मक** कहलाता है। यथा–

पुर-त्रयञ्च चक्रस्य, सोम-सूर्यानलात्मकम् ।
तथा त्रिखण्डं मातृका-चक्रं, सोम-सूर्यानलात्मक।।

इस प्रकार **श्री षोडशी** का गृह **'श्री-यन्त्र'** जैसे **विश्व-मय** है, वैसे ही **'शब्द'-सृष्टि** में **'मातृका'-मय** भी है। इसीलिए **'श्री-यन्त्र'** को **ब्रह्माण्ड एवं पिण्डाण्ड-मय** दोनों कहा गया है।

शब्दार्थ भेद से सृष्टि दो प्रकार की है–१. **अर्थ-सृष्टि** और २. **शब्द-सृष्टि**। **अर्थ-सृष्टि**–तत्त्वात्मिका है और **शब्द-सृष्टि**–मातृका-रूपा। **मातृका** के १. **स्वर**, २. **स्पर्श** और ३. **व्यापक** अर्थात् अन्तस्थ भेद से तीन खण्ड १. **चान्द्र**, २. **सौर** और ३. **आग्नेय** रूप हैं। यह तो हुई **ब्रह्माण्ड** की बातें, किन्तु **पिण्डाण्ड** में भी १. **शिर**, २. **हृदय**, ३. **मूलाधारान्त** तीनों भाग **तेजस्त्रयात्मक** ही हैं। **शिर** उत्तम भाग की शाखा है, **हाथ** मध्यम भाग की शाखा है और **पैर** अन्त्य भाग की।

इसी प्रकार **'श्री-चक्र'** की पाँच शक्तियाँ १. **त्रिकोण**, २. **अष्टार**, ३. **अन्तर्दशार**, ४. **बहिर्दशार** और ५. **चतुर्दशार** (अधो-मुख त्रिकोण)–ये **तेजस्त्रयात्मक** हैं और चार

शक्तियाँ १. विन्दु, २. अष्ट-दल, ३. षोडश-दल, ४. भू-पुर (ऊर्ध्व-मुख त्रिकोण) पुर-त्रयात्मक हैं। इनमें विन्दु, त्रिकोण, अष्टार और अष्ट-दल–आग्नेय-खण्ड (प्रमातृ-पुर) हैं। दशार-द्वय और चतुरस्त्र–सौर-खण्ड (प्रमाण-पुर) हैं तथा चतुर्दशार एवं षोडश-दल–चान्द्र-खण्ड (प्रमेय-पुर) हैं।

फिर १. वामा, २. ज्येष्ठा और ३. रौद्री अथवा १. इच्छा, २. ज्ञान और ३. क्रिया–रूप से यह त्रि-तयात्मक भी है और १. नाद, २. विन्दु तथा ३. कला–रूप से त्रि-रूप भी है।

शरीरस्थ नव-चक्रों से 'श्री-यन्त्र' की समानता

यद्यपि लिङ्ग शरीर में सुषुम्णा के आश्रयण में ३२ पद्म हैं, तथापि 'तन्त्र-शास्त्र' में मुख्य नव पद्म ही भगवती षोडशी के गृह श्री-चक्र के सादृश्य के हेतु कहे गए हैं। शिव-योग में मुख्य रूप से द्वादश पद्म हैं और राज-योग में छः पद्म हैं। सुषुम्णा के ऊर्ध्व एवं अधो-मुख भागों में दो सहस्त्रार हैं और मध्य में और सब पद्म। ब्रह्म-रन्ध्र में स्थित सहस्त्रार–महा-विन्दु है। इससे दोनों की एकता का सम्पादन होता है। फिर मातृका-रूप से भी इन दोनों में समानता है।

षोडश-दल और चतुर्दशार–स्वर-मय हैं। दशार-द्वय 'क' से लेकर 'न' पर्यन्त बीस वर्ण-मय है। अष्ट-दल 'अ-क-च-ट-त-प-य-श' आदि वर्गाष्टक रूप है। विन्दु-'क्ष'-कार-रूप, त्रिकोण–'म'-कार-रूप है, और महा-विन्दु–'क्ष'-कार और 'त'-कार की समष्टि–रूप है। शरीर-चक्र में कण्ठ में स्वर, हृदय में 'क' से 'ट' पर्यन्त, नाभि में 'ड' से 'फ' पर्यन्त, स्वाधिष्ठान में 'ब' से 'ल' पर्यन्त, मूलाधार में 'व' से 'स' तक और आज्ञा में 'ह', 'क्ष' वर्ण हैं। इसलिए 'श्री-चक्र' और शरीरस्थ चक्र दोनों एक ही हैं।

'श्री-चक्र'–सृष्टि-स्थिति-संहार का ज्ञापक

श्री-चक्र में विन्दु, त्रिकोण और अष्टार–सृष्टि के चक्र हैं। दशार-द्वय और चतुर्दशार–स्थिति-चक्र हैं। अष्ट-दल, षोडल-दल और भू-पुर ये संहार-चक्र हैं।

विन्दु-चक्र

विन्दु-चक्र–पूर्णहन्ता या शिव-भाव का द्योतक है। विन्दु या महा-विन्दु अथवा केन्द्रस्थ रक्त विन्दु ही मूल-कारण, या महा-त्रिपुर-सुन्दरी, या कामेश्वर-कामेश्वरी अथवा जगत् की मूल-योनि हैं। इन्हीं के अन्य नाम षोडशी, श्री, सुन्दरी, ललिता आदि हैं।

इस प्रकार प्रलय के बाद **ब्रह्म में शक्ति का प्रतिबिम्ब** पड़ने से **पूर्णाऽहं भाव विमर्श** उत्पन्न होता है। यही **सम्पूर्ण विश्व की सृष्टि, स्थिति** और **प्रलय** का कारण है तथा **शब्दार्थ सृष्टि** का वीज है। इसी को श्रुति में **नाम-रूप की अव्याकृत अवस्था** कहा गया है।

तान्त्रिक श्रेष्ठ नागानन्द कहते हैं–

विमर्शो नाम विश्वाकारेण विश्व-प्रकाशेन, विश्व-संहारेण वा अकृत्रिमोऽहमिति स्फुरणम्।।

अर्थात् **'अहम्'** इस प्रकार का स्वाभाविक स्फुरण (ज्ञान) ही **विमर्श-शक्ति** या **षोडशी महा-विद्या** है। यही **महा-विद्या** या **महा-शक्ति** जगत् की सृष्टि, स्थिति और प्रलय का कारण होती है। यद्यपि **पूर्णाऽहं भाव** या **शुद्धहन्ता** ही **ब्रह्म-रूप** है तथापि जैसे सम्मुखस्थ दर्पण में प्रतिबिम्बित हुए बिना अपना मुख नहीं दिखाई पड़ता, उसी प्रकार **विमर्श शक्ति (भगवती षोडशी)** में प्रतिबिम्बित हुए बिना **आत्मा की स्पष्ट अभिव्यक्ति** नहीं होती। अतः **अहं-भाव-विमर्श-मय** अर्थात् **षोडशी-मय** है।

अहं-भाव-रूप शिव-शक्ति के **'अ', 'ह'** और ' ँ ' ये तीन वर्ण हैं। इनमें **'अ'-कार** प्रकाश-**शिव**-स्वरूप, **'ह'-कार** विमर्श-**शक्ति**-रूप और ' ँ ' विन्दु-**मिथुन**-रूप है। यह **पूर्णहन्ता 'अहं'** ही **शिव-भाव** अथवा **मोक्ष** है–**'मोचयति चोन्नमिताऽमशात्।'** (मातृका-चक्र-विवेक) यथा–

अकारः सर्व-वर्णाग्र्यः, प्रकाशः परमं शिवः।
हकारोऽन्त्य-कला-रूपो, विमर्शाख्य प्रकीर्तितः।।

इस प्रकार सम्पूर्ण विश्व को अपनी कुक्षि में **त्र्यात्मक रूप** से धारण किए हुए **अहं-भाव** का द्योतक **विन्दु** है, जो **'महा-शक्ति षोडशी'** है। इस **महा-विन्दु** से **विन्दु** तक पहुँचने में अनन्त कलाओं से व्याप्त **उन्मनी, समनी** आदि **अर्द्ध विन्दु** तक **नौ अवस्थाओं** के द्योतक **नव-चक्र** हैं। इनमें सूक्ष्माति-सूक्ष्म क्रम से कुछ-न-कुछ **काल** का सम्पर्क **'तन्त्रों'** में कहा गया है। परन्तु **महा-विन्दु** में **देश-काल** का सम्बन्ध लेश-मात्र भी नहीं है।

विन्दु (अहं-भाव) में वीज-रूप से सारे प्रपञ्चों के आ जाने से समस्त चक्र इसी **विन्दु** के अन्तर्गत आ जाते हैं। इसलिए **'श्री-यन्त्र'** में **विन्दु-चक्र** ही प्रधान है। इसमें **श्री कामेश्वर** के साथ **श्री कामेश्वरी** सर्वदा नित्यानन्द-मय होकर विहार करती हैं। अतएव इसका नाम **सर्वानन्द-मय चक्र** भी है।

श्री कामराज विद्या की अधिष्ठातृ **'षोडशी** अर्थात् **श्रीविद्या'** का नामान्तर **'त्रिपुरा'** भी है। **त्रि-त्रि-मूर्तियों** से पुरा अर्थात् पुरातन होने से **त्रि-पुरा** अथवा **गुण-त्रयातीता, त्रि-गुण-नियन्त्री-शक्ति, 'तत्त्व-त्रयेण भिदाः'** (गौड़पादीय सूत्र) हैं। **'इड़ा', 'पिङ्गला'**

और 'सुषुम्णा' ही 'त्रिपुरा' हैं। वे 'मन', 'बुद्धि' और 'चित्'-रूप से तीन पुरों में निवास करनेवाली हैं। अतः 'त्रिपुरा' कही जाती हैं। त्रि-मूर्ति-१. ब्रह्मा, २. विष्णु और ३. महेश की जननी होने के कारण, 'त्रयौ'-१. ऋक, २. यजुः, ३. साम-मयी होने के कारण, महा-प्रलय के समय त्रि-लोकी को अपने में लय करने के कारण 'महा-शक्ति षोडशी जगदम्बा' का 'त्रिपुरा'-नाम कहा गया है। इनमें तीन प्रधान शक्तियाँ भी हैं-१. इच्छा-शक्ति-शिरो-भाग, २. ज्ञान-शक्ति-मध्य-भाग और ३. क्रिया-शक्ति-अधो-भाग।

जगदम्बा षोडशी का ध्यान

सर्वानन्द-मय-चक्र अथवा हृत्पुण्डरीक में **सुधा-सिन्धु** है और उसमें स्थित **मणि-द्वीप** में **शिव से संयुक्त** होकर **माँ षोडशी** विराजती हैं। उनका ध्यान इस प्रकार है-

बालार्क-मण्डलाभासां, चतुर्वाहां त्रि-लोचनाम्।
पाशांकुश-धनुर्वाणान्, धारयन्तीं शिवां भजे।।

जगदम्बा षोडशी के ध्यान के समय **रक्त-वर्ण**-स्वरूप का ध्यान किया जाता है, क्योंकि वे '**बालार्क-मण्डलाभासां**' हैं। यथा-'**लौहित्यमेतस्य सर्वस्य विमर्शः**' (भावोपनिषद्, सूत्र २८)। **महा-कामेश्वर, षोडशी** और स्वयं इन दोनों का **विमर्श** अर्थात् **स्वात्मा में अनुसन्धान** करना ही उनका '**रक्त-वर्ण**' है। स्थूल दृष्टि में दो रूप हैं, किन्तु रहस्य दृष्टि में **शिव** और **महा-शक्ति षोडशी-साम्य रसात्मक** हैं। इस प्रकार की भावना करना ही **रक्त-वर्ण का ध्यान है।**

जगदम्बा भगवती षोडशी अपने **चार हाथों** में **चार अस्त्र** धारण किए हुए हैं-**१. पाश, २. अंकुश, ३. धनुष** और **४. बाण** अर्थात् **१. राग, २. द्वेष, ३. मन** तथा **४. पञ्च-तन्मात्राओं द्वारा** वे **निराकार सदा-शिव** को **साकार लीला** में **प्रयुक्त** करती हैं।

छत्तीस तत्त्वों में '**राग**' अर्थात् '**प्रीति**' नामक तत्त्व '**पाश**' है। '**रागः पाशः**' (भावोपनिषद्, सूत्र ३३)। '**द्वेषोऽकुंशः**' (भावोपनिषद्, सूत्र २४)-'**द्वेष**' ही '**अंकुश**' है। '**मनः इक्षु-धनुः**' (भावोपनिषद्, सूत्र २२)-'**सङ्कल्प-विकल्प**' क्रिया-रूप **मन** ही '**इक्षु धनुष**' है। '**शब्दादित तन्मात्राः पञ्च-पुष्प-वाणाः**' (भावोपनिषद्, सूत्र २१)-**१. शब्द, २. स्पर्श, ३. रूप, ४. रस** और **५. गन्ध** की **पञ्च-तन्मात्राएँ** ही '**पञ्च-वाण**' हैं।

इच्छा-शक्ति-मयं पाशमंकुशं ज्ञान-रूपिणम्।
क्रिया-शक्ति-मये वाण-धनुषीदधुज्ज्वलम्।।

(उत्तर चतुशती०)

अर्थात् 'पाश'-इच्छा-शक्ति, 'अंकुश'-ज्ञान-शक्ति तथा 'वाण' और 'धनुः'-क्रिया-शक्ति के द्योतक हैं। 'अभय' और 'वर'-मुद्रा उनके हाथों में नहीं है। उनके चरण कमल में ही 'अभय' और 'वर-मुद्रा' है। 'सौन्दर्य-लहरी' में कितना सुन्दर कहा गया है-

त्वदन्यः पाणिभ्यामभय-वरदो दैवत-गण-
स्त्वमेका नैवासि प्रकटित-वराभीत्यभिनया।
भयात् त्रातुं दातुं फलमपि च वाञ्छा-समधिकम्,
शरण्ये! लोकानां तव हि चरणावेव निपुणौ।।

परमहंस रामकृष्णदेव ने जब अपनी पत्नी श्री शारदामणि देवी में महा-शक्ति-षोडशी का आविर्भाव कराकर उनके पाद-पद्मों की पूजा की और अपना साधन-भजन सब समर्पण कर दिया, तब उन्होंने कहा था-'जितने देव-देवियों को मैंने देखा है, उनमें इनसे बढ़ कर सुन्दर कोई नहीं दीख पड़ा। इन षोडशी देवी के चरण-कमल से जो एक बूँद सुन्दरता टपक पड़ी है, उसी से जगत् का सौन्दर्य है।'

जगदम्बा षोडशी का पञ्च-प्रेतासन

भगवती षोडशी का आसन पञ्च-प्रेतासन है। अर्थात् १. ब्रह्मा, २. विष्णु, ३. रुद्र, ४. ईश्वर और ५. सदा-शिव-१. पृथ्वी, २. चन्द्र, ३. सूर्य, ४. परमेष्ठी और ५. स्वयंभू-मण्डल-ये 'पञ्च महा-प्रेत' हैं। निर्विशेष ब्रह्म ही स्व-शक्ति-विलास के द्वारा ब्रह्मा, विष्णु इत्यादि पञ्च आख्याओं को प्राप्त होकर वामादि तच्छक्ति के सान्निध्य से १. सृष्टि, २. स्थिति, ३. लय, ४. निग्रह और ५. अनुग्रह-रूप पञ्च-कृत्यों को सम्पादित करते हैं। ये सब अपनी वामादि-शक्तियों से रहित होने पर 'प्रेत' कहे जाते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और ईश्वर अथवा पृथ्वी, चन्द्र, सूर्य और परमेष्ठी-ये इनके चार पाद हैं और सदा-शिव-स्वयम्भू फलक हैं। उस पर महा-कामेश्वराङ्क में महा-कामेश्वरी अर्थात् जगदम्बा षोडशी विराजमान हैं। शक्ति के बिना शिव शव ही हैं।

जगदम्बा षोडशी का स्वरूप

उपाधि-रहित शुद्ध स्वात्मा-सर्वथा निरुपाधिक आत्मा-महा-कामेश्वर हैं और सदानन्द-रूप उपाधि-युक्त स्वात्मा-उपासक की आत्मा-जगदम्बा षोडशी अर्थात् त्रिपुर-सुन्दरी हैं। पर-देवता स्वात्मा से भिन्न होने पर भी अन्तःकरणोपाधिक आत्मा-उपासक है और सदानन्दोपाधि-पूर्ण उपास्य है।

भक्तों के लिए सरल उपासना हेतु **आत्म-शक्ति-स्वरूपा 'षोडशी** अर्थात् **श्री त्रिपुर-सुन्दरी'** के **१. स्थूल, २. सूक्ष्म** और **३. पर**–ये तीन स्वरूप हैं। इनमें प्रथम **स्थूल स्वरूप** कर-चरणादि अवयवों से युक्त निरतिशय सौन्दर्यशाली रूप है। साधक **मन्त्र-सिद्धि** प्राप्त कर अपनी दिव्य दृष्टि से उस **लोकोत्तराह्लादक तेजो-राशि स्वरूप का दर्शन** करता है तथा हाथों से उनके **श्री-श्रीचरण-कमलों** का स्पर्श करता है।

जगदम्बा भगवती षोडशी का दूसरा **मन्त्रात्मक रूप** है, जिसे पुण्यवान् साधक अपनी **कर्णेन्द्रिय** या **वागेन्द्रिय** द्वारा प्रत्यक्ष करते हैं।

श्रीमद्वाग्भव-कूटैक-स्वरूप-मुख-पङ्कजाः। (श्रीललिता-सहस्र-नाम)

अर्थात् **वाग्भव कूट-पञ्च-दशी मन्त्र के प्रथम पाँच वर्ण** ही जिनका मुख पङ्कज है अर्थात् **मन्त्र-मयी देवता** के सिद्धान्तानुसार मन्त्र-वर्णों में ही देवता के शरीरावयवों की कल्पना करने से वह **मन्त्रात्मक स्वरूप मन्त्र-ध्वनि** श्रवण-रूप में **कर्णेन्द्रिय** से तथा मन्त्रोद्धार-रूप **वागेन्द्रिय** से प्रत्यक्ष किया जाता है। पुनः उनका सर्व-मन्त्रों का मूल-भूत **मातृका सरस्वत्यात्मक**-रूप भी **मन्त्रात्मक**-रूप कहा जाता है।

'एतस्या साधितायां तु, सिद्धान्त्यास्मातृका यतः।

जगदम्बा भगवती षोडशी के तीसरे **वासनात्मक**-रूप अर्थात् **आत्म-शक्ति माता** के **चैतन्य**-रूप (चैतन्यान्यतो रूपम्) को महा-पुण्यवान् साधक केवल **मन** और **इन्द्रियों** से ग्रहण करते हैं।

जगदम्बा भगवती षोडशी का चौथा स्वरूप **'यन्त्र'** है। जिस महा-भाग्यवान् पर वे प्रसन्न होती हैं, उसे पूर्ण **ज्वलन्त** और **जीवन्त यन्त्र-रूप** में दर्शन देती हैं।

जगदम्बा षोडशी की उपासना

आत्म-शक्त्युपासना ही **जगदम्बा षोडशी** की उपासना अर्थात् **श्रीविद्योपासना** है। संक्षेप में **श्रीविद्योपासना** का अर्थ है–**सर्व-भावों में स्वात्मा** को और **स्वात्मा में सर्व-भावों** को देखते हुए **पिण्डाऽहं** भाव को छोड़कर **वेतृ-भाव** के आसन पर स्थिर रहना और **स्व-देह** को **वेद्य** समझते हुए, **वेत्ता** पर सर्वदा दृष्टि रखना। इस प्रकार उपासना करनेवालों को संसार में कुछ भी अवशिष्ट नहीं रहता। **स्वात्मा-विश्वात्मिका षोडशी देवी** हैं और उनका विमर्श ही उनका **रक्त-वर्ण** है। इस प्रकार की भावना करना ही **श्रीविद्योपासना** है।

जगदम्बा षोडशी की पूजा का रहस्य

■ **जगदम्बा षोडशी-स्वरूपा पूर्ण सर्व-व्यापक चिच्छक्ति** की सर्वत्र प्रतिष्ठा की भावना करना ही उनको **आसन** प्रदान करना है।

■ वियदादि स्थूल प्रपञ्च-रूप चिच्छक्ति के पाद-पद्मों के नाम-रूपात्मक मल को सच्चिदानन्दैक-रूपत्व की भावना द्वारा साफ करना 'पाद'-प्रक्षालन है।

■ सूक्ष्म प्रपञ्च-रूप करों के नाम-रूपात्मक मल को सच्चिदानन्दैक-रूपत्व की भावना द्वारा जल से क्षालन करना–'अर्घ्य' प्रदान करना है।

■ भावना-रूपों का केवलीकरण अर्थात् असाधारण रूप से उनका चिन्तन करना ही 'आचमन' करना है।

■ जगदम्बा षोडशी के सत्त्व-चित्वानन्दत्वादि (सत्-चित्-आनन्द) की भावना करना ही जल से 'स्नान' कराना है। साथ ही, भावनात्मक वृत्तियों को विषयों की भावना से दूर करना ही वस्त्र द्वारा अङ्ग-प्रोञ्छन है।

■ निरविषयत्व, निरञ्जनत्व, अशकत्व, अजरत्व और अमृतत्वादि अनेक धर्म-रूप आभरणों में भावना करना ही आभरणार्पण है।

■ स्व-शरीर-रूपी घट के पार्थिव भागों की जड़ता हटाकर उनमें चिन्मात्र की भावना करना गन्ध-विलेपन है।

■ इसी प्रकार स्व-शरीर-रूपी घट के आकाश भागों में पूर्वोक्त प्रकार से भावना करना 'पुष्पार्पण' है। वायवीय भागों में उक्त भावना करना 'धूपार्पण' है। तैजस् भागों में उसी प्रकार की भावना करना 'दीप-दर्शन' है। अमृत भागों में उक्त प्रकार से भावना करना 'नैवेद्य का अर्पण' है। षोडशान्तेन्दु-मण्डल की चिन्मात्रता की भावना करना 'ताम्बूल-दान' है।

■ परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी-शब्दों को नाद-द्वारा ब्रह्म में उपसंहार करने की भावना करना 'स्तुति' है।

■ विषयों की ओर जानेवाली चित्त-वृत्तियों को ब्रह्म में विलय करना प्रदक्षिणीकरण है और चित्त-वृत्तियों को विषयों से परावर्तित कर ब्रह्मैक-प्रवण करना प्रणाम करना है।

जगदम्बा षोडशी की बाह्य पूजा

किसी सुलक्षणा कन्या में षोडशी श्री विद्या का आवाहन कर षोडशोपचार से पूजा की जाती है और श्री चक्र-राज तो उनका शरीर ही है। योग्य गुरु से दीक्षा लेकर पूजा में प्रवृत्त होना चाहिए।

त्रिकोण-चक्र (शक्ति या जीव भाव)

पीले रङ्ग का त्रिकोण (सर्व-सिद्धि-प्रद)–१. आद्या-विमर्श शक्ति या जीव भाव, २. शब्द-अर्थ-रूप सृष्टि की कारणात्मिका परा-शक्ति, ३. अहं-भाव एवं जीव-तत्त्व।

यह चक्र एक **त्रिकोण** से बना है, जिसके भीतर **विन्दु** स्थित है। इस **त्रिकोण** के तीनों कोण **१. काम-रूप, २. पूर्ण-गिरि** तथा **३. जालन्धर पीठ** हैं और इनके बीच में **४. औड्याण पीठ** हैं। तीनों पीठों के देवता–**१. कामेश्वरी, २. वज्रेश्वरी** तथा **३. भग-मालिनी** हैं और वे **१. प्रकृति, २. महत्** और **३. अहङ्कार-रूपा** हैं।

विचिकीर्षुर्घनीभूता, सा चिदभ्येति विन्दुताम्।

अर्थात् **विमर्श-शक्ति** सृष्टि करने की इच्छा से **विन्दु**-रूप में प्रकट होती हैं और **'कालेन भिद्यमानस्तु स विन्दुर्भवति त्रिधा'** अर्थात् **काल** पाकर वही **विन्दु** तीन भाग (**त्रिकोण**) में प्रकट होता है। इस **विन्दु-भाव** में समस्त **प्रपञ्च-वासना** तथा **ज्ञेय-ज्ञातृ-ज्ञान का भाव** वट-वीज के अन्तर्गत बीज और वृक्ष की भाँति सूक्ष्म-भाव से लीन रहता है, पश्चात् **अन्तरलीन जगत्** को व्यक्त करने की इच्छा से वह **विन्दु- त्रिकोण**-रूप में परिणत हो जाता है अथवा अपने **रश्मि-स्वरूप त्रिकोण** को प्रकट करता है।

उक्त **त्रिकोण** की स्थूल बाह्य सृष्टि का आध्यात्मिक रहस्य यह है कि सृष्टि **१. शब्द** और **२. अर्थ**-भेद से दो प्रकार की है। परन्तु **'तन्त्र'** का सिद्धान्त है कि **'अर्थ'**-सृष्टि भी **शब्द**-मूलक है, कारण संसार का सभी व्यवहार **शब्द**-पूर्वक होता है। सभी प्रकार के अर्थ के पूर्व **'शब्द'** का ही उदय होता है तथा **'शब्द'** बिना **अर्थ** के भी अतीत अनागत विषयों एवं सर्वथा असत् शश सृङ्गादि को भी अपनी वृत्ति से कल्पित कर देता है, अतः **'शब्द'** ही **अर्थ-सृष्टि का मूल** है। प्रलय-काल में समस्त **अर्थ** प्रपञ्च-जाल **परा-वाक्**-रूप **'शब्द-ब्रह्म'** में लीन हो जाता है और सृष्टि-काल में पुनः प्रकट हो जाता है। यथा (मातृका-चक्र-विवेक)–

विश्रान्तमात्मनि परा ह्वय वाचि सुप्तौ। विश्वं वमत्यथ विबोध-पदे विमर्शः ।।

विन्दु-रूप **परा-वाक्** (मूल कारण-भूत विन्दु) से **पश्यन्ति, मध्यमा** और **वैखरी**-रूप **त्रिपुटी** के द्वारा **त्रिकोणात्मक शब्द-सृष्टि** अभिव्यक्त होती है। विन्दु-रूप **परा-वाक् कारण-विन्दु** है और **पश्यन्ति** आदि **तीन कार्य-विन्दु** हैं। इन चारों को क्रमशः **१. शान्ता, २. वामा, ३. ज्येष्ठा** और **४. रौद्री–१. अम्बिका, २. इच्छा, ३. ज्ञान** और **४. क्रिया** कहा जाता है। इनके अधि-देवता–**१. अव्यक्त** (मूल - प्रकृति), **२. ईश्वर, ३. हिरण्यगर्भ** और **४. विराट्** हैं और अधिभूत–**१. काम-रूप, २. पूर्णगिरि, ३. जालन्धर** और **४. औड्याण पीठ** हैं। इन पीठों का अध्यात्म मूलाधारस्थ **'कुण्डलिनी शक्ति'** है और **'कुण्डलिनी'** का परिज्ञान ही **'तन्त्र'** का मुख्य प्रतिपाद्य है। यही **'परा-वाक्'** अथवा **'विन्दु-तत्त्व'** का अध्यात्म-रूप है।

जब उक्त विन्दु पूर्वोल्लिखित **पश्यन्ति** आदि **कार्य-विन्दुओं** के सृजन में प्रवृत्त होता है, तब वह अव्यक्त **कारण-विन्दु 'रव'** कहा जाता है और इसी **'रव'** को **'शब्द'** कहा जाता है।

'स रवः श्रुति-सम्पन्नैः, शब्द-ब्रह्मेति गीयते।'

जब उक्त **निष्पन्द रवात्मक शब्द-ब्रह्म** वक्ता की इच्छा से और प्रयत्न-मात्र से सु-संस्कृत होकर शरीर-वायु द्वारा नाभि में आता है, तब वह केवल **मनो-मात्र विमर्श** से युक्त **'अ-क-च-ट-त-प-य-श'** आदि वर्ण विशेष शून्य स्पन्दात्मक प्रकाश-मात्र **कार्य-विन्दु 'पश्यन्ति वाक्'** कहलाता है और जब वह **'पश्यन्ति'** शरीर-वायु द्वारा हृदय तक आता है, तब वह **निश्चयात्मिका बुद्धि** से युक्त होकर **'अ-क-च-ट-त-प-य-श'** आदि वर्ण विशेष के साथ प्रकाशित होकर नाद-रूप **'मध्यमा वाक्'** होता है एवं जब वह **'मध्यमा'**-रूप को प्राप्त होकर **हृदयस्थ वायु** से प्रेरित होकर मुख में आता है, तब वह कण्ठ-ताल्वादि से स्पृष्ट होकर दूसरे मनुष्यों के श्रोत्रेन्द्रिय से सुनने योग्य **'अ-क-च-ट-त-य-श'** आदि वर्णों के **स्पष्ट** प्रकाश-रूप में बीजात्मक **'वैखरी वाक्'** कहलाता है।

वर्णों की अभिव्यक्ति **'मध्यमा'** से पहले नहीं होती। **'पश्यन्ति'** रव में तो केवल **मन** का ही सम्बन्ध होता है। इसलिए **'पश्यन्ति'** की जानकारी **मनः प्रणिधान** में समर्थ योगी ही कर सकते हैं, दूसरे नहीं । **मन-बुद्धि का भेदन** करनेवाले **पूर्णाऽहं-भाव** प्राप्त योगी ही **'परा'** का प्रकाश जान पाते हैं। यही **'परा'-वाक्**—पूर्ण सारूप **अहं-मय** और **प्रकाश-रूप** है। साधारण व्यक्तियों को **'अयं पटः' 'अयं घटः'** इत्यादि अन्यापेक्ष होने से **अपूर्ण-रूप नानाभाव (इदमंश)** के द्वारा ही सत्ता का प्रकाश मिलता है और यही कारण है कि वे **विकल्पों की व्याधि** से ग्रस्त रहकर **बद्ध** कहलाते हैं। परन्तु योगी इस **नानाभाव (अपूर्णांश)** को त्याग देता है और **शुद्ध पूर्णाऽहं भाव** को ग्रहण करता है। इसलिए वह **'मुक्त'** कहलाता है। यही **'परा'-वाक्—शब्द, अर्थ, मन्त्र, चक्र, देह** आदि सभी का मूल कारण है।

शब्दानां जननी त्वमत्र भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे।
त्वत्तः केशव-वासव-प्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति स्फुटम्।।
लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादयस्तेऽप्यमी।
सा त्वं काचिद्चिन्त्य-रूप-महिमा शक्तिः परा गीयते।।

जिस प्रकार उक्त विन्दु **'परा-वाक्'** सभी **शब्दों की जननी** है, उसी प्रकार वह अर्थ-रूप **३६ तत्त्वों की जननी** भी है। **(१-५) पञ्च-महा-भूत, (६-१०) पञ्च-ज्ञानेन्द्रिय, (११-१५) पञ्च-कर्मेन्द्रिय, (१६-२०) पञ्च-इन्द्रियों के विषय, (२१) मन, (२२) बुद्धि, (२३) अहङ्कार, (२४) प्रकृति, (२५) पुरुष, (२६) कला, (२७) अविद्या, (२८) राग, (२९) काल, (३०) नियति, (३१) माया, (३२) शुद्ध विद्या, (३३) ईश्वर, (३४) सदा-शिव, (३५) शक्ति** और **(३६) शिव** ये ही **३६ तत्त्व** हैं। यही **'अर्थ'-सृष्टि** है एवं **'विन्दु'** ही इस ३६ तत्त्वात्मक सम्पूर्ण चक्र का मूल

है। **चक्र-सृष्टि** भी इसी से होती है। यही नहीं, चूँकि साधक की देह भी **'यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे'** के अनुसार **नव-चक्र-मय** होती है, अतः साधक के **देह की सृष्टि-कारिणी** भी वही है।

उपर्युक्त विवरण के अनुसार जिस **त्रिकोण** के विषय में लिखा जा रहा है, उसे **योनि-चक्र, शक्ति-चक्र, जीव-त्रिकोण** एवं **विसर्ग** भी कहा जाता है। संक्षेप में, **'विन्दु'-शिव**-स्वरूप है और **जीव है–'त्रिकोण'**-स्वरूप। इस **त्रि-कोण** के तीनों कोण क्रमशः **१. जाग्रत, २. स्वप्न** और **३. सुषुप्ति** हैं और **'बिन्दु'-तुरीय** है। **'शक्ति'** जब अन्तर्मुखी होकर **शुद्धाहं-भाव** को प्राप्त होती है, तब वह **'शिव'**-रूप होकर विश्राम लेती है और फिर जब वह **बहिर्मुख** होकर **'जीव'**-भाव से संसरण करती है, तब वह **'शिव-जीव' की समष्टि-भूत क्षमात्मा-शक्ति जगदम्बा षोडशी**, **त्रिपुर-सुन्दरी, त्रिपुरा, श्री, सुन्दरी** आदि नामों से वर्णित होती है। यही **'तन्त्र'** का सिद्धान्त है। इससे यही सिद्ध होता है कि वस्तुतः **'शिव'** और **'जीव'** भिन्न-भिन्न नहीं हैं, अपितु अन्तर्मुख और बहिर्मुख दृष्टि से एक ही वस्तु के दो नाम हैं तथा इससे यह भी ज्ञात होता है कि तत्त्वतः **'विन्दु'** और **'त्रिकोण'** में कोई अन्तर नहीं है। अन्तर केवल इतना ही है कि **'विन्दु'**-कारण है और **'त्रिकोण'**-कार्य। **'कार्य-कारण का तादात्म्य'** तो प्रसिद्ध ही है, केवल शब्द दो हैं।

जगदम्बा षोडशी अथवा **त्रिपुरा महा-शक्ति** के पर, अपर एवं परापर विलास से ही **अहम्** (उत्तम पुरुष), **इदम्** (प्रथम पुरुष) और **त्वम्** (मध्यम पुरुष) का व्यवहार होता है। किन्तु जब यह शक्ति दूसरों की अपेक्षा न रख **पूर्णाहं-भाव** से **'सोऽहम्'**- रूप **विमर्श** या **स्पन्द** का प्रकाश करती है, तब **'शिव'-तत्त्व** के नाम से अभिहित होती है और जब अन्यापेक्ष होकर **'स इदम्' 'अहमिदम्'** इन दोनों भावों में समान-गुण प्रधान रूप से उदासीन होकर विलास करती है, तब **'सदा-शिव'** व **'ईश्वर'**-संज्ञा को प्राप्त होती है। **'सदा-शिव'** और **'ईश्वर'**-अवस्थाओं में इतना ही अन्तर है कि **'सदा-शिव दशा'** में **'अहम्'** के अधिकरण-भूत चिन्मात्र में **'अहमिदम'** इत्याकारक **'इदम्'** अंश का उल्लास होता है और **'ईश्वर दशा'** में **'इदमहम्'** इत्याकारक विमर्श के अन्तर्गत **'इदम्'** अधिकरण में **'अहम्'** अंश का स्पष्ट उल्लास होता है। परन्तु **शुद्ध-विद्या दशा** में ग्राह्य-ग्राहक-भाव समानाधिकरण हो जाता है।

जब उपर्युक्त **त्रिविध विलास** समानाधिकरण अर्थात् **शुद्ध विद्या** से होते हैं, तब शिव-तत्त्व के विधायक **शुद्ध-विद्या, ईश्वर** वा **सदा-शिव** कहलाते हैं और जब वही त्रिविध विलास **अशुद्ध विद्या** या **माया** द्वारा जनित होते हैं, तब **१. 'मैं', २. 'तू', ३. 'वह'**-रूपी व्यवहार के प्रयोजक हो जाते हैं और वह **त्रिकोण-शक्ति–१. 'मातृ', २. 'मेय', ३. 'मान'–१. 'ज्ञाता', २. 'ज्ञेय', ३. 'ज्ञान'–१. 'हरि', २. 'हर', ३. 'हिरण्यगर्भ'**–

१. 'इच्छा', २. 'ज्ञान', ३. 'क्रिया'–१. 'मन', २. 'बुद्धि', ३. 'अहङ्कार' (अन्तःकरण-त्रय)'–१. 'सत्त्व', २. 'रज', ३. 'तम' (गुण-त्रय) इत्यादि **त्रिपुटी भाव** से पूर्ण हो जाती हैं। इस **त्रिपुटी** से शून्य अकोणाकार '**विन्दु**' ही पूर्वोक्त **त्रिपुटी** के उद्भावनार्थ **त्रिकोण** की आकृति धारण करता है अर्थात् '**विन्दु**' ही **त्रिकोण** में विभक्त हो जाता है। इस **त्रिकोण** में **श्रीकामेश्वर–कामेश्वरी** आश्रयाश्रयी भाव से सम्पन्न होकर–१. 'तेज', २. 'इच्छा', ३. 'शक्ति'–तीन रूप से स्थित होते हैं। काम-कला-विलास में कहा गया है–

सेयं त्रिकोण-रूपं मातां त्रिगुण-रूपिणी माता।

अष्टार (नव-योन्यात्मक)-चक्र अथवा कारण शरीर

इसे **सर्व-रक्षा-कर यन्त्र** भी कहते हैं। इसमें **हरे रङ्ग के आठ त्रिकोण** होते हैं और इनकी अधिष्ठातृ देवियों में **१. वशिनी, २. कामेश्वरी, ३. मोहिनी, ४. विमला, ५. अरुणा, ६. जयिनी, ७. सर्वेश्वरी** तथा **८. कौलिनी** हैं। ये सब क्रमशः **१. शीत, २. उष्ण, ३. सुख, ४. दुःख, ५. इच्छा, ६. सत्त्व, ७. रज** और **८. तम** की स्वामिनी होती हैं। इस चक्र का साधक गुणों पर अधिकार करनेवाला और द्वन्द्वातीत होने में समर्थ होता है।

'श्रीचक्र'–विश्व (ब्रह्माण्ड या पिडाण्ड) ही है। इसमें **'विन्दु'–'शिव'** है और **'जीव'–'त्रिकोण'**। ये दोनों चक्र जड़, चेतन एवं उभयात्मक विश्व के त्रि-पुटी-रूप–जड़-चेतन-रूप–**शिव-शक्ति-रूप** हैं एवं **चित्** और **चैत्य** के पारस्परिक संश्लेष को सूचित करते हैं। इसमें **विन्दु–अन्तर्मुखी विलास करनेवाली महा-शक्ति का अधिष्ठान** है तथा **त्रिकोण–बहिर्मुख विलास करनेवाली विमर्श-शक्ति** का अधिष्ठान है। '**इच्छा-माये प्रभोः**' इस सूक्ति के अनुसार इनमें किसी क्रम की अपेक्षा नहीं है, तथापि कल्पित क्रम को लेकर ही **अष्टार-चक्र** के सम्बन्ध में कुछ विवेचना की जाती है–

'**क्ष**'-कार– **शिव**-रूप है और इसे **कूटाक्षर** कहते हैं। अतः '**शिव-तत्त्व**' भी **कूट-तत्त्व** है। इसमें **शुद्ध विद्या, ईश्वर, सदा-शिव** और **शक्ति** के साथ चार तत्त्व हैं। इन चार तत्त्वों का शिव '**चतुरस्त्र**' कहलाता है। '**जीव**' के विषय में पहले ही कहा जा चुका है कि वह '**शिव**'-रूप है, केवल बहिर्मुख उपाधि के कारण ही वह **जीव-संज्ञा** को प्राप्त हुआ है। इस उपाधि की प्रयोजक है '**माया**' और उससे प्रसूत हुआ है–**अन्तःकरण-त्रय**। मतान्तर से **कला, राग, अविद्यादि कञ्चुक** ही इसका प्रयोजक है। यह **जीव चतुरस्त्र** नामक दूसरा चतुरस्त्र है। इन दोनों के मेल से **अष्ट-कोणात्मक अष्टार** बनता है, जो **शिव** और **जीव** दोनों भावों को सम्पादन करनेवाली सामग्री को उत्पन्न करता है। यह अर्थ के अनुसार '**तत्त्व-सृष्टि**' हुई।

'शब्द-सृष्टि' में भी तान्त्रिक रहस्य के अनुसार जीव-चतुरस्त्र 'य'-वर्ण और शिव चतुरस्त्र 'क्ष'-वर्ण को प्रादुर्भूत करनेवाला यह अष्टार-चक्र है। इस प्रकार 'अष्टार' की आठ योनि और त्रिकोण का एक मिलकर यह 'नव-योनि' भी कहलाता है। फिर इसके साथ मध्य का एक विन्दु मिला देने से इस एक ही विन्दु के दस भेद हो जाते हैं। 'श्री यन्त्र' में यह चक्र प्रधान माना गया है। इसमें 'शिव' और 'जीव' दोनों के चतुरस्त्र मिले हुए हैं। इसमें श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरी-'शिव' और 'जीव' दोनों ही समष्टि-रूप में हैं। अतएव प्रधान देवताओं की पूजा अष्टार में ही करने को कही गई है। यथा (काम-कला-विलास)-

श-ष-स-य वर्ग-मये, तद्-वसु-कोण-विस्तारः।

नव-कोण-मध्यं चेत्यस्मिंश्चिद्दीपिते दृशके।।

यह चक्र-त्रितय १. प्रमातृ-पुर, २. स्वप्न-वासना तथा ३. अग्नि-खण्ड कहलाता है। योगिनी हृदय के अनुसार ये तीनों चक्र सृष्टि-चक्र हैं। इनमें विन्दु-चक्र सृष्टि अर्थात् इच्छा-रूप है। त्रिकोण-चक्र सृष्टि-स्थिति अर्थात् ज्ञान-रूप है और अष्टार-चक्र सृष्टि-संहार अर्थात् क्रिया-रूप है। श्री कामेश्वर और श्री कामेश्वरी इन दोनों के पृथक्-पृथक् संयोग से आठ आयुध उत्पन्न होते हैं, जो अष्टार में स्थित हैं। उपर्युक्त रीति से १. वामा, २. ज्येष्ठा, ३. रौद्री तथा १. इच्छा, २. ज्ञान और ३. क्रिया-रूप त्रिकोण ही तीन प्रकार से विभक्त होकर दो शक्ति और एक वह्नि के संयोग से अष्टार-चक्र बन जाता है। पुनः वही अष्टार त्रिधा विभक्त होकर वह्नि-शक्ति रूप से 'नव चक्रात्मक' बन जाता है। अतः सिद्ध होता है कि स्वयं 'अष्टार-चक्र' ही 'श्री-चक्र' है। यथा (स्वच्छन्द संग्रह)-

चितिश्चैत्यञ्च चैतन्यं, चेतनाद्वय कर्म च।

जीवः कला च देवेशि!, सूक्ष्मं पुर्यष्टकं मतम्।।

उक्त वचन के अनुसार पूर्वोक्त युगल तेज ही अपने सूक्ष्म-रूप पुर्यष्टक में विभक्त होकर वशिन्यादि शक्तियों के रूप में अष्टार में अधिष्ठित होता है। यथा-

अष्टारव्यपदेशोऽयं, चिन्तिर्वाणैषणादिकम् ।

सूक्ष्मं पुर्यष्टकं देव्या, मतिरेषा हि गौरवी।।

अन्तर्दशार अर्थात् इन्द्रिय-वासना-मय लिङ्ग शरीर

(सर्व-रोग-हर-चक्र, काले रङ्ग के दस त्रिकोण)

अब तक शिव-जीव और शिव-तत्त्व के चार तत्त्व तथा जीव-भाव के हेतुभूत माया, कला और रागादि छः कञ्चुक, जो मिलकर दस तत्त्व होते हैं, फिर मूल अक्षर

१. 'य', २. 'र', ३. 'ल', ४. 'व', ५. 'श', ६. 'ष', ७. 'स' और ८. 'म' के विषय में विवेचना की गई है अर्थात् **कारण**, **लिङ्ग** और **स्थूल** इन त्रिविध शरीरों में से केवल **कारण** शरीर की ही आलोचना की गई है। अब **अन्तर्दशार** और **बहिर्दशार** के द्वारा लिङ्ग शरीर के प्रादुर्भाव की बातें कही जाती हैं। **अन्तर्दशार** के दस त्रिकोणों की शक्तियाँ–**१. सर्वज्ञा, २. सर्व-शक्ति-प्रदा, ३. सर्वैश्वर्य-प्रदा, ४. सर्व-ज्ञान-मयी, ५. सर्व-व्याधि-नाशिनी, ६. सर्वाधारा, ७. सर्व-पाप-हरा, ८. सर्वानन्द-मयी, ९. सर्व-रक्षा** तथा **१०. सर्वेप्सित-फल-प्रदा** हैं और क्रमशः निम्नलिखित **वह्नि-कलाओं** की अधिष्ठातृ हैं–**१. रेचक, २. पाचक, ३. पोषक, ४. दाहक, ५. प्लावक, ६. क्षारक, ७. उद्धारक, ८. क्षेमक, ९. जृम्भक** और **१०. मोहक**।

अन्तर्दशार के दस कोण **पञ्च-ज्ञानेन्द्रियों** और **पञ्च-कर्मेन्द्रियों** से घटित हैं। '**अष्टार-चक्र**' में **श्री कामेश्वर-कामेश्वरी** का जो **तेज-युग्म** वशिन्यादि-रूप में या पुर्यष्टक-रूप (कारण-रूप) में है, वही दशधा विभक्त होकर **इन्द्रिय-रूप** में इस **अन्तर्दशार** में प्रकाशित होता है और **सर्वज्ञादि दस शक्तियों** के रूप में पूजित होता है। इसका नाम **सर्व-रक्षा-कर** है क्योंकि **द्वि-विध इन्द्रियों** में ही सबकी रक्षा होती है।

बहिर्दशार

(लाल रङ्ग के दस त्रिकोण, सर्वार्थ-साधक-चक्र)

बहिर्दशार– तन्मात्रा तथा **पञ्च-भूत** (इन्द्रिय विषय) शरीर है। इसके दसों त्रिकोणों का रङ्ग लाल है। इसकी शक्तियाँ **दसों प्राणों की स्वामिनी** हैं–**१. सर्व-सिद्धि-प्रदा, २. सर्व-सम्पत-प्रदा, ३. सर्व-प्रियङ्करी, ४. सर्व-मङ्गल-कारिणी, ५. सर्व-काम-प्रदा, ६. सर्व-दुःख-विमोचिनी, ७. सर्व-मृत्यु-प्रशमिनी, ८. सर्व-विघ्न-निवारिणी, ९. सर्वाङ्ग-सुन्दरी** तथा **१०. सर्व-सौभाग्य-दायिनी**।

इसी प्रकार **बहिर्दशार** के दस कोण पूर्वोक्त **दस इन्द्रियों** के **विषय–गन्ध, रूप, रसादि** तथा **वाक्** आदि का आभ्यन्तरस्थ-रूप **आकाशादि** हैं। चूँकि विषय ही सर्व अर्थों के साधन हैं, इसलिए इसे '**बहिर्दशार**' कहा जाता है। '**बहिर्दशार**' के चारों विदिक कोणों में **चार मर्म-स्थान** हैं। इसके अन्तर्भाग में **चार त्रिकोणों की भावना** की जाती है। ये चार **त्रिकोण** एक **चतुरस्त्र** माने जाते हैं। इसके एक-एक कोण से **१. प्रकृति, २. अहङ्कार, ३. बुद्धि** और **४. मन** होता है।

१. प्रकृति, २. मन, ३. बुद्धि और **४. अहङ्कार**–इसी प्रकार उत्पत्ति-क्रम है, परन्तु उपर्युक्त स्थल में अर्थ की दृष्टि से यह क्रम रखा गया है। जड़ होने के कारण **अहङ्कार** साक्षात्

प्रकृति-धर्म है। अहङ्कार और मन से बुद्धि बनती है और सब इन्द्रियों का प्रवर्त्तक होने के कारण मन पुरुष से अधिक सम्पर्क रखता है। इसलिए भी यहाँ ऐसा क्रम रखा गया है। ये चार तत्त्व 'प', 'फ', 'ब', 'भ' चार मातृका-वर्ण हैं। 'म'-कार जीव-रूप त्रिकोण में संश्लिष्ट है।

अन्तर्दशार में 'ट'-वर्ग तथा 'त'-वर्ग और बहिर्दशार में 'क'-वर्ग और 'च'-वर्ग–सब बीस बीज वा मातृकाएँ दोनों दशारों के दश कोणों में होती हैं। इनमें चतुरस्त्रों के चार बीज मिला देने से चौबीस होते हैं। इन चौबीस वर्णों में दो-दो वर्णों के संयोग से एक ग्राह्य (बाह्य विषय) और दूसरे ग्राहक (आभ्यन्तर-रूप) अर्थात् तन्मात्रा तथा इन्द्रिय से सूर्य की बारह कलाएँ बनती हैं। इनमें प+फ और ब+भ के संयोग से प्रकृति और मन-रूप दो कलाएँ बनती हैं, जो चतुरस्त्र की प्रधान कलाएँ हैं क्योंकि चतुरस्त्र बिम्ब-चक्र है, शेष दस कलाएँ इन्द्रिय तन्मात्रा-रूप अवयव कलाएँ कहलाती हैं। ये बिम्ब-चक्र की रश्मि के रूप में दशार-द्वय में रहती हैं। इसलिए दशार-द्वय और चतुरस्त्र-सौर-खण्ड, प्रमाण-पुर एवं जागरात्मक कहलाता है।

जब अन्तर्दशार के तत्त्व (विषय) बहिर्दशार के तत्त्वों (इन्द्रियों) को अपनी व्याप्ति से आच्छन्न नहीं करते अर्थात् जब विषय अपने-अपने निकट आभ्यन्तर-रूप में विलीन रहते हैं, तब दस इन्द्रिय और शब्द-स्पर्शादि पञ्च-तन्मात्राएँ, मन तथा पुरुष-इन सत्रह इन्द्रियों से लिङ्ग शरीर बनता है अर्थात् मूल-कारण-रूप सूक्ष्म विन्दु (अव्यक्त) क्रमशः बाह्य-रूप में विकशित होता हुआ इन्द्रियादि-रूप को प्राप्त होकर लिङ्ग शरीर में परिणत हो जाता है। इन्हीं अवस्थाओं की सूचना चतुरस्त्र-गर्भित दशार-द्वय से होती है।

स्थूल शरीर द्वारा जाग्रत्-व्यवहार का प्रवर्त्तक सूर्य है, इसमें जड़ (चन्द्र-कला) और अजड़ (वह्नि-कला) दोनों का समावेश रहता है। जाग्रत्-पुर-रूप उपर्युक्त त्रि-चक्र-इन्द्रिय और विषय (चेतन और जड़) दोनों का संमिश्रण होता है। इन्द्रिय और मन विषय-ग्राहक होने से औपचारिक चेतन-तत्त्व-मय माने जाते हैं। आद्या-शक्ति के बहिर्मुख विलास से चित्-शक्ति चैत्य में लीन हो जाती है और चैत्य ही बहिर्व्याप्त रहता है। इस दशा को 'तन्त्र' में 'पशु-दशा' कहा गया है।

यहाँ बहिर्दशार-चक्र में 'तत्त्व' और 'बीज' निम्न-लिखित प्रकार से हैं–

'क'–पृथिवी, 'ख'–जल, 'ग',–तेज, 'घ'–वायु, 'ङ'–आकाश।

'च'–गन्ध, 'छ'–रस, 'ज'–रूप, 'झ'–स्पर्श, 'ञ'–शब्द।

'ट'–पायु, 'ठ'–उपस्थ, 'ड'–हाथ, 'ढ'–पैर, 'ण'–वाक्।

'त'–नाक, 'थ'–जिह्वा, 'द'–आँख, 'ध'–त्वक्, 'न'–कान।

'प'–प्रकृति, 'फ'–अहङ्कार, 'ब'–बुद्धि, 'भ'–मन, 'म'–पुरुष।

यही दशार-द्वय का संक्षिप्त परिचय है।

चतुर्दशार अर्थात् जाग्रत् स्थूल शरीर

(सर्व-सौभाग्य-दायक नीले रङ्ग के १४ त्रिकोण)

इस चक्र के १४ त्रिकोण चतुर्दश मुख्य नाड़ियों के द्योतक हैं। इन नाड़ियों के नाम हैं–**१. अलम्बुषा, २. कुहु, ३. विश्वोदरी, ४. वारणा, ५. हस्ति-जिह्वा, ६. यशोवती, ७. पयस्विनी, ८. गान्धारी, ९. पूषा, १०. शङ्खिनी, ११. सरस्वती, १२. ईड़ा, १३. पिङ्गला** तथा **१४. सुषुम्णा** और इनकी अधिष्ठातृ शक्तियों के क्रमशः नाम हैं–

१. सर्व-संक्षोभणी, २. सर्व-विद्रावणी, ३. सर्वाकर्षिणी, ४. सर्वाह्लादिनी, ५. सर्व-सम्मोहिनी, ६. सर्व-स्तम्भनी, ७. सर्व-जृम्भिणी, ८. सर्व-वशङ्करी, ९. सर्व-रञ्जनी, १०. सर्वोन्मादिनी, ११. सर्वार्थ-साधिनी, १२. सर्व-सम्पत्ति-कारिणी, १३. सर्व-मन्त्र-मयी और **१४. सर्व-द्वन्द्व-क्षय-करी।**

पूर्वोक्त **तेजो-युग्म** विभक्त होकर **चतुर्दशार** के चौदह कोणों में उक्त शक्तियों के रूप में पूजित होता है। यह **चान्द्र-खण्ड** तथा जड़ होने से **सुषुप्ति-पुर** कहलाता है।

चौदह कोणों के चौदह वर्ण (स्वर-वर्ण **'अ'** से लेकर **'औ'** तक और ह्रस्व-दीर्घ मिलाकर १४ वर्ण होते हैं) और **'अं'** तथा **'अः'** (मातृकाएँ) ये १६ होते हैं। यही **चन्द्र की १६ कलाएँ** हैं, जो चतुर्दशार में अभिव्यक्त होती हैं।

अष्ट-दल-पद्म अर्थात् अष्टार-वासना

(सर्व-संक्षोभण-चक्र, गुलाबी रङ्ग के आठ दलों का कमल)

इस चक्र के **अष्ट-दल** हैं–**१. वचन, २. आदान, ३. गमन, ४. विसर्ग, ५. आनन्द, ६. हान, ७. उपादान** और **८. उपेक्षा** की बुद्धि का स्थानापन्न। इनकी अधिष्ठातृ शक्तियाँ क्रमशः हैं–**१. अनङ्ग-कुसुमा, २. अनङ्ग-मेखला, ३. अनङ्ग-मदना, ४. अनङ्ग-मदनातुरा, ५. अनङ्ग-रेखा, ६. अनङ्ग-वेगिनी, ७. अनङ्ग-मदनांकुशा** तथा **८. अनङ्ग-मालिनी।**

षोडश-दल-पद्म अर्थात् दशार-द्वय-वासना

(सर्वाशा-परिपूरक-चक्र, पीले रङ्ग के १६ दलों का पद्म)

इस चक्र के १६ दलों का सम्बन्ध–**१. मन, २. बुद्धि, ३. अहङ्कार, ४. शब्द, ५. स्पर्श, ६. रूप, ७. रस, ८. गन्ध, ९. चित्त, १०. धैर्य, ११. स्मृति, १२. नाम, १३. वार्धक्य, १४. सूक्ष्म-शरीर, १५. जीवन** तथा **१६. स्थूल शरीर** से होता है और उनकी अधिष्ठातृ शक्तियाँ क्रमशः इस प्रकार होती हैं–

१. कामाकर्षिणी, २. बुद्ध्याकर्षिणी, ३. अहङ्काराकर्षिणी, ४. शब्दाकर्षिणी, ५. रूपाकर्षिणी, ६. रसाकर्षिणी, ७. गन्धाकर्षिणी, ८. चित्ताकर्षिणी, ९. धैर्याकर्षिणी, १०. स्मृत्याकर्षिणी, ११. नामाकर्षिणी, १२. बीजाकर्षिणी, १३. आत्माकर्षिणी, १४. अमृताकर्षिणी तथा १६. शरीराकर्षिणी। ये षोडश शक्तियाँ नित्या कहलाती हैं।

भू-पुर अथवा चतुरस्र

यह १. विन्दु, २. त्रिकोण, ३. अष्ट-दल, ४. षोडश-दल इन चारों की समष्टि-स्वरूप होता है। संक्षेप में, यह **प्रमातृ-पुर** और **प्रमाण-पुर** की **पशु**-पदीय प्रकृति–**१. मन, २. बुद्धि, ३. अहङ्कार** और **४. शिव**-पदीय **शुद्ध-विद्या चतुष्टय** का सामरस्य है। इसका अन्य नाम **त्रैलोक्य-मोहन-चक्र** भी है। इस चक्र में हरे रङ्ग का बाह्य स्थल होता है।

यह नवाँ चक्र **भू-पुर** से बनता है और इसके चार विभाग होते हैं–

१–**षोडश-दल-कमल** के बाहर चारों ओर वृत्त के पश्चात् तड़ाग सदृश स्थल। इस स्थल में **दस मुद्रा-शक्तियाँ** स्थित होती हैं। उनके नाम हैं–

१. सर्व-संक्षोभणी, २. सर्व-विद्रावणी, ३. सर्वाकर्षिणी, ४. सर्वावेश-कारिणी, ५. सर्वोन्मादिनी, ६. महांकुशा, ७. खेचरी, ८. बीज-मुद्रा, ९. महा-योनि तथा **१०. त्रिखण्डिका।**

इनका सम्बन्ध शरीस्थ १० आधारों से होता है। इन आधारों के रूप में ही **श्री-यन्त्र** तथा **षट्-चक्रों** का तादात्म्य सिद्ध होता है।

२–उक्त स्थल से लगी हुई **पहली बाहरी रेखा** में, जिसमें **१० दिक्-पाल** स्थित होते हैं, पूजा करने से **विघ्न-निवारण** होता है और **साधक की रक्षा** होती है।

३–**दूसरी बाहरी रेखा** में, जिसमें **अष्ट मातृकाएँ–१. ब्राह्मी, २. माहेश्वरी, ३. कौमारी, ४. वैष्णवी, ५. वाराही, ६. ऐन्द्री, ७. चामुण्डा** तथा **८. महा-लक्ष्मी** होती हैं। इन **मातृकाओं की पूजा** करने से **१. काम, २. क्रोध, ३. लोभ, ४. मोह, ५. मद, ६. मात्सर्य, ७. पाप** तथा **८. पुण्य** पर विजय प्राप्त होती है।

४–**सबसे बाहरवाली रेखा** में ८ **सिद्धियाँ** होती हैं। यथा–**१. अणिमा, २. महिमा, ३. ईशित्व, ४. वशित्व, ५. प्राकाम्य, ६. भुक्ति, ७. इच्छा-प्राप्ति** और **८. सर्व-काम।** इनका सम्बन्ध **नौ रसों** तथा **नियति** (भाग्य) से होता है।

'शास्त्र' कहते हैं–**त्रि-कोण** में **विन्दु**, **अष्टार** में **अष्ट-दल**, दोनों **दशारों** में **षोडशार** और **चतुर्दशार** में **चतुरस्र** अन्तर्भूत है। इस प्रकार इसमें **शिव-शक्ति** का **पारस्परिक**

अविनाभाव-रूप सम्मिश्रण होता है। इस **अविनाभाव को जाननेवाला** ही '**चक्रज्ञ**' कहलाता है।

यह तो सभी जानते हैं कि–**न शिवेन विना शक्तिः, शिवोपि न तया बिना।**

इसलिए **समस्त विश्व–शिव-शक्त्यात्मक** होने के कारण **त्रिकोण** से लेकर **चतुर्दशार** तक '**शक्ति-चक्र**'–'**शिव-चक्र**' से गर्भित है। केवल स्पष्ट ज्ञान के लिए इसका पृथक् विवेचन किया गया है। अस्तु, '**विन्दु**' से '**चतुर्दशार**' तक ही प्रधान यन्त्र माना जाता है क्योंकि यथार्थ '**श्री-यन्त्र**'–**शिव-शक्ति का सम्पुट-रूप** है।

'**भैरव-यामल**' का कहना है–

चतुर्भिः शिव-चक्रैश्च, शक्ति-चक्रैश्च पञ्चभिः।
नव-चक्रैश्च संसिद्धं, श्री-चक्रं शिवयोर्वपुः।।

इनमें **१. त्रिकोण, २. अष्ट-कोण, ३. अन्तर्दशार, ४. बहिर्दशार** और **५. चतुर्दशार**–ये पाँच '**शक्ति-चक्र**' हैं और **१. विन्दु, २. अष्ट-दल, ३. षोडश-दल** तथा **४. चतुरस्त्र**–ये चार '**शिव-चक्र**' उन पाँचों के अन्तर्भूत हैं। यथा–

त्रिकोणमष्ट-कोणञ्च, दश-कोण-द्वयं तथा।
चतुर्दशारञ्चैतानि, शक्ति-चक्राणि पञ्च च।।
विन्दुश्चाष्ट-दलं पद्मं, पद्मं षोडश-पत्रकम् ।
चतुरस्त्रञ्च चत्वारि, शिव-चक्राण्यनुक्रमात्।।

लेखन-क्रम के अनुसार '**चतुर्दशार चक्र**' के बाहर बने हुए **अष्ट-दल पद्म** में **अनङ्ग-कुसुमादि आठ शक्तियों की पूजा** की जाती है। उपर्युक्त **तेजो-युग्म** ही इन शक्तियों के रूप में पूजित होता है। '**तन्त्र**' में **क्षोभ–सृष्टि** को कहते हैं। कारणात्मक होने से ही ये सब **सृष्टि-कारक** हैं। यह '**अष्ट-दल**'–'**अष्टार-चक्र**' के अन्तर्भूत है, अतः '**आग्नेय-खण्ड**' और '**प्रमातृ-पुर**' है। इसमें विन्दु-रूप **वह्नि की आठ कलाएँ** हैं। यह '**विन्दु**' अभेद प्रमाता है। विसर्ग-रूप '**चतुर्दशार**' के बाह्य भाग में स्थित '**विन्दु**', '**अष्ट-दल**' के '**अष्टार-चक्र**' के अन्तर्भूत होने के कारण '**चतुर्दशार**' के आभ्यन्तरस्थ हो जाता है तथा विसर्गात्मक **षोडश-दल** के अभ्यन्तर रहता है।

वर्णानुक्रम में भी '**अः**' विसर्ग के पूर्व ही '**अं**'–अनुस्वार (विन्दु) आता है तथा **विलोम पाठ** में बाह्य हो जाता है। इस प्रकार '**विन्दु**' और '**विसर्ग**' परस्पर बाह्याभ्यन्तर होते हुए '**तन्त्र**'-**सिद्धान्त** के गूढ़तम रहस्य को प्रकाशित करते हैं। सारांश यह कि '**विसर्ग**' का बहिर्भाव **पशु-भाव** के विकाश का और '**विन्दु**' का अन्तरभाव **शिव-भाव** की अभिवृद्धि का सूचक है। '**अष्ट-दल-पद्म**'–अव्यक्तादि आठ कारणों से बना होता है। यथा–

वसुच्छदन पद्माङ्क-देशो यश्चक्रगा विभुः।
अव्यक्ताद्याः प्रकृतयो, भूतात्मा निश्चितोस्म्यहम् ।।

इसी प्रकार '**षोडश-दल-कमल**' विसर्ग-रूप **चन्द्र की षोडश कला** से युक्त होता है। यह चक्र विकार-रूप अन्त्यावयवों से घटित होता है। यथा–

षोडशच्छद-पद्माङ्क-देशो भूत्यक्ष-मानसम् ।
विकारात्मकमापन्नं, देव्याः सम्भवयाम्यहम् ।।

षोडश-दल-चक्र में **तेजो-युग्म** की '**कार्याकर्षिणी**' आदि शक्तियों की पूजा होती है। **सोलह स्वर** ही इसके **षोडश-दल** होते हैं। इस **जड़ात्मक 'चान्द्र'-खण्ड** का सौर-**खण्ड- रूप दशार-द्वय** में अन्तर्भाव होता है तथा इसमें **सूर्य-चन्द्राग्नि का सम्मिश्रण** होता है और इसके **आग्नेय खण्ड** में उपर्युक्त **चतुरस्त्र** अवस्थित होता है।

अन्तिम '**भूपुर-चक्र**' को '**तन्त्र**' में **गङ्गा, यमुना, सरस्वती सङ्गम-रूप त्रिवेणी** कहा गया है। इसमें **चित्** एवं **चैत्य**-रूपी दो श्वेत एवं निर्जर कृष्ण नदियों का **सङ्गम** होता है। यथा (मातृका-चक्र-विवेक)–

तस्माच्चतुष्पदमिदं चतुरस्त्र-बिम्बम्।
चिच्चैत्य-निर्जर-सरिद्यमुना-प्रयागः।।

सारांश यह कि '**भू-पुर**' अर्थात् चतुरस्त्र-चक्र '**जड़-चेतन**' तथा '**शिव-जीव**' दोनों की समष्टि होता है। '**तन्त्र**' कहते हैं कि **वह्नि (अष्टार)** के अन्तर्गत चित्-स्वरूप **विन्दु-चक्र** अपनी रश्मि **त्रिकोण** के द्वारा आकान्त होता है तथा **चिद्**-रूप चन्द्र **चतुर्दशार चक्र** के अन्तर्गत **अष्ट-दल** के बाहर अपनी किरण-रूप **षोडश-दल** से आच्छन्न होता है। बिम्ब मध्य में रहता है और उसकी रश्मियाँ बाहर में चारों ओर छिटकी रहती हैं। इस सामान्य नियम के अनुसार **विन्दु** से बाहर **त्रिकोण** है और **अष्ट-दल** से बाहर **षोडश-दल** अवस्थित है। इस प्रकार **विन्दु** और **अष्ट-दल** दोनों बिम्ब अपने-अपने प्रभा-चक्र **त्रिकोण** और **षोडश-दल** के साथ **दशार-चक्र** के मध्य में **चतुरस्त्र** के एक-एक कोण के रूप में परिणत होते हैं। इसी कारण इस चक्र की '**तीर्थ-राज**' के साथ उपमा दी जाती है और यही कारण है कि यह यन्त्र **पूजा-पद्धति** में सर्व-प्रथम पूजित होता है। यथा–

अर्च्चं भवेत् प्रथमोऽत्र तरङ्गभूत-चिच्चैत्य-चक्र-यजनं त्विति पूर्वतस्तत् ।।

परन्तु पूजा '**दशार चक्र**' के मध्य में ही होनी चाहिए, केवल व्युत्पत्ति के लिए ही सबसे बाहरी कक्षा में करना कहा गया है। '**मातृका-चक्र-विवेक**' का वचन है–

अन्तस्थमेव चतुरस्त्रमुषोर्बुधेन्द्वोरर्कात्मकं चिद - चिदुद्भवमेतदङ्गम् ।
एवं च सत्यपि जडाजड-सारमेतत्, प्रागेव पूज्यमिति पूर्ण-पदे कृतं तत् ।।

'मुद्रा'

ऊपर 'मुद्रा' का वर्णन हुआ है। इस विषय में कुछ विशेष प्रकाश देना उचित है। जब 'विमर्श-शक्ति' स्वयं अपने भीतर विश्व प्रकाश तथा 'इदं' रूप से परामर्श-रूप सृष्टि अर्थात् शिव से लेकर क्षिति-पर्यन्त तत्त्वों में परिणत होने की इच्छा करती है, तब क्रिया-रूप में वह संविद्-रूप अम्बिका परा-शक्ति विश्व के मोदन और द्रावण के कारण मुद्रा-संज्ञा को प्राप्त होती हैं। परा-शक्ति के त्रि-कारणा होने से 'त्रिखण्डा-मुद्रा' होती है, यह स्थल यन्त्र की व्यापक मुद्रा है, कारण यन्त्र ही त्रि-कोण-मय है। यही मुद्रा अपनी खण्ड-त्रयात्मकता को छोड़कर योनि प्रचुर रूप को प्राप्त होने पर 'सर्व-संक्षोभणी मुद्रा' कहलाती है। 'त्रैलोक्य-मोहन चतुरस्त्र-चक्र' में स्थित 'वामा शक्ति' प्रधान होने के कारण सृष्टि-रूपा हैं। इस कारण वे 'सर्वाकर्षिणी मुद्रा' कहलाती हैं। फिर इस निर्मित विश्व को पालन करनेवाली होने से स्थूलनाथ कला-रूपा ज्येष्ठा-शक्ति कामाकर्षिण्यादि-स्वरूप-भूत 'द्राविणी मुद्रा' होती है। यह 'सर्व-द्राविणी मुद्रा'-सर्वाशा-चक्र में स्थित रहती है। सृष्टि-स्थिति को साम्य-रूप में रखने के कारण वे 'सर्वाकर्षिणी मुद्रा' हैं, जो 'सर्व-संक्षोभण चक्र' में रहती हैं।

इसी प्रकार सर्व-शङ्करी मुद्रा-चतुर्दशार चक्र में, उन्मादिनी मुद्रा-बहिर्दशार में, महांकुशा मुद्रा-अन्तर्दशार में, खेचरी मुद्रा-सर्व-रोग-हर-चक्र (अष्टार) में, बीज-मुद्रा-त्रिकोण में तथा योनि-मुद्रा-सर्वानन्द-मय विन्दु-चक्र में रहती हैं।

'श्री-चक्र' की साधना के तीन प्रकार

माता मानं मेयं विन्दु-त्रय-भिन्न-बीज-रूपाणि।
धाम-त्रय पीठ-त्रय शक्ति-त्रय भेद भावितान्यपि च।।
तेषु क्रमेण लिङ्ग-त्रितयं तद्वच्च मातृका-त्रितयम्।
इत्थं त्रितय-पुरी या तुरीय-पीठादि-भेदिनी विद्या।।
इति काम-कला विद्या देवी चक्र-क्रमात्मिका सेयम्।
विदिता येन स मुक्तो भवति महा-त्रिपुर-सुन्दरी-रूपः ।।

१. माता, २. मान और ३. मेय अथवा १. ज्ञाता, २. ज्ञान और ३. ज्ञेय की त्रिपुटी-तीनों पुर हैं, जिनकी स्वामिनी महा-त्रिपुर-सुन्दरी हैं। यह भावना आभ्यन्तर पूजा है। इस भावना के तीन भेद हैं-

१. सकल-भावना, २. सकल-निष्कल-भावना और ३. निष्कल-भावना।

■ केवल 'महा-विन्दु' में ही विन्दु आदि नव-चक्रों के पारस्परिक भेद के बिना निर्विषयक संविन्मात्रात्मक (चित्-स्वरूप) काम-कला की भावना करना 'निष्कल' भावना है। इसे जो करते हैं, वे उत्तम अधिकारी हैं। यह सर्वोत्तम साधना है।

■ फिर विन्दु से लेकर अर्द्ध-चन्द्र, पाद-चन्द्र, कला-चन्द्र, नाद-शक्ति, व्यापिका, रोधिनी, समना, उन्मना आदि नव-चक्रों में 'श्री-यन्त्र' के उपर्युक्त नव-चक्रों की ऐक्य भावना 'सकल-निष्कल' भावना है। इसके साधक मध्यम अधिकारी कहे जाते हैं।

■ 'श्री-यन्त्र' के सामान्य विवेचन में कथित शरीर-चक्रों के साथ ऐक्य भाव करना सकल-भावना है। इसकी साधना करनेवाले तृतीय श्रेणी के साधक कहे जाते हैं।

समस्त चक्रों का एक विन्दु में अन्तर्भाव

जिस प्रकार एक विन्दु में ही नव-चक्रों का अन्तर्भाव है, उसी प्रकार एक ही सहस्त्रारात्मक विन्दु में शरीरस्थ षट-चक्रों का भी अन्तर्भाव है। विन्दु-'मूलाधार' आदि की समष्टि, जगत् की सृष्टि, स्थिति और संहार का कारण शिव की शक्ति है। वह एक होती हुई भी 'सहस्त्र-दल-कमल' के मध्य चार द्वारों से बनी कर्णिका के बीच में चतुष्कोणात्मक शक्ति-तत्त्व के रूप में स्थित है। उसके मध्य में नाद-रूप शिव-तत्त्व है। वह भी चार प्रकार का है। शिव-शक्ति दोनों शब्दार्थ-रूप होने के कारण कलात्मक है और 'नाद', 'कला' का मिश्रण-रूप अतिरिक्त पदार्थ माना जाता है। यह 'विन्दु' पुनः दशधा विभक्त हो जाता है, यथा–

दशधा भिद्यते विन्दुरेक एव परात्मकः।
चतुर्धाधार कमले, षोढाधिष्ठान्त्र-पङ्कजे।।
उभयाकार-रूपत्वादितरेषां तदात्मना।

अर्थात् एक ही 'विन्दु'-चतुर्दल मूलाधार चक्र में १. मन, २. बुद्धि, ३. अहङ्कार (चित्), ४. प्रकृति भेद से चार प्रकार और षड्-दल स्वाधिष्ठान चक्र में १. काम, २. क्रोध, ३. लोभ, ४. मोह, ५. मद, ६. मात्सर्य या मायादि षट्-कञ्चुक-रूप में छः प्रकार का हो जाता है। ये दस विन्दु-संसार-कारण-विन्दु कहलाते हैं।

शरीरस्थ ये दोनों चक्र ही उपर्युक्त दस रूप हो जाते हैं और इसके आगे दोनों कमलों का मिश्रण नाभि प्रदेश के दस दल 'मणिपुर-चक्र' में होता है। उसके आगे हृदय प्रदेश में द्वादश दल 'अनाहत-चक्र' है। यह 'मणिपुर' के दस दलों और उसके मूल-भूत दो

दलों से बना है। अतः '**मणिपुर**' ही '**अनाहत**' की प्रकृति कहलाती है। **कण्ठ-देश** में **षोडश-दल** '**विशुद्धि-चक्र**' है। '**अनाहत**' के **द्वादश दल** और '**मूलाधार**' के **चार दल** मिलकर ही '**विशुद्धि**' के **षोडश-दल** बनते हैं। **भ्रू-मध्य** में '**आज्ञा-चक्र**' में **द्वि-दल-पद्म** होता है। चूँकि **मूलाधार** और **स्वाधिष्ठान** प्राकृतिक हैं, इसलिए इसमें **द्वि-दल चक्र** होता है। इसलिए '**मणिपुर**', '**विशुद्ध**', '**अनाहत**' और '**आज्ञा**'–ये चार चक्र '**मूलाधार**' और '**स्वाधिष्ठान**' से उद्भूत होने के कारण इन दोनों के अन्तर्भूत हैं और ये दोनों चक्र सहस्रारात्मक विन्दु-भेद होने के कारण '**सहस्रार**' ही के अन्तर्भूत हैं। इस प्रकार **सब चक्रों का ऐक्य** हो जाता है और एक ही '**विन्दु**'–दशधा होकर सर्व-मय हो जाता है।

श्रीचक्र-दर्शन का फल

सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा, यत्फलं समवाप्नुयात्।
तत्फलं लभते भक्त्या, कृत्वा श्रीचक्र-दर्शनम्।।
महा-षोडशरानानि, कृत्वा यल्लभते फलम्।
तत्फलं समवाप्नोति, कृत्वा श्रीचक्र-दर्शनम्।।
सार्धः त्रि-कोटि-तीर्थेषु, स्नात्वा यत्फलमश्नुते।
तत्फलं लभते भक्त्या, कृत्वा श्रीचक्र-दर्शनम्।।

'**तन्त्र**' में '**श्री-यन्त्र**' को **यन्त्र-राज** कहा जाता है। इनकी महिमा अवर्णनीय है। इनकी पूजा '**हादि-विद्या**' और '**कादि-विद्या**' दोनों से होती है। यदि कोई '**यम-नियम**' का पालन करते हुए **तीन वर्ष** तक नित्य '**श्री-यन्त्र का ध्यान** करे, तो उसे **श्री-यन्त्र** की सभी बातें मालूम हो जाती हैं और सभी वाञ्छाएँ पूरी होती हैं।

एक साधारण प्रयोग है कि **रविवार**-युक्त-'**पुष्य**'-नक्षत्र में **भूर्ज**-पत्र के ऊपर इसको **केशर** के रङ्ग द्वारा **अनार** की कलम से लिखे और उसमें **श्रीकामेश्वर-कामेश्वरी** का आवाहन कर उनका साङ्गोपाङ्ग **पञ्चोपचार** अथवा **षोडशोपचार** से पूजा करे। तत्पश्चात् उसे एक फ्रेम में लगाकर **पवित्र स्थान** में रखे। केवल धूपबत्ती नित्य दिया करे। कोई भी ऐसी कामना नहीं है, जो अपूर्ण रह जाए। सभी पूरी हो जाती हैं।

–पण्डित श्रीकान्तविहारी जी मिश्र

★★★

भगवती षोडशी का विस्तृत मानसिक पूजन

■ सबसे पहले अपने हृत्-कमल में भगवती षोडशी के पूजा-यन्त्र 'श्री-यन्त्र' का मन-ही-मन ध्यान करे। फिर 'श्री-यन्त्र' के 'विन्दु' में भगवती षोडशी का ध्यान कर–

बालार्कायुत-तेजसं त्रि-नयनां रक्ताम्बरोल्लासिनीम्।
नानालंकृति-राजमान-वपुषं बालोडुराट्-शेखराम्।।
हस्तैरिक्षु-धनुः सृणिं सुमशरं पाशं मुदा विभ्रतीम्।
श्रीचक्र-स्थित-सुन्दरीं त्रि-जगतामाधार-भूतां स्मरेत्।।१

बालार्क - मण्डलाभासां, चतुर्बाहां त्रि - लोचनाम्।
पाशांकुश - शरांश्चापं, धारयन्तीं शिवां भजे।।२

■ अब '**विस्तृत मानस-पूजा**' करे। यथा–

मूलं* श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरि देवि! इदं हृदय-पद्मासनमास्यताम्।

उक्त मन्त्र पढ़कर मन-ही-मन हृदय-रूपी आसन पर भगवती षोडशी को बैठाए।

■ तदन्तर पाद्यादि उपचारों से भगवती षोडशी का निम्न प्रकार से मानसिक पूजन करे। यथा–

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः सहस्त्रार-च्युतामृतं पाद्यं नमः। यह पढ़कर चरणों पर सहस्त्र-दल-कमल से झरनेवाले अमृत-रूपी जल का पाद्य समर्पित करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः मन-रूपमर्घ्यं स्वाहा। यह पढ़कर उनके मस्तक पर मन-रूपी अर्घ्य प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः सहस्त्रार-च्युतामृत-रूपमाचमनं स्वधा। यह पढ़कर सहस्त्र-दल-कमल से झरनेवाले अमृत से उनके मुख में आचमन प्रदान करे ।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः सहस्त्रार-च्युतामृतैः सर्वाङ्गे स्नानं समर्पयामि। यह पढ़कर सहस्त्र-दल-कमल से झरनेवाले अमृत-रूपी जल से उन्हें भावना द्वारा स्नान कराए ।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै आकाश-तत्त्व-रूप-वसनं समर्पयामि नमः। यह पढ़कर आकाश-रूपी वसन और आभूषण प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः पृथ्वी-तत्त्व-रूपं गन्धं समर्पयामि। यह पढ़कर पृथ्वी-तत्त्व-रूपी गन्ध प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः चित्त-रूपं पुष्पं समर्पयामि वौषट्। यह पढ़कर चित्त-रूपी पुष्प प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः प्राण-रूपं धूपं समर्पयामि। यह पढ़कर प्राण-रूपी धूप प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः तेजस्तत्त्व-रूपं दीपं समर्पयामि। यह पढ़कर तेज-रूपी दीपक प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः सुधाम्बुधि-रूपं नैवेद्यं समर्पयामि। यह पढ़कर सुधा-सागर-रूपी नैवेद्य प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः अनाहत-शब्द-रूप-घण्टा-वादनं समर्पयामि। यह पढ़कर अनाहत-शब्द-रूपी घण्टा-वादन कर देवता को प्रसन्न करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः वायु-तत्त्व-रूपं चामरं समर्पयामि। यह पढ़कर वायु-तत्त्व-रूपी चामर से देवता को प्रसन्न करे ।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः इन्द्रिय-कर्माणि मनश्चाञ्चल्य-रूपं नृत्यं समर्पयामि। यह पढ़कर इन्द्रियों की गति-विधि और मन की चञ्चलता-रूपी नृत्य देवता को प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः अमाय-अनहङ्कार-अराग-अमद-अमोह-अदम्भ-अद्वेष-अक्षोभ-अमात्सर्य-अलोभ-अहिंसा-इन्द्रिय-निग्रह-दया-क्षमा-ज्ञान-रूपाणि पञ्च-दश-पुष्पाणि समर्पयामि वौषट्। यह पढ़कर अमाय आदि पन्द्रह पुष्पों की पुष्पाञ्जलि प्रदान करे।

मूलं कामेश्वर-शिव-सहितायै श्री महा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः काम-क्रोध-रूपं बलिं समर्पयामि। यह पढ़कर काम-क्रोध-रूपी पशु की बलि देवता को प्रदान करे ।

■ इस प्रकार पूजन कर अपने **इष्ट-मन्त्र का जप** करे। जप हेतु **कुण्डलिनी** को सूत्र मानकार **स-विन्दु पञ्चाशत् मातृका-वर्णों की माला** ग्रथित करे, जिसमें लोम-विलोम-क्रम से अपने '**मूल-मन्त्र**' का जप करे। इस वर्ण-माला में '**क्षं**'-वर्ण को सुमेरु माने । इसके बाद **भगवती षोडशी** को निम्न मन्त्र से **जप का समर्पण** करे–

ॐ सर्वान्तरात्म-निलये!, स्वान्तर्ज्योतिः-स्वरूपिणि!
गृहाणान्तर्जपं मातः, श्री त्रिपुरे! नमोऽस्तु ते ।।

■ इसके बाद मानसिक हवन करे ।

मानसिक हवन

मानसिक हवन हेतु सबसे पहले अपने शरीर में **मूलाधार-चक्र** का ध्यान करे। वहाँ **चित् -रूपी अग्नि में हवन** करे। **मूलाधार-चक्र** के कमल को **१. अन्तरात्मा, २. परमात्मा** और ३. **ज्ञानात्मा**–इन तीनों से व्याप्त समझना चाहिए। फिर कुण्ड की **आनन्द-रूप मेखला** का और **त्रिवलय-युक्त नाद-विन्दु-रूप योनि-युक्त चित् -कुण्ड** का ध्यान करे। इस कुण्ड में दाहिनी ओर **पिङ्गला**, बाँईं ओर **इडा** और मध्य में **सुषुम्णा** का ध्यान करके **धर्म-अधर्म-रूपी हवि** से निम्न मन्त्रों से हवन करे–

'मूलं' नाभौ चैतन्य-रूपेऽग्नौ, हविषा मनसा स्त्रुवा।
ज्ञान-प्रदीपिते नित्यमक्ष-वृत्तीर्जुहोम्यहम्।।
श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरी-देव्यै स्वाहा।

उक्त मन्त्र पढ़कर प्रथम आहुति प्रदान करे।

'मूलं' धर्माधर्म-हविर्दीप्ते, आत्माग्नौ मनसा स्त्रुवा।
सुषुम्ना-वर्त्मना नित्यं, ब्रह्म-वृत्तीर्जुहोम्यहम्।।
श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरी-देव्यै स्वाहा।

उक्त मन्त्र पढ़कर द्वितीय आहुति प्रदान करे।

मूलं प्रकाशाकाश-हस्ताभ्यां, अवलम्ब्यात्मना स्त्रुवा।
ज्ञान-प्रदीपिते नित्यं, ब्रह्म-वृत्तीर्जुहोम्यहम्।।
श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरी-देव्यै स्वाहा।

उक्त मन्त्र से तृतीय तथा निम्न मन्त्र से चौथी आहुति प्रदान करे–

मूलं अन्तर्निरन्तर-निरिन्धन-मेधमाने।
मोहान्धकार-परिपन्थिनि सम्विदग्नौ।।
कस्मिंश्चिदद्भुत-मरीचि-विकास-भूमौ।
विश्वं जुहोमि वसुधा-दिशि-वावसानम्।।
श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरी-देव्यै स्वाहा।

अन्त में पूर्णाहुति प्रदान करे–

इदन्तु पात्र-भरितमहन्ता-परमामृतम्।
पूर्णाहुति-मये वह्नौ, पूर्ण-होमं जुहोम्यहम्।।
श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरी-देव्यै स्वाहा।

★★★

*साधक जहाँ 'मूलं' शब्द आया है, वहाँ अपने 'मूल-मन्त्र' का उपयोग करे।

श्रीपरा-पूजा-प्रकाश-स्तोत्रम्

(छह आम्नायों के क्रम से भगवती षोडशी की आराधना)

मुखं बिन्दुर्मिश्रो ह्यरुण-धवलं बिन्दु-युगकम्,
कुच-द्वन्द्वं योनिर्भगवति! च ते हार्द्ध-सु-कला।
सुसामास्यं वा ऋग्यजु-रुभयकं ते स्तन-युगम्,
ततोऽथर्वो योनिस्तव जननि हे मन्मथ-कले! ।।१।।

हे भगवती षडैश्वर्य-शालिनी, काम-कला-रूपिणी माता! सूर्य-बिन्दु ही आपका मुख है, अरुण तथा श्वेत **अग्नि-सोमात्मक बिन्दु-युगल** आपके स्तन-युगल हैं और योनि **हार्द्ध-कला** है एवं **साम-वेद** आपका मुख है, **ऋग्वेद** तथा **यजुर्वेद** स्तन-युगल हैं और योनि **अथर्व-वेद** है। अतः **हे पर-देवता!** आप में, त्रि-बिन्दु एवं चार वेदों में कोई भेद नहीं है।।१।।

ततः संसारेऽस्मिन् गगनमतुलं शब्द-गुणकम्,
पुनः स्पर्शा-वेद्यं पवनमपि रूपञ्च दहनम् ।
रसाढ्यं पानीयं तदनु धरणीं गन्ध-गुणकाम्,
सु-नाद-ब्रह्माख्यौ प्रकृति-पुरुषौ प्राजनयताम् ।।२।।

उक्त **त्रि-कोण** से तदनन्तर इस संसार में **नाद** एवं **ब्रह्म**-रूप पूर्वोक्त **काम-कलात्मक विसर्ग** और **बिन्दु-रूप प्रकाश-विमर्शात्मक प्रकृति** एवं **पुरुष** ने श्रोत्र-ग्राह्य-गुण-युक्त **शब्द**-रूप से **महाकाश**, स्पर्श-गुण से ज्ञेय **वायु**, रूप-गुण-युक्त-रूप से **तेजस्**, रस-गुण-परिपूर्ण रस से **जल** और प्राण-ग्राह्य-गुण से युक्त गन्ध से **पृथ्वी** को **बिन्दु-मथन-रूप ताण्डव-लीला** से उत्पन्न किया ।।२।।

विमर्शाख्ये शक्ते! भवसि हि परा त्वं क्षिति-तले,
महेच्छा पश्यन्ती मणिपुरग-वामा भगवति! ।
तथा जयेष्ठा ज्ञाना हृदय-गमना मध्यम-शिवा,
क्रिया-शक्ती रौद्री मुख-कुहरगा वैखरि-कला ।।३।।

हे विमर्शाख्या भगवती!, शब्दोच्चारण के समय आप अकेली ही जब **मूलाधार** चक्र में स्फुरित होती हैं, तब **परा**-संज्ञक नाड़ी-रूप बन जाती हैं। **मणिपुर-चक्र** में जब पहुँचती हैं, तो **इच्छा-शक्ति वामा** बनकर **पश्यन्ती**-रूप धारण करती हैं। उसी प्रकार हृदय-**अनाहत चक्र** में जब गमन करती हैं, तो **ज्ञान-शक्ति ज्येष्ठा** बनकर **मध्यमा-रूप** धारण करती हैं और मुख-विवर में जब प्राप्त होती हैं, तो **क्रिया-शक्ति रौद्री** बनकर **वैखरी** नामवाली बनती हैं ।।३।।

पुरोक्तेच्छा-शक्तिः त्रिपुर-ललिता हादि-मतगा,
महोग्रा ज्ञानाख्या जगति विदिता सादि-मतगा ।
क्रिया-शक्तिः काली कलन-निरता कादि-मतगा,
परे! एकैव त्वं जयसि मत-भेदैः त्रिपुर-युक् ।।४।।

हे भगवती परा! आप जब पूर्वोक्त इच्छा-रूपिणी होती हैं, तब हादि-क्रम-समष्टि-रूपिणी त्रिपुर-सुन्दरी होती हैं। जब ज्ञान-रूपिणी बनती हैं, तब संसार में महा-चीन-क्रम-युत संवरौधि-मत से प्रसिद्ध सादि-क्रम-समष्टि-रूपिणी महोग्र-तारा बनती हैं और जब क्रिया-रूपिणी होती हैं, तो स्थिति करने में तत्पर कादि-क्रम-समष्टि-रूपिणी काल-सङ्कलन-कर्त्री काली बनती हैं। इस प्रकार आप अकेली ही कादि, सादि और हादि-क्रम भेद से तीन पुर-रूप शरीरवाली त्रिपुर-सुन्दरी के रूप में जय को प्राप्त होती रहती हैं ।।४।।

त्रि-विद्यानां नूनं ख-पवन-कृशान्वब् वसु-मती-
समेतानां जातास्तनव इह षड्धा भुवनगाः ।
प्रजातं षट् - चक्रं शुभमपि सहस्रार - सहितं,
षडाम्नायात्मा त्वं रस-तनु-धराऽभर्हि ललिते! ।।५।।

हे ब्रह्म-स्वरूपिणी शक्ति श्री ललिता देवी! इस संसार में आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी से युक्त कादि, हादि, सादि-रूप तीन विद्याओं से ही जगत् में व्याप्त छह प्रकार की मूर्तियाँ बनी हैं। वे ही षडाम्नाय-विद्याएँ बनीं तथा सहस्रार-सहित सुन्दर षट्-चक्र (१. मूलाधार, २. स्वाधिष्ठान, ३. मणिपूर, ४. अनाहत, ५. विशुद्ध और ६. आज्ञा) बने। इस प्रकार आप निश्चय ही षट्-शरीर-धारिणी षडाम्नायात्मा हैं ।।५।।

परे! एका सृष्टि-स्थिति-लय-विधाने पुनरहो,
अनाख्या भासायां त्वमसि ललनाचार-निरता ।
समालभ्यावस्थां विविध-मत-भेदोप-जनिताम्,
शनैः पञ्ची-भूत्वा विलससि सदैव त्रि-भुवने ।।६।।

हे परे! आश्चर्य है कि आप अकेली ही १. सृष्टि, २. स्थिति और ३. लय-संहार-विधान में तथा ४. अनाख्या-तिरोधान एवं ५. भासा-अनुग्रह आदि कार्यों में ललनोचित क्रीड़ा में तत्पर रहती हैं तथा उपर्युक्त पञ्च-विध अवस्थाओं से रहित होकर भी पञ्च-विध अवस्थाओं को प्राप्त करके तीनों लोकों में सदा शोभित होती हैं ।।६।।

१-पूर्वाम्नाय

रसारं तद्-बाह्ये शुभ-वसु-दलाढ्यं सु-कमलम्,
सरोजान्यद् दिव्यं विधु-दल-युतं तद् बहिरथो ।
चतुर्द्वारोपेतं विलसति यदा यन्त्रमतुलम्,
तदा त्वं भो मात! भवसि भुवनेशी हर-नुते ।।७।।

भगवान् शिव द्वारा नमस्कृत हे माता! जब षट्-कोण, अष्ट-दल-कमल, षोडश-दल-कमल तथा चार द्वारों से युक्त भू-पुरवाला उत्तम यन्त्र पूर्वोक्त बिन्दु-युगल के उच्छलन से बनता है, तब उस समय आप पूर्वाम्नायात्मिका 'भुवनेश्वरी'-रूप होती हैं ।।७।।

परे प्रागाम्नाये जगति विदिता राजस-वपुः,
शुभाकारा भूत्वा सृजसि भुवना विश्वमखिलम् ।
तदा शम्भ्वाकारो भवति स परो धाम-विभव-
स्तयोरंशोत्पन्नो विधिरपि स सृष्टिं वित-नुते ।।८।।

हे परा भगवती! जब आप पूर्वाम्नाय में सु-प्रसिद्ध सुन्दर आकार से रजो-गुण-युक्त शरीरवाली भुवनेश्वरी बनकर अखिल विश्व की सृष्टि करती हैं, तब तेजः-पुञ्ज-रूप पर-शिव-पशु-पति-रूप होते हैं और आप भुवनेश्वरी एवं पशुपति के अंश से उत्पन्न ब्रह्मा सृष्टि की रचना करते हैं ।।८।।

सु-पूर्वे राजीवे स्मित-मुख-सरोजां पृथु-कुचाम्,
शिवाकारां शान्तां तरुण-रवि-भासं हर-वधूम् ।
कराम्भोजैः पाशांकुश-वर-महाभीति-दधतीम्,
भजेऽहं रत्नाङ्गीं शश-धर-धरां रम्य-भुवनाम् ।।९।।

सगुण भावात्मक अर्थ-पूर्वाम्नाय में मन्द-मुस्कान से युक्त मुख-कमलवाली, विशाल स्तन-शालिनी, शिव-स्वरूपा, शान्त, तरुण सूर्य के समान कान्तिमती, भगवान् शिव की प्रिया तथा अपने (चारों) कर-कमलों में क्रमशः१. पाश, २. अंकुश, ३. वरद-मुद्रा तथा ४. अभय-मुद्रा को धारण करनेवाली, रत्नों से जटित, आभूषणों से मण्डित एवं मुकुट में चन्द्रमा को धारण करनेवाली, भुवन-मोहिनी भगवती भुवनेश्वरी की मैं आराधना करता हूँ।

निर्गुण भावात्मक अर्थ-नित्यानन्द-रूपिणी, बिन्दु-द्वय-रूप स्तनोंवाली, संसार की रचना में उद्यत, सकल जगत् के लिए कल्याण-स्वरूप, शान्ति-प्रदायिनी, जिस प्रकार तरुण सूर्य नवीन दिवस की सृष्टि करता है, उसी प्रकार तेजस्वी विश्व का निर्माण करनेवाली,

ताप-त्रय-नाशक भगवान् हर-शिव की शक्ति-रूपा, अपने साधकों के ताप-त्रय को दूर करनेवाली, पाश-वशीकरण शक्ति एवं अंकुश-स्तम्भन शक्ति से समस्त भुवन को अपने वश में करके साधकों को अभिलषित वर एवं अभय देनेवाली परामृत-रूपिणी रमणीय मूल प्रकृति का मैं स्मरण करता हूँ ।।९।।

त्रिकोणं वह्न्यस्त्र-त्रयमपि बहिस्त्र-त्र्यस्त्रमपरम्,
बहिः पद्मं दिव्यं वसु-दल-युतं भूमि-सदनम् ।
शिरःपंक्ति-ज्वालैः सह भवति यन्त्रं सुविमलम्,
तदा श्यामा-काली त्वमसि परमाद्ये भगवति! ।।१०।।

हे परमाद्या भगवती! जब पूर्वोक्त बिन्दु-त्रय, त्रिकोण, उसके बाहर तीन त्रिकोण और उसके बाहर पुनः त्रिकोण इस प्रकार पाँच त्रिकोणों के बाहर अष्ट-दल-कमल, तदनन्तर बाहर भू-पुर, मुण्ड-पंक्ति एवं ज्वालाओं से युक्त निर्मल यन्त्र बनता है, तब आप श्यामा-काली-दक्षिण-काली-रूपिणी बनती हैं।

इस यन्त्र के पञ्च-त्रिकोण रक्त-बिन्दु के भाग हैं। अष्ट-दल-कमल श्वेत-बिन्दु का भाग है तथा भू-पुर, मुण्ड-पंक्ति एवं अग्नि-ज्वालाएँ मिश्र-बिन्दु के भाग हैं। पूर्वोक्त बिन्दु-त्रय से स्थिति होती है। इसीलिए स्थित्याम्नाय में बिन्दु-त्रय के भाग होते हैं, जिनसे समस्त दक्षिणाम्नाय चक्रों के पद्म आदि श्वेत-बिन्दु भाग, कोणादि रक्त-बिन्दु भाग तथा अन्य भू-पुर आदि मिश्र-बिन्दु भाग होते हैं। यह यन्त्र-संकेत है।

मतान्तर में काली-यन्त्र माया-ह्रीङ्कार-गर्भित, बिन्दु, पञ्च-त्रिकोण, षट्-कोण, वृत्त, अष्ट-दल, वृत्त एवं भू-पुर से युक्त होता है ।।१०।।

२-दक्षिणाम्नाय

ततोऽवाच्याम्नाये त्वमपि परमे सत्त्व-गुणका,
महा-श्यामा भूत्वा निखिल-भुवनं रक्षसि सदा ।
महा-कालाकारः प्रभवति तदा श्रीपर-शिव-
स्तयोरंशोत्पन्नो भरति च जगद्विष्णुरखिलम् ।।११।।

हे भगवती परम-स्वरूपा! तदनन्तर दक्षिणाम्नाय में भी आप जब सत्त्व-गुण-युक्त दक्षिण-काली-रूप महा-श्यामा बनकर सकल संसार की रक्षा करती हैं, तब श्रीपर-शिव महा-काल-भैरव-स्वरूप होते हैं तथा आप दोनों के अंश से उत्पन्न विष्णु सारे जगत् का पालन करते हैं ।।११।।

अवाच्यब्जे नौमि स्मर-हर-शवस्थां त्रि-नयनाम्,
महा-श्यामा-कालीं जल-धर-निभां मुक्त-चिकुराम् ।
ललज्जिह्वां नग्नां शव-कर-परीधान-सुकटिम्,
नृ-मुण्डं खड्गञ्चाभयमपि वरञ्चैव दधतीम् ।।१२।।

सगुणात्मक भाव-परक अर्थ-**दक्षिणाम्नाय में शिव-रूप शव** पर विराजमान, **त्रि-नयना मेघ के समान** वर्णवाली **खुले हुए केशों से युक्त, चलती हुई जीभवाली, नग्न, शवों के हाथों से ढके हुए कटि-भागवाली, नृ-मुण्ड, खड्ग, अभय** और **वरद-मुद्रा** को (अपने चारों हाथों में) धारण की हुई **महा-श्यामा काली** को मैं प्रणाम करता हूँ।

निर्गुण भावात्मक अर्थ-**काम-नाशक शव** पर सत्ता के रूप में स्थित अपने साधकों के **काम-क्रोधादि का विनाश** करनेवाली, पूर्वोक्त **बिन्दु-त्रय-समष्टि**-रूपिणी, **शुद्ध-सत्त्व-गुणात्मक** तथा **चिदाकाश**-रूप होने से **नील-वर्ण** के रूप में चिन्तनीय, केश-विन्यासादि **विलास-रूप विकारों से रहित**, रजो-गुण-रहित **शुद्ध-सत्त्वात्मिका, मायातीत**, कल्पावसान में लिङ्ग-देह का आश्रय लेकर सभी जीव **स-गुण-ब्रह्म-रूपिणी भगवती** के गर्भ-धारण योग्य उदर के निम्न भाग तथा योनि के ऊर्ध्व-भाग पर अपने मोक्ष की प्राप्ति के लिए **मृत-जीवों के प्रधान-कर्म-साधन-भूत कर-समूहों** से आश्रित, अपने **वाम-हस्त** से **ज्ञान-खड्ग** के द्वारा साधकों के **मोह-पाश** को काटकर उसके नीचेवाले द्वितीय हस्त से **विगत-रज, तत्त्व-ज्ञान** के आधार-भूत **मस्तक** को तथा दक्षिण ऊर्ध्व-हस्त से **स-काम साधकों** को **अभय** और अधो-हस्त से **अभीष्ट वर** प्रदान करनेवाली **महा-श्यामा** महा-सगुणात्मिका **'क'**-ब्रह्मा, **'आ'**-अनन्त, **'ल'**-विश्वात्मा तथा **'ई'**-सूक्ष्मा इन सबसे युक्त **काली को मैं नमन करता हूँ** ।।१२।।

३-पश्चिमाम्नाय

परे बिन्दुः शुद्धो विमलतरयोन्यन्तरगतो,
बहिः षट्-कोणख्यं वसु-छदनकं केसर-युतम् ।
सरोजं भू-चक्र-त्रितयमपि दिव्यं सु-विमलम्,
यदा यन्त्रं भाति त्वमसि हि तदा श्री-कुल-कुजा ।।१३।।

हे परा भगवती! अतिशय निर्मल **त्रि-कोण** के मध्य में स्थित **बिन्दु-चक्र** तथा बाहर **षट्-कोण**, केसर से युक्त **अष्ट-दल-कमल** एवं **भू-पुर-त्रय** से युक्त ऐसा दिव्य उत्तम यन्त्र जब प्रकाशित होता है अर्थात् पूर्वोक्त **मिश्र-बिन्दु** इस प्रकार के यन्त्र-रूप को प्राप्त होता है, तब आप **कुब्जिकेश्वरी**-रूपा होती हैं।

किसी के मत में केसर-युक्त **अष्ट-पत्रों** के बाहर **अष्ट-कोण** तथा उसके बाहर **भू-पुर-त्रय** भी है। **कादि**-मन्तान्तर में जब **कुब्जिका विद्या** में ही सभी विद्याओं की समष्टि होती है, तब **बिन्दु, त्रि-कोण, षट्-कोण, केसर-युक्त अष्ट-दल, अष्ट-कोण** तथा उसके बाहर **भू-पुर-त्रय** से समन्वित यन्त्र को ही **कुब्जिका त्रि-रत्न** और **पञ्च-रत्न विद्याओं** के सर्व-मत में भी **श्रीचक्र-राज** समझना चाहिए।

इस यन्त्र के **त्रि-कोण, षट्-कोण-चक्र**, मतान्तर से **अष्ट-कोण-चक्र** भी विमर्श के भाग हैं। **बिन्दु, केसर-सहित अष्ट-दल-कमल, भू-पुर-त्रय-चक्र** प्रकाश के भाग हैं। पूर्वोक्त केवल **मिश्र-बिन्दु** का संहार होता है। इसलिए यहाँ **संहार आम्नाय-यन्त्र** में **प्रकाश-विमर्शात्मक मिश्र बिन्दु** के **प्रकाश** और **विमर्श**-रूप दो भाग होते हैं, जिससे समस्त **पश्चिमाम्नाय चक्रों के बिन्दु, पद्म, भू-पुर** आदि **प्रकाश-भाग** और **कोणादि विमर्श-भाग** हैं। यह यन्त्र-सङ्केत है।।१३।।

प्रतीच्याम्नाये त्वं कुल-जन-नुते श्रीपर-शिवे!
कुजा भूत्वा सर्वं हरसि तमसा स्वीकृत-तनुः ।
कुजेशाकारः सः प्रभवति तदा श्रीपर-शिव-
स्तयोरंशोत्पन्नः प्रलयति स रुद्रोऽखिल-जगत् ।।१४।।

हे कुल-जनों (कौलिकों) के द्वारा प्रणत श्रीपर-शिवे! पश्चिमाम्नाय में आप **तमो-गुण** से स्वीकृत शरीरवाली **कुब्जिकेश्वरी** होकर समस्त **शिवादि-क्षिति-पर्यन्त** जो तत्त्व हैं, उनका संहार करती हैं और **पर-शिव कुब्जेश** के रूप में जब **स्वच्छन्द ललित-भैरव**-रूप बनता है, तब **कुब्जेशी** और **कुब्जेश** के अंश से उत्पन्न **रुद्र** सारे जगत् का संहार करता है ।।१४।।

प्रतीच्यम्भोजे वै कुच-भर-नतां बर्बर-शिखाम्,
मृगेन्द्राङ्के रूढां मद-मुदित-वक्त्रां त्रि-नयनाम् ।
नृ-मुण्डानां मालामपि परिदधानां कुल-कुजाम्,
सहस्त्रार्काभां त्वां ह्यभय-वरदां नौमि जननि! ।।१५।।

सगुण भावात्मक अर्थ-**हे जननी! पश्चिमाम्नाय में कुचों के भार से नत, बिखरे हुए बालोंवाली, सिंह पर विराजमान, मद से मुदित मुखवाली, त्रि-नेत्रा, नर-मुण्डों की माला पहनी हुई, अभय तथा वरद-मुद्रा से युक्त तथा हजारों सूर्यों के समान तेजस्वी कुब्जिका**-रूप आपको मैं प्रणाम करता हूँ।

निर्गुण भावात्मक अर्थ–**शुक्ल** तथा **अरुण**–रूप बिन्दु-युगल के भार से नत, **मिश्र-बिन्दु** में समष्टि–रूप विलीन होने के लिए उद्यत, **विकीर्ण दीप-ज्योति** तथा जैसे एक दीप-शिखा से अन्य दीप–शिखा प्रज्वलित होती है, उसी प्रकार प्रत्येक शरीरी के शरीर में **कुण्डलिनी** के रूप में **व्याप्त, ज्ञानासना, ज्ञान–सत्ता–रूप, सहस्त्र–दल–पद्म** से निःसृत **लाक्षा–रस–तुल्य कान्तिवाली अमृत–धारा** से प्रसन्न मुखवाली अर्थात् **कुण्डलिनी शक्ति**–रूपा बिन्दु–मय समष्टि–रूपिणी **ज्ञान, विवेक** और **विचार**–रूपिणी **महा–देवी**, अपने भक्तों को **अभय** तथा ईप्सित **वर** प्रदान करने में उद्यत **सूर्य–बिन्दु–रूप संहार–स्वरूपिणी कुल–कुण्डलिनी** को मैं प्रणाम करता हूँ।।१५।।

४–उत्तराम्नाय

स–बिन्दुस्त्र्यस्त्राढ्यं शर–नवक–वृत्ताष्ट–दलकैः,
सु–वृत्ताष्टार्केन्द्राभिध–नलिन–काष्ठाशनि–युतम् ।
शिरश्शूल–ज्वाला–पितृ–वन–युतं यन्त्रमतुलम्,
यदा भाति त्वं वै भवसि भुवि गुह्या भगवति! ।।१६।।

हे भगवती! जब (उत्तराम्नाय में) **बिन्दु, त्रि–कोण, पञ्च–कोण, नव–कोण, वृत्त, अष्ट–दल, द्वादश–दल, चतुर्दश–दल, आठ वज्रों** से युक्त, ऊपर **शूल** और **ज्वाला** से युक्त **श्मशान** से आवृत्त यन्त्र शोभित होता है, तब आप इस भू–तल पर **गुह्य–काली** के रूप में पूज्य होती हैं।

यन्त्र–सङ्केत– **उक्त गुह्य–काली यन्त्र** के **त्रि–कोण, पञ्च–कोण, नव–कोण–चक्र विमर्श–भाग** हैं तथा अन्य सभी चक्र–भाग **प्रकाश–भाग** होते हैं। केवल पूर्वोक्त **मिश्र–बिन्दु** का तिरोधान होता है, इसलिए **अनाख्या–यन्त्र** में **प्रकाश–विमर्शात्मक मिश्र–बिन्दु** के **प्रकाश–विमर्श** रूप दो भाग होते है क्योंकि समस्त **उत्तराम्नाय** के **चक्रों** के कोणदि **विमर्श–भाग** तथा अन्य चक्र **प्रकाश–भाग** होते हैं ।।१६।।

उदीच्याम्नाये त्वं मनु–तनुरनाख्या त्रि–गुणका,
परे गुह्या भूत्वाऽऽचरसि हि तिरोधानमखिलम् ।
नृसिंहाकारः सन् निवसति तदा श्रीपर–शिव–
स्तयोरंशोत्पन्नेश्वर इह पिधानं प्रकुरुते ।।१७।।

हे परा भगवति! आप **उत्तराम्नाय** में **मन्त्र–मय मूर्ति** मन और वचन से अगम्य तथा **सत्त्व, रज** एवं **तमो–रूप त्रि–गुणवाली गुह्य–काली**–रूप होकर समस्त **शिवादि–क्षित्यन्त**

का निश्चित रूप से तिरोधान करती हैं। उस समय श्रीपर-शिव नृसिंहाकार-नारसिंह भैरव-रूप बनते हैं और उन गुह्येश्वरी तथा गुह्येश्वर के अङ्ग से उत्पन्न ईश्वर इस संसार में तिरोधान-संहार कर्म करते हैं। किसी के मत में उत्तराम्नाय अनाख्या-रूप तथा उर्ध्वाम्नाय भासा-रूप कहा गया है, जब कि अन्य मत में ऊर्ध्वाम्नाय भासा-रूप कहा जाता है किन्तु वड़वानल-तन्त्र में तो इन दोनों आम्नायों का एक तत्त्व ही प्रतिपादित है। यथा–महा-त्रिपुर-सुन्दरी और चण्ड-योगेश्वरी परा–इन दोनों में कोई भेद नहीं है। इनमें भेद करनेवाला नरक-गामी होता है।

पूर्वोक्त योनि बिन्दु एवं विसर्ग की सगुण मूर्ति उत्तराम्नाय मत में 'काम-कला-काली' तथा ऊर्ध्वाम्नाय मत में बृहद्-रूपा महा-त्रिपुर-सुन्दरी हैं, ऐसा बड़वानल-तन्त्र कहता है। इस तन्त्रोक्त महा-त्रिपुर-सुन्दरी के भैरव के पञ्च-मुख-रूप में बीचवाला मुख ही सिंह-रूप है, ऊर्ध्व-ज्योति मुख में तो सिद्धि-कराली मानी गई हैं।

वड़वानल-तन्त्रोक्त निर्वाण-भैरव के ध्यान में उपर्युक्त बात कही गई है तथा महा-काल-संहिता के गुह्य-खण्ड में सिद्धि-कराली के भैरव नारसिंह भैरव बताये गए हैं ।।१७।।

मृगेन्द्रेभाश्वर्क्षाख्य - मकर-गरुत्मानव-शिव-
प्लवङ्गेशी-वक्त्रां श्रुति-शर-भुजैरायुध-धराम्।
उदीच्याम्भोजे त्वां विधु-सकल-चूडां घन-निभाम्,
भजेऽहं गुह्येशीमभिनव-वयस्कां भगवति!।।१८।।

सगुण भावात्मक अर्थ–हे भगवति! उत्तराम्नाय में सिंह, हाथी, अश्व, भालू, मकर, गरुड़, मनुष्य, श्रृगाल, वानर और योगेश्वरी के मुखोंवाली, चौवन भुजाओं में आयुधों को धारण करनेवाली, चन्द्र-कला-धारिणी, श्याम-वर्ण तथा युवति-स्वरूप ऐसी सिद्धि-कराली-रूप आपका मैं स्मरण करता हूँ।

निर्गुण भावात्मक अर्थ–हे भगवति! उत्तराम्नाय में ज्ञान-शक्ति, आधार-शक्ति, वेग-शक्ति, भूचर-शक्ति, जलचर-शक्ति, खेचर-शक्ति, चैतन्य-शक्ति, धी-शक्ति, आरोह-अवरोह करनेवाली कुण्डलिनी-शक्ति और योग-शक्ति जिस विराट्-रूप के मुख हैं, मन बुद्धि, चित्त तथा अहङ्कार-सहित पचास अक्षर-रूप मातृका-रूप चौवन भुजाओं में आयुधों को धारण करनेवाली परमामृत-रूपिणी विश्वम्भरा, घन के समान, दया-मयी और विश्व को पुनः बाहर निकालने के लिए उद्यत अतीव गुप्त अनाख्या-स्वरूपिणी आपकी मैं शरण प्राप्त करता हूँ ।।१८।।

५-ऊर्ध्वाम्नाय

स-बिन्दु-त्र्यष्टादिग्युगल-मनु-कोणाष्ट-विधुक-
त्रि-वृत्त-ज्यागेह-त्रितय-युत-यन्त्रं लसति ते।
तदा कामेशी त्वं जननि! निखिलाम्नाय-निलया,
परे! श्रीविद्याख्या भवसि कुल-पूज्या क्रम-युता।।१९।।

हे परा-देवी! जब आपका सर्वानन्द-मय वैन्दव विन्दु-चक्र, सर्व-सिद्धि-प्रद त्रि-कोण-चक्र, सर्व-रोग-हर अष्टम-चक्र, सर्व-रक्षा-कर अन्तर्दशार-चक्र, सर्वार्थ-साधन-कर बहिर्दशार-चक्र, सर्वार्थ-दायक चतुर्दशार-चक्र, सर्व-संक्षोभण अष्ट-दल-चक्र, सर्वाशा-परि-पूरक षोडश-दल-चक्र, त्रै-वर्ग-साधन-कर त्रि-वृत्त-चक्र तथा त्रैलोक्य-मोहन-कर भू-पुर-त्रय-चक्र से युक्त आपका यन्त्र प्रकाश को प्राप्त होता है, तब पूर्व-कथित काम-कला और ललनाकार से मिश्र-बिन्दु के ऊपर उठने पर वह श्री-चक्र-रूप को प्राप्त होता है। तब आप कुलाचार से पूज्य तथा क्रम-मन्त्र-समष्टि-रूपिणी समस्त आम्नाय-निलया सर्वाम्नायेश्वरी श्रीविद्या-रूपा श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-रूप होती हैं।

उक्त यन्त्र-राज के १. सृष्टि, २. स्थिति और ३. संहार-रूप से तीन क्रम होते हैं। इसमें विन्दु, अष्ट-दल, षोडश-दल, वृत्त-त्रय और भू-पुर-चक्र ये पाँच शिव-चक्र हैं, इसीलिए ये प्रकाशांश हैं। इसी प्रकार त्रि-कोण, अष्ट-कोण, दश-कोण-द्वय तथा चतुर्दशार ये पाँच चक्र शक्ति-चक्र हैं, अतः ये विमर्शांश हैं। यह यन्त्र-सङ्केत है ।।१९।।

सदा-शिवः

महोर्ध्वाख्ये भाषा सु-वचन-मनो-गम्य-तनु-युक्,
परे! त्वं श्रीर्भूत्वाऽऽचरसि निखिलानुग्रहमलम् ।
तदा निर्वाणाख्यः प्रभवति परः काम-तनुमान्,
तयोरंशोत्पन्नः शमनुत-नुते पञ्च-वदनः ।।२०।।

हे परा-देवी!, जब आप महोर्ध्वाम्नाय में मन और वचन से अगम्य भाषा-रूप श्रीविद्या-मय महा-त्रिपुर-सुन्दरी-रूप होकर पुनः बाह्य प्रकटन-रूप पूर्ण अनुग्रह करती हो, तब चिद्-घन-निष्ठ निर्वाण-भैरव कामेश्वर-रूप हो जाते हैं और काम तथा कामेश्वर के अंश से उत्पन्न पञ्च-वक्त्र सदा-शिव पूर्व-वत् अनुग्रह करते हैं ।।२०।।

महोर्ध्वाम्नाये त्वां क्रमग-निखिलाम्नाय-जननीम्,
हठाचारैर्लभ्यां कहस-मनु-रूपां त्रि-पथगाम् ।

हकारार्धां सार्धामकुल-कुलमार्गाभ्यसनिनीम्,
महा-पञ्च-प्रेतोपरि रुचिरसिंहासन-गताम् ।।२१।।

सहस्रादित्याभामरुण-वासनां मन्द्र-हसनाम्,
त्रि-नेत्रास्यां पाशांकुश-कुसुम-बाणेक्षवधराम् ।

निशानाथोत्तंसां जित-मदन-रूपाञ्च युवतीम्,
भजेऽहं श्रीविद्ये! त्रिपुर-ललितां श्रीपद-युताम् ।।२२।।

हे **श्रीविद्या देवी!**, महान् ऊर्ध्वाम्नाय-रूप प्रसिद्ध **सिंहासन** पर क्रम-दीक्षा-गत समस्त आम्नायों की जनक, **कादि, हादि** और **सादि**-मत-रूप मन्त्र-मय शरीर, **ब्रह्म-रन्ध्र-मण्डल** से **मूलाधार** तक तथा पुनः वहाँ से **ब्रह्म-रन्ध्र** तक आरोहावरोह-क्रम से विचरण करनेवाली, ह-श्वास एवं ठ-उच्छ्वास-रूप क्रियाभ्यास से प्राप्य, **इड़ा-पिङ्गला** और **सुषुम्णादि** तीन नाड़ियों में सञ्चरणशील, **हकारार्ध** तथा **सार्ध** समाधि में **प्रासाद बीज** के उभयाक्षर-रूपिणी, अतएव **सचैतन्य प्रकाश-विमर्शात्मिका, पञ्च-महा-प्रेत-पृथ्व्यात्मक ब्रह्मा, जलात्मक विष्णु, तेजसात्मक रुद्र, वाय्वात्मक ईश्वर** तथा **आकाशात्मक सदा-शिव** (सगुण भाव से मञ्च के **ब्रह्मादि चार खुर** और **सदा-शिव फलक**), निर्गुण भाव से **पृथ्व्यादि पाँचों तत्त्वों** का ग्रास करके **साक्षात् चैतन्य-रूपिणी** सुन्दर पीठ पर विराजमान, अथवा **योगाभ्यास** मत से पञ्च-भूतात्मक **मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत** और **विशुद्ध-चक्र** के ऊपर **इड़ा, पिङ्गला** और **सुषुम्णादि** तीन नाड़ियों के स्पन्दी-रूप **आज्ञा-चक्र** में विराजमान, **परमात्म-स्वरूपिणी श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी**, हजारों सूर्य के समान कान्ति-मयी (सगुण भाव में **सहस्रार्क-वत् तेजस्विनी अरुण-वर्णा**, निर्गुण-भाव में-**प्रकाशान्तर्गत विमर्श-रूपिणी**), **काम-देव** के स्वरूप को तिरस्कृत करनेवाली (सगुण-भाव में-**अत्यन्त सुन्दर**, निर्गुण भाव में **विश्व पर-सृष्टि के कारण-भूत अनुग्रह को करनेवाली**) युवती (निर्गुण-भाव में **विश्व को पुनः स्व-गर्भ से प्रकट करनेवाली**), सूर्य-चन्द्राग्नि-रूप **तीनों नेत्रों से युक्त** मुखवाली (निर्गुण-भाव में-**बिन्दु-त्रय समष्टि-रूपिणी** काम-कलात्मिका), **गम्भीर हास्यवाली** (निर्गुण-भाव में-**आनन्द-रूप**), **अर्ध-चन्द्र-युक्त मुकुट**-धारिणी (निर्गुण-भाव में-**परमामृत-स्वरूपिणी विश्वभ्भरा**), **रक्त-वस्त्रा** (निर्गुण-भाव में-**सूर्य-रूप अरुण प्रकाश से आवृत्त विमर्श-शक्ति**), **पाश, अंकुश, पुष्प-बाण** एवं **इक्षु-चाप** से विभूषित (निर्गुण-भाव में **१. जगद्वशीकरण, २. जगत्-स्तम्भन, ३. शोषण, मोहन, सन्दीपन, ४. तापन** तथा **५. मादन**-रूप पाँच पुष्प-बाण-रूप **जगत्-जृम्भण** एवं **जगन्मोहनकारी** आयुधों से विभूषित), **शुक्ल, अरुण** और **मिश्र**

बैन्दवात्मक तथा स्थूल-सूक्ष्म एवं कारण-देह के समाहार-रूप त्रिपुर की शक्ति श्रीत्रिपुर-सुन्दरी का मैं स्मरण करता हूँ ।।२१-२२।।

६-अधराम्नाय

कदाचिद्-बिन्दूनां विविध-ललना-सार-मथनात्,
सु-षट्-कोणं स्पष्टं वसु-दल-युतं रम्य-कमलम् ।
चतुर्द्वारोपेतं यदि भवति यन्त्रं पर - शिवे!,
तदा योगेशी त्वं भवसि किल वज्रेति पद-युक् ।।२३।।

हे परादेवी! किसी समय पूर्वोक्त शुक्ल, अरुण और मिश्र बिन्दुओं के विविध ललना-सार के मथन से व्यक्त षट्-कोण, अष्ट-दल से युक्त उत्तम कमल, चार द्वारों से भूषित भू-पुरवाला यन्त्र जब बनता है, तब आप वज्र-योगिनी-रूप बनती हैं ।।२३।।

पुरोक्ताम्नायेभ्यः प्रभवदधराम्नाय - विषये,
परे वज्रा भूत्वा लससि भुवने चीन-मतगा ।
तदाऽक्षोभ्याकारः प्रभवति परो नाग-तनु-मान्,
षडाम्नायाश्चेत्थं गिरिश-रस-वक्त्रैः समुदिताः ।।२४।।

हे परे! पहले कहे गए पाँच आम्नायों से उत्पन्न अधराम्नाय में आप जब विश्व में चीन-क्रम से पूज्य वज्र-योगिनी-रूप होकर शोभित होती हैं, तब श्री पर-शिव नाग-शरीरी अक्षोभ्य-रूप होते हैं। इस प्रकार भगवान् शिव के छह मुख (छह आम्नायों के रूप में) व्यक्त होते हैं ।।२४।।

अधः पद्मे वज्रां त्रि-वदन-युतां मुक्त-चिकुराम्,
सु-रत्नाढ्यां सिंहाजिनमभिदधानामरुणभाम् ।
कपालं खट्वाङ्गं डमरुमपि कर्त्रीं श्रुति-करै-
र्धृतां त्वामीडेऽहं मनसि शवगां नृत्य-चरणाम् ।।२५।।

अधराम्नाय में त्रि-मुखी, मुक्त-केशी, उत्तम-रत्न (के आभरणों) से युक्त, सिंह के चर्म को धारण की हुई, अरुण कान्तिवाली, चार भुजाओं में महा-शङ्ख का पात्र, खट्वाङ्ग, डमरु और कर्त्रिका को धारण की हुई, शवासना तथा नृत्य के लिए प्रयुक्त चरणोंवाली वज्र-योगिनी देवी की मैं मन से स्तुति करता हूँ ।।२५।।

अधश्श्रीनाचर्या त्वं यम-दिशि कुलागार-ललनात्,
प्रसन्ना वै पूर्वे मनुजपबलाच्चोत्तर-दिशि ।

शिवाबल्यर्च्याऽऽद्ये! सु-ममममम‌ै: पश्चिम-दिशि,

स्फुरस्यूर्ध्वे मातः कुलज-मनसि न्यास-सहितैः ।।२६।।

हे आदि-शक्ति माता! आप अधराम्नाय में चीन-क्रम से पूज्य हैं, दक्षिणाम्नाय में कुल-सन्ध्या-विधान से सन्तुष्ट होती हैं। पूर्वाम्नाय में निश्चय ही मन्त्र-जप के बल से प्रसन्न होती हैं। उत्तराम्नाय में शिवा-वलि-विधि से सन्तुष्ट होती हैं। पश्चिमाम्नाय में पञ्च-मकार-संयुक्त अर्चना से सन्तुष्ट होती हैं। ये पञ्च-मकार दक्षाचारवालों के लिए १. मनन, २. मन्त्र, ३. मौन, ४. मनो-योग और ५. मुद्रा-रूप हैं तथा वामाचार साधकों के लिए १. मद्य, २. मांस, ३. मत्स्य, ४. मैथुन (कुण्डगोलादि) तथा ५. मुद्रा हैं। ऊर्ध्वाम्नाय में महा-षोढादि विविध न्यासों से कुलीनों के चित्त में स्फुरित होती हैं ।।२६।।

अवैत्येकाम्नायं यदि कुल-जनो भाव-सहितः,

स मुक्तः स्याद् भुक्त्वा भुवि विविध-भोगान् भगवति।

पुनः किं वक्तव्यं जननि! चतुराम्नाय-विदुषो,

महोर्ध्वाम्नायज्ञः कथमिह भवेत् स्तुत्य इतरैः।।२७।।

हे भगवती माता! यदि पूर्वोक्त दिव्य वीरादि-भावों से युक्त कौल एक आम्नाय को ही जानता है, तो वह संसार में अनेक प्रकार के सुख, ऐश्वर्य-विलासों को भोगकर अन्त में मुक्ति को प्राप्त होता है, फिर चतुराम्नायों के ज्ञाता के बारे में क्या कहा जा सकता है तथा ऊर्ध्वाम्नाय-षडाम्नाय क्रम के ज्ञाता की तो इस संसार में सामान्य मनुष्यों से स्तुति भी क्या की जा सकती है अर्थात् उसकी महिमा का वर्णन अशक्य है ।।२७।।

–योग-तन्त्र-कर्मकाण्ड-विशारद पण्डित श्री रमानाथ जी शास्त्री

★★★

श्रीमद्-आद्य-शङ्कराचार्य जी के परम गुरु-वर
परम पूज्य श्रीगौडपादाचार्य द्वारा विरचित

श्रीसुभगोदय-स्तुति

भगवती को प्रसन्न करने का सुगम उपाय–'स्तुतियाँ'

श्री ललिता-सहस्त्र-नाम में **'स्तोत्र-प्रिया'** और **'स्तुति-मती'** जैसे नामों से यह स्पष्ट होता है कि **भगवती त्रिपुरा** को प्रसन्न करने के लिए **'स्तुतियाँ'** एक सुगम उपाय हैं।

'तन्त्र'-साहित्य **'स्तुतियों'** से ओत-प्रोत है। चाहे हम **भगवती** को निराकार मानें अथवा साकार, उनकी **स्तुति**, उनकी **प्रार्थना**, **'वेदों'** के समय से होती आ रही है और होती रहेगी। उपासकों के लिए यही कर्तव्य है, यही अभीष्ट है।

'स्तुति' करने में उपासकों-आराधकों का एक विशिष्ट लक्ष्य होता है–**'कृपा की प्राप्ति।'** **'इष्ट-देवता'** की **'कृपा'**–प्राप्त होने से सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। फिर **'स्तुति'** करने में कोई व्यय नहीं होता, कोई विशेष बन्धन भी नहीं होता तथा सर्व-विध आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है। इसीलिए कहा गया है कि–**'स्तुतिः सर्वार्थ-साधिका।'**

मन्त्राश्रित 'स्तुति'-साहित्य

विभिन्न प्रकार की स्तुतियों में से **मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र, योग, बीज-मन्त्र, तान्त्रिक आम्नाय, आचार** एवं **सिद्धान्तों** को प्रस्फुटित करनेवाली **'स्तुतियाँ'** अथवा **'स्तोत्र'**– उपासकों के लिए विशेष महत्त्व के होते हैं। उच्च कोटि के साधकों के हृदयोद्‌गारों का अक्षय कोष ऐसी **'स्तुतियों'** में भरा होता है। साथ ही, **उपासना के गम्भीर रहस्य** भी इसमें गुँथे रहते हैं, जो **नित्य श्रद्धा-पूर्वक 'पाठ'**-मात्र से क्रमशः स्पष्ट होते हैं। प्रस्तुत **'सुभगोदय-स्तुति'** ऐसी ही एक महनीय कृति है। इसके प्रणेता **परम पूज्य श्रीगौडपादाचार्य जी** हैं, जो कि एक महान् सिद्ध थे। उनके बारे में कुछ परिचय इस प्रकार है–

श्रीगौडपादाचार्य

यह सर्व-विदित है कि **श्रीगौडपादाचार्य श्रीशङ्कराचार्य** के गुरु **श्रीगोविन्दपाद** के भी गुरु थे। **गुरु-परम्परा-स्मरण** में प्रत्येक साधक निम्न-लिखित पद्यों के द्वारा इन्हें अपनी प्रणति इस प्रकार अर्पित करता है–

नारायणं पद्मभवं वसिष्ठं, शक्तिं च तत्पुत्र-पराशरं च।
व्यासं शुकं गौडपदं महान्तं, गोविन्द-योगीन्द्रमथास्य शिष्यम् ।।
श्रीशङ्कराचार्यमथास्य पद्मपादं च हस्तामलकं च शिष्यम् ।
तं तोटकं वार्तिक-कारमन्यानस्मद्-गुरून् सन्ततमानतोऽस्मि।।

इसमें वर्णित गुरु-परम्परा के अनुसार **श्रीगौडपाद शुकदेव** जी के पश्चाद्-वर्ती हैं और सम्भवतः उनके शिष्य भी। **म० म० गोपीनाथ कविराज** का कथन है कि–

"**गौडपाद महान् वैदान्तिक** थे, उनकी '**माण्डूक्य-कारिका**' अपूर्व रचना है, जो एक ओर **ब्रह्म-पद-निष्ठा** तथा दूसरी ओर **ज्ञान-निष्ठा** की परिचायिका है। **गौडपाद** एक ओर जिस प्रकार '**माध्यमिक अद्वय-वाद**' में, उसी प्रकार पक्षान्तर में '**योगाचारों के अद्वय-वाद**' में भी निष्णात थे। **बौद्ध-दर्शन** में वे विशिष्ट-रूप में प्रविष्ट थे। '**शून्य-वाद**' तथा '**विज्ञप्ति-मात्रता-वाद**' दोनों का ही उन्हें अच्छा परिचय था। '**आगम-मत**' में भी उनका ज्ञान उत्कृष्ट-कोटि का था, क्योंकि '**देवी-कालोत्तर**' का कोई-कोई वचन उनकी कारिकाओं में उपलब्ध होता है। अवश्य ही इस प्रकार अधिक बल नहीं दिया जा सकता। **वैदिक गौडपाद** का यही स्वरूप है। **आगम** की दृष्टि से जान पड़ता है कि वे '**समयाचार-सम्मत तान्त्रिक मत**' के पोषक थे।"

श्रीगौडपाद के सम्बन्ध में उनका '**श्रीविद्या-सम्प्रदाय-गुरु-परम्परा**' में होना और **आचार्य श्रीशङ्कर** के **परम-गुरु** होने का उल्लेख प्राचीन ग्रन्थों से भी पुष्ट होता है तथा इन्हीं की परम्परा में दीक्षित होने के कारण **श्रीशङ्कराचार्य** का **वैदिकत्व** एवं **तान्त्रिकत्व** के साथ ही **वेदान्त-प्रस्थान** के आचार्यत्व का भी क्रम प्राप्त हुआ प्रतीत होता है।

'**डॉ० सी० आर० स्वामीनाथन्**' द्वारा केरल में लिखित '**श्रीशङ्कराचार्य के जीवन-परिचय**' में **श्रीगौडपादाचार्य** का प्रासङ्गिक परिचय देते हुए बतलाया है कि–'वे **मङ्गल-देश (बङ्गाल)** के निवासी थे।' **बङ्गाल** का ही दूसरा नाम **गौड-देश** है। वहाँ के होने के कारण वे '**गौडपाद**' नाम से प्रख्यात थे। **शेषावतार पतञ्जलि** के श्री-मुख से **महा-भाष्य** का इन्होंने अध्ययन किया था। वहाँ किसी छात्र ने उत्सुकता-वश पर्दे के पीछे रह कर पढ़ानेवाले **सहस्र-मुख गुरु-वर** जो कि एक साथ हजार शिष्यों की शङ्का का समाधान करते थे, के दर्शन की उत्कट इच्छा से वह पर्दा हटा दिया, तभी **विष-ज्वाला** से वहाँ स्थित सभी छात्र भस्म हो गए। संयोग-वश **गौडपाद** वहाँ उपस्थित नहीं थे, किन्तु इस घटना के पश्चाद् वे वहाँ पहुँचे। सह-पाठियों की वैसी स्थिति देखकर चिन्तित एवं आश्चर्यान्वित हुए। उसी समय शिष्यों के विनाश से खिन्न **पतञ्जलि** ने निर्दिष्ट शाप-वश **गौडपाद** को भी **ब्रह्म-राक्षसाविष्ट** होते देखा। 'मेरे भाष्य का यही एक मात्र ज्ञाता रह गया है, यही इसका प्रचार कर सकेगा'–ऐसा सोचकर उन्होंने **गौडपाद** को आदेश दिया कि–'तुम किसी योग्य शिष्य को यह भाष्य पढ़ा दोगे, तब तुम्हारे **शाप की निवृत्ति** होगी और तुम **ब्रह्म-राक्षस** से मुक्त हो जाओगे।' फलतः **नर्मदा** के तीर पर वे इस प्रतीक्षा में थे। **भगवान् शेषनाग** ने ही कृपा-वश **चन्द्र-शर्मा** नामक

एक शिष्य वहाँ उपलब्ध कराया तथा उसकी परीक्षा लेकर **श्रीगौडपाद** ने उसे भाष्य पढ़ाया। ये ही **चन्द्र-शर्मा** संन्यास-दीक्षा प्राप्त कर '**गोविन्दपाद**' नाम से विख्यात हुए, जिनके शिष्य श्रीशङ्कर थे।'

उक्त चरित में एक अन्य स्थान पर पुनः **श्रीगौडपाद** का स्मरण हुआ है। "जब **श्रीशङ्कराचार्य बदरीकाश्रम** पधारे, तो वे वहाँ **गुरु के दर्शनार्थ** भी गए। वहाँ एक गुफा में **श्रीगौडपाद** तथा **श्रीगोविन्दपाद** समाधिस्थ थे। तब '**दक्षिणामूर्ति-स्तोत्र**' द्वारा उन्होंने प्रार्थना की। इस स्तोत्र की पंक्तियाँ सुनकर **दोनों गुरु** समाधि से उठे और **ब्रह्म-तत्त्वज्ञ शिष्य** को समक्ष पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए। यहीं **परम-गुरु श्री गौंडपाद** ने **श्रीशङ्कर** को अनुग्रह-वश '**सप्त-कोटि महा-मन्त्र**' का उपदेश किया और **गंगोत्तरी** में रह कर **सविधि जप** करके सिद्धि प्राप्त करने का सङ्केत किया।"

इस वर्णन से दो निष्कर्ष प्राप्त होते हैं–(१) **गौडपाद का पतञ्जलि-शिष्यत्व** एवं (२) **विविध-विद्या-पारङ्गतत्व**। इसके आधार पर यह भी प्रमाणित होता है कि वे '**वाक्-तत्त्व, गो-तत्त्व** तथा **आयुस्तत्त्व**' के **परमाचार्य पतञ्जलि मुनि** से ही प्राप्त **व्याकरण, योग-दर्शन** एवं **आयुर्वेद** के पूर्ण ज्ञाता थे। **महर्षि वेद-व्यास** एवं **शुकदेव** जी के शिष्य होने के नाते **अद्वैत वेदान्त** और **शाक्तागम** का ज्ञान उनका अत्यन्त विस्तृत था और स्वयं **साधक-तपस्वी** होने के कारण वे **उच्च-कोटि के सिद्ध पुरुष** थे।

श्रीगौडपाद की कृतियाँ

अद्वैत-विद्या में निष्णात **आचार्य गौडपाद** की कृतियों में अति-प्रसिद्ध "**माण्डूक्य-कारिका**' अपूर्व कृति है। **आगम**-सम्बन्धी ग्रन्थों में एक सूत्र-ग्रन्थ '**श्रीविद्या-रत्न-सूत्र**' तथा प्राचीन स्तुतियों में प्रधान '**सुभगोदय-स्तुति**' एवं **देवी-माहात्म्य का भाष्य** '**चिदानन्द-कमल**' माने जाते हैं।

इनमें '**श्रीविद्या-रत्न-सूत्र**' १०३ सूत्रों का एक लघु-ग्रन्थ है (**श्री पीताम्बरा-पीठ**, दतिया, मध्य प्रदेश द्वारा यह प्रकाशित है)। ग्रन्थ-प्रणयन का लक्ष्य '**श्रीत्रिपुरा-सिद्धान्त**' के अनुसार **गुरु, देवता** एवं **आत्मा** के ऐक्य का सक्रिय प्रतिपादन है। यही **शाक्त अद्वैत** है। अतः यह एक दार्शनिक ग्रन्थ भी है। '**अथ शाक्तागम-मन्त्र-जिज्ञासा**' इस प्रथम-सूत्र से आरम्भ करके '**अथैतासां परिवाराणामनु-परिवारा असंख्याकाः**' इस सूत्र तक **श्रीविद्या** का **साङ्गोपाङ्ग तात्त्विक स्वरूप** दिखाया गया है। इसके सूत्र सु-प्रसिद्ध होने के कारण ही **श्री भास्कर राय** आदि अनेक आचार्यों ने अपनी भाष्यों-टीकाओं में उद्धृत किए हैं। '**श्रीशङ्करारण्य मुनि**' ने इस पर '**दीपिका**' की रचना भी की है।

'श्री सुभगोदय-स्तुति'

शिखरिणी छन्द में निर्मित **'श्री सुभगोदय-स्तुति'** में ५२ पद्य हैं, जिनका यहाँ प्रकाशन किया जा रहा है। **वाराणसेय सम्पूर्णानन्द विश्व-विद्यालय के सरस्वती भवन** में इस स्तोत्र की जिन दो पाण्डुलिपियों का निर्देश **'तान्त्रिक साहित्य'** पृ. ७०८ में **म०म० गोपीनाथ कविराज जी** ने किया है, उनमें क्रमशः (क) २१९१९ संख्यक प्रति में प्रायः २५० तथा (ख) २१९२१ संख्यक प्रति में २२० पद्यों के होने का उल्लेख है, किन्तु वह त्रुटि-पूर्ण है।

रचनाकार ने समग्र स्तुति में १ से १५ पद्य तक **'ऐक्य-निरूपण'**, १६ से ३९ तक **'मन्त्र-चक्रैक्य'** एवं **'ऐक्य'**; ४० से ४१ में **'प्रस्तार-त्रय-निरूपण'** तथा ४२ से ५२ तक सायुज्य-पदवी-प्राप्ति के उपाय-भूत **कौलाचार** और **समयाचार** के सन्दर्भ में **उपासनात्मक** सङ्केत दिए हैं।

'**श्री सुभगोदय-स्तुति**' की यह भी विशेषता है कि **भक्ति-भाव** से ओत-प्रोत होने के साथ ही–**प्राणायाम, षड्-ग्रन्थि-भेदन, कुण्डलिनी-जागरण, पञ्च-तत्त्व-तन्मात्रा** और **तत्त्वातीत-मिलन-पूर्वक पर-कला-चिन्तन, दहराकाश कमल में कुण्डलिनी की परिणति, त्रिकोण तथा चतुष्कोणात्मक कुल-गृह में भगवती त्रिपुर-सुन्दरी का विहार, मूलाधारादि षट्-चक्र, श्री-चक्र, समयि-साधकों का षोढैक्य** तथा **चतुर्धैक्यादि** का **निरूपण** प्रारम्भिक १५ पद्यों में हुआ है।

भगवती के विग्रह में उनके **आयुध, यन्त्र, ६४ तन्त्र, पाँच शुभागम** एवं **कूट-प्रक्रिया** से **मन्त्र-निर्देश** अग्रिम ४ पद्यों में हुआ है, जिनमें **'स्मरो मारो मारः स्मर इति परो मार-मदनः'** इत्यादि १९ वाँ पद्य विशिष्ट चिन्तनीय है।

कादि-विद्या, सादाख्या-चन्द्र-कला (षोडशी), तैत्तिरीय-ऋचा-सूचित पूजा-विधि का सङ्केत, मन्त्र की त्रिखण्डात्मकता, मन्त्राक्षरैक्य-पूर्वक स्वर-व्यञ्जन प्रत्याहार-कथन, संवित्-पूजा, पञ्च-दश-नित्या, ग्रन्थि-त्रय, यौगिक पूजा-रहस्य आदि विषय ३० तक प्रस्तुत हैं।

प्रस्तार-त्रय एवं **मही-प्रस्तार** का दो पद्यों में वर्णन करके ४२ वें पद्य से **कौलों के वाम-मत, बाह्य-पूजा, नव-व्यूह-रूप कौल-मत, समयाचारी आराधकों द्वारा** की **जानेवाली द्वि-विधा पूजा** (आन्तर एवं बाह्य), **उत्पत्ति-स्थिति-लयात्मक श्री-चक्र**, पञ्च-प्रकृतिक साम्य, उपास्ति-फल–**'सहस्रारे पद्मे सुभग-सुभगोदेति सुभगे, परं सौभाग्यं यत्तदिह तव सायुज्य-पदवी'** (५१) एवं **गुरु-कृपा**–पूर्वक अहर्निश **सूर्य** एवं **चन्द्र** के समान कृतार्थता-प्राप्ति का निर्देश हुआ है।

'श्री सुभगोदय-स्तुति' की कोई विशिष्ट व्याख्या अब तक उपलब्ध नहीं है। कहा जाता है कि स्वयं श्रीशङ्कराचार्य ने इसका भाष्य लिखा था, किन्तु वह लुप्त है। ऐसी उत्तम स्तुति की विस्तृत व्याख्या होने से श्रीविद्योपासकों के लिए अनेक रहस्य उद्घाटित हो सकते हैं और आन्तर-वरिवस्या-मूलक समयाचार का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

स्तुति में प्रयुक्त 'सुभगा'-शब्द

भगवती के अनन्त नाम हैं। श्री ललिता-सहस्त्र-नाम में स्पष्ट कहा गया है कि– 'देवी-नाम-सहस्त्राणि कोटिशः सन्ति कुम्भज!' (३०३) और इनमें से मुख्य सहस्त्र-नाम वशिन्यादि वाग्देवियों के द्वारा 'श्रीललिता-सहस्त्र-नाम' में कहे गए हैं। चूँकि भगवती का मन्त्र 'पञ्च-दशाक्षरात्मक' है, अतः इन नामों में उनके पन्द्रह नाम और भी महत्त्व-पूर्ण हैं। ये नाम 'त्रिपुरोपनिषद्' में इस प्रकार वर्णित हैं–

मदन्तिका[१] मानिनी[२] मङ्गला[३] च, सुभगा[४] च सा सुन्दरी[५] सिद्धि - मत्ता[६]।
लज्जा[७] मतिस्तुष्टिरिष्टा[८-१०] च पुष्टा[११], लक्ष्मीरुमा[१२-१३] ललिता[१४] लालपन्ती[१५]।।६।।

इन नामों में चौथा नाम 'सुभगा' है। वेदों में 'सरस्वती वा सुभगा' कह कर 'सरस्वती' का नाम भी इसे बताया है। 'शोभना भगा ऐश्वर्यादयोऽस्याः सन्तीति सुभगा' ऐसी व्युत्पत्ति दिखलाते हुए 'श्रीराघवानन्दतीर्थ योगीन्द्र' के शिष्य 'श्रीरामानन्द' ने अपने भाष्य में विवेचन किया है। इसमें 'भग'-शब्द षडैश्वर्य का वाचक है (विष्णु-पुराण)–

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य, वीर्यस्य यशसः श्रियः।
ज्ञान-वैराग्ययोश्चैष, षण्णां भग इतीरणात् ।।

श्रीत्रिपुरा उपनिषद् में भी 'भगः शक्तिर्भगवान् काम ईश उभा दाताराविह सौभगानाम्' (१४) में 'भग'-शब्द का भाष्यकार ने 'सौभाग्य-लक्ष्मी' और 'शक्ति' अर्थ किया है तथा 'भग एव भगवाँ अस्तु' इत्यादि श्रुति के अनुसार 'भग' को 'भगवान्' का वाचक भी बताया है। श्रीभास्करराय मखी ने उपर्युक्त उपनिषन्मन्त्र के भाष्य में 'भग'-शब्द का अर्थ ईश मानकर 'ईश के शरीर-घटक जितने भी धर्म हैं, वे सब 'भग'-पद से ग्राह्य माने हैं और यही धर्म-समूह शक्ति है' ऐसा कहा है। अतएव भगवती सुभगा-त्रिपुर-सुन्दरी की उपासना 'सौभग'=धर्मार्थ-काम-प्रदात्री है।

'श्रीललिता-सहस्त्र-नाम' में 'सुभगा' नाम (७६१ वाँ) है। इसका विवेचन करते हुए 'सौभाग्य-भास्कर-व्याख्या' में भास्करराय मखी ने स्पष्ट किया है कि–पाँच-वर्ष की कन्या 'सुभगा' कही जाती है क्योंकि 'सुभगा पञ्च-वर्षा स्यात्' ऐसा महर्षि धौम्य का वचन है। भगवती त्रिपुर-सुन्दरी श्री तत्स्वरूपा ही हैं। अथवा १. श्री, २. काम, ३. माहात्म्य,

४. वीर्य, ५. यत्न, ६. कीर्ति आदि '**भग**'-पद-वाच्य छह तत्त्व जिसमें उत्तम-रूप से विद्यमान हैं, वह '**सुभगा**' है। अथवा जिसके द्वारा '**सूर्य**' शोभायमान है, वह '**सुभगा**' है क्योंकि '**सूर्य**'-सम्बन्धी सभी कार्यों में अन्तर्विराजमान होने से यही शक्ति निमित्त-भूत है। यह बात '**विष्णु-पुराण**' के द्वितीय अंश में प्रतिपादित है। यथा–

श्रीविष्णु की **परा-शक्ति–१. ऋग्, २. यजुः** और **३. साम-रूप** है। यही **त्रयी** तपती है और जगत् के पाप का विनाश करती है। प्रत्येक मास में जहाँ-जहाँ **रवि** रहता है, वहाँ यह **परा-शक्ति** व्याप्त रहती है। **त्रयी-मयी विष्णु-शक्ति** ही **सूर्य** में निवास करती है। प्रातः **ऋग्**, मध्याह्न में **यजुः** और सायाह्न में बृहद्रथन्तरादि **साम** ही तपते हैं। अतः **विष्णु** की मूर्ति को **त्रयी-मयी १. ऋग्, २. यजुः, ३. साम-रूप** कहा है। **विष्णु-शक्ति सूर्य** में सदा निवास करती है। केवल **सूर्य** में ही **त्रयी-मयी विष्णु की शक्ति** नहीं है, अपितु **ब्रह्मा, विष्णु** और **शिव** ये तीनों ही **त्रयी-मय** हैं। **शक्ति-रूप-धारी विष्णु** न उदय होता है और न अस्त, अपितु **विष्णु** से पृथक् **सूर्य के सप्त-गण** भी उसी शक्ति से प्रेरित होते हैं। जिस प्रकार खम्भे में लगे हुए दर्पण में छाया पड़ने से व्यक्ति निकटस्थ माना जाता है, उसी प्रकार यह **शक्ति** वहाँ से नहीं जाती है, अपितु वहीं चिर-निवास करती है। अर्थात् **१. देव, २. ऋषि, ३. गन्धर्व, ४. अप्सराएँ, ५. यक्ष, ६. सर्प** और **७. राक्षस**–ये सप्त-गण **सूर्य** के उपकरण होने के कारण **प्रति-मास भिन्न होनेवाले सूर्य** से भिन्न-भिन्न होते हैं, किन्तु शक्ति-प्रधान होने के करण पृथक् नहीं होती।

अथवा, तीनों लोक में जो चराचरगत '**सौभाग्य**' है, वह **भगवती षोडशी** का रूप है और यही '**सुभगा**' कहलाती हैं। यही **चर-सौभाग्य-रूपा सुवासिनियाँ** भी हैं और **अचर-सौभाग्य-वस्तु** ('**पद्म-पुराण**' के अनुसार)–**१. इक्षु-ईख, २. उत्तम-कुल-वृक्ष, ३. निष्पावा-सेम, ४. जीरक** और **धान्य** (तुष-रहित), **५. विकार-युक्त गो-दुग्ध, ६. कुसुम्भ, ७. कुसुम** और **८. लवण**–ये **सौभाग्याष्टक** भी यही हैं। **पद्म-पुराण** में **सुवासिनी-पूजन** का महत्त्व बतलाते हुए कहा गया है कि–**स्वर्ग-सौभाग्या-मयी** और **भुक्ति-मुक्ति-दात्री भगवती सुभगा-उमा** अथवा **सुवासिनी नारी की आराधना** करके मनुष्य क्या नहीं प्राप्त कर सकता? अपितु सभी कुछ प्राप्त कर सकता है। इस नाम से पूर्व आए हुए **१. विश्व-धारणी** तथा **२. त्रिवर्ग-दात्री** नाम भी '**सुभगा**'-पद की निरुक्ति को ध्वनित करते हैं अर्थात् **विश्व-धारण** और **त्रि-वर्ग–१. धर्म, २. अर्थ,** और **३. काम** को प्रदान करनेवाली भी भगवती '**सुभगा**' ही हैं।

'**श्रादुर्गा सप्तशती**' के **प्राधानिक रहस्य** में भी '**सुन्दरी सुभगा शुभा**' (२३) कहकर इनके पुरुषत्व प्राप्ति का उल्लेख है। पति का परमानुराग प्राप्त होने से भी **भगवती** को

'**सुभगा**' कहा जाता है। सम्भवतः इन्हीं विशेषताओं के कारण **आचार्य-प्रवर श्री गौडपादाचार्य** जी ने इस नाम को अपना आराध्य बनाया और स्तुति की रचना की।

'सुभगोदय'-स्तुति और 'सौन्दर्य-लहरी'

यह कहा जाता है कि **श्रीगौडपादाचार्य** की परम्परा में दीक्षित **श्री शङ्कराचार्य** ने उनके द्वारा प्रदर्शित-प्रतिपादित मत का अनुसरण किया है। तदनुसार '**सुभगोदय-स्तुति**' और '**सौन्दर्य-लहरी**' पर भी कुछ विचार अपेक्षित है। इस दृष्टि से परिशीलन करने पर एक बात निर्विवाद रूप से की जा सकती है कि ''**श्रीगौडपादाचार्य** ने अपनी स्तुति में सूत्र-रूप में जिन विषयों का सङ्केत किया है, उनका '**सौन्दर्य-लहरी**' में विशदीकरण हुआ है। उदाहरणार्थ हम **परम पूज्य श्री १०८ योगिराज-महाराज बाबा श्रीमोतीलाल जी मेहता** द्वारा की कई '**सौन्दर्य-लहरी**' की व्याख्या '**सार्थ सौन्दर्य-लहरी**' के परिप्रेक्ष्य में कुछ परिशीलन प्रस्तुत करते हैं।

(१) प्रस्तुत स्तुति के प्रथम पद्य में '**भवानि**' और '**भव-महिषि**' इन दो समानार्थी पदों से सम्बोधित करते हुए आचार्य ने '**सुधा-सिन्धोरन्तर्वसतिम्**' कहा है और ७ वें पद्य में पुनः '**सुधा-सिन्धु**' का स्मरण दिलाते हुए **सुर-मणि-गृह** का स्मरण किया है, जिसे **श्रीशङ्कर भगवत्पाद** ने '**सौन्दर्य-लहरी**' में–'**सुधा-सिन्धोर्मध्ये सुर-विटपि-वाटी-परि-वृते०**' ८ वें पद्य से सरल बना दिया है। भावों का साम्य यथा-वत् सुरक्षित है और इसमें दर्शित '**सुधा-सिन्धु**' के साथ '**मणि-द्वीप**' की छटा **श्रीबाबा जी** ने इस प्रकार स्पष्ट की है–

''**मणि-द्वीप** के चारों ओर **अमृत का समुद्र** है। वह समुद्र वायु-सङ्घटन-योग से बहुत **दिव्य तरङ्गवाला** है। **रत्न-मयी दिव्य प्रकाश-युक्त रेती** उस समुद्र के किनारे फैली हुई है। **मणि-द्वीप** में **चार द्वार** हैं। वह स्थान अनेक **सिद्ध पुरुषों के निवास-स्थानों से** आवृत है। **सहस्त्रों दर्शनातुरों की भीड़** वहाँ लगी रहती है। वहाँ के वृक्ष **दिव्य मणियों के दिव्य वृक्ष** से दीखते हैं। वहाँ बड़ी **सुन्दर वाटिका** है। **बसन्त** इस वाटिका का माली है। सब वृक्ष निरन्तर **नव फूल-फल-पल्लव से युक्त** रहते हैं। वाटिका **आनन्द-मय दिव्य-सुगन्ध** से भरी हुई है। **पद्ममणि (पन्ना)** के समान हरित-भूमि में अनेक **सुन्दर रस-मय अमृतवारि के झरने** प्रस्फुरित होकर **मधुर कलरव** करते हुए धीरे-धीरे बहते हैं। ऐसे बहुत से झरने **श्रीमणि-द्वीप की प्राकृतिक शोभा** को बढ़ाते हुए द्रष्टाओं में **महा-शान्ति** उत्पन्न करते हैं। इन झरनों के जल-पान से **ब्रह्मानन्द पीयूष गुण-सहित** जागता है। **शुक, मैना** आदि पक्षी **तत्त्व-विज्ञान चर्चा-मय मधुर स्वर से मीठी वाणी** बोलते हैं। यह उत्तम वन **सुगन्ध-मय नीरोगकर पवन** से भरपूर हितानन्दकर है। विश्वसार इस **मणि-द्वीप** के मध्य में **कल्प-वृक्ष**

का आराम है। **कल्प-वृक्ष** की डालियाँ **सुवर्ण-मय कान्तिवाली** हैं। यह **महा-दिव्य द्वीप** दशावरणवाले **श्री-चक्र** के आकार का है।

श्रीकल्प-वृक्ष वन की **सुवर्ण-मय** डालियों में **रङ्ग-विरङ्गे रत्न-समान दिव्य पत्र-पुष्प-फलादि** लगे हैं। **कल्प-वृक्ष** की इस **महा-सुगन्धित रम्य-वाटिका** के मध्य में **चिन्तामणि** की ईंटों से निर्मित **महा-दिव्य महल कोटि-बालादित्य-वत् प्रकाशमान** है। उसके मध्य में **शिवाकार-मञ्चस्थ परम-शिव-पर्यङ्कासन** पर **विश्व-सुन्दरी परा-शक्ति** विराजमान हैं।

यहाँ '**परम-शिव-पर्यङ्क-निलया**' और '**सुभगोदय स्तुति**' के-'**भवानि! त्वां वन्दे भव-महिषि सच्चित्-सुख-वपुः०**' पद्य में एक ही प्रकार के **शिव-शक्ति** की **एकात्मता** का भाव है, क्योंकि **शिव-बिन्दु** है और **शक्ति-नाद** है। इसी एक्य के रहस्य को परम-गुरु से प्राप्त कर '**भजन्ति त्वां धन्याः**' कहकर **आचार्य शङ्कर** ने **गुरु, परम-गुरु** और **परमेष्ठि** आदि गुरुओं के प्रति अपनी भक्ति व्यक्त की है और स्वयं को भी धन्य माना है।

इसके पश्चात् (२) '**मनस्तत्त्वं०**', (३) '**मनो-मार्गं०**', (४) '**यदा तौ चन्द्रार्कौ०**', (५) '**पृथिव्यापस्तेजः०**' और (६) '**कुमारी यन्मन्द्रं०**' आदि **सुभयोदय-स्तुति** के पद्यों में जिस प्रकार **कुण्डलिनी के प्रबोध का विवरण** प्रस्तुत हुआ है, वही '**सौन्दर्य-लहरी**' में ९ और १० संख्यक '**महीं मूलाधारे०**' तथा '**सुधा-धारा-सारैः०**' इत्यादि पद्यों से व्यक्त होता है। दोनों स्तुतियों में **षट्-चक्र-वेध-भाव** में सूक्ष्म-तत्त्वों के वेध-द्वारा स्थूल **पञ्च-तत्त्वों में पञ्चीकरण** की प्रक्रिया बताई गई है। यथा-

'**मूलाधार** में भू-तत्त्व पीत-वर्ण, **स्वाधिष्ठान** में जल-तत्त्व श्वेत-वर्ण (यहाँ आचार्य शङ्कर ने स्वाधिष्ठान में अग्नि-तत्त्व माना है), **मणिपूर** में अग्नि-तत्त्व रक्त-वर्ण (मणि-रत्न-वर्ण), **अनाहत**-हृच्चक्र में अग्नि-वायु-मिश्रित-तत्त्व गुलाबी वर्ण, **विशुद्ध** (कण्ठ-चक्र) में वायु-तत्त्व धूम-वर्ण तथा **आज्ञा**-चक्र में आकाश-तत्त्व इन्द्र-धनुष-वर्ण।

इस प्रकार '**सुभगोदय**' और '**सौन्दर्य-लहरी**' दोनों में यही वर्णित है कि **कुल-पथ** का भेद करके **परा-शक्ति-रूपा गुप्त रहस्य-मयी भगवती सहस्त्रार-पद्म** में **अपने पति के साथ (चिदानन्द लक्ष्य में) गुप्त विहार करती हैं।** दोनों स्तुतियों में **सहस्त्र-दल** से (मूलाधारस्थ-चतुर्दले भू-पुर-मये शक्ति-रूपायाः कुण्डलिन्याः स्थान-वत्) **श्री-चक्र का भाव** प्रदर्शित होता है।

तत्त्व-बीज इस प्रकार हैं-**हं** आकाश-बीज, **यं** वायु-बीज, **रं** अग्नि-बीज, **वं** वरुण-बीज, **लं** भू-बीज, **मं** मनो-बीज, **यं** बुद्धि-बीज, **सं** शक्ति-बीज, **हं** चिद्-बीज-शिव-बीज-प्राण-बीज, **शं** स्वराश्च-जीव बीजादि......।

कुल-पथ-भेद से पृथ्वी से मन-पर्यन्त २१ तत्त्वों का भेदन होता है। २१ तत्त्व- १. पृथ्वी, २. अप्, ३. अग्नि, ४. वायु, ५. आकाश, ६. गन्ध, ७. रस, ८. रूप, ९. स्पर्श, १०. शब्द, ११. नासिका, १२. जिह्वा, १३. चक्षु, १४. त्वक्, १५. श्रोत्र, १६. वाक्, १७. पाणि, १८. पाद, १९. पायु, २०. उपस्थ, २१. मन।

'मन' से परे निम्न-लिखित तत्त्व हैं-२२ बुद्धि, २३ अहङ्कार, २४ प्रकृति, २५ पुरुष (चित्त), २६ कला, २७ अविद्या, २८ विद्या, २९ राग, ३० नियति, ३१ माया, ३२ शिव, ३३. शक्ति।

कोई-कोई १५ तत्त्व पृथक् बताते हैं। यथा-

सप्त-धातु-१. त्वक्, २. असृक, ३. मांस, ४. मेद, ५. अस्थि, ६. मज्जा और ७. शुक्र।

पञ्च-प्राण-१. प्राण, २. अपान, ३. व्यान, ४. उदान और ५. समान।

गुण-त्रय-१. सत्त्व, २. रज और ३. तम।

'श्री-चक्र' में कोण तथा ३६० रश्मि-कलाएँ

प्रस्तुत 'सुभगोदय-स्तुति' के १०-११ और १७ वें पद्यों में श्री-चक्र के रचना-विधान एवं शिव-शक्त्यात्मकता का वर्णन है। सौन्दर्य-लहरी में भी 'चतुर्भिः श्रीकण्ठैः०' इत्यादि ११ वें पद्य में श्री-चक्र के सम्बन्ध में कहा गया है। तदनुसार श्री-चक्र में नौ त्रिकोणों में चार शिवात्मक तथा पाँच शक्त्यात्मक हैं। ये सब शम्भु-शक्ति (बिन्दु) से पृथक् हैं। फिर अष्ट-दल-पद्म तथा षोडश-दल-पद्म हैं पश्चात् त्रि-वृत्त और त्रि-भूपुर हैं।

श्रीगौडपाद ने प्रस्तुत 'सुभगोदय' स्तुति में 'त्रिखण्डं ते चक्रं०' और 'शतं चाष्टौ वह्नेः०' इत्यादि आठवें तथा नौवें पद्यों से जिन ३६० रश्मियों का वर्णन किया है, उन्हें आचार्य शङ्कर ने भी 'सौन्दर्य-लहरी' में 'क्षितौ षट्-पञ्चाशत्०' इत्यादि १४ वें पद्य से प्रस्फुट किया है। श्रीबाबा जी ने इस प्रसङ्ग को 'सार्थ सौन्दर्य-लहरी' में इस प्रकार समझाया है-

हे माँ, हे सर्व-सिद्धि-मयि! आप-श्री के चरण-कमल पञ्च-तत्त्वात्मक केन्द्र-बिन्दु-महाकाश से परम-पर हैं। केन्द्र-बिन्दु ३६० कला का होता है। उसमें ५६ भवात्मक मयूखाएँ पृथ्वी की, ५२ जलात्मक उदधि की, ६२ अग्न्यात्मक वह्नि की, ५४ अनिलात्मक वायु की, ६२ आकाशात्मक शून्य (व्योम) की और ६४ मयूखाएँ मन की हैं। पञ्च-तत्त्वात्मक देह की सब मिलाकर २९६ कलाएँ होती हैं और मन की ६४ कलाएँ। इस प्रकार कुल ३६० कलाएँ (मयूखाएँ) होती हैं। इन सम्पूर्ण जीवनात्मक तथा सृष्ट्यात्मक विश्व-शक्ति-कलाओं से भगवती के चरण-कमल अत्यन्त परे हैं।

१. उत्पत्ति, २. स्थिति, ३. लय–ये त्रि-क्रियाएँ 'सृष्टि-क्रम' कहलाती हैं। इन तीन क्रियाओं में **त्रि-गुण** तथा **त्रि-दैवत** हैं। **१. रज, २. सत्** और **३. तम**– ये तीन **गुण** हैं तथा **१. ब्रह्मा, २. विष्णु** और **३. रुद्र–त्रि-देव** हैं।

यहाँ **योगिराज बाबाश्री** ने और भी विशेष-रूप से समझाया है, देखिए **'सार्थ सौन्दर्य-लहरी'**।

'सुभगोदय-स्तुति' में **'ऐक्य-निरूपण तथा मन्त्र-चक्रैक्य'** को भी बहुत महत्त्व दिया गया है। यहाँ **ऐक्य–चतुर्धा** और **षोढा** बतलाया गया है। इस **ऐक्य-साधना** में **रहस्यात्मक पद्धति** का समावेश है, जो **गुरु-कृपा** से ही संवेद्य है। **आगमों तथा साधकों के स्वानुभव** में ही ऐसे ऐक्य के निर्देश प्राप्त होते हैं। इस ऐक्य में कहीं **कुण्डलिनी-रहस्य-सोपान** की **'उन्नेय-भूमिका'** अपेक्षित होती है, तो कहीं **'प्रत्यावृत्ति-भूमिका'** की आवश्यकता होती है। **आचार्य श्री** ने यहाँ **सहस्त्रार-पद्म** में **कुण्डलिनी** को पहुँचाने तथा वहाँ विराजमान होने की स्थिति में **अवतरण की प्रक्रिया** को भी दिखलाया है। संक्षेप में **मन्त्र** और **चक्र** का यह ऐक्य भी **योगाभ्यास द्वारा साध्य ध्यान-मूलक-साधना** के रहस्य को व्यक्त करता है।

अग्नि-शिव-शशि-मयी त्रि-देव-माता अर्थात् **काम-कला का ध्यान, तीव्र विद्युद् रेखा-वत् द्रुत-गति-मयी** तथा **अनन्ताकाश-मयी माता** के **अनन्त शक्ति-सागर** में **बिन्दु-वत् चन्द्राग्नि-सूर्य** की सत्ता एवं **प्रकृति चक्र** के **षट्-चक्र-पद्मों** से अति परे **सहस्त्रार-पद्म** में **दिव्य-दर्शन** के भाव भी इन स्तुतियों में संवलित हैं।

आचार्य श्रीगौडपाद ने–**'षडब्जारण्ये त्वां समयिन इमे पञ्चक-समां०'** इस पद्य से जिसका निर्देश किया है, उसका पल्लवन **श्रीशङ्कराचार्य** ने इस पद्य से किया है– **'तडिल्लेखातन्वीं-तपन-शशि-वैश्वानर-मयीं'०।**

'सुभगोदय' में **परम-गुरु श्रीगौडपादाचार्य जी** ने भगवती के स्वरूप के वर्णन में केवल तीन पद्य ही लिखे हैं, जिसमें **चतुर्भुजा** और **दश-भुजा** कह कर, उनमें धारण किए हुए आयुधों का ही सङ्केत अधिक है। यथा–**'धनुर्बाणानिक्षूद्भव-कुसुमजानकुंश-वरं०'**

ठीक इसी परम्परा में **आचार्य श्री शङ्कर** द्वारा रचित **'सौन्दर्य-लहरी'** में भगवती के समस्त शरीर और अङ्गों के सौष्ठव का कमनीय वर्णन हुआ है।

–डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी

★★★

श्रीमद्-आद्य-शङ्कराचार्याणां परम गुरुवर
परमं पूज्य श्रीगौडपादाचार्य-विरचिता

श्रीसुभगोदय-स्तुति

भवानि! त्वां वन्दे भव-महिषि सच्चित्-सुख-वपुः,
पराकारां देवीममृत-लहरीमैन्दव - कलाम् ।
महा-कालातीतां कलित-सरणी-कल्पित-तनुम्,
सुधा-सिन्धोरन्तर्वसतिमनिशं वासर-मयीम् ।।१।।

मनस्तत्त्वं जित्वा नयनमथ नासाग्र-घटितम्,
पुनर्व्यावृत्ताक्षः स्वयमपि यदा पश्यति पराम् ।
तदानीमेवास्य स्फुरति बहिरन्तर्भगवती,
परानन्दाकारा पर-शिव-परा काचिदपरा ।।२।।

मनो-मार्गं जित्वा मरुत इह नाडी-गण-जुषो,
निरुद्ध्यार्कं सेन्दुं दहनमपि सञ्ज्वाल्य शिखया।
सुषुम्णां संयोज्य श्लथयति च षड्-ग्रन्थि-शशिनम्,
तवाज्ञा-चक्रस्थं विलयति महा-योगि-समयी ।।३।।

यदा तौ चन्द्रार्कौ निज-सदन-संरोधन-वशा-
दशक्तौ पीयूष-स्रवण-हरणे सा च भुजगी।
प्रबुद्धा क्षुत्-क्रुद्धा दशति शशिनं बैन्दव-गतम्,
सुधा-धारा-सारैः स्नपयसि तनुं बैन्दव-कले ।।४।।

पृथिव्यापस्तेजः पवन - गगने तत् - प्रकृतयः,
स्थितास्तन्मात्रास्ता विषय-दशकं मानसमिति ।
ततो माया विद्या तदनु च महेशः शिव इतः,
परं तत्त्वातीतं मिलि-तव-पुरिन्दोः पर-कला ।।५।।

कुमारी यन्मन्त्रं ध्वनति च ततो योषिदपरा,
कुलं त्यक्त्वा काचित् स्फुटति च महा-काल-भुजगी।
ततः पातिव्रत्यं भजति दहराकाश-कमले,
सुखासीना योषा भवसि भव-सीत्कार-रसिका ।।६।।

त्रिकोणं ते कौलाः कुल-गृहमिति प्राहुरपरे,
चतुष्कोणं प्राहुः समयिन इमे बैन्दवमिति ।
सुधा-सिन्धौ तस्मिन् सुर-मणि-गृहे सूर्य-शशिनो-
रगम्ये रश्मीनां समय-सहिते त्वं विहरसे ।।७।।

त्रि-खण्डं ते चक्रं शुचि-रवि-शशाङ्कात्मकतया,
मयूखैः षट्-त्रिंशद्-दश-युत-तया खण्ड-कलितैः ।
पृथिव्यादौ तत्त्वे पृथगुदित-वद्भिः परिवृतं,
भवेन् मूलाधारात् प्रभृति तव षट्-चक्र-सदनम् ।।८।।

शतं चाष्टौ वह्नेः शतमपि कलाः षोडश रवेः,
शतं षट् च त्रिंशत्सित-मयम-यूखाश्चरणजाः ।
य एते षष्टिश्च त्रिशतमभवंस्त्वच्चरणजा,
महा-कालस्तस्मात हि तव शिवे! काल-कलना ।।९।।

त्रि - कोणं चाधारं त्रिपुर - तनु तेऽष्टारमनघे,
भवेत् स्वाधिष्ठानं पुनरपि दशारं मणिपुरम् ।
दशारं ते संवित् - कमलमथ मन्वश्रकमुमे,
विशुद्धं स्यादाज्ञा शिव इति ततो बैन्दव-गृहम् ।।१०।।

त्रिकोणे ते बृत्त-त्रितयमिभ-कोणे वसु-दलम्,
कलाश्रं मिश्रारे भवति भुवनाश्रे च भुवनम् ।
चतुश्चक्रं शैवं निवसति भगे शाक्तिकमुमे,
प्रधानैक्यं षोढा भवति च तयोः शक्ति-शिवयोः ।।११।।

कलायां बिन्द्वैक्यं तदनु च तयोर्नाद-विभवे,
तयोर्नादैनैक्यं तदनु च कलायामपि तयोः ।
तयोर्बिन्दावैक्यं त्रितय-विभवैक्यं पर-शिवे,
तदेवं षोढैक्यं भवति हि सपर्या समयिनाम् ।।१२।।

कला नादो बिन्दुः क्रमश इह वर्णाश्च चरणं,
षडब्जं चाधार-प्रभृतिकममीषां च मिलनम् ।
तदेवं षोढैक्यं भवति खलु येषां समयिनां,
चतुर्धैक्यं तेषां भवति हि सपर्या समयिनाम् ।।१३।।

तडिल्लेखा-मध्ये स्फुरति मणिपूरे भगवती,
चतुर्धैक्यं तेषां भवति च चतुर्बाहुरुदिता ।
धनुः बाणानिक्षूद्भव - कुसुमजानकुंश - वरम्,
लसत्-पाशं हस्तेरुदित-रवि-बिम्बाकृति-रुचिः ।।१४।।
भवत्यैक्यं षोढा भवति भगवत्याः समयिनां,
मरुत्-वत्-कोदण्ड-द्युति-नियुत-भासा सम-रुचिः ।
भवत् - पाणिव्रातो दश-विध इतीदं मणिपुरे,
भवानि! प्रत्यक्षे तव वपुरुपास्ते न हि परम् ।।१५।।
इत्यैक्य-निरूपणम्
भवानि! श्रीहस्तैर्वहसि फणि-पाशं सृणिमथो,
धनुः पौण्ड्रं पौष्पं शरमथ जपस्त्रक्-शुक-वरौ ।
अथ द्वाभ्यां मुद्रामभय-वरदानैक-रसिकाम्,
क्वणद्वीणां द्वाभ्यां त्वमुरसि कराभ्यां च बिभृषे ।।१६।।
त्रिकोणैरष्टारं त्रिभिरपि दशारं समुदभूद्,
दशारं भू-गेहादपि च भुवनाश्रं समभवत् ।
ततोऽभून्नागारं नृपति-दलमस्मात् त्रि-वलयम्,
चतुर्द्वाः प्राकार-त्रितयमिदमेवाम्ब! शरणम् ।।१७।।
चतुःषष्टिःतन्त्राण्यपि कुल-मतं निन्दितमभूद्,
यदेतन्मिश्राख्यं मतमपि भवेन्निन्दितमिह ।
शुभाख्याः पञ्चैताः श्रुति-सरणि-सिद्धाः प्रकृतयो,
महा-विद्यास्तासां भवति परमार्थो भगवती ।।१८।।
स्मरो मारो मारः स्मर इति परो मार-मदनः,
स्मरानङ्गाश्चेति स्मर-मदन-माराः स्मर इति ।
त्रि-खण्डः खण्डान्ते कलित-भुवनेश्यक्षर-युतः,
चतुः पञ्चार्णास्ते त्रय इति च पञ्चाक्षर-मनुः ।।१९।।
त्रि-खण्डे त्वन्मन्त्रे शशि-सवितृ-वह्न्यात्मकतया,
स्वराश्चन्द्रे लीनाः सवितरि कलाः कादय इह ।
भकाराद्या वह्नावथ कषयुगं बैन्दव - गृहे,
निलीनं सादाख्ये शिव-युवति नित्यैन्दव-कले ।।२०।।

ककाराकाराभ्यां स्वर-गणमवष्टभ्य निखिलं,
कला-प्रत्याहारात् सकलमभवद् व्यञ्जन-गणः ।
त्रि-खण्डे स्यात् प्रत्याहरणमिदमन्वक्कषयुग-
क्षकारश्चाकाशेऽक्षर-तनु-तया चाक्षरमिति ।।२१।।
विदेहेन्द्रापत्यं श्रुत इह ऋषिर्यस्य च मनो-
रयं चार्थः सम्यक् श्रुति-शिरसि तैत्तिर्यक-ऋचि ।
ऋषिं हित्वा चास्या हृदय - कमले नैतमृषिमि-
त्यृचाभ्युक्तः पूजा-विधिरिह भवत्याः समयिनाम् ।।२२।।
त्रि-खण्डः त्वत्-मन्त्रः तव च सरघायां निविशते,
श्रियो देव्याः शेषो यत इह समस्ताः शशि-कलाः ।
त्रि-खण्डे त्रै-खण्ड्यं निवसति समन्त्रे च सुभगे,
षडब्जारण्यानी त्रितय-युत-खण्डे निवसति ।।२३।।
त्रयं चैतत् स्वान्ते परम - शिव - पर्यङ्क-निलये,
परे सादाख्येऽस्मिन्निवसति चतुर्धैक्य-कलनात् ।
स्वरास्ते लीनास्ते भगवति कलाश्रे च सकलाः,
ककाराद्या वृत्ते तदनु चतुरश्रे च यमुखाः ।।२४।।
हलो बिन्दुःवर्गाष्टकमिभ-दलं शाम्भव-वपुः,
चतुश्चक्रं शक्र-स्थित-मनुभयं शक्ति-शिवयोः ।
निशाद्या दर्शाद्याः श्रुति-निगदिताः पञ्च-दशधा,
भवेयुः नित्यास्तास्तव जननि! मन्त्राक्षर-गणाः ।।२५।।
इमास्ताः षोडश्यास्तव च सरघायां शशि-कला-
स्वरूपायां लीना निवसति तव श्रीशशि-कला ।
अयं प्रत्याहारः श्रुत इह कला-व्यञ्जन-गणः,
ककारेणाकारः स्वर - गणमशेषं कथयति ।।२६।।
क्षकारः पञ्चाशत्-कल इति हलो बैन्दव-गृहम्,
ककारादूर्ध्वं स्यात् जननि! तव नामाक्षरमिति ।
भवेत् पूजा-काले मणि-खचित-भूषाभिरभितः,
प्रभाभिः व्यालीढं भवति मणिपूरं सरसिजम् ।।२७।।

वदन्त्येके वृद्धा मणिरिति जलं तेन निबिडं,
परे तु त्वद्रूपं मणि-धनुरितीदं समयिनः ।
अनाहत्या नादः प्रभवति सुषुम्णाध्व-जनितः,
तदा वायोस्तत्र प्रभव इदमाहुः समयिनः ।।२८।।
तदेतत्ते संवित् - कमलमिति संज्ञान्तरमुमे!,
भवेत् संवित् पूजा भवति कमलेऽस्मिन् समयिनाम् ।
विशुद्ध्याख्ये चक्रे वियदुदितमाहुः समयिनः,
सदा-पूर्वो देवः शिव इति हिमानी-सम-तनुः ।।२९।।
त्वदीयैरुद्द्योतैः भवति च विशुद्ध्याख्य-सदनम्,
भवेत् पूजा देव्या हिम-कर-कलाभिः समयिनाम् ।
सहस्त्रारे चक्रे निवसति कला - पञ्च-दशकम्,
तदेतन्नित्याख्यं भ्रमति सित-पक्षे समयिनाम् ।।३०।।
अतः शुक्ले पक्षे प्रतिदिनमिह त्वां भगवतीं,
निशायां सेवन्ते निशि चरम-भागे समयिनः ।
शुचिः स्वाधिष्ठाने रविरुपरि संवित् सर-सिजे,
शशी चाज्ञा-चक्रे हरि-हर-विधि-ग्रन्थय इमे ।।३१।।
कलायाः षोडश्याः प्रति-फलित-बिम्बेन सहितम्,
तदीयैः पीयूषैः पुनरधिकमाप्लावित-तनुः ।
सिते पक्षे सर्वास्तिथय इह कृष्णेऽपि च समा,
यदा चामावास्या भवति न हि पूजा समयिनाम् ।।३२।।
इडायां पिङ्गल्यां चरत इह तौ सूर्य-शशिनौ,
तमस्याधारे तौ यदि तु मिलितौ सा तिथिरमा ।
तदाज्ञाचक्रस्थं शिशिर-कर-बिम्बे रवि-निभम्,
दृढ-व्यालीढं सद्विगलित-सुधा-सार-विसरम् ।।३३।।
महा-व्योमस्थेन्दोरमृत-लहरी-प्लावित-तनुः,
प्रशुष्यद्वै नाडी-प्रकरमनिशं प्लावयति तत् ।
यदाज्ञायां विद्युन्नियुत - नियुताभाक्षर-मयी,
स्थिता विद्युल्लेखा भगवति विधि-ग्रन्थिमभिनत् ।।३४।।

ततो गत्वा ज्योत्स्ना-मय-समय-लोकं समयिनाम्,
पराख्या सादाख्या जयति शिव-तत्त्वेन मिलिता ।
सहस्त्रारे पद्मे शिशिर - महसां बिम्बमपरं,
तदेव श्री-चक्रं सरघमिति तद्-बैन्दवमिति ।।३५।।
वदन्त्येके सन्तः पर-शिव - पदे तत्त्व-मिलिते,
ततस्त्वं षड्-त्रिंशी भवसि शिवयोर्मेलन-वपुः ।
त्रि-खण्डेऽस्मिन् स्वान्ते परम-पद-पर्यङ्क-सदने,
परे सादाख्येऽस्मिन् निवसति चतुर्धैक्य-कलनात् ।।३६।।
क्षितौ वह्निर्वह्नौ वसु-दल-जले दिङ् मरुति दिक्-
कलाश्रे मन्वश्रं दृशि वसुरथो राज - कमले ।
प्रति-द्वैत-ग्रन्थिस्तदुपरि चतुःद्वार-सहितम्,
मही-चक्रं चैकं भवति भग-कोणैक्य-कलनात् ।।३७।।

इति मन्त्र-चक्रैक्यम्

षडब्जारण्ये त्वां समयिन इमे पञ्चक-समाम्,
यदा संविद्रूपां विदधति च षोढैक्य-कलिताम् ।
मनो जित्वा चाज्ञा - सरसिज इह प्रादुरभवत्,
तडिल्लेखा नित्या भगवति तवाधार-सदनम् ।।३८।।
भवत् साम्यं केचित् त्रितयमिति कौल-प्रभृतयः,
परं तत्त्वाख्यं चेत्यपरमिदमाहुः समयिनः ।
क्रियावस्था-रूपं प्रकृतिरभिधा-पञ्चक - समं,
तदेषां साम्यं स्याद्वनिषु च यो वेत्ति स मुनिः ।।३९।।

इत्यैक्य-निरूपणम्

वशिन्याद्या अष्टावकचटतपाद्याः प्रकृतयः,
स्ववर्गस्थाः स्वस्वायुध-कलित-हस्ताः स्वविषयाः ।
यथा-वर्गं वर्ण-प्रचुर - तनवो याभिरभवम्-
स्तव प्रस्तारास्ते त्रय इति जगुस्ते समयिनः ।।४०।।

इमा नित्या वर्णास्तव चरण-सम्मेलन-वशात्,
महा-मेरुस्थाः स्युर्मनु-मिलन-कैलास-वपुषः।
वशिन्याद्या एता अपि तव स-बिन्द्वात्मकतया,
मही-प्रस्तारोऽयं क्रम इति रहस्यं समयिनाम् ।।४१।।

इति प्रस्तार-त्रय-निरूपणम्

भवेत् मूलाधारं तदुपरितनं चक्रमपि तद्-
द्वयं तामिस्त्राख्यं शिखि-किरण-सम्मेलन-वशात् ।
तदेतत्कौलानां प्रति - दिनमनुष्ठेयमुदितं,
भवत्या वामाख्यं मतमपि परित्याज्यमुभयम् ।।४२।।
अमीषां कौलानां भगवति भवेत् पूजन-विधिः,
तव स्वाधिष्ठाने तदनु च भवेत् मूल-सदने ।
अतो बाह्या पूजा भवति भग-रूपेण च ततो,
निषिद्धाचारोऽयं निगम विरहोऽनिन्द्य चरिते ।।४३।।
नव-व्यूहं कौल-प्रभृतिक-मतं तेन स विभुः,
नवात्मा देवोऽयं जगदुदयकृद्भैरव - वपुः ।
नवात्मा वामादि-प्रभृतिभिरिदं भैरव-वपुः,
महा-देवी ताभ्यां जनक-जननीमज्जगदिदम् ।।४४।।
भवेदेतच्चक्र - द्वितयमतिदूरं समयिनाम्,
विसृज्यैतद्युग्मं तदनु मणिपूराख्य - सदने ।
त्वया सृष्टैर्वारि-प्रति - फलित सूर्येन्दु-किरणैः,
द्विधा लोके पूजां विदधति भवत्याः समयिनः ।।४५।।
अधिष्ठानाधार - द्वितयमिदमेवं दश - दलम्,
सहस्त्राराज्जातं मणिपुरमतोऽभूद् दश-दलम् ।
हृदम्भोजात् मूलात् नृपदलमभूत् स्वान्त - कमलं ,
तदेवैको बिन्दुर्भवति जगदुत्पत्ति-कृदयम् ।।४६।।
सहस्त्रारं बिन्दुर्भवति च ततो बैन्दव - गृहं,
तदेतस्माज्जातं जगदिदमशेषं सकरणम् ।
ततो मूलाधाराद् द्वितयमभवत् तद्दश-दलं,
सहस्त्राराज्जातं तदिति दशधा बिन्दुरभवत् ।।४७।।

तदेतद् - बिन्दोर्यद्दशकमभवत्तत् - प्रकृतिकं,
दशारं सूर्यारं नृप-दलमभूत् स्वान्त-कमलम् ।
रहस्यं कौलानां द्वितयमभवन्मूल - सदनं,
तथाधिष्ठानं च प्रकृतिमिह सेवन्त इह ते ।।४८।।
अतस्ते कौलास्ते भगवति दृढ-प्राकृत-जना,
इति प्राहुः प्राज्ञाः कुल-समय-मार्गद्वय-विदः ।
महान्तः सेवन्ते सकल-जननीं बैन्दव-गृहे,
शिवाकारां नित्याममृत-झरिकामैन्दव-कलाम् ।।४९।।
इदं कालोत्पत्ति-स्थिति-लय-करं पद्म-निकरं,
त्रि-खण्डं श्री-चक्रं मनुरपि च तेषां च मिलनम् ।
तदैक्यं षोढा वा भवति च चतुर्धेति च तथा,
तयोः साम्यं पञ्च-प्रकृतिकमिदं शास्त्रमुदितम् ।।५०।।
उपास्तेरेतस्याः फलमपि च सर्वाधिकमभू-
त्तदेतत् कौलानां फलमिह हि चैतत् समयिनाम् ।
सहस्त्रारे पद्मे सुभग - सुभगोदेति सुभगे,
परं सौभाग्यं यत्तदिह तव सायुज्य - पदवी ।।५१।।
अतोऽस्याः संसिद्धौ सुभग-सुभगाख्या गुरु-कृपा-
कटाक्षव्यासङ्गात् स्त्रवदमृत-निष्यन्द-सुलभा ।
तथा विद्धो योगी विचरति निशायामपि दिवा,
दिवा भानू रात्रौ विधुरिव कृतार्थी-कृत-मतिः ।।५२।।

।।परम पूज्य श्रीगौडपादाचार्यवर्य-विरचिता श्री सुभगोदयः स्तुतिः।।

★★★

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीमकरन्द-स्तव-राज

विनियोग–ॐ अस्य श्रीमकरन्द-स्तव-राज-मन्त्रस्य ब्रह्म-विद्यायाः श्रीदक्षिणा-मूर्ति ऋषिः, अव्यक्त गायत्री छन्दः, श्रीमन्महा-त्रिपुर-सुन्दरी देवता, अं वीजं, आं शक्तिः, सौः कीलकं, दश-मुद्रा-ब्रह्मोपासन-सौभाग्यं चतुर्वर्गाप्तये विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास–ॐ श्रीदक्षिणा-मूर्ति-ऋषये नमः शिरसि। अव्यक्त-गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीमन्महा-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः हृदि। अं-बीजाय नमः लिङ्गे-योनौ वा। आं-शक्तये नमः नाभौ। सौः-कीलकाय नमः पादयोः। दश-मुद्रा-ब्रह्मोपासन-सौभाग्याय चतुर्वर्गाप्तये विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-न्यास–श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां नमः। क-ए-ई-ल-ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः। ह-स-क-ह-ल-ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः। स-क-ल-ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

षडङ्ग-न्यास–श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा। क-ए-ई-ल-ह्रीं शिखायै वषट्। ह-स-क-ह-ल-ह्रीं कवचाय हुम्। स-क-ल-ह्रीं नेत्र-त्रयाय वौषट्। सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट्।

ध्यान –

बालार्कायुत-तेजसं त्रि-नयनां रक्ताम्बरोल्लासिनीम्।
नानालंकृति-राजमान-वपुषं बालोडुराट्-शेखराम्।।
हस्तैरिक्षु-धनुः सृणिं सुमशरं पाशं मुदा विभ्रतीम्।
श्रीचक्र-स्थित-सुन्दरीं त्रि-जगतामाधार-भूतां स्मरेत्।।१
बालार्क - मण्डलाभासां, चतुर्बाहां त्रि - लोचनाम्।
पाशांकुश - शरांश्चापं, धारयन्तीं शिवां भजे।।२

मानस-पूजन–

'लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।'
यह पढ़कर अधो-मुख कनिष्ठा-अंगुष्ठ-योग से गन्ध-मुद्रा दिखाए।
'हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।'
यह पढ़कर अधो-मुख तर्जनी-अंगुष्ठ-योग से पुष्प-मुद्रा दिखाए।
'यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।'
यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख-तर्जनी-अंगुष्ठ-योग से धूप-मुद्रा दिखाए।

'रं वन्ह्यात्मकं दीपं श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।'

यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख मध्यमा-अंगुष्ठ-योग से दीप-मुद्रा दिखाए।

'वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।'

यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख अनामा-अंगुष्ठ-योग से नैवेद्य-मुद्रा दिखाए।

'शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरी-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।'

यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख अंगुष्ठ एवं सर्वांगुलियों से ताम्बूल-मुद्रा दिखाए।

श्रीमकरन्द-स्तव-राज

ॐश्रीं

ॐ श्रीं-बीजे नाद-बिन्दु-द्वितय-शशि-कलाकार-रूप-स्वरूपे,
मातर्मे देहि ऋद्धिं जहि जहि दुरितं पाहि मां दीन-नाथे!
अज्ञान-ध्वान्त-राशिं क्षपय सु-रुचिरे प्रोल्लसत्पाद-पद्मे,
ब्रह्मेशाद्यैः सुरेन्द्रैः सुर-गण-नमिते संस्तुते त्वां नमामि ।।१।।

ह्रीं

ह्रीं-लज्जा-बीज-स्वरूपे त्रि-जगति वरदे क्रीडया या स्थितेयम्,
तां नित्यां शम्भु-शक्तिं त्रि-भुवन-जननीं पालयित्रीं जगच्च ।
सर्वाशानां निदानं सकल-गुण-मयीं सच्चिदानन्द-रूपाम्,
तेजो-रूपां प्रदीप्तां त्रि-भुवन-नमितां ज्ञान-दात्रीं नमामि ।।२।।

क्लीं

क्लीं-बीजे, काम-रूपे, धृत-कुसुम-धनुर्वाण-पाशांकुशा ताम्,
वन्दे भास्वत्-सरोजोदर-निभ-वपुषां मोहयन्तीं त्रिलोकीम् ।
काञ्ची मञ्जीर-हाराङ्गद-मुकुट-लसत्-स्वर्ण-माणिक्य-रत्नैः,
भास्वत्-सिन्दूर-वक्त्रां स्तन-भर-नमितां क्षीण-मध्यां त्रिनेत्राम् ।।३।।

ऐं

ऐं-वाणी-बीज-रूपे त्रिभुवन-जडता-ध्वान्त-विध्वंसिनी त्वम्,
शैव-ब्रह्म-स्वरूपा श्रुतिभिरनु-पदं गीयमाना त्वमेव ।
मातर्मे देहि बुद्धिं मम सदसि पर-द्वन्द्व-संक्षोभ-कर्त्रीम्,
ऐन्द्रीं वाचस्पतेरप्यति-विविध-पदं त्वत्-पदाम्भोजमीडे ।।४।।

सौः

सौः शक्तिः कार्यमन्ते घट-पट-प्रभृतौ दृष्ट-हेतोः सहाया,
माया काचिन्महत्त्व-प्रभृति-परिणता मूल-भूता त्वमेव ।
केचिद् बाह्य-प्रपञ्चा-मणि-निवह-तनौ तन्त्र-भूता त्वमेव,
विद्या-जन्मादि-वृन्दं क्षपयति जगतां मे निरे शुद्ध-भावाः ।।५।।

ॐ

ॐ मातस्ते नमस्ते श्रुति-प्रथित-गुरु-त्र्यक्षर-ब्रह्म-रूपे,
मिथ्या-मोहान्धकारे पततिमनु-दिनं पाहि मां भक्ति-हीनम् ।
मोहः क्रोधः प्रलोभः प्रथम-मद-चयैः शत्रुभिः पीड्यतेऽसौ,
पत्नी-पुत्रादि-भृत्यैर्नत-विविध-जनैः शृङ्खलाभिर्निबद्धैः ॥६॥

ह्रीं

ह्रीङ्कारे ह्रीं-स्वरूपे मम दह दुरितं व्याधि-दारिद्र्य-वीजम्,
मातस्त्वत्-पाद-पद्म-द्वितय-परिसरे प्रार्थये भक्ति-लेशम् ।
त्वं वाणी त्वं च लक्ष्मीस्त्वमसि गिरि-सुता ब्रह्म-विष्णु-स्मरारे,
चित्तं नित्यं शरण्यं कृतमिह जननि! त्वत्-कटाक्षैक-वृन्दैः ॥७॥

श्रीं

श्रींकारे श्री-स्वरूपे वितर मयि धनं धान्य-हस्त्यश्व-युक्तम्,
स्वर्णं माणिक्य-रत्नाद्यभिलषित-युतं त्वत्-पदार्चा सु-योग्यम् ।
विद्यां त्वं देहि मोक्षं भव-भय-दहने देवि! दं दह्यमाने,
योगेन्द्रैः सेव्य-माना हत-कलुष-चयैर्मोक्षमन्वेषयद्भिः ॥८॥

क-५

कामो योनिश्चतुर्थः स्वर-त्रिदश-पतिर्भौवनेशी च वीजम्,
तावद् वर्णावली त्वं नत-जन-वरदे, भक्तिमीहे शरण्ये ।
त्वत्-पादाम्भोज-युग्मं हृदय-सरसिजे सन्निधायेक-चित्ते,
ध्यात्वा तत्-कर्म-बन्धं त्वति-विमल-धियो मुक्ति-वन्तो मुनीन्द्राः ॥९॥

ह-६

ब्रह्मेन्दुः काम - देवो वियदमर - गुरुर्भौवनेशी च वीजम्,
तावद् वर्ण-स्वरूपैर्घटित-तनु-लतां त्वां प्रपन्नोऽस्मि मातः!
विष्णु-ब्रह्मेश-मूर्ति-स्थित-मुकुट-मणि-प्रोल्लसत्-पाद-पद्माम्,
योगीन्द्रैर्ध्येय-पादाम्बुरुह-स्वर-नख-द्योत-विद्योतितां त्वाम् ॥१०॥

स-४

इन्दुः कामः सुरेशा वियदनलसद् - वाम - नेत्रार्द्ध-चन्द्रैः,
युक्तं यद् - वीजमेतत् तदपि तव वपुः सच्चिदानन्द-रूपम्।
बाला त्वं भैरवी त्वं त्रिभुवन - जननी तारिणी नील-वर्णा,
त्वं गौरी त्वं च काली सकल-मनु-मयी त्वं महा-मोक्ष-दात्री ॥११॥

सौः

सौः-कारो बीज-राजस्त्रिभुवन-जनिनी शक्तिराद्या त्वमेव,
त्वद्-युक्तः शम्भुरेषः प्रभवति चलितुं त्वां विना जाड्य-वान् सः ।
ब्रह्मा विष्णुः कपर्दी जननि! तव कृपा - लेश - मात्राच्छरीरम्,
गृह्णन्तः सृष्टि-रक्षा-प्रलयमभिलसच्चक्रिरे त्वद्-वशस्थाः ॥१२॥

ऐं | ऐं-वीजं वाग्भवाख्यं त्वमिह जडमति-ध्वान्त-चक्षुः प्रकाशान्,
मातः! कारुण्य-धाराममृत-बलि-दृशा पश्य मां दीन-नाथे!
मोह्यन्ते मोहितास्ते तव जननि! महा - मायया बद्ध-चित्ताः,
कारुण्यं प्रार्थयन्ते तव पद-युगले ज्ञान - वन्तो मुनीन्द्राः ।।१३।।

क्लीं | क्लींकारो वीज-रूपा तव जननि! मनु-श्लेष-मध्य-प्रवेशात्,
साक्षाद्-ब्रह्म-स्वरूपी मदन-तनु-लता ब्रह्मणो मोह-कर्त्री।
साज्ञानं स्मेर-वक्त्राम्बुज-कुहर-लसत्-सुप्त-पीयूष-धारा,
वेदाश्चत्वार एते तुहिन - गिरि-सुते! प्राप्तमीनेन्द्र-रूपे ।।१४।।

ह्रीं | ह्रीङ्कारोङ्कार-रूपा त्वमिह शशि-मुखी ह्रीं-स्वरूपा त्वमेव,
त्वं सिद्धिः त्वं च ऋद्धिः स्मर-रिपु-मनमस्त्वं च सम्मोहयन्ती ।
त्वं क्षान्तिस्त्वं च कान्तिर्हरि-हर-कमलोद्भूत-रूपा त्वमेव,
विद्या त्वं मुक्ति - हेतुर्भव-जलधि-जनुर्दुःख - हन्त्री त्वमेव ।।१५।।

श्रीं | श्रीं-वीजे, श्री-स्वरूपे, मधु-रिपु-मनसो मध्य-मध्या सिता त्वम्,
मातस्त्वद्-दृष्टि-लेशादमर - पति रसौ प्राप्तवान् बुद्धिमेषाम् ।
इत्येवं षोडशार्णं सरस मनु - दिनं स्वर्ग - मोक्षैक - हेतुम्,
सिद्धीरष्टौ लभन्ते यः इह मनु - वरं श्रेष्ठमेनं भजन्ते ।।१६।।

।। श्रीरुद्र-यामले मकरन्द-स्तव-राज-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

कामो योनिश्चतुर्थः स्वर-त्रिदश-पतिर्भौवनेशी च वीजम्
(कामः=क, योनिः=ए, चतुर्थ स्वरः=ई, त्रिदश-पति=ल, भुवनेशी=ह्रीं)।
ब्रह्मेन्दुः काम - देवो वियदमर - गुरुर्भौवनेशी च वीजम्
(ब्रह्म=ह, इन्दुः=स, काम-देवो=क, वियत्=ह, अमर-गुरु=ल, भुवनेशी= ह्रीं)।
इन्दुः कामः सुरेशा वियदनलसद् - वाम - नेत्रार्द्ध-चन्द्रैः
(इन्दुः=स, कामः=क, सुरेशा=ह, वियदनलसद् - वाम - नेत्रार्द्ध-चन्द्रा= ह्रीं)।

★★★

श्री श्रीविद्या वृहत् कर्पूर-स्तोत्रम्

सपूज्य शुक्लारुण-चक्र-चारिणीं, मूलादि-विन्द्वान्तर्गतां विभावयन्।
स्थिति-स्वरूपां हृदयारविन्दगामीडेश-पाशांकुश-वाण-चापिनीम्।।१।।

कर्पूरं पूर-रेफैर्विरहितममलं योनि-युक्तं महेशीकारोपेतं ललज्जा-युतमपि वरदे, देवि! वाक्-कूटमाहुः । एतन्नित्यं जपन्ति स्मर-हर-महिले! तर्क-काव्याऽऽगमज्ञास्तान् मुञ्चत्यब्ज-हस्ता कथमपि न च ते साधकाः सम्भवन्ति ।।२।।

ईशानः सोम-मारौ गिरिश-शत-मखौ भौवने शाख्य-बीजमित्थं ते काम-कूटं प्रजपति सु-जनो वारमेकं कदा-चित् । पार्श्वे नृत्यन्ति कामाकुलित-मृग-दृशाः प्राणदाः साधकस्य, नित्यं निर्वाण-विद्या विलसति हृदयाम्भोज-मध्ये च तस्य ।।३।।

सोमः कामेन्द्र-लज्जा-युतमिदमनिशं शक्ति-कूटं तृतीयम्,
प्रातर्यश्चन्द्र-चूडां विकसित-वन्दनाम्भोज-संशोभितां त्वाम् ।
ध्यायन् राजाधि-राजेश्वरि! जपति जनः शान्त-चित्तः प्रकामम्,
स स्यात् त्रैलोक्य-नाथः सुर-मुनि-दनुजैः सेव्य-मानो महात्मा ।।४।।

सर्वं वागादि-कूट-त्रयमपि ललिते! दिश्य कौलावतंसम्,
कौल-ज्ञानैक-गम्यां धृत-कुसुम- धनुर्वाण-पाशांकुशां त्वाम् ।
त्रैलोक्याकर्षकः स्याद् यदि जपति सदा भावयन् रक्त-वर्णां,
प्रातः स्वान्तोपचारैरतुलित-विभवेऽभ्यर्च्यं मूलाम्बुजस्थाम् ।।५।।

जपित्वा लक्ष-त्रयं ते मनुमनल-मुखे तद्-दशांशं विधाय,
कुर्याद् यश्चक्र-पूजां सुर-गण-नमिते! श्री-युतः स्यात् स एव ।
पृथ्वी - पालोत्तमांङ्गासृत - मणि - मुकुट - ज्वालिनी,
राजितांघ्रिर्वाचालः काव्य-कर्त्ताऽमर-पुर-गणिका-चित्त-चौरश्चिरायुः ।।६।।

वाक् - कूटं तदनु तव शिवे! शक्ति - कूटं नियोज्य,
श्री-युक्तं मन्त्रमेतज्जपति पर-शिवां षोडशीं षोडशार्णाम् ।
ध्यायेत् पाशांकुशां त्वामभय-वर-करां सोम-सूर्याग्नि-नेत्राम्,
रक्तां चन्द्रावतंसां स भवति सकलैश्वर्य-युक्तः कुलज्ञः ।।७।।

तारं मायां स-पद्मां तदनु निगदितं देवि! कूट-त्रयं च,
श्री-माया-काम-वाणो स्मर-हर-दयिते! शक्ति-युक्तैस्तदेतैः।
इत्युक्तैः पञ्च-बीजैः कृत-पुटित-महा-बीज-षट्कं विधाय,
श्रीविद्ये! बीज-रूपं भवति तव मनुं श्री-युतं मोक्षदं च ।।८।।

मातः श्रीमन्त्र-राज स्मरति यदि जनो वारमेकं जितात्मा,
कामेशाङ्क-स्थितां त्वामरुणित-वसनां सु-स्मितामम्बुजस्थाम् ।
खं व्योमाकाश चन्द्र-प्रमित-दल-युताम्भोज-मध्ये विभाव्य,
सर्वैः पापैर्विमुक्तस्तदवधि-चरितैः पुण्य-रूपः स एव ।।९।।
तारान्ते वाक्-त्रपान्ते स्मरमपि कमलान्तेऽपि तच्छक्ति-कूटम्,
पूर्वोक्तैः पञ्च-बीजैः कृत-पुटित महा-मन्त्र-राजं तवेदम् ।
ध्यायन् विद्याक्ष-पाशांकुश-कर-कमलां गौर-वर्णां त्रि-नेत्राम्,
सर्वज्ञः स्याज्जपेद् यः कुल-पथ-विधिना श्रीमहा-षोडशीं त्वाम् ।।१०।।
शक्त्याख्यं चैव कामं प्रथम-निगदितं कूटमब्जासनाढ्याम्,
माया-वेदादि-युक्तं पुटितमपि सदा पञ्च-बीजैः पुरोक्तैः ।
ध्यायन् नीलाम्बरां त्वां शशि-सकल-धरां पान-पात्रां त्रिनेत्राम्,
त्रैलोक्यं क्षोभयेद् यः प्र-जपति विधिना दीक्षितः कौलिकेन्द्रः ।।११।।
मातः! श्री-मन्त्रमेतत् त्रितयमपि सदा दिव्य-भावानुरक्तो,
दीक्षां सम्प्राप्य यत्नाज्जपति निज-गुरु-प्रोक्त-मार्गेण कश्चित् ।
जीवन्मुक्तः स एव त्रिभुवन-विजयी सर्व-वेद गमज्ञः,
साक्षान्नारायणस्य प्रति-निधिरचिरात् त्वत्-पदं प्राप्नुयाद् यः ।।१२।।
प्रातः श्री-चक्र-संस्थामविरतं महिलाभिर्युतः साधकेन्द्रः,
शुक्लैर्वोक्तोपचारैः क्रम-पथ-निहितैर्मन्त्र-वर्यैः समर्च्य ।
साङ्गां साम्नाय-विद्यामकुल-कुल-गतां षोडशाधार-मूलाम्,
ध्यायन् यो वर्ण-लक्षं जपति शिव-समः स्यान्महा-षोडशीं त्वाम् ।।१३।।
त्रि-वृत्तं भू-गेहे रस-विधु-दलान्तर्वसु-दलम्,
ततो मन्वस्रान्तः सु-ललित-दशार-द्वयमपि ।
तदन्तः सर्पारं जननि! कुल-बालार्क-सदृशम्,
त्रिकोणं तन्मध्ये विमल-तर-विन्दुर्भगवति ।।१४।।
तवेदं श्रीचक्रं जगदखिलमात्मा त्वमिति च,
शरीरं तच्छैवं चिदपि परमे शाक्तममलम् ।
गुरोर्ज्ञात्वा सर्वं वि-लिखति सदा भावन-परस्त्रि-
लक्षं सिन्दूरैः स भवति नरेन्द्रः क्षिति-तले ।।१५।।

सुधाक्तैः सिन्दूरैरपि कुल-रजोभिः सुरुचिरम्,
विलिख्य श्रीचक्रं प्रणमति च सन्तर्पयति यः ।
निशायां प्रालेयाचल-कुल-महोत्तंस-कलिके!,
भवेच्छक्त्या युक्तः सकल-जगतामेव वश-कृत् ।।१६।।
गुरु-प्रोक्तैर्मार्गैः पर-शिव-मुखाम्भोज-मुदिते!,
स्व-देहे श्री-चक्रं सततमपि सञ्चिन्तयति यः।
स योगीशो वाग्मी वर-निकर-चूडा-मणिरपि,
प्रवाल-प्राले य प्र-भजति सु-गुप्तं प्रभवति ।।१७।।
तदस्मिञ्छ्री-पीठाश्रित-रुचिर-सिंहासन-गताम्,
महा-पञ्च-प्रेतैः सुर-निकर-कोलैश्च सहिताम् ।
स-मुक्ता-माणिक्यैरसुर-विबुधालभ्य-मणिभिः,
कृताङ्गालङ्कारां जित-मदन-रूपां त्रि-नयनाम् ।।१८।।
नवीनादित्याभां धृत-शशि-कलां मुक्त-चिकुराम्,
शरांश्चापं पाशं शृणिमपि धृतां हस्त-कमलैः ।
महा-कामेशाङ्के कृत-निवसतीं रक्त-वदनां,
स्मितं कामं दृष्ट्वा स्मित-मुख-सरोजां पर-शिवाम् ।।१९।।
जनो यो ध्यायेत् त्वामकुल-कुल-मार्ग-क्रम-युतः,
समर्चायां नित्यं भुवन-भय-भङ्ग-व्यसनिनि!
मयूखाभिस्ताभिः प्रकट-वदनाभिश्च सहिताम्,
चतुः-पीठासीनां त्रि-दश-गण-वन्द्यः स भवति ।।२०।।
शिवे! त्वं संक्षोभिण्यसि जननि! विद्रावण-करी,
परे! सर्वाकर्षिण्यसि सु-ललिते! सर्व-वशिनी ।
अजे! सर्वोन्मादिन्यसि भगवति! त्वं त्रि-नयने!,
त्वमेका कल्याणीश्वरि! कुल-महेश्यंकुश-धरी ।।२१।।
भवाधारे! खेचर्यसि जननि! बीजा त्वमसि च,
महा-योनिस्त्वं वै निखिल-भुवनानामपि सदा ।
त्रिखण्डा-रूपा त्वं जगदघ-हरे! कौल-सुखदे!,
करे मुद्रा-रूपा ब्रजसि यदि कस्यापि स शिवः ।।२२।।

समाराध्यां देवीं सकल-कुल-मुद्रा-क्रम-युताम्,
विभाव्य त्वां नित्यं परम-शिव-पर्यङ्क-निलये!,
गुरूक्तैस्तद्-वीजैः सह-रचित-मुद्रास्तव मुदे!,
पुरस्त जायन्ते मदन-हर-तुल्याः सुर-नुताः ।।२३।।

उमा त्वं काली त्वं त्वमसि भुवना दुर्गति-हरे!,
परा-गुह्या तारा स्मर - हर-सती चन्द्र-वदने!
महा-कुब्जा बाला त्रिपुर-ललिता त्वं च विमले!,
रमा वाणी सर्वावरण-जननी त्वं भगवति! ।।२४।।

कलाभिर्नित्याभिस्तिथि-परिमिताभिः परि-वृतां,
समभ्यर्चच्छ्री-मद्-गुरु-कुलमपि प्रोक्त-विधिना ।
स्मरेद् यस्त्वामङ्गाश्रित-युवति-षड्भिः स्मित-मुखि!,
स सर्वार्थावाप्तः प्रमुदित-मना स्यादिह सदा ।। २५।।

धरित्रि चक्रस्थां स्फटिक-दृशवच्छच्छवि-मयीम्,
त्रिनेत्रामम्भोज-द्वय-धृत-करां पुस्तक-धराम् ।
तथाक्ष-स्रग्धस्तां प्रकट-जननीभिः परि-वृताम्,
स चार्वाकां रम्यां निखिल-भव-सम्मोहन-कराम् ।।२६।।

त्रि-वृत्तस्थां रक्तां कठिन-कुच-भारां त्रि-नयनाम्,
विचित्रालङ्कारामभय-युत-विद्याक्ष-वरदाम् ।
महाक्षैः संयुक्तां स विजित-मनस्कांश्च युवतीम्,
सदा त्रै-वर्गाणां फलमपि सकृत्-साधन-कराम् ।।२७।।

कला-पत्राब्जस्थां हिम गिरि-निभां शुभ्र-वसनाम्,
महा-गुप्ताख्याभिः कर-कलित-पाशामभि-युताम् ।
त्रिनेत्रां पाणिभ्यामभय - वरदामंकुश - कराम्,
स बौद्धां सर्वेषामभिलषित-दानाश्वासनिनीम् ।।२८।।

जपा - पुष्पारक्तामभय - वर - वद्याक्ष-विलसत्,
कराम्भोजामष्टच्छद-कमल-संस्थां त्रि-नयनाम् ।
सदैनां देवीं गुप्त-तर-सकलाभिः परि-वृताम्,
सुधासक्तां शान्तां पशु-जन-महा-क्षोभण-कराम् ।।२९।।

सदा शक्रारस्थामरुण वसनां सम्पद - युत—
प्रदायाख्याभिस्ताभिरखिल-सु-सौभाग्य-जननीम्।
त्रि-नेत्रां विद्याक्षाभय-वर-कराब्जैरपि युताम्,
स-सांख्यां स्वच्छन्दां स्मित-मुख-सरोजां च सुभगाम्।।३०।।
सहस्त्रार्काभासामखिल-कुल-कौलादि-सहिताम्,
त्रि-नेत्रां विद्याक्षाभय-वर-करां रक्त-वसनाम्।
बहिः खैकारस्थां निखिल-निगमैः संयुत-पदाम्,
सतां सर्वार्थानामपि सु-तरसा साधन-करीम्।।३१।।
दशारस्थामन्तः सकल - सुर-रक्षण - करीम्,
प्रवालारक्ताभां त्रि-नयन-युक्तां साभय-वराम्।
स-पाशां शृण्याढ्यां सु-रुधिर-कपालं जप-वटीम्,
धृतां सौरोपेतामभि - नुत निगर्भादि-सहिताम्।।३२।।
शशाङ्काभां शुभ्राभरण-वसनां स-स्मित-मुखीम्,
त्रि-नेत्रां तां पाशांकुश-युत-कपालाभय-कराम्।
रहस्याभिर्युक्तां निखिल-भव-रोग-क्षय-करीम्,
सदाष्टारे संस्थां सु-मद-मुदितां वैष्णव-युताम्।।३३।।
महा - चक्रे कोणाश्रित - भुवन-कूटादि-सहिते,
स्थितां माणिक्याभामभय-वरदां पुस्तक-धराम्।
तथा सालङ्कारां स्फटिक-गुटिका-मण्डिता-कराम्,
त्रि-नेत्रां मुण्डाढ्यामपि कुसुम-मालां च दधतीम्।।३४।।
स्मितास्यामारक्तामरुण-वसनां मन्द-हसिताम्,
निशा-नाथोत्तंसामभय-वर-विद्याक्ष-सहिताम्।
त्रि-नेत्रां पञ्चाशत्-परिमित-महा-मुण्ड-रचिताम्,
दधानां तां मालां गलित-चिकुरां रत्न-खचिताम्।।३५।।
क्रमात् त्वां नित्यं यः स्मरति दश-चक्रेषु परमे,
पुनस्तत्तन्मन्त्रैः सह-कुल-गुरु-प्रोक्त-विधिना।
स वित्ते वित्तेशः सुर-गुरु-समः शास्त्र-कुशलो,
भवेत् त्रैलोक्याधीश्वरि! तव दयापाङ्ग-विषयः।।३६।।

प्रतीहारान् मातस्तव चरण-विद्यां च ललिते!,
प्रपञ्चाख्यां विद्यां तदनु दश-दिक्-पाल-निवहाम् ।
ततस्तेषां शस्त्राण्यपि कुल-पथाभ्यर्च्य मुदितः,
कहानन्ताराध्ये! ब्रजति परम-धाम मनुजः ।।३७।।
रसैकास्यामम्बां धृत-शशि-कलां मुक्त-चिकुराम्,
त्रि-नेत्रामापीनोन्नत-कुच-युगां रक्त-वसनाम् ।
हरि - ब्रह्मेशानाजिनमभिधानां कर—
शतैरथाष्टोपेतैर्वा सुर-निकर-युक्तैरपि युताम् ।।३८।।
महा - पञ्च - प्रेतोपरि रुचिर-सिंहासनमथो,
परीशस्तन्नाभ्युद्भवममल-रक्ताभ - कमलम् ।
श्मशानं तन्मध्ये वृषभ-विगतानन्द-पुरुषोरसिस्थाम्
यो ध्यायेज्जननि! स हि मोक्षं च लभते।।३९।।
स्मरेन्निर्वाणाख्यं तव चरण-सम्पूजन - विधौ,
षडाम्नायोपेतां ब्रज-गतममुं पञ्च - वदनम् ।
कराम्भोजैः पद्मानि च दश दधानां च दशभिर्महा—
विद्या-युक्तं किमपि कुल-कल्पं विदधतम् ।।४०।।
जपेद् यस्तवन्मन्त्रं जननि! सकलाम्नाय-जनकम्,
सदा सर्वाचारैरपि यजन-शीलः प्रमुदितः ।
स वाग्-मार-श्री-सम्पुटित-दश-कूटात्मकमथ,
श्रुति-श्री-शाकिन्यादिकमिति सु-गुह्य-द्वयमपि ।।४१।।
स जीवन-मुक्तः स्यादिह जननि! निर्वाण-सुखदे!,
पयोधिः सिद्धिर्नाममर - दितिजर्वन्दित-पदः ।
बहूक्तैः किं पञ्चानन-दश-शतास्याह्यविदिते,
महिम्ना संयुक्तो मदन-महिला-मोहन-करः।।४२।।
जनो यो हालाभिर्जननि! तव सम्पूज्य चरणौ,
करे पात्रं धृत्वा भगवति! कुल-ज्ञान-निरतः ।
सहस्रारे ध्यात्वा पर-शिव-गुरुं शक्ति-सहितम्,
पिवेद् वामोच्छिष्टं स हि भवति शम्भोः प्रति-निधिः ।।४३।।

कुलागारं पश्यन्नति-दृढ-मना यस्तव मनुम्,
जपेल्लक्षं रात्रौ रहसि च मदामोद-मुदितः ।
तथा श्री-दूतीं तां गज-दशन-पर्यङ्क-निलयाम्,
यजेद् यस्त्वद्-रूपां स भवति हरिमन्मथ-कले!।।४४।।
स्मरागारे कुर्वन निज-कर-सरोजं त्रि-नयने!,
त्रि-लक्षं त्वन्मन्त्रं भगवति! सदा घोर-विधिना ।
महा-पीठे मातस्तव दश-शतार्णं शुभ-मनुम्,
जपेद् यः कौलेन्द्रः स हि भुवन-सौख्यं च लभते ।।४५।।
शिवे! लक्षं मन्त्रं जपति विपरीतो यदि नरः,
स एव श्री-मातः! सकल-भुवनानामधि-पतिः ।
शवारूढः कौलः पितृ - वन - गतः श्री-क्रम—
युतस्त्रिकूटाख्यां विद्यामपि जपति स स्यात् कुल-पतिः।।४६।।
नरं गेषं छागं महिषमपि मार्जारमथवा,
शुभं मत्स्यं हंसं हरि - हर-नुते कुक्कुटमपि ।
बलिं ते पूजायां वितरति यदा कौलिके—
जनस्तदा क्रोधादीनामपि रिपु-गणानां प्रहरणम् ।।४७।।
महा-मूलाधारोपरि रस-दलं यद् रवि-निभम्,
ततो दिग्-पत्राख्यं ललित-मणि-पूरं तदुपरि ।
हृदम्भोजं मातस्तदुपरि विशुद्धाख्यमपरम्,
ततस्त्वां वै ध्यायन् द्वि-दल-युत-पद्मोपरि-गताम् ।।४८।।
हठाभ्यां संयोगाद् विलसति सुषुम्णाख्य-रमणि!,
तथा सार्द्धं पीत्वाऽमर-मुनि-मनोभ्यर्थित-सुधाम् ।
परां दीपाकारां निखिल - भुवनाधार - जननीम्,
स्मरन्तस्त्वां मातर्भुवन-नमिताः कौल-मुनयः ।।४९।।
त्वदीयं श्री-स्तोत्रं भगवति! महा-मन्त्र-सदनम्,
तथा ते ध्यानाङ्गावरण-नव-मुद्रादि-सहितम् ।
महा - चक्रोद्धारैर्यतमिदमहो साधक - वरः,
पठेद् यः पूजाऽन्ते भुवि भवति स श्री-प्रिय-तरः ।।५०।।

।। श्री श्रीविद्या वृहत्-कर्पूर-स्तोत्रम् ।।

श्रीत्रिपुर-सुन्दरी पुष्पाञ्जलि-स्तवः

क कल्याण - दात्रि कमनीय - तनु-लते! त्वाम्,
कं चापि कालमनु - चिन्त्य हृदब्ज-मध्ये ।
कामं प्रहर्ष - भरितेन मया तवाद्य,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।१।।

ए एतन्मदीय - सु - कृतं परमं पुराणम्,
यत् तवामहं प्रति - दिनं मनसा भजामि ।
साक्षात् - कृतेन तव रूपमनेन चाद्य,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।२।।

ई ईशादि - देव - महनीय - महानुभावे,
दीनं त्विमं भव - भयेन परि - स्फुरन्तम् ।
दीनार्ति - हन्त्रि! दयया परि - पालयाशु,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।३।।

ल लज्जां विहाय बहुधा बहवोऽपि देवाः,
सम्पूजिता जड-धिया न तु कोऽपि हृष्टः ।
लब्धं तवैव रमणीय - वपुर्दृशा मे,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।४।।

ह्रीं ह्रींकार - मन्त्र - निलये! बहुशो भवाब्धौ,
मग्नः परन्तु न कदापि गतोऽस्मि पारम् ।
तत् - तारणे निपुणायोस्त्रिपुरे! मयाऽद्य,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।५।।

ह हस्तेषु पाश - महनीय - सितेक्षु - चापे,
पुष्पास्त्रमंकुश - वरं ललितं दधाने!
हेमाद्रि - तुङ्ग- तर - शृङ्ग - निवास - शीले,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।६।।

स सर्वेषु देवि! समयेषु गतिस्त्वमेव,
नान्यं कदापि मनसा समनु - स्मरामि ।
सर्वत्र रूपमतुलं तव पश्यताद्य,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।७।।

क कस्ते पुरेशि! विधि - वत्तु समर्हणायाम्,
शक्तः समस्त-परि-बर्ह-युतोऽपि धीमान् ।
हृत् - पङ्कजेन भवतीं भजता मयाऽद्य,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।८।।

ह हन्ताति - रूक्ष - भव - पावक - शोषितेन,
कुत्राप्यलब्ध - शरणेन सरोज - वक्त्रे!
अन्ते मयाऽत्र भवतीं शरणं गतेन,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।९।।

ल लक्ष्याऽसि देवि! बहु-जन्म-तपो-बलेन,
लक्ष्मीश-धातृ-परिपूज्य पदाम्बु - जाते ।
आलक्ष्य - रूपमरुणं तव विस्मितेन,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।१०।।

ह्रीं ह्रीङ्कारमेव शरणं जगतां वदन्ति,
ह्रीङ्कारमेव परमं भुवने रहस्यम् ।
ह्रीङ्कारमेव सततं स्मरता मयाऽद्य,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।११।।

स सर्वस्य देवि! भुवनस्य निदान - भूता,
त्वय्येव सर्वमनघे! विलयं गतं स्यात् ।
सञ्चित्य चैतदधुना त्रिपुरे! मया ते,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।१२।।

क कश्चिद् यदा भव-नियन्त्रि! विचिन्तयेत् त्वाम्,
दीनं तदेव हि कटाक्षयसे दृशा त्वम् ।
एवं विचिन्त्य भवतीं स्मरता मयाऽद्य,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।१३।।

ल लब्ध्वा त्वदीय चरणाम्बुजमम्ब!
जन्तुर्नावर्तते पुनरपि प्रभवाय लोके ।
वेदोक्तिमेवमसकृत् स्मरता मयाऽद्य,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।१४।।

ह्रीं ह्रीङ्कारमेव जपता प्रति - वासरं च,
ह्रीङ्कारमेव भजता सकलेष्ट - सिद्ध्यै ।
ह्रीङ्कारमेव परमं शरणं गतेन,
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।१५।।

श्रीं श्रीङ्कार-मन्त्र-कनकाब्ज-निवास-शीले!
श्री-रूप-धारिणि, शिवे! श्रित-कल्प-वल्लिः ।
श्रीमद् - गुह - स्तुत - महा - विभवे! पुरेशि!
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब! कीर्णः ।।१६।।

★★★

॥ श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः॥

श्रीत्रिपुर-सुन्दर्युपस्थान-सहस्राक्षरी

ऐं नमो भगवति!, त्रिपुर-सुन्दरि!, दुर्गति-तारिणि! क्षमरीं प्रीं कर कर, विसर विसर, नृत्य नृत्य, वद वद, वाग्वादिनि! स्वाहा। ह्रीं नमः, क्लीं नमः, श्रीं प्लीं क्लीं नमः। सुरासुर-वन्दिते!, सकल - जन - क्षोभिणि!, श्रीं श्रीं श्री-कारिणि!, द्रां द्रां द्राविणि!, मों मों मोहिनि!, स्तं स्तं स्तम्भिनि!, आं आं आकर्षिणि!, परम-सुभगे! नमः।

कमल-वासिनि! रस रस वर-वर्तिनि!, ह्रां ह्रां ह्रां-कारि!, ह्रीं ह्रीं ह्रीं-कारि!, ह्रां ह्रां ह्रां-कारिके!, कां कां काकिन्नि!, रां रां राकिणि!, डां डां डाकिनि!, हां हां हाकिनि!, ऐं शाङ्करि! गन गन, किश किश, भ्रम भ्रम, वद वद, सत्य सत्य, उत उत।

मालिनि!, महा-माये!, तत्त्व-विग्रहे!, अरूपे!, अमले!, विमलेऽजितेऽपराजिते! मर्द मर्द, हर हर, संहर संहर। ॐ ह्रीं ऐं कुरु कुरु, लेप लेप, किटि किटि, ॐ जूं सः, सौः क्लीं ऐं श्रीं नद नद, नाद-बीजे! त्रां त्रीं त्रूं त्रैं त्रौं त्रः, म्रां म्रीं म्रूं म्रैं म्रौं म्रः, य्रां य्रीं य्रूं य्रैं य्रौं य्रः, रीं रीं रूं रैं रौं रः, ल्रां ल्रीं ल्रूं ल्रैं ल्रौं ल्रः, व्रां व्रीं व्रूं व्रैं व्रौं व्रः, श्रां श्रीं श्रूं श्रैं श्रौं श्रः, ष्रां ष्रीं ष्रूं ष्रैं ष्रौं ष्रः, स्रां स्रीं स्रूं स्रैं स्रौ स्रः, हां हीं हूं हैं हौं हः, क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः।

गौरि!, रुद - द्रयिते!, वज्रिणि!, वज्र - नायिके!, कपाल - माला - धरे!, प्रेतासन-निवासिनि!, सर्व-तत्त्वावतारे!, अवतर अवतर, गर्ज गर्ज, शोषय शोषय, सर्व-मन्त्रान् ग्रस ग्रस, सर्व-दुष्टान् मर्द मर्द, सर्व-यन्त्रान् भञ्ज भञ्ज, सर्व-दुःखं तप तप, तापय तापय। तारे!, तारिणि! पर-विद्यां छिन्धि छिन्धि, पर-कायं प्रविश प्रविश, वज्रिणि!

गों गों गोचरि!, खें खें खेचरि!, भूं भूं भूचरि!, हंस-वाहे! हस हस, तिष्ठ तिष्ठ, बन्धय बन्धय, धारय धारय, ऊर्णा-मणिं मोचय मोचय, विमोचय विमोचय, विमोचनि! पश्य पश्य। हुं रावे, मेरु-मन्दर-सङ्काशे!, महा-विद्येश्वरि!, वाचं निर्यच्छ। आच्छादिनि!, सरस्वति!, महा-श्वेते!, किणि-विद्ये!, अर्क-कोटि-सहस्र-मालिनि! पुर पुर, द्रुम द्रुम। अनन्त-क्षोभ-कारिणि! रणे वज्रादि-कर्तरि!, विद्या-विनोदिनि! त्वर त्वर त्वरिते! वह वह, क्रन्दय क्रन्दय, संक्रामय संक्रामय, मदिरानन्द-घूर्णिते!

कामेश्वरि! गां गीं गूं गैं गौं गः । कन्दर्प-मद-विह्वले! स्फुरद्-योनि-चक्रे भगवति!, भग-मालिनि!, ईश्वर-चक्र-कपाल-डमरुक-धारिणि!, महा-भैरवि!, वसु - धारे, वसु - मति, धरिणि, धरे! वशय वशय।

कर्म-धारिणि!, कामेशि! जिह्वया वद वद, मनसा रम रम, क्रन्द क्रन्द, वस वस। बिन्दु-प्रिये! हूं हूं हूं हूं रद रद। शारद-शशाङ्क-निकाशे!, शारदे!, विद्या-दान-विशारदे! क्लीं गण-नायिके!, आनन्द-मय-विग्रहे!, गृहीत-पूर्ण-कपाले!, ज्वलज्जिह्वे!, ह्लादिनि!, नित्य-क्लिन्ने!, मद-द्रवे! स्वाहा।

सौं सौं क्षूं सरस्वत्यै नमः। मदिरे!, मधु - मति!, मदाभोग - सुभगे!, भग-माले! मुरु मुरु, चुरु-चुरु, धुन धुन, स्फुर स्फुर, स्फोटय स्फोटय, घण्टा-रवेण निरन्तर-पर-बल-भेदिनि! फ्रें कुब्जिकायै ह्रां ह्रीं नञणङ्मे अघोर-मुखि! किणि किणि, विच्चे, ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें ह्रीं हुं फट्। सर्वज्ञे! जम्भ जम्भ, जन्म - जरा-मरण-दारिद्र्य-घातिनि!, सर्व - सिद्धि - निधाने!, महा-भय-धारिणि! ॐ हंसः हुं फट् । विद्येश्वरि! ज्रां ज्रीं ज्रूं ज्रैं ज्रौं ज्रः, ल्रीं प्रीं सौः, स्रौं क्ष्रौं। क्षुद्र-विद्राविणि!, विद्रुत-विद्रुम-प्रभे! क्षम्रीं हौंः। चण्डि!, चण्डेश्वरि!, ब्रह्माण्ड-माला - धारिणि!, बन्धूक - शोणाधरे!, त्रैलोक्य सत्ये! नमः, प्रसीद प्रसीद, ऐं श्रीं फ्रें सौः ऐं ह्रीं श्रीं श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरि! स्वाहा।

।। श्रीत्रिपुर-सुन्दर्युपस्थान-सहस्राक्षरी ।।

★★★

अपराध-क्षमापण-स्तोत्रम्

किं किं द्वन्द्वं दनुज-दलिनि! क्षीयते न श्रुतायाम् ।
का का सिद्धिः कुल-कमलिनि! प्राप्यते नार्चितायाम् ।।
का का कीर्तिः सुर-वर-नुते! व्याप्यते न स्तुतायाम् ।
कं कं भोगं त्वयि न चिनुते चित्तमालम्बितायाम् ।।
सकुसं सकुसं रम्भ स्वारिता मोक्ष - विभ्रमे!
चिच्चन्द्र - मण्डलान्तःस्थे नमस्ते हर - वल्लभे ।।
जगदुद्धारणोद्योग - योग - भोग - वियोगिनि!
स्थिति-भाव-स्थिते देवि! नमः स्थाणु-प्रियेऽम्बिके ।।
भावाभाव - पृथग् - भानानुभावे वेद - कर्मणि ।
चैतन्य - पञ्चके देवि! नमस्तुभ्यं हराङ्गने ।।
सृष्टि - स्थित्युप - संहार - प्रत्युर्जित - पद - द्वये!
चिद्-विश्रान्ति-महा-सत्ता-मात्रे! मातर्नमोऽस्तु ते ।।

वह्न्यर्क - शीत - किरण - ब्रह्म - चक्रान्तरोदिते!
चतुष्पीठेश्वरि!, शिवे! नमस्ते त्रिपुरेश्वरि! ।।
चराचरमिदं विश्वं प्रकाशयसि तेजसा ।
मातृका - रूपमास्थाय तस्यै मातर्नमोऽस्तु ते ।।
स्मृता भव - भयं! हंसि पूजिताऽसि शुभङ्करि! ।
स्तुता त्वं वाञ्छितं वस्तु ददासि करुणा-वरे ।।
भक्तस्य नित्य - पूजायां रतस्य मम साम्प्रतम् ।
वाग्भवादि - महा - सिद्धिं देहि त्रिपुर-सुन्दरि! ।।
परमानन्द - सन्दोह - प्रमोद - भर - निर्भरे!
दुःख-त्रय-पर - परिम्लान - वदनं पाहि मां शिवे! ।।
शब्द - ब्रह्म - मयि यच्च देवि!, त्रिपुर-सुन्दरि!
यथा - शक्ति जपं पूजां गृहाण मदनुग्रहात् ।।
अज्ञानादल्प - बुद्धित्वादालस्याद् दुष्ट - भावतः ।
ममापराधं कार्पण्यं क्षमस्व पर - देवते! ।।
अज्ञानामसमर्थानामस्वस्थान - निवासिनाम् ।
अशुद्धं बलमस्माकं शिशूनां हर - वल्लभे! ।।
कृपा - मयि! कृपां भद्रे! सकृन्मयि निवेशय ।
तावदऽहं कृतार्थोऽस्मि न ते किञ्चन हीयते ।।
यन्मया क्रियते कर्म जाग्रत् - स्वप्न - सुषुप्तिषु ।
तत्-सर्वं तावकी पूजा भूयाद् भूत्यै रमे! शिवे! ।।
द्रव्य-हीनं क्रिया-हीनं विधि-हीनं च यद् भवेत् ।
तत् - सर्वं कृपया देवि! क्षमस्व पर - देवते! ।।
यन्मयोक्तं महा - ज्ञानं तन्महत् स्वल्पमेव वा ।
तावत् सर्वं जगद्धात्रि! क्षन्तव्यमयमञ्जलिः ।।

।। श्रीत्रिपुरार्णवे अपराध-क्षमापण-स्तोत्रम् ।।

★★★

वन्दे गुरोर्मण्डलम्

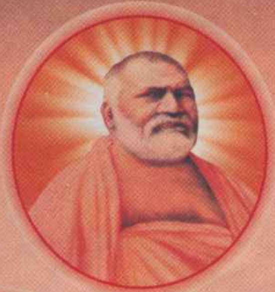

१. जाग्रत, २. स्वप्न और ३. सुषुप्ति तीनों पुरों तथा
१. स्थूल, २. सूक्ष्म और ३. कारण तीनों शरीरों को
बाहर व भीतर प्रकाशित करनेवाली
ब्रह्म-विद्या त्रिपुर-सुन्दरी ही एक-मात्र
आत्मा हैं, सत्य हैं,
उनके अतिरिक्त सब असत्य है, अनात्मा है।

प्रकाशक : परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६ मो. ९४५०२२२७६७